जीव विज्ञान

कक्षा 11 के लिए पाठ्यपुस्तक

11081

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्
NATIONAL COUNCIL OF EDUCATIONAL RESEARCH AND TRAINING

© NCERT not to be republished

Reprint 2025-26

11081 – जीव विज्ञान
कक्षा 11 के लिए पाठ्यपुस्तक

ISBN 81-7450-509-1

सर्वाधिकार सुरक्षित

- प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना इस प्रकाशन के किसी भाग को छापना तथा इलैक्ट्रॉनिकी, मशीनी, फोटोप्रतिलिपि, रिकॉर्डिंग अथवा किसी अन्य विधि से पुनः प्रयोग पद्धति द्वारा उसका संग्रहण अथवा प्रसारण वर्जित है।
- इस पुस्तक की बिक्री इस शर्त के साथ की गई है कि प्रकाशक की पूर्व अनुमति के बिना यह पुस्तक अपने मूल आवरण अथवा जिल्द के अलावा किसी अन्य प्रकार से व्यापार द्वारा उधारी पर, पुनर्विक्रय या किराए पर न दी जाएगी, न बेची जाएगी।
- इस प्रकाशन का सही मूल्य इस पृष्ठ पर मुद्रित है। रबड़ की मुहर अथवा चिपकाई गई पर्ची (स्टिकर) या किसी अन्य विधि द्वारा अंकित कोई भी संशोधित मूल्य गलत है तथा मान्य नहीं होगा।

प्रथम संस्करण
फ़रवरी 2006 फाल्गुन 1927

पुनर्मुद्रण
जनवरी 2007, नवंबर 2007,
जून 2009, जनवरी 2010,
जून 2011, जून 2012,
नवंबर 2013, दिसंबर 2014,
जनवरी 2016, मार्च 2017,
जनवरी 2018, फ़रवरी 2019,
अक्तूबर 2019, अगस्त 2021 और
नवंबर 2021

संशोधित संस्करण
नवंबर 2022 पौष 1944

पुनर्मुद्रण
मार्च 2024 चैत्र 1946
जून 2024 ज्येष्ठ 1946
जनवरी 2025 पौष 1946

PD 5T M

© राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, 2006, 2022

₹ 185.00

एन.सी.ई.आर.टी. वाटरमार्क 80 जी.एस.एम. पेपर पर मुद्रित।

प्रकाशन प्रभाग में सचिव, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद्, श्री अरविंद मार्ग, नयी दिल्ली 110 016 द्वारा प्रकाशित तथा स्वपना प्रिंटिंग वर्क्स (प्रा.) लिमिटेड, डोलतला, डोहरिया, पोस्ट - गंगानगर, जिला - उत्तर 24 परगनास, कोलकाता 700132 द्वारा मुद्रित।

एन सी ई आर टी के प्रकाशन प्रभाग के कार्यालय

एन.सी.ई.आर.टी. कैंपस
श्री अरविंद मार्ग
नयी दिल्ली 110 016 फोन : 011-26562708

108, 100 फीट रोड
हेली एक्सटेंशन, होस्डेकेरे
बनाशंकरी III इस्टेज
बेंगलुरु 560 085 फोन : 080-26725740

नवजीवन ट्रस्ट भवन
डाकघर नवजीवन
अहमदाबाद 380 014 फोन : 079-27541446

सी.डब्ल्यू.सी. कैंपस
निकट: धनकल बस स्टॉप पनिहटी
कोलकाता 700 114 फोन : 033-25530454

सी.डब्ल्यू.सी. कॉम्प्लैक्स
मालीगांव
गुवाहाटी 781 021 फोन : 0361-2674869

प्रकाशन सहयोग

अध्यक्ष, प्रकाशन प्रभाग	:	*एम.वी. श्रीनिवासन*
मुख्य संपादक	:	*बिज्ञान सुतार*
मुख्य उत्पादन अधिकारी (प्रभारी)	:	*जहान लाल*
मुख्य व्यापार प्रबंधक	:	*अमिताभ कुमार*
संपादक	:	*मरियम बारा*
सहायक उत्पादन अधिकारी	:	*सायुराज ए.आर.*

सज्जा एवं आवरण
श्वेता राव

चित्रांकन
ललित कुमार मौर्या

© NCERT not to be republished

आमुख

राष्ट्रीय पाठ्यचर्या की रूपरेखा (2005) सुझाती है कि बच्चों के स्कूली जीवन को बाहर के जीवन से जोड़ा जाना चाहिए। यह सिद्धांत किताबी ज्ञान की उस विरासत के विपरीत है जिसके प्रभाववश हमारी व्यवस्था आज तक स्कूल और घर के बीच अंतराल बनाए हुए हैं। नई राष्ट्रीय पाठ्यचर्या पर आधारित पाठ्यक्रम और पाठ्यपुस्तकें इस बुनियादी विचार पर अमल करने का प्रयास है। इस प्रयास में हर विषय को एक मज़बूत दीवार से घेर देने और जानकारी को रटा देने की प्रवृत्ति का विरोध शामिल है। आशा है कि ये कदम हमें राष्ट्रीय शिक्षा नीति (1986) में वर्णित बाल-केंद्रित व्यवस्था की दिशा में काफ़ी दूर तक ले जाएँगे।

इस प्रयत्न की सफलता अब इस बात पर निर्भर है कि स्कूलों के प्राचार्य और अध्यापक बच्चों को कल्पनाशील गतिविधियों और सवालों की मदद से सीखने और सीखने के दौरान अपने अनुभवों पर विचार करने का कितना अवसर देते हैं। हमें यह मानना होगा कि यदि जगह, समय और आज़ादी दी जाए तो बच्चे बड़ों द्वारा सौंपी गई सूचना-सामग्री से जुड़कर और जूझकर नए ज्ञान का सृजन करते हैं। शिक्षा के विविध साधनों एवं स्रोतों की अनदेखी किए जाने का प्रमुख कारण पाठ्यपुस्तक को परीक्षा का एकमात्र आधार बनाने की प्रवृत्ति है। सर्जना और पहल को विकसित करने के लिए ज़रूरी है कि हम बच्चों को सीखने की प्रक्रिया में पूरा भागीदार मानें और बनाएँ, उन्हें ज्ञान की निर्धारित खुराक का ग्राहक मानना छोड़ दें।

ये उद्देश्य स्कूल की दैनिक ज़िंदगी और कार्यशैली में काफ़ी फेरबदल की माँग करते हैं। दैनिक समय-सारणी में लचीलापन उतना ही ज़रूरी है जितना वार्षिक कैलेण्डर के अमल में चुस्ती, जिससे शिक्षण के लिए नियत दिनों की संख्या हकीकत बन सके। शिक्षण और मूल्यांकन की विधियाँ भी इस बात को तय करेंगी कि यह पाठ्यपुस्तक स्कूल में बच्चों के जीवन को मानसिक दबाव तथा बोरियत की जगह खुशी का अनुभव बनाने में कितनी प्रभावी सिद्ध होती है। बोझ की समस्या से निपटने के लिए पाठ्यक्रम निर्माताओं ने विभिन्न चरणों में ज्ञान का पुनर्निर्धारण करते समय बच्चों के मनोविज्ञान एवं अध्यापन के लिए उपलब्ध समय का ध्यान रखने की पहले से अधिक सचेत कोशिश की है। इस कोशिश को और गहराने के यत्न में यह पाठ्यपुस्तक सोच-विचार और विस्मय, छोटे समूहों में बातचीत एवं बहस और हाथ से की जाने वाली गतिविधियों को प्राथमिकता देती है।

एन.सी.ई.आर.टी. इस पुस्तक की रचना के लिए बनाई गई पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति के परिश्रम के लिए कृतज्ञता व्यक्त करती है। परिषद् विज्ञान एवं गणित पाठ्यपुस्तक सलाहकार समूह के अध्यक्ष प्रोफ़ेसर जयंत विष्णु नार्लीकर और इस पुस्तक के मुख्य सलाहकार, प्रोफ़ेसर के. मुरलीधर, जंतु विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली के द्वारा समिति के कार्यों का मार्गदर्शन करने के लिए विशेष आभारी है। इस पाठ्यपुस्तक के विकास में कई शिक्षकों ने योगदान किया, इस योगदान को संभव बनाने के लिए हम उनके प्राचार्यों के आभारी हैं। हम उन सभी संस्थाओं और संगठनों के

प्रति कृतज्ञ हैं जिन्होंने अपने संसाधनों, सामग्री तथा सहयोगियों की मदद लेने में हमें उदारतापूर्वक सहयोग दिया। हम माध्यमिक एवं उच्च शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय द्वारा प्रोफ़ेसर मृणाल मीरी एवं प्रोफ़ेसर जी.पी. देशपांडे की अध्यक्षता में गठित निगरानी समिति (मॉनिटरिंग कमेटी) के सदस्यों को अपना मूल्यवान समय और सहयोग देने के लिए धन्यवाद देते हैं। व्यवस्थागत सुधारों और अपने प्रकाशनों में निरंतर निखार लाने के प्रति समर्पित एन.सी.ई.आर.टी. टिप्पणियों एवं सुझावों का स्वागत करेगी जिनसे भावी संशोधनों में मदद ली जा सके।

निदेशक

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और
प्रशिक्षण परिषद

नयी दिल्ली
20 दिसंबर 2005

© NCERT not to be republished

Reprint 2025-26

पाठ्यपुस्तकों में पाठ्य सामग्री का पुनर्संयोजन

कोविड-19 महामारी को देखते हुए, विद्यार्थियों के ऊपर से पाठ्य सामग्री का बोझ कम करना अनिवार्य है। *राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 2020* में भी विद्यार्थियों के लिए पाठ्य सामग्री का बोझ कम करने और रचनात्मक नज़रिए से अनुभवात्मक अधिगम के अवसर प्रदान करने पर ज़ोर दिया गया है। इस पृष्ठभूमि में, राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान और प्रशिक्षण परिषद् ने सभी कक्षाओं में पाठ्यपुस्तकों को पुनर्संयोजित करने की शुरुआत की है। इस प्रक्रिया में रा.शै.अ.प्र.प. द्वारा पहले से ही विकसित कक्षावार सीखने के प्रतिफलों को ध्यान में रखा गया है।

पाठ्य सामग्रियों के पुनर्संयोजन में निम्नलिखित बिंदुओं को ध्यान में रखा गया है —

- एक ही कक्षा में अलग-अलग विषयों के अंतर्गत समान पाठ्य सामग्री का होना;
- एक कक्षा के किसी विषय में उससे निचली कक्षा या ऊपर की कक्षा में समान पाठ्य सामग्री का होना;
- कठिनाई स्तर;
- विद्यार्थियों के लिए सहज रूप से सुलभ पाठ्य सामग्री का होना, जिसे शिक्षकों के अधिक हस्तक्षेप के बिना, वे खुद से या सहपाठियों के साथ पारस्परिक रूप से सीख सकते हों;
- वर्तमान संदर्भ में अप्रासंगिक सामग्री का होना।

वर्तमान संस्करण, ऊपर दिए गए परिवर्तनों को शामिल करते हुए तैयार किया गया पुनर्संयोजित संस्करण है।

© NCERT not to be republished

भारत का संविधान

उद्देशिका

हम, भारत के लोग, भारत को एक [1][**संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न समाजवादी पंथनिरपेक्ष लोकतंत्रात्मक गणराज्य**] बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को :

सामाजिक, आर्थिक और राजनैतिक **न्याय,**

विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म

और उपासना की **स्वतंत्रता,**

प्रतिष्ठा और अवसर की **समता**

प्राप्त कराने के लिए,

तथा उन **सब में**

व्यक्ति की गरिमा और [2][**राष्ट्र की एकता**

और अखंडता] सुनिश्चित करने वाली **बंधुता**

बढ़ाने के लिए

दृढ़संकल्प होकर **अपनी इस संविधान सभा में** आज तारीख 26 नवंबर, 1949 ई. को **एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।**

1. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) ''प्रभुत्व-संपन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य'' के स्थान पर प्रतिस्थापित।
2. संविधान (बयालीसवां संशोधन) अधिनियम, 1976 की धारा 2 द्वारा (3.1.1977 से) ''राष्ट्र की एकता'' के स्थान पर प्रतिस्थापित।

© NCERT not to be republished

पाठ्यपुस्तक निर्माण समिति

अध्यक्षः विज्ञान एवं गणित पाठ्यपुस्तक सलाहकार समिति

जे.वी. नार्लीकर, *इमेरिटस प्रोफ़ेसर*, अंतर-विश्वविद्यालय केंद्र : खगोलविज्ञान और खगोलभौतिकी, पुणे

मुख्य सलाहकार

के. मुरलीधर, आचार्य जंतु विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली

सदस्य

अजीत कुमार कवठेकर, *प्रवाचक* (वनस्पति विज्ञान), श्री वेंकटेश्वर कालेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
आर.के. सेठ, यू.जी.सी. वैज्ञानिक सी, जंतु विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
आर.पी. सिंह, *प्रवक्ता (जीव विज्ञान)*, राजकीय प्रतिभा विकास विद्यालय, किशनगंज, दिल्ली
एस.सी. जैन, *आचार्य*, विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग, रा.शै.अ.प्र.प., नई दिल्ली
के. सरथ चंद्रन, *प्रवाचक (जंतु विज्ञान)*, श्री वेंकटेश्वर कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
जे.एस. गिल, *आचार्य*, विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग, रा.शै.अ.प्र.प., नई दिल्ली
टी.एन. लखनपाल, *आचार्य (अवकाश प्राप्त)*, जैव विज्ञान विभाग, हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय, शिमला
तेजिंदर चावला, *पी.जी.टी. (जीव विज्ञान)*, गुरु हरकिशन पब्लिक स्कूल, वसंत विहार, नई दिल्ली
दिनेश कुमार, *प्रवाचक*, विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग, रा.शै.अ.प्र.प., नई दिल्ली
नलिनी निगम, *प्रवाचक (वनस्पति विज्ञान)*, रामजस कालेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
प्रतिमा गौर, *आचार्या*, जंतु विज्ञान विभाग, इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद
बी.बी.पी. गुप्ता, *आचार्य*, जंतु विज्ञान विभाग, नार्थ-ईस्टर्न हिल यूनीवर्सिटी, शिलांग
यू.के. नंदा, *आचार्य*, क्षेत्रीय शिक्षा संस्थान, भुवनेश्वर
रत्नम कौल बट्टल, *प्रवाचक (वनस्पति विज्ञान)*, जाकिर हुसैन कालेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
संगीता शर्मा, *पी.जी.टी (जीव विज्ञान)*, केंद्रीय विद्यालय, जे.एन.यू., नई दिल्ली
सावित्री सिंह, *प्राचार्या*,, आचार्य नरेंद्र देव कालेज, दिल्ली विश्वविद्याल, दिल्ली; भूतपूर्व सदस्य, विज्ञान शिक्षा एवं संचार केंद्र, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली
सी.वी. सिमरे, *प्रवक्ता*, विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग, रा.शै.अ.प्र.प., नई दिल्ली
सुनयना शर्मा, *प्रवक्ता (जीव विज्ञान)*, राजकीय प्रतिभा विकास विद्यालय, द्वारका, नई दिल्ली

हिंदी अनुवादक

उदेश शर्मा, *प्रवक्ता (जीव विज्ञान)*, जवहार राज.हा.से. स्कूल, अजमेर
एस.के. सिंह, *सहायक अचार्य*, कालेज ऑफ फिशरीज, राजेंद्र कृ.वि.वि. ढोली, मुजफ्फरपुर
कवींद्र नाथ तिवारी, *प्रवाचक (वनस्पति विज्ञान)*, महिला महाविद्यालय, बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी
के.बी. गुप्ता, *प्रोफ़ेसर (अवकाश प्राप्त)*, विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग, रा.शै.अ.प्र.प., नई दिल्ली
पी.आर. यादव, *प्रवाचक (जंतु विज्ञान)*, डी.ए.वी. कालेज, मुजफ्फरनगर
शरदेंदु, *प्रवाचक (वनस्पति विज्ञान)*, साइंस कालेज, पटना विश्वविद्यालय, पटना

सदस्य-समन्वयक

बी.के. त्रिपाठी, *प्रवाचक*, विज्ञान एवं गणित शिक्षा विभाग, रा.शै.अ.प्र.प., नई दिल्ली

not to be republished

आभार

राष्ट्रीय शैक्षिक अनुसंधान एवं प्रशिक्षण परिषद जीव विज्ञान, कक्षा XI की पाठ्यपुस्तक निर्माण में योगदान देने वाले सभी व्यक्तियों एवं संगठनों के प्रति हार्दिक आभार प्रकट करती है। परिषद अरविंद गुप्ते, *प्राचार्य (अवकाश प्राप्त)*, गवर्नमेंट कॉलेजिएट एजूकेशन सर्विस, मध्य प्रदेश.; शैलजा हिन्तालमणि, *एसोसिएट प्रोफेसर* ऑफ जेनेटिक्स, यूनीवर्सिटी ऑफ एग्रीकल्चरल साइंसेज, बैंगलूर; के.आर. शिवन्ना, *आचार्य (अवकाश प्राप्त)*, वनस्पति विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली; आर.एस.बेडवाल, *आचार्य (जंतु विज्ञान)*, जंतु विज्ञान विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर; पी.एस. श्रीवास्तव, *आचार्य*, जैव प्रौद्योगिकी विभाग, हमदर्द विश्वविद्यालय, नई दिल्ली; प्रमिला शिवन्ना, *पूर्व शिक्षक*, डी.ए.वी. स्कूल, दिल्ली के बहुमूल्य सुझावों हेतु आभारी है। इसके साथ ही, परिषद वी.के. भसीन, *आचार्य* एवं *विभागाध्यक्ष* जंतु विज्ञान विभाग, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली; पी.पी. बाकरे, *आचार्य* एवं *विभागाध्यक्ष*, जंतु विज्ञान विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर; तथा सावित्री सिंह, *प्राचार्य*, आचार्य नरेंद्र देव कालेज, नई दिल्ली के सहयोग हेतु आभारी है। परिषद वी.के. गुप्ता, *वैज्ञानिक*, केंद्रीय प्राणि उद्यान प्राधिकरण, नई दिल्ली द्वारा प्राणि उद्यानों के चित्र तथा समीर सिंह द्वारा मुख एवं पृष्ठ आवरण के चित्र उपलब्ध कराने के लिए हार्दिक आभार प्रकट करती है। इस पुस्तक में प्रयुक्त छाया चित्र, जो रा.शै.अ.प्र. परिषद, भा.कृ.अं.सं. परिसर तथा आचार्य नरेन्द्र देव कालेज परिसर से सावित्री सिंह द्वारा लिए गए हैं, परिषद उनके लिए विशेष रूप से आभारी है।

पांडुलिपि की समीक्षा में भागीदारी करने वाले सहभागियों एम.के. तिवारी, *पी.जी.टी.* (जीव विज्ञान), केंद्रीय विद्यालय मंदसौर, मध्य प्रदेश; मारिया ग्रैसियस फर्नांडिस, *पी.जी.टी. (जीव विज्ञान)*, जी.वी.एम. एस. हायर सेकेंड्री स्कूल पोंडा–गोवा; ए.के. गांगुली, *पी.जी.टी.* (जीव विज्ञान), जवाहर नवोदय विद्यालय रोशनाबाद, हरिद्वार; शिवानी गोस्वामी, *पी.जी.टी (जीव विज्ञान)*, मदर इंटरनेशनल स्कूल, श्री अरविंदो मार्ग, नई दिल्ली; बी.एन. पांडेय, *प्रधानाचार्य*, आर्ड. फैक्टरी. सी.से. स्कूल देहरादून के प्रति परिषद हार्दिक रूप से आभारी है। परिषद हिंदी अनुवाद की समीक्षा के लिए एन.पी. सिंह, *एसो. प्रोफेसर* (जंतु विज्ञान), राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर; एम.पी. त्रिवेदी, *प्रवाचक* (वनस्पति विज्ञान), साइंस कालेज पटना विश्वविद्यालय, पटना, बिहार; एम.पी. शर्मा, *प्रवक्ता* (जंतु विज्ञान), बी.बी.डी. राजकीय कालेज, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर; एन.एस. चौहान, *सहा. शिक्षा अधिकारी* (अवकाश प्राप्त), सी.एस.टी.टी. एम.एच.आर.डी., नई दिल्ली; हरीश कुमार, *अध्यक्ष (अवकाश प्राप्त)*, सी.एस.टी.टी., एम.एच.आर. डी., नई दिल्ली की आभारी है।

परिषद एम. चंद्रा, *आचार्य* एवं *विभागाध्यक्ष*, डी.ई.एस.एम. तथा हुकुम सिंह, *आचार्य*, डी.ई.एस.एम, रा.शै.अ.प्र. परिषद के बहुमूल्य योगदान हेतु अत्यधिक आभारी है।

इसके साथ ही परिषद कंप्युटर अनुभाग के *प्रभारी* श्री दीपक कपूर; *डी.टी.पी. आपरेटर* मोहम्मद खालिद रज़ा, मोहम्मद इस्माइल एवं हरि दर्शन लोधी; *प्रति संपादक* अमरसिंह सचान; *प्रूफरीडर* प्रेमराज मीणा एवं दीप्ति यादव तथा *रेखाचित्रक* ललित कुमार मौर्य एवं श्वेताराव और डी.ई.एस.एम. के ए.पी.सी. कार्यालय तथा डी.ई.सी.एम. एवं रा.शै.अ.प्र. परिषद के प्रशासकीय कर्मचारियों के प्रति हार्दिक रूप से आभार व्यक्त करती है।

इस पुस्तक के निर्माण में प्रकाशन विभाग, रा.शै.अ.प्र.प. का प्रयास प्रशंसनीय है।

परिषद्, इस संस्करण के पुनर्संयोजन के लिए पाठ्यक्रमों, पाठ्यपुस्तकों एवं विषय सामग्री के विश्लेषण हेतु दिए गए महत्वपूर्ण सहयोग के लिए ए.के. भटनागर, *प्रोफ़ेसर* (सेवानिवृत्त), दिल्ली यूनिवर्सिटी, दिल्ली; मोनिका कौल, *प्रोफ़ेसर*, हंसराज कॉलेज, दिल्ली यूनिवर्सिटी, दिल्ली एवं मृदुला आरोरा, *सह प्रधानाचार्या*, नवयुग स्कूल, पंडारा रोड, नयी दिल्ली के प्रति आभार व्यक्त करती है।

शिक्षकों एवं विद्यार्थियों के ध्यानार्थ

जीव विज्ञान जीवों का व्यवस्थित अध्ययन है। यह पृथ्वी पर जीवों की कथा है। जीव विज्ञान जीवन के स्वरूपों एवं जीवन प्रक्रमों का विज्ञान है। जीव वैज्ञानिक प्रणाली प्राय: उन भौतिक नियमों को चुनौती देती है जोकि पदार्थ के व्यवहार और हमारे जगत में ऊर्जा को नियंत्रित करते हैं। ऐतिहासिक रूप से, जीव वैज्ञानिक ज्ञान मानव शरीर एवं उसकी क्रियाशीलता के आनुषांगिक ज्ञान का रूप रहा। बाद में; जैसा कि हम जानते हैं, इसे औषधीय व्यवहार के आधार पर जाना गया। यद्यपि जीव वैज्ञानिक ज्ञान का अंशत: विकास मानव उपयोग से अलग हटकर के भी हुआ तथा जीवन की उत्पत्ति, जैव-विविधता के विस्तार की उत्पत्ति, विभिन्न पर्यावासों में वनस्पति एवं प्राणियों का विकास आदि जैसे मूलभूत प्रश्न जीवविज्ञानियों की परिकल्पना में समाहित हुए।

जीवधारियों का वृहद् वर्णन, चाहे वह संरचना-विकास या शरीर क्रिया विज्ञान अथवा वर्गीकरण आदि का परिप्रेक्ष्य रहा हो, इन सबने वैज्ञानिकों को पूर्णतया आकर्षित किया, परंतु कुछ और नहीं तो सुविधावश, विषय वस्तु का कृत्रिम विभाजन वनस्पति विज्ञान एवं जंतु विज्ञान और अन्य अंगों यहाँ तक कि बाद में सूक्ष्म जीव विज्ञान उपखंडों में कर दिया। इस दौरान, जीव विज्ञान में भौतिक विज्ञान की सघन भागीदारी हुई और जीव विज्ञान के क्षेत्र में जैव रसायन तथा जैव भौतिकी जैसी नई उपविधाएं स्थापित हुईं। 20वीं शताब्दी के प्रारंभ में मेंडेल के कार्य एवं उसके अनुसंधानों ने आनुवंशिक विज्ञान के अध्ययन को प्रोत्साहित किया। डी एन ए की दोहरी हेलिकल संरचना की खोज और अनेक जैव अणुओं की त्रैआयामी संरचना के गूढ़ लिप्यांतरण ने प्रभुत्वपूर्ण आण्विक जीव विज्ञान के क्षेत्र को प्रतिभासिक विकास दिया और इसे स्थापित किया। एक अर्थ में, कार्यात्मक विधा जिसका जीव प्रक्रमों में निहित क्रिया विधि पर ज्यादा प्रभाव है उसे अधिक ध्यान, समर्थन, बौद्धिक तथा सामाजिक मान्यता प्राप्त हुई। दुर्भाग्यवश जीव विज्ञान को संस्थापित एवं आधुनिक जीव विज्ञान में बाँट दिया गया। अतएव बहुत से कार्यरत जीव वैज्ञानिकों के प्रयास का लक्ष्य जीव वैज्ञानिक अनुसंधानों, जिज्ञासा एवं परिकल्पना प्रेरित बौद्धिक प्रयोगों की अपेक्षा कुछ अधिक ही अनुभववादी बन गया जैसा कि सैद्धांतिक भौतिकी, प्रयोगात्मक भौतिकी, संरचनात्मक रसायन विज्ञान एवं पदार्थ विज्ञान में होता है। सौभाग्यवश और सहज ही जीव विज्ञान के सामान्य एकीकारी सिद्धांतों की खोज एवं अनुसंधान हुए और उनका महत्व भी बढ़ा। डोबेजनास्की, हालडेन, पेरूज, खुराना, मार्गन, डार्लिंग्टन, फिशर तथा अन्य के कार्यों से जीव विज्ञान की संस्थापित एवं आण्विक, दोनों विधाओं को सम्मान एवं गरिमा प्राप्त हुई। परिस्थितिकी विज्ञान तथा वर्गिकी जीव विज्ञान एकीकारी जीव वैज्ञानिक विधा के रूप में स्थापित हुई। जीव विज्ञान के हर क्षेत्र का न केवल जीव विज्ञान की विशिष्ट शाखाओं ही बल्कि विज्ञान एवं गणित की विभिन्न विधाओं के साथ भी संबंध विकसित हुआ। शीघ्र ही इनके बीच की सीमाएं समाप्त होने लगीं और अब ये सीमाएं पूर्ण रूप से विलुप्त होने की कगार पर हैं। मानव जीव विज्ञान, जैव चिकित्सा विज्ञान तथा मानव मस्तिष्क की संरचना, कार्य तथा मूलक्रिया में हुई विशेष प्रगति ने जीव विज्ञान को मर्यादित तथा रहस्यमय बनाया और दार्शनिक सूक्ष्मदृष्टि प्रदान की है। यहाँ तक कि जीव विज्ञान आज प्रयोगशालाओं, संग्रहालयों तथा प्राकृतिक उद्यानों तक सीमित न रहकर जनमानस की आकांक्षाओं से जुड़े सामाजिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक मुद्दे तथा नीतियों की विषयवस्तु बन गई है। शिक्षाविद् भी पीछे नहीं रहे और उन्होंने यह महसूस किया कि शैक्षिक प्रशिक्षण के सभी चरणों में विशेष रूप से विद्यालयीय एवं पूर्वस्नातक शिक्षा के स्तर पर जीव विज्ञान को समन्वयित विज्ञान एवं अंतर्विधा की परिप्रेक्ष्य में पढ़ाया जाना चाहिए। जीव विज्ञान के सभी व्यावहारिक एवं बुनियादी क्षेत्रों में आज समन्वय की आवश्यकता है। जीव विज्ञान आज के युग की आवश्यकता है। इसकी अनिवर्चनीय एवं दृढ़ संकल्पनाएं भौतिक शास्त्र, रसायन शास्त्र तथा गणित की भाँति सर्वजनीन हैं।

विद्यालय स्तरीय बच्चों हेतु यह पुस्तक समन्वयिक जीव विज्ञान की पहली प्रस्तुति है। जीव विज्ञान शिक्षण एवं अध्ययन में भौतिक शास्त्र, रसायन शास्त्र आदि जैसी अन्य विधाओं के समन्वय का अभाव इसकी एक कमी रही है। इसके अलावा भौतिकी रसायन परिप्रेक्ष्य में देखा जाए तो पादपों, प्राणियों तथा सूक्ष्मजीवियों में अनेकों प्रक्रम समान हैं। कोशिका जीव विज्ञान ने पादपों, प्राणियों तथा सूक्ष्म जीवियों में निहित विविध स्पष्ट प्रत्याभासों को एकोकारी सामान्य कोशिकीय गतिविधियों के स्तर पर प्रकट किया है। ठीक इसी प्रकार से आण्विक विज्ञान (उदाहरणार्थ जैव रसायन या अण्विक जीव विज्ञान) ने यह उद्घाटित किया है कि इन सभी स्पष्ट तथा विविध पादपों, प्राणियों तथा सूक्ष्म जीवों में समान आण्विक क्रिया तंत्र होता है। पादपों एवं प्राणियों में श्वसन, उपापचय, ऊर्जा उपभोग, वृद्धि, जनन एवं परिवर्धन जैसे प्रत्याभासों की चर्चा अपेक्षाकृत भिन्न-भिन्न असंबद्ध तथ्यों के रूप में प्रस्तुत करने के एकीकृत विधि से की जा सकती है, ऐसी विविध तथा विशिष्ट विधाओं को एकीकृत करने का प्रयास इस पुस्तक में किया गया है। हालांकि; यह समन्वयन आंशिक ही रहा न कि पूर्णरूपेण। आशा है कि अगले कुछ वर्षों में शिक्षण एवं अधिगम के क्षेत्र में होने वाले परिवर्तनों से इस पुस्तक के अगले संस्करणों में वनस्पति विज्ञान, जंतु विज्ञान तथा सूक्ष्म जीव विज्ञान का समन्वयन बेहतर प्रदर्शित होगा और जीव विज्ञान की प्रकृति सही मायनों में प्रतिबिंबित होगी। जो मनुष्य के लिए, मनुष्य के द्वारा मनुष्य का भावी विज्ञान है।

कक्षा ग्यारहवीं जीव विज्ञान की यह नई पुस्तक पाठ्यचर्या में हुए परिवर्तन एवं रूपरेखा को ध्यान में रखते हुए पूर्णतया पुनर्लिखित है। यह पुस्तक राष्ट्रीय पाठ्यक्रम विन्यास (2005) के दिशानिर्देशों के अभिप्राय के अनुरूप है। विषयवस्तु को पाँच इकाइयों के अंतर्गत 22 अध्यायों में प्रस्तुत किया गया है। प्रत्येक इकाई में संबंधित क्षेत्र के प्रख्यात वैज्ञानिक का संक्षिप्त जीवन-परिचय दिया गया है। प्रत्येक अध्याय के प्रथम पृष्ठ पर सभी उपशीर्षकों को क्रमवार प्रस्तुत किया गया है तथा अध्याय के अंतर्गत इन्हें दशमलव अंकक्रम की पद्धति में दर्शाया गया है। अध्याय के अंत में पाठ का सारांश दिया गया है जो विद्यार्थी को ध्यान दिलाता है कि क्या कुछ इस अध्याय से सीखा जाना अपेक्षित है। प्रत्येक अध्याय के अंत में कुछ प्रश्न समूह दिए गए हैं। यह प्रश्न अनिवार्यत: विद्यार्थियों की विषयवस्तु की समझ को परखने हेतु तैयार किए गए हैं। कुछ प्रश्न पूर्णत: सूचना एवं स्मृति पर आधरित हैं तो कुछ विश्लेषणात्मक सोच पर आधारित हैं जो सही समझ की परख करते हैं। कुछ प्रश्न समस्या प्रधान हैं जिनके सरलीकरण और उत्तर ढूँढ़ने के लिए विश्लेषण एवं अंतर्दृष्टि की आवश्यकता होती है। इन सबसे विद्यार्थी के मस्तिष्क में विषयवस्तु की विवेचनात्मक समझ की परख होती है।

इस पुस्तक की रचना में वर्णनात्मक शैली, चित्रों, अभ्यास-क्रियाकलापों, अभिव्यक्ति की सुस्पष्टता तथा विद्यालय में उपलब्ध समय के भीतर विषय को पूरा करने को विशेष महत्व दिया गया है। इस सुन्दर पुस्तक के इस स्वरूप को लाने में कार्यरत शिक्षकों सहित, अत्याधिक प्रतिभावान एवं समर्पित बहुत सारे लोगों का सहयोग प्राप्त हुआ है। विद्यालय स्तर पर छात्रों एवं शिक्षकों के लिए जीव विज्ञान बोझ न बने यह सुनिश्चित करना हमारा प्रमुख उद्देश्य रहा है। हम वास्तव में यह कामना करते हैं कि जीव विज्ञान शिक्षण एवं जीव विज्ञान अधिगम (सीखना) एक आनंददायक क्रियाकलाप बने।

के मुरलीधर, आचार्य
जंतु विज्ञान विभाग

विषय सूची

आमुख (iii)

पाठ्यपुस्तकों में पाठ्य सामग्री का पुनर्संयोजन (v)

शिक्षकों एवं विद्यार्थियों के ध्यानार्थ (ix)

इकाई एक

जीव जगत में विविधता 1-53

अध्याय 1 जीव जगत 3

अध्याय 2 जीव जगत का वर्गीकरण 10

अध्याय 3 वनस्पति जगत 23

अध्याय 4 प्राणि जगत 37

इकाई दो

पादप एवं प्राणियों में संरचनात्मक संगठन 54-84

अध्याय 5 पुष्पी पादपों की आकारिकी 56

अध्याय 6 पुष्पी पादपों का शारीर 70

अध्याय 7 प्राणियों में संरचनात्मक संगठन 78

इकाई तीन

कोशिका : संरचना एवं कार्य 85-130

अध्याय 8 कोशिका : जीवन की इकाई 87

अध्याय 9 जैव अणु 104

अध्याय 10 कोशिका चक्र और कोशिका विभाजन 120

© NCERT not to be republished

इकाई चार

पादप कार्यकीय (शरीर क्रियात्मकता) 131–180

अध्याय 11 उच्च पादपों में प्रकाश-संश्लेषण 133

अध्याय 12 पादप में श्वसन 153

अध्याय 13 पादप वृद्धि एवं परिवर्धन 166

इकाई पाँच

मानव शरीर विज्ञान 181–251

अध्याय 14 श्वसन और गैसों का विनिमय 183

अध्याय 15 शरीर द्रव तथा परिसंचरण 193

अध्याय 16 उत्सर्जी उत्पाद एवं उनका निष्कासन 205

अध्याय 17 गमन एवं संचलन 217

अध्याय 18 तंत्रिकीय नियंत्रण एवं समन्वय 230

अध्याय 19 रासायनिक समन्वय तथा एकीकरण 239

© NCERT not to be republished

Reprint 2025-26

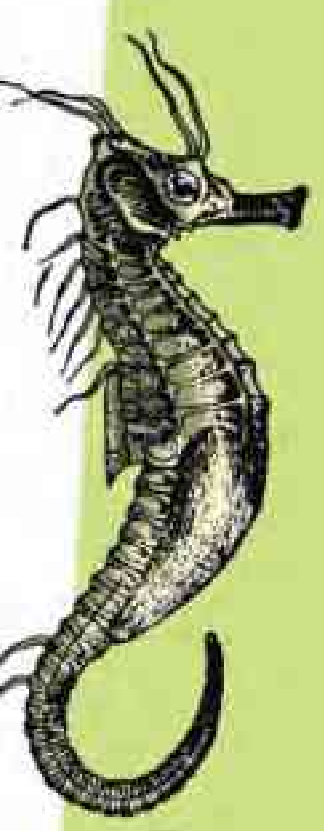

इकाई एक

जीव जगत में विविधता

अध्याय 1
जीव जगत

अध्याय 2
जीव जगत का वर्गीकरण

अध्याय 3
वनस्पति जगत

अध्याय 4
प्राणि जगत

जीव विज्ञान सभी प्रकार के जीवन रचना एवं जैव प्रक्रमों का विज्ञान है। जीव जगत कौतुहल जैव विविधताओं से परिपूर्ण है। आदि मानव आसानीपूर्वक निर्जीव पदार्थ एवं सजीवों के बीच अंतर कर सकता था। आदि मानव ने कुछेक निर्जीव पदार्थों (जैसे वायु, समुंद्र, आग आदि) तथा कुछ सजीव प्राणियों एवं पोधों में भेद किया था। इन सभी प्रकार के जीवित एवं जीवहीन स्वरूप में, उन्होंने जो सर्वसामान्य विशिष्टताएं पाईं, वे उनके द्वारा भय या दूर भागने के भाव पर आधारित थीं। सजीवों का वर्णन, जिसमें मानव भी शामिल था, मानव इतिहास में काफी बाद में प्रारंभ हुआ जो समाज (जीव विज्ञान की दृष्टि से) मानवोद्भव विज्ञान में संलग्न थें। वे जैव वैज्ञानिक ज्ञान में सीमित प्रगति दर्ज कर सके।

जीव स्वरूप के वर्गिकी विज्ञान एवं स्मारकीय विवरण ने विस्तृत पहचान प्रणाली नाम-पद्धति तथा वर्गीकरण पद्धति की आवश्यकता प्रदान की है। इस प्रकार के अध्ययनों का सबसे बड़ा प्रचक्रण सजीवों द्वारा ऊर्ध्वाधर एवं क्षैतिज, दोनों ही समानताओं के भागीदारी को मान्यता देना था। वर्तमान के सभी जीवों के परस्पर संबद्ध और साथ ही पृथ्वी पर आदिकाल वाले सभी जीव के साथ उनके संवादों का रहस्योद्‌घाटन मानवीय अहंकार और जैव विविधता के संरक्षण के लिए एक सांस्कृतिक आंदोलन के कारण थे। इस इकाई के अनुगामी अध्यायों में आप वर्गीकरण-परिप्रेस्य वैज्ञानिक प्राणियों एवं पादपों के वर्गीकरण सहित वर्णन के बारे में पढ़ेंगे।

एरनस्ट मेयर
(1904 - 2004)

एर्नस्ट मेयर का जन्म 5 जुलाई, 1904 में केंपटन, जर्मनी में हुआ था। आप हावर्ड विश्वविद्यालय के विकासपरक जीव वैज्ञानिक थे, जिन्हें '20वीं शती का डार्विन' कहा गया। आप अब तक के 100 महान वैज्ञानिकों में से एक थे। मेयर ने सन् 1953 में हावर्ड विश्वविद्यालय की कला एवं विज्ञान संकाय में नौकरी प्राप्त की और 1975 मे *एलैक्जेंडर अगासीज प्रोफ़ेसर ऑफ जुलोजी एमीरिटस* की पदवी के साथ अवकाश प्राप्त किया। अपने 80 सालों के कार्य जीवन में आपका पक्षी-विज्ञान, वर्गीकरण-विज्ञान, प्राणि-भूगोल, विकास, वर्गिकी तथा जीव विज्ञान के इतिहास एवं दर्शन आदि पर अनुसंधान केंद्रित रहा। आप ने लगभग अकेले ही विकासीय जीव विज्ञान के केंद्रीय प्रश्न जाति विविधता की उत्पत्ति को खड़ा किया, जो कि आज सच है। इसके साथ ही आपने हाल ही में स्वीकृत जीव वैज्ञानिक जाति वर्गिकी की परिभाषा की अगुवाई की। मेयर को तीन पुरस्कार दिए गए, जिन्हें व्यापक तौर पर जीव विज्ञान के तीन ताजों की संज्ञा दी जाती है: 1983 में *बालजॉन प्राइज*, 1998 में जीव विज्ञान के लिए *इंटरनेशनल प्राइज* और 1999 में *क्राफ़ुर्ड प्राइज।* मेयर 100 वर्ष की आयु में 2004 में स्वर्गवासी हुए।

not to be republished

अध्याय 1

जीव जगत

1.1 जीव जगत में विविधता

1.2 वर्गिकी संवर्ग

जीव जगत कैसा निराला है? जीवों के विस्तृत प्रकारों की शृंखला विस्मयकारी है। असाधारण वास स्थान चाहे वे ठंडे पर्वत, पर्णपाती वन, महासागर, अलवणीय (मीठा) जलीय झीलें, मरूस्थल अथवा गरम झरनों जिनमें जीव रहते हैं, वे हमें आश्चर्यचकित कर देते हैं। सरपट दौड़ते घोड़े, प्रवासी पक्षियों, घाटियों में खिलते फूल अथवा आक्रमणकारी शार्क की सुंदरता विस्मय तथा चमत्कार का आह्वान करती है। पारिस्थितिक विरोध, तथा समष्टि के सदस्यों तथा समष्टि और समुदाय में सहयोग अथवा यहां तक कि कोशिका में आण्विक गतिविधि से पता चलता है कि वास्तव में जीवन क्या है ? इस प्रश्न में दो निर्विवाद प्रश्न हैं। पहला तकनीकी है जो जीव तथा निर्जीव क्या हैं, इसका उत्तर खोजने का प्रयत्न करता है, तथा दूसरा प्रश्न दार्शनिक है जो यह जानने का प्रयत्न करता है कि जीवन का उद्देश्य क्या है। वैज्ञानिक होने के नाते हम दूसरे प्रश्न का उत्तर देने का प्रयास नहीं करेंगे। हम इस विषय पर चिंतन करेंगे कि जीव क्या है?

1.1 जीव जगत में विविधता

यदि आप अपने आस-पास देखें तो आप जीवों की बहुत सी किस्में देखेंगे, ये किस्में, गमले में उगने वाले पौधे, कीट, पक्षी, पालतू अथवा अन्य प्राणी व पौधे हो सकती हैं। बहुत से ऐसे जीव भी होते हैं जिन्हें आप आँखों की सहायता से नहीं देख सकते, लेकिन आपके आस-पास ही हैं। यदि आप अपने अवलोकन के क्षेत्र को बढ़ाते हैं तो आपको विविधता की एक बहुत बड़ी शृंखला दिखाई पड़ेगी। स्पष्टत: यदि आप किसी सघन वन में जाएं तो आपको जीवों की बहुत बड़ी संख्या तथा उनकी कई किस्में दिखाई पड़ेंगी।

© NCERT not to be republished

प्रत्येक प्रकार के पौधे, जंतु अथवा जीव जो आप देखते हैं किसी एक जाति (स्पीशीज) का प्रतीक हैं। अब तक की ज्ञात तथा वर्णित स्पीशीज की संख्या लगभग 1.7 मिलियन से लेकर 1.8 मिलियन तक हो सकती है। हम इसे **जैविक विविधता** अथवा पृथ्वी पर स्थित जीवों की संख्या तथा प्रकार कहते हैं। हमें यह स्मरण रखना चाहिए कि जैसे-जैसे हम नए तथा यहां तक कि पुराने क्षेत्रों की खोज करते हैं, हमें नए-नए जीवों का पता लगता रहता है।

जैसा कि ऊपर बताया गया है कि विश्व में कई मिलियन पौधे तथा प्राणी हैं। हम पौधों तथा प्राणियों को उनके स्थानीय नाम से जानते हैं। ये स्थानीय नाम एक ही देश के विभिन्न स्थान के अनुसार बदलते रहते हैं। यदि हमने कोई ऐसी विधि नहीं निकाली जिसके द्वारा हम किसी जीव के विषय में चर्चा कर सकें जो शायद इससे भ्रमकारी स्थिति पैदा हो सकती है।

प्रत्येक जीव का एक मानक नाम होता है, जिससे वह उसी नाम से सारे विश्व में जाना जाता है। इस प्रक्रिया को **नाम-पद्धति** कहते हैं। स्पष्टत: नाम-पद्धति तभी संभव है जब जीवों का वर्णन सही हो और हम यह जानते हों कि यह नाम किस जीव का है। इसे **पहचानना** कहते हैं।

अध्ययन को सरल करने के लिए अनेकों वैज्ञानिकों ने प्रत्येक ज्ञात जीव को वैज्ञानिक नाम देने की प्रक्रिया बनाई है। इस प्रक्रिया को विश्व में सभी जीव वैज्ञानिकों ने स्वीकार किया है। पौधों के लिए वैज्ञानिक नाम का आधार सर्वमान्य नियम तथा कसौटी है, जिनको इंटरनेशनल कोड ऑफ बोटेनीकल नोमेनकलेचर (ICBN) में दिया गया है। आप पूछ सकते हैं कि प्राणियों का नामकरण कैसे किया जाता है। प्राणी वर्गिकीविदों ने इंटरनेशनल कोड ऑफ जूलोजीकल नोमेनकलेचर (ICZN) बनाया है। वैज्ञानिक नाम की यह गारंटी है कि प्रत्येक जीव का एक ही नाम रहे। किसी भी जीव के वर्णन से विश्व में किसी भी भाग में लोग एक ही नाम बता सकें। वे यह भी सुनिश्चित करते हैं कि एक ही नाम किसी दूसरे ज्ञात जीव का न हो।

जीव विज्ञानी ज्ञात जीवों के वैज्ञानिक नाम देने के लिए सार्वजनिक मान्य नियमों का पालन करते हैं। प्रत्येक नाम के दो घटक होते हैं : **वंशनाम** तथा **जाति संकेत पद**। इस प्रणाली को जिसमें दो नाम के दो घटक होते हैं, उसे **द्विपदनाम पद्धति** कहते हैं। इस नामकरण प्रणाली को कैरोलस लीनियस ने सुझाया था। इसका उपयोग सारे विश्व के जीवविज्ञानी करते हैं। दो शब्दों वाली नामकरण प्रणाली बहुत सुविधाजनक है। आओ, आपको आम के उदाहरण द्वारा वैज्ञानिक नाम देने की विधि को समझाएं। आम का वैज्ञानिक नाम *मैंजीफेरा इंडिका* है। तब आप यह देख सकते हैं कि यह नाम कैसे द्विपद है। इस नाम में मैंजीफेरा वंशनाम है जबकि इंडिका एक विशिष्ट स्पीशीज अथवा जाति संकेत पद है। नाम पद्धति के अन्य सार्वजनिक नियम निम्नलिखित हैं :

1. जैविक नाम प्राय: लैटिन भाषा में होते हैं और तिरछे अक्षरों में लिखे जाते हैं। इनका उद्भव चाहे कहीं से भी हुआ हो। इन्हें लैटिनीकरण अथवा इन्हें लैटिन भाषा का व्युत्पन्न समझा जाता है।
2. जैविक नाम में पहला शब्द वंशनाम होता है जबकि दूसरा शब्द जाति संकेत पद होता है।

3. जैविक नाम को जब हाथ से लिखते हैं तब दोनों शब्दों को अलग-अलग रेखांकित अथवा छपाई में तिरछा लिखना चाहिए। यह रेखांकन उनके लैटिन उद्‌भव को दिखाता है।
4. पहला अक्षर जो वंश नाम को बताता है, वह बड़े अक्षर में होना चाहिए जबकि जाति संकेत पद में छोटा अक्षर होना चाहिए। *मैंजीफेरा इंडिका* के उदाहरण से इसकी व्याख्या कर सकते हैं।

जाति संकेत पद के बाद अर्थात् जैविक नाम के अंत में लेखक का नाम लिखते हैं और इसे संक्षेप में लिखा जाता है। उदाहरणत: *मैंजीफेरा इंडिका* (लिन)। इसका अर्थ है सबसे पहले स्पीशीज का वर्णन लीनियस ने किया था।

यद्यपि सभी जीवों का अध्ययन करना लगभग असंभव है, इसलिए ऐसी युक्ति बनाने की आवश्यकता है जो इसे संभव कर सके। इस प्रक्रिया को **वर्गीकरण** कहते हैं। वर्गीकरण वह प्रक्रिया है जिसमें कुछ सरलता से दृश्य गुणों के आधार पर सुविधाजनक वर्ग में वर्गीकृत किया जा सके। उदाहरण के लिए हम पौधों अथवा प्राणियों और कुत्ता, बिल्ली अथवा कीट को सरलता से पहचान लेते हैं। जैसे ही हम इन शब्दों का उपयोग करते है, उसी समय हमारे मस्तिष्क में इन जीव के ऐसे कुछ गुण आ जाते हैं जिससे उनका उस वर्ग से संबंध होता है। जब आप कुत्ते के विषय में सोचते हो तो आपके मस्तिष्क में क्या प्रतिबिंब बनता है। स्पष्टत: आप कुत्ते को ही देखेंगे न कि बिल्ली को। अब, यदि एलशेशियन के विषय में सोचे तो हमें पता लगता है कि हम किसके विषय में चर्चा कर रहे हैं। इसी प्रकार, मान लो हमें 'स्तनधारी' कहना है तो आप ऐसे जंतु के विषय में सोचोगे जिसके बाह्य कान और शरीर पर बाल होते हैं। इसी प्रकार पौधों में यदि हम 'गेहूँ' के विषय में चर्चा करें तो हमारे मस्तिष्क में गेहूँ का पौधा आ जाएगा। इसलिए ये सभी 'कुत्ता', 'बिल्ली', 'स्तनधारी', 'गेहूँ', 'चावल', 'पौधे', 'जंतु' आदि सुविधाजनक वर्ग हैं जिनका उपयोग हम पढ़ने में करते हैं। इन वर्गों की वैज्ञानिक शब्दावली **टैक्सा** है। यहाँ आपको स्वीकार करना चाहिए कि 'टैक्सा' विभिन्न स्तर पर सही वर्गों को बता सकता है। 'पौधे' भी एक टैक्सा हैं। 'गेहूँ' भी एक टैक्सा है। इसी प्रकार 'जंतु', 'स्तनधारी', 'कुत्ता' ये सभी टैक्सा हैं। लेकिन क्या आप जानते हैं कि कुत्ता एक स्तनधारी और स्तनधारी प्राणी है। इसलिए प्राणी, स्तनधारी तथा कुत्ता विभिन्न स्तरों पर टैक्सा को बताता है।

इसलिए, गुणों के आधार पर सभी जीवों को विभिन्न टैक्सा में वर्गीकृत कर सकते हैं। गुण जैसे प्रकार, रचना, कोशिका की रचना, विकासीय प्रक्रम तथा जीव की पारिस्थितिक सूचनाएं आवश्यक हैं और ये आधुनिक वर्गीकरण अध्ययन के आधार हैं।

इसलिए, विशेषीकरण, पहचान (अभिज्ञान), वर्गीकरण तथा नाम पद्धति आदि ऐसे प्रक्रम (प्रणाली) हैं जो **वर्गिकी** (वर्गीकरण विज्ञान) के आधार हैं।

वर्गिकी कोई नई नहीं है। मानव सदैव विभिन्न प्रकार के जीवों के विषय में अधिकाधिक जानने का प्रयत्न करता रहा है, विशेष रूप से उनके विषय में जो उनके लिए अधिक उपयोगी थे। आदिमानव को अपनी मूलभूत आवश्यकताओं जैसे- भोजन, कपड़े तथा आश्रय के लिए नए-नए स्रोत खोजने पड़ते थे। इसलिए विभिन्न जीवों के वर्गीकरण का आधार 'उपयोग' पर आधारित था।

काफी समय से मानव विभिन्न प्रकार के जीवों के विषय में जानने और उनकी विविधता सहित उनके संबंध में रुचि लेता रहा है। अध्ययन की इस शाखा को **वर्गीकरण पद्धति** (सिस्टेमेटिक्स) कहते हैं। 'सिटेमेटिक्स' शब्द लैटिन शब्द 'सिस्टेमा' से आया है जिसका अर्थ है जीवों की नियमित व्यवस्था। लीनियस ने अपने पब्लिकेशन का टाइटल 'सिस्टेमा नेचर' चुना। वर्गीकरण पद्धति में पहचान, नाम पद्धति तथा वर्गीकरण को शामिल करके इसके क्षेत्र को बढ़ा दिया गया है। वर्गीकरण पद्धति में जीवों के विकासीय संबंध का भी ध्यान रखा गया है।

1.2 वर्गिकी संवर्ग

वर्गीकरण एकल सोपान प्रक्रम नहीं है; बल्कि इसमें पदानुक्रम सोपान होते हैं जिसमें प्रत्येक सोपान पद अथवा वर्ग को प्रदर्शित करता है। चूँकि संवर्ग समस्त वर्गिकी व्यवस्था है इसलिए इसे **वर्गिकी संवर्ग** कहते हैं और तभी सारे संवर्ग मिलकर **वर्गिकी पदानुक्रम** बनाते हैं। प्रत्येक संवर्ग वर्गीकरण की एक इकाई को प्रदर्शित करता है। वास्तव में, यह एक पद को दिखाता है और इसे प्राय: **वर्गक** (टैक्सॉन) कहते हैं।

वर्गिकी संवर्ग तथा पदानुक्रम का वर्णन एक उदाहरण द्वारा कर सकते हैं। कीट जीवों के एक वर्ग को दिखाता है जिसमें एक समान गुण जैसे तीन जोड़ी संधिपाद (टाँगें) होती हैं। इसका अर्थ है कि कीट स्वीकारणीय सुस्पष्ट जीव है जिसका वर्गीकरण किया जा सकता है, इसलिए इसे एक पद अथवा संवर्ग का दर्जा दिया गया है। क्या आप ऐसे किसी जीवों के अन्य वर्ग का नाम बता सकते हैं? स्मरण रहे कि वर्ग संवर्ग को दिखाता है। प्रत्येक पद अथवा वर्गक वास्तव में, वर्गीकरण की एक इकाई को बताता है। ये वर्गिकी वर्ग/संवर्ग सुस्पष्ट जैविक है ना कि केवल आकारिकीय समूहन।

सभी ज्ञात जीवों के वर्गिकीय अध्ययन से सामान्य संवर्ग जैसे जगत (किंगडम), संघ (फाइलम), अथवा भाग (पौधों के लिए), वर्ग (क्लास), गण (आर्डर), कुल (फैमिली), वंश (जीनस) तथा जाति (स्पीशीज) का विकास हुआ। पौधों तथा प्राणियों दोनों में स्पीशीज सबसे निचले संवर्ग में आती है। अब आप यह प्रश्न पूछ सकते हैं, कि किसी जीव को विभिन्न संवर्गों में कैसे रखते हैं ? इसके लिए मूलभूत आवश्यकता व्यष्टि अथवा उसके वर्ग के गुणों का ज्ञान होना है। यह समान प्रकार के जीवों तथा अन्य प्रकार के जीवों में समानता तथा विभिन्नता को पहचानने में सहायता करता है।

1.2.1 स्पीशीज (जाति)

वर्गिकी अध्ययन में जीवों के वर्ग, जिसमें मौलिक समानता होती है, उसे **स्पीशीज** कहते हैं। हम किसी भी स्पीशज को उसमें समीपस्थ संबंधित स्पीशीज से, उनके आकारिकीय विभिन्नता के आधार पर उन्हें एक दूसरे से अलग कर सकते हैं। हम इसके लिए *मैंजीफेरा इंडिका* (आम) *सोलेनम ट्यूबरोसम* (आलू) तथा *पेंथरा लिओ* (शेर) के उदाहरण लेते हैं। इन सभी तीनों नामों में *इंडिका, ट्यूबरोसम* तथा लिओ जाति संकेत पद हैं। जबकि पहले शब्द *मैंजीफेरा, सोलेनम,* तथा *पेंथरा* वंश के नाम हैं और यह टैक्सा अथवा संवर्ग का भी निरूपण करते हैं। प्रत्येक वंश में एक अथवा एक से अधिक जाति संकेत पद हो सकते हैं जो विभिन्न जीवों, जिनमें आकारकीय गुण समान हों, को दिखाते

हैं। उदाहरणार्थ, पेंथरा में एक अन्य जाति संकेत पद है जिसे *टिगरिस* कहते हैं। *सोलेनम* वंश में *नाइग्रिम, मेलांजेना* भी आते हैं। मानव की जाति सेपियंस है, जो *होमों* वंश में आता है। इसलिए मानव का वैज्ञानिक नाम *होमोसेपियंस* है।

1.2.2 वंश (जीनस)

वंश में संबंधित स्पीशीज का एक वर्ग आता है जिसमें स्पीशीज के गुण अन्य वंश में स्थित स्पीशीज की तुलना में समान होते हैं। हम कह सकते हैं कि वंश समीपस्थ संबंधित स्पीशीज का एक समूह है। उदाहरणार्थ आलू, टमाटर तथा बैंगन; ये दोनों अलग-अलग स्पीशीज हैं, लेकिन ये सभी *सोलेनम* वंश में आती हैं। शेर (*पेंथरा लिओ*), चीता (*पेंथर पारडस*) तथा (*पेंथर टिगरिस*) जिनमें बहुत से गुण हैं, वे सभी *पेंथरा* वंश में आते हैं। यह वंश दूसरे वंश फेलिस, जिसमें बिल्ली आती है, से भिन्न है।

1.2.3 कुल

अगला संवर्ग कुल है जिसमें संबंधित वंश आते हैं। वंश स्पीशीज की तुलना में कम समानता प्रदर्शित करते हैं। कुल के वर्गीकरण का आधार पौधों के कायिक तथा जनन गुण हैं। उदाहरणार्थ; पौधों में तीन विभिन्न वंश *सोलेनम, पिटूनिआ* तथा धतूरा को *सोलेनेसी* कुल में रखते हैं। जबकि प्राणी वंश *पेंथरा* जिसमें शेर, बाघ, चीता आते हैं को *फेलिस* (बिल्ली) के साथ *फेलिडी* कुल में रखे जाते हैं। इसी प्रकार, यदि आप बिल्ली तथा कुत्ते के लक्षण को देखो तो आपको दोनों में कुछ समानताएं तथा कुछ विभिन्नताएं दिखाई पड़ेंगी। उन्हें क्रमशः दो विभिन्न कुलों कैनीडी तथा फेलिडी में रखा गया है।

1.2.4 गण (आर्डर)

आपने पहले देखा है कि संवर्ग जैसे स्पीशीज, वंश तथा कुल समान तीनों लक्षणों पर आधारित है। प्रायः गण तथा अन्य उच्चतर वर्गिकी संवर्ग की पहचान लक्षणों के समूहन के आधार पर करते हैं। गण में उच्चतर वर्ग होने के कारण कुलों के समूह होते हैं। जिनके कुछ लक्षण एक समान होते हैं। इसमें एक जैसे लक्षण कुल में शामिल विभिन्न वंश की अपेक्षा कम होते हैं। पादप कुल जैसे कोनवोलव्युलेसी, सोलेनेसी को पॉलिसोनिएलस गण में रखा गया है। इसका मुख्य आधार पुष्पी लक्षण है। जबकि प्राणी कारनीवोरा गण में फेलिडी तथा कैनीडी कुलों को रखा गया है।

1.2.5 वर्ग (क्लास)

इस संवर्ग में संबंधित गण आते हैं। उदाहरणार्थ प्राइमेटा गण जिसमें बंदर, गोरिला तथा गिब्बॉन आते हैं, और कारनीवोरा गण जिसमें बाघ, बिल्ली तथा कुत्ता आते हैं, को मैमेलिया वर्ग में रखा गया है। इसके अतिरिक्त मैमेलिया वर्ग में अन्य गण भी आते हैं।

1.2.6 संघ (फाइलम)

वर्ग जिसमें जंतु जैसे मछली, उभयचर, सरीसृप, पक्षी तथा स्तनधारी आते हैं, अगले उच्चतर संवर्ग, जिसे संघ कहते हैं, का निर्माण करते हैं। इन सभी को एक समान गुणों

© NCERT not to be republished

जगत (किंगडम)
↑
संघ (फाइलम) या भाग (डिविजन)
↑
वर्ग (क्लास)
↑
गण (आर्डर)
↑
कुल (फैमिली)
↑
वंश
↑
जाति

चित्र 1.1 आरोही क्रम में पदानुक्रम वर्गिकी संवर्ग

जैसे पृष्ठरज्जु (नोटोकॉर्ड) तथा पृष्ठीय खोखला तंत्रिका तंत्र के होने के आधार पर कॉर्डेटा संघ में रखा गया है। पौधों में इन वर्गों, जिसमें कुछ ही एक समान लक्षण होते हैं, को उच्चतर संवर्ग भाग (डिविजन) में रखा गया है।

1.2.7 जगत (किंगडम)

जंतु के वर्गिकी तंत्र में विभिन्न संघों के सभी प्राणियों को उच्चतम संवर्ग जगत में रखा गया है। जबकि पादप जगत में विभिन्न भाग (डिविजन) के सभी पौधों को रखा गया है। विभिन्न संघों के सभी प्राणियों को एक अलग जगत एनिमेलिया में रखा गया है जिससे कि उन्हें पौधों से अलग किया जा सके। पौधों को प्लांटी जगत में रखा गया है। भविष्य में हम इन दो वर्गों को जंतु तथा पादप जगत कहेंगे।

इनमें स्पीशीज से लेकर जगत तक विभिन्न वर्गिकी संवर्ग को आरोही क्रम में दिखाया गया है। ये संवर्ग हैं। यद्यपि वर्गिकी विज्ञानियों ने इस पदानुक्रम में उपसंवर्ग भी बताए हैं। इसमें विभिन्न टैक्सा का उचित वैज्ञानिक स्थान देने में सुविधा होती है।

चित्र 1.1 में पदानुक्रम को देखो। क्या आप इस व्यवस्था के आधार का स्मरण कर सकते हो ? उदाहरण के लिए जैसे-जैसे हम स्पीशीज से जगत की ओर ऊपर जाते हैं; वैसे ही समान गुणों में कमी आती जाती है। सबसे नीचे जो टैक्सा होगा उसके सदस्यों में सबसे अधिक समान गुण होंगे। जैसे-जैसे उच्चतर संवर्ग की ओर जाते हैं, उसी स्तर पर अन्य टैक्सा के संबंध निर्धारित करने अधिक कठिन हो जाते हैं। इसलिए वर्गीकरण की समस्या और भी जटिल हो जाती है।

तालिका 1.1 में कुछ सामान्य जीवों जैसे घरेलू मक्खी, मानव, आम तथा गेहूँ के विभिन्न वर्गिकी संवर्गों को दिखाया गया है।

© NCERT not to be republished

तालिका 1.1 वर्गिकी संवर्ग सहित कुछ जीव

सामान्य नाम	जैविक नाम	वंश	कुल	गण	वर्ग	संघ/भाग
मानव	*होमो सेपियन्स*	*होमो*	होमोनिडी	प्राइमेट	मेमेलिया	कॉरडेटा
घरेलू मक्खी	*मस्का डोमेस्टिका*	*मस्का*	म्यूसीडी	डिप्टेरा	इंसेक्टा	आर्थ्रोपोडा
आम	*मेंजीफेरा इंडिका*	*मेंजीफेरा*	एनाकरडिएसी	सेपिन्डेल्स	डाइकोटीलिडनी	एंजियोस्पर्मी
गेहूँ	*ट्रीटीकम एस्टीवम*	*ट्रीटीकम*	पोएसी	पोएल्स्	मोनोकोटीलिडनी	एंजियोस्पर्मी

सारांश

जीव जगत में प्रचुर मात्रा में विविधताएं दिखाई पड़ती हैं। असंख्य पादप तथा प्राणियों की पहचान तथा उनका वर्णन किया गया है; परंतु अब भी इनकी बहुत बड़ी संख्या अज्ञात है। जीवों के एक विशाल परिसर को आकार, रंग, आवास, शरीर क्रियात्मक तथा आकारिकीय लक्षणों के कारण हमें जीवों की व्याख्या करने के लिए बाधित होना पड़ता है। जीवों की विविधता तथा इनकी किस्मों के अध्ययन को सुसाध्य एवं सरल बनाने के लिए जीव विज्ञानियों ने कुछ नियमों तथा सिद्धांतों का प्रतिपादन किया, जिससे जीवों की पहचान, उनका नाम पद्धति तथा वर्गीकरण संभव हो सकें। ज्ञान की इस शाखा को वर्गिकी का नाम दिया गया है। पादपों तथा प्राणियों की विभिन्न स्पीशीज का वर्गिकी अध्ययन कृषि वानिकी और हमारे जैव-संसाधन में भिन्नता के सामान्य ज्ञान में लाभदायक सिद्ध हुए। वर्गिकी के मूलभूत आधार जैसे जीवों की पहचान, उनका नामकरण, तथा वर्गीकरण विश्वव्यापी रूप से अंतर्राष्ट्रीय कोड के अंतर्गत विकसित किया गया है। समरूपता तथा विभिन्नताओं को आधार मानकर प्रत्येक जीव को पहचाना गया है तथा उसे द्विपद नाम दिया गया। सही वैज्ञानिक तंत्र के अनुसार द्विपद नाम पद्धति, जीव वैज्ञानिक नाम जो दो शब्दों से मिलकर बना होता है, दिया जा सकता है। जीव वर्गीकरण तंत्र में अपने स्थान को प्रदर्शित करता है। बहुत से वर्ग/पद होते हैं जिन्हें प्राय: वर्गिकी संवर्ग अथवा टैक्सा कहते हैं। यह सभी वर्ग वर्गिकी पदानुक्रम बनाते हैं।

अभ्यास

1. जीवों को वर्गीकृत क्यों करते हैं?
2. वर्गीकरण प्रणाली को बार-बार क्यों बदलते हैं ?
3. जिन लोगों से आप प्राय: मिलते रहते हैं, आप उनको किस आधार पर वर्गीकृत करना पसंद करेंगे ? (संकेत : ड्रेस, मातृभाषा, प्रदेश जिसमें वे रहते हैं, आर्थिक स्तर आदि)।
4. व्यष्टि तथा समष्टि की पहचान से हमें क्या शिक्षा मिलती है?
5. आम का वैज्ञानिक नाम निम्नलिखित हैं। इसमें से कौन सा सही है ?

   मेंजीफेरा इंडिका

   मेंजीफेरा इंडिका
6. टैक्सॉन की परिभाषा दीजिए। विभिन्न पदानुक्रम स्तर पर टैक्सा के कुछ उदाहरण दीजिए।
7. क्या आप वर्गिकी संवर्ग का सही क्रम पहचान सकते हैं?

   (अ) जाति (स्पीशीज) → गण (आर्डर) → संघ (फाइलम) → जगत (किंगडम)

   (ब) वंश (जीनस) → जाति → गण → जगत

   (स) जाति → वंश → गण → संघ
8. जाति शब्द के सभी मानवीय वर्तमान कालिक अर्थों को एकत्र कीजिए। क्या आप अपने शिक्षक से उच्च कोटि के पौधों तथा प्राणियों तथा बैक्टीरिया की स्पीशीज का अर्थ जानने के लिए चर्चा कर सकते हैं?
9. निम्नलिखित शब्दों को समझिए तथा परिभाषित कीजिए-

   (i) संघ (ii) वर्ग (iii) कुल (iv) गण (v) वंश
10. पौधों तथा प्राणियों के उचित उदाहरण देते हुए वर्गिकी पदानुक्रम का चित्रण कीजिए।

© NCERT not to be republished

1108CH02

अध्याय 2

जीव जगत का वर्गीकरण

2.1 मॉनेरा किंगडम

2.2 प्रोटिस्टा किंगडम

2.3 फंजाई किंगडम

2.4 प्लांटी किंगडम

2.5 ऐनिमेलिया किंगडम

2.6 वायरस, विरोइड तथा लाइकेन

सभ्यता के प्रारंभ से ही मानव ने सजीव प्राणियों के वर्गीकरण के अनेक प्रयास किए हैं। वर्गीकरण के ये प्रयास वैज्ञानिक मानदंडों की जगह सहज बुद्धि पर आधारित हमारे भोजन, वस्त्र एवं आवास जैसी सामान्य उपयोगिता के वस्तुओं के उपयोग की आवश्यकताओं पर आधारित थे। इन प्रयासों में जीवों के वर्गीकरण के वैज्ञानिक मानदंडों का उपयोग सर्वप्रथम अरस्तू ने किया था। उन्होंने पादपों को सरल आकारिक लक्षणों के आधार पर वृक्ष, झाड़ी एवं शाक में वर्गीकृत किया था। जबकि उन्होंने प्राणियों का वर्गीकरण लाल रक्त की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति के आधार पर किया था।

लीनियस के काल में सभी पादपों और प्राणियों के वर्गीकरण के लिए एक **द्विजगत पद्धति** विकसित की गई थी, जिसमें उन्हें क्रमश: **प्लांटी** (पादप) एवं **एनिमैलिया** (प्राणि) जगत में वर्गीकृत किया गया था। इस पद्धति के अनुसार यूकैरियोटी (ससीमकेंद्रकी) एवं प्रोकैरियोटी (असीमकेंद्रकी), एक कोशिक एवं बहुकोशिक तथा प्रकाश संश्लेषी (हरित शैवाल) एवं अप्रकाश संश्लेषी (कवक) के बीच विभेद स्थापित करना संभव नहीं था। पादपों एवं प्राणियों पर आधारित यह वर्गीकरण आसान एवं सरलता से समझे जाने के बावजूद बहुत से जीवधारियों को इनमें से किसी भी वर्ग में रखना संभव नहीं था। इसी कारण अत्यंत लंबे समय से चली आ रही वर्गीकरण की द्विजगत पद्धति अपर्याप्त सिद्ध हो रही थी। इसके अतिरिक्त, वर्गीकरण के लिए आकारिकी के साथ-साथ कोशिका संरचना, कोशिका भित्ति के लक्षण, पोषण की विधि, आवास, प्रजनन की विधि याँ एवं विकासीय संबंधों को भी समाहित करने की आवश्यकता महसूस की जाने लगी। अत: समय के साथ-साथ सजीवों के वर्गीकरण की पद्धति में अनेक परिवर्तन आए हैं। पादप एवं प्राणी जगत के वर्गीकरण की इन कठिन पद्धतियों, जिनमें सम्मिलित समूहों/जीवधारियों में होने वाले परिवर्तन शामिल हैं, सदा ही समाविष्ट रहे हैं। इसके अतिरिक्त जीवधारियों के विभिन्न जगत की संख्या एवं उनके लक्षणों की विभिन्न वैज्ञानिकों द्वारा अलग-अलग व्याख्या की गई है।

© NCERT not to be republished

तालिका - 2.1 पाँच जीव-जगत के लक्षण

लक्षण	पाँच जगत				
	मॉनेरा	प्रोटिस्टा	फंजाई	प्लांटी	ऐनिमेलिया
कोशिका प्रकार	प्रोकैरियोटिक	यूकैरियोटिक	यूकैरियोटिक	यूकैरियोटिक	यूकैरियोटिक
कोशिका भित्ति	सेलूलोज रहित (बहुशर्कराइड) + एमीनो अम्ल	कुछ में उपस्थित	उपस्थित (सेल्युलोस रहित)काइटिन युक्त	उपस्थित (सेल्युलोस सहित)	अनुपस्थित
केंद्रक झिल्ली)	अनुपस्थित	उपस्थित	उपस्थित	उपस्थित	उपस्थित
काय संरचना	कोशिकीय	कोशिकीय	बहुकोशिक/ अदृढ़ ऊतक	ऊतक/अंग ऊतकतंत्र	ऊतक/अंग/ अंग तंत्र
पोषण की विधि	स्वपोषी (रसायन संश्लेषी एवं प्रकाशसंश्लेषी) तथा परपोषी (मृतपोषी एवं परजीवी)	स्वपोषी (प्रकाशसंश्लेषी) तथा परपोषी	परपोषी (मृतपोषी एवं परजीवी	स्वपोषी (प्रकाशसंश्लेषी)	परपोषी (प्राणि समभोजी, मृतपोषी इत्यादि)
प्रजनन की विधि	संयुग्मन	युग्मक संलयन एवं संयुग्मन	निषेचन	निषेचन	निषेचन

सन् 1969 में आर.एच. व्हिटेकर द्वारा एक **पाँच जगत वर्गीकरण** की पद्धति प्रस्तावित की गई थी। इस पद्धति के अंतर्गत सम्मिलित किए जाने वाले जगतों के नाम **मॉनेरा, प्रोटिस्टा, फंजाई, प्लांटी** एवं **एनिमैलिया** हैं। कोशिका संरचना, शारीरिक संरचना, पोषण की प्रक्रिया, प्रजनन एवं जातिवृत्तीय संबंध उनके वर्गीकरण की पद्धति के प्रमुख मानदंड थे। तालिका 2.1 में इन सभी जगतों के विभिन्न लक्षणों का एक तुलनात्मक विवरण दिया गया है।

अब हम पाँच जगत वर्गीकरण से जुड़े मुद्दों एवं धारणाओं पर विचार करेंगे, जिससे वर्गीकरण की यह पद्धति प्रभावित है। इससे पहले की वर्गीकरण पद्धति के अंतर्गत बैक्टीरिया, नील-हरित शैवाल, (फंजाई) मॉस, फर्न, जिम्नोस्पर्म एवं एन्जिओस्पर्म को 'पादपों' के साथ रखा गया था। इस जगत के समस्त जीवों की कोशिकाओं में कोशिका भित्ति का उपस्थित रहना एक समानता थी, जबकि उनके अन्य लक्षण एक दूसरे से एक दम अलग थे। जीवन की तीन अनुक्षेत्र पद्धतियाँ भी प्रस्तावित की गई थीं, जिसमें मॉनेरा जगत् को दो अनुक्षेत्रों में वर्गीकृत किया गया तथा सारे यूकैरियोटिक जगत् को तीसरे अनुक्षेत्र में रखा गया। अत: एक षट्जगत् वर्गीकरण पद्धति भी प्रस्तावित की गई। आप इस पद्धति के विषय में विस्तार से उच्च कक्षाओं में पढ़ेंगे। प्रोकैरियोटिक बैक्टीरिया तथा नील-हरित शैवाल या साइनोबैक्टीरिया को अन्य यूकैरियोटिक जीवों के साथ वर्गीकृत कर दिया गया। इस पद्धति के अनुसार एक कोशिक जीवों को बहुकोशिक जीवों के साथ वर्गीकृत किया गया, जैसे- *क्लेमाइडोमोनास* एवं *स्पाइरोगायरा* शैवाल। इस वर्गीकरण में कवकों जैसे परपोषी का, हरित

पादपों जैसे स्वपोषी, के बीच भी विभेद नहीं किया गया, जबकि कवकों की कोशिका भित्ति काइटिन की एवं हरित पादपों की सेलुलोस की बनी होती है। इन्हीं लक्षणों को ध्यान में रखते हुए कवकों को एक अलग जगत 'फंजाई' के अंतर्गत रखा गया है। सभी प्रोकैरियोटिक जीवधारियों के साथ 'मॉनेरा' तथा एककोशिक जीवधारियों को प्रोटिस्टा जगत के अंतर्गत रखा गया है। प्रोटिस्टा जगत के अंतर्गत कोशिका भित्तियुक्त *क्लैमाइडोमोनास* एवं *क्लोरेला* (जिन्हें पहले पादपों के अंतर्गत शैवाल में रखा गया था) *पैरामीशियम* एवं *अमीबा* (जिन्हें पहले प्राणि जगत में रखा गया था) के साथ रखा गया है, जिनमें कोशिका भित्ति नहीं पाई जाती है। इस प्रकार इस पद्धति में अनेक जीवधारियों को एक साथ रखा गया है, जिन्हें पहले की पद्धतियों में अलग-अलग रखा गया था। ऐसा वर्गीकरण के मानदंडों में परिवर्तन के कारण हुआ है। इस प्रकार के परिवर्तन भविष्य में भी हो सकते हैं, जो लक्षणों तथा विकासीय संबंधों के प्रति हमारी समझ में सुधार पर निर्भर होगी। समय के साथ-साथ वर्गीकरण की एक ऐसी पद्धति विकसित करने का प्रयास किया गया है जो न सिर्फ आकारिक, कायिक एवं प्रजनन संबंधी समानताओं पर आधारित हों, बल्कि जातिवृत्तीय हो और विकासीय संबंधों पर भी आधारित हो।

इस अध्याय में हम व्हिटेकर पद्धति के अंतर्गत मॉनेरा, प्रोटिस्टा एवं फंजाई के लक्षणों का अध्ययन करेंगे। प्लांटी एवं एनिमेलिया जगत, जिन्हें सामान्य भाषा में क्रमश: पादप एवं प्राणि जगत कहते हैं, की चर्चा आगे के दो अध्यायों में अलग-अलग करेंगे।

2.1 मॉनेरा जगत

सभी बैक्टीरिया मॉनेरा जगत के अंतर्गत आते हैं। ये सूक्ष्मजीवियों में सर्वाधिक संख्या में होते हैं और लगभग सभी स्थानों पर पाए जाते हैं। मुट्ठी भर मिट्टी में सैकड़ों प्रकार के बैक्टीरिया देखे गए हैं। ये गर्म जल के झरनों, मरूस्थल, बर्फ एवं गहरे समुद्र जैसे विषम एवं प्रतिकूल वास स्थानों, जहाँ दूसरे जीव मुश्किल से ही जीवित रह पाते हैं, में भी पाए जाते हैं। कई बैक्टीरिया तो अन्य जीवों पर या उनके भीतर परजीवी के रूप में रहते हैं।

बैक्टीरिया को उनके आकार के आधार पर चार समूहों गोलाकार कोकस (बहुवचन कोकाई), छड़ाकार बैसिलस (बहुवचन बैसिलाई) कॉमा-आकार के, विब्रियम (बहुवचन-विब्रियाँ) तथा सर्पिलाकार स्पाइरिलम (बहुवचन स्पाइरिला) में बाँटा गया है (चित्र 2.1)।

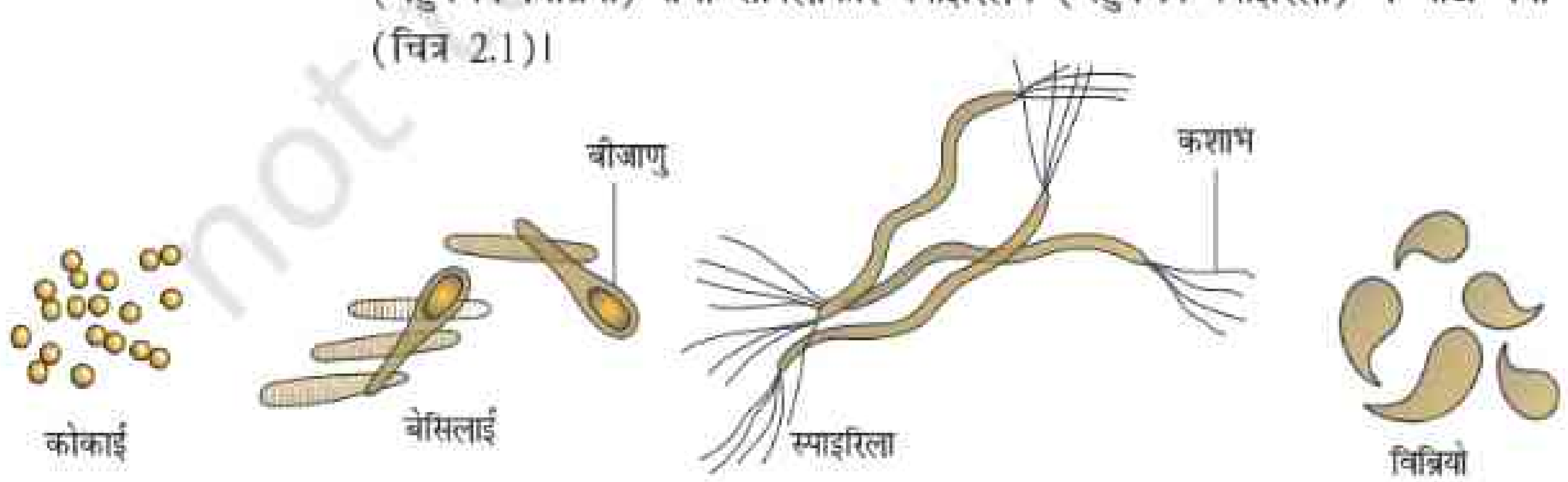

चित्र 2.1 विभिन्न आकार के बैक्टीरिया

यद्यपि संरचना में बैक्टीरिया अत्यंत सरल प्रतीत होते हैं; परंतु इनका व्यवहार अत्यंत जटिल होता है। चयपचाय (उपापचय) की दृष्टि से अन्य जीवधारियों की तुलना में बैक्टीरिया में बहुत अधिक विविधता पाई जाती है। उदाहरण स्वरूप वे अपना भोजन अकार्बनिक पदार्थों से संश्लेषित कर सकते हैं। ये प्रकाश संश्लेषी स्वपोषी अथवा रसायन संश्लेषी स्वपोषी होते हैं, अर्थात् वे अपना भोजन स्वयं संश्लेषित नहीं करते हैं; अपितु भोजन के लिए अन्य जीवधारियों अथवा मृत कार्बनिक पदार्थों पर निर्भर रहते हैं।

2.1.1 आद्य बैक्टीरिया

ये विशिष्ट प्रकार के बैक्टीरिया होते हैं, ये बैक्टीरिया अत्यंत कठिन वास स्थानों, जैसे-अत्यंत लवणीय क्षेत्र (हैलोफी), गर्म झरने (थर्मोएसिडोफिलस) एवं कच्छ क्षेत्र (मैथेनोजेन) में पाए जाते हैं। आद्य बैक्टीरिया तथा अन्य बैक्टीरिया की कोशिका भित्ति की संरचना एक दूसरे से भिन्न होती है। यही लक्षण उन्हें प्रतिकूल अवस्थाओं में जीवित रखने के लिए उत्तरदायी हैं। मैथेनोजेन अनेक रूमिनेंट पशुओं (जैसे गाय एवं भैंस) के आंत्र में पाए जाते हैं तथा इनके गोबर से मिथेन (जैव गैस) का उत्पादन करते हैं।

2.1.2 यूबैक्टीरिया

हजारों **यूबैक्टीरिया** अथवा वास्तविक बैक्टीरिया की पहचान एक कठोर कोशिका भित्ति एवं एक कशाभ (चल बैक्टीरिया) द्वारा की जाती है। **सायनो बैक्टीरिया** (जिन्हें नील-हरित शैवाल भी कहते हैं) में हरित पादपों की तरह क्लोरोफिल-ए पाया जाता है तथा ये **प्रकाश संश्लेषी स्वपोषी** होते हैं (चित्र 2.2)। सायनो बैक्टीरिया एककोशिक, क्लोनीय अथवा तंतुमय अलवण जलीय समुद्री अथवा स्थलीय शैवाल हैं। इनकी क्लोनी प्राय: जेलीनुमा आवरण से ढकी रहती हैं जो प्रदूषित जल में बहुत फलते-फूलते हैं। **बैक्टीरिया** जैसे *नॉस्टॉक* एवं *एनाबिना* पर्यावरण के नाइट्रोजन को टेटरोसिस्ट नामक विशिष्ट कोशिकाओं द्वारा स्थिर कर सकते हैं। रसायन संश्लेषी बैक्टीरिया नाइट्रेट, नाइट्राइट एवं अमोनिया जैसे विभिन्न अकार्बनिक पदार्थों को ऑक्सीकृत कर उनसे मुक्त ऊर्जा का उपयोग एटीपी उत्पादन के लिए करते हैं। ये नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, आयरन एवं सल्फर जैसे पोषकों के पुनर्चक्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

परपोषी बैक्टीरिया प्रकृति में बहुलता से पाए जाते हैं और इनमें अधिकतर महत्वपूर्ण अपघटक होते हैं। इन परपोषी बैक्टीरिया में से अनेक का मनुष्य के जीवन संबंधी गतिविधियों पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। ये दूध से दही बनाने में, प्रतिजैविकों के उत्पादन में, लेग्युम पादप की जड़ों में नाइट्रोजन स्थिरिकरण में सहायता करते हैं। कुछ बैक्टीरिया रोगजनक होते हैं जो मनुष्यों, फसलों, फार्म एवं पालतू पशुओं को हानि पहुँचाते हैं। विभिन्न बैक्टीरिया के कारण हैजा, टायफॉयड, टिटनेस, साइट्रस, कैंकर जैसी बीमारियां होती हैं।

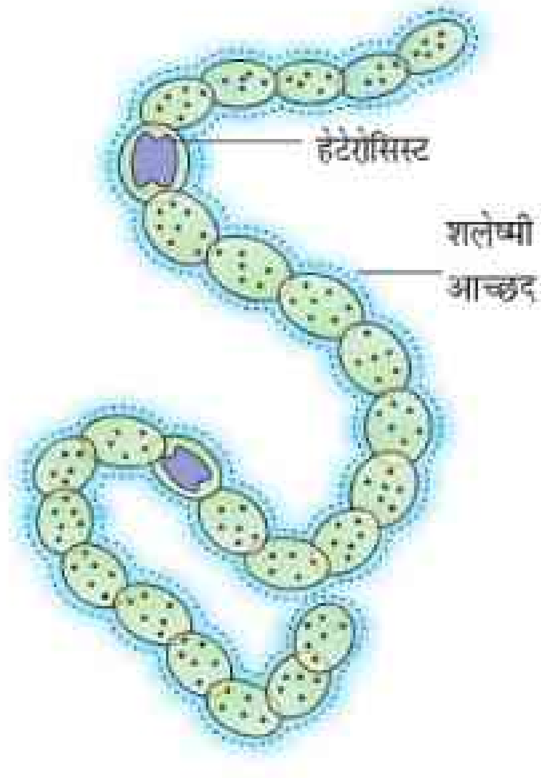

चित्र 2.2 एक तंतुमयी शैवाल-नॉस्टॉक

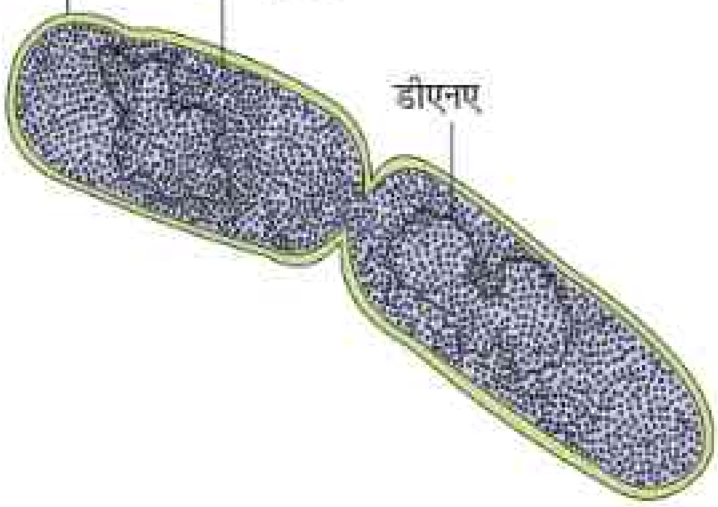

चित्र 2.3 एक विभक्त होता हुआ बैक्टीरिया

बैक्टीरिया प्रमुख रूप से कोशिका विभाजन द्वारा प्रजनन करते हैं। कभी-कभी, विपरीत परिस्थितियों में ये बीजाणु बनाते हैं। ये लैंगिक प्रजनन भी करते हैं, जिनमें एक बैक्टीरिया से दूसरे बैक्टीरिया में डीएनए का पुरातन स्थानांतरण होता है।

माइकोप्लाज्मा ऐसे जीवधारी हैं, जिनमें कोशिका भित्ति बिल्कुल नहीं पाई जाती है। ये सबसे छोटी जीवित कोशिकाएं हैं, जो ऑक्सीजन के बिना भी जीवित रह सकती हैं। अनेक माइकोप्लाज्मा प्राणियों और पादपों के लिए रोगजनक होती हैं।

2.2 प्रोटिस्टा जगत

सभी एककोशिक यूकैरियोटिक को **प्रोटिस्टा** के अंतर्गत रखा गया है, परंतु इस जगत की सीमाएं ठीक तरह से निर्धारित नहीं हो पाई हैं। एक जीव वैज्ञानिक के लिए जो 'प्रकाशसंश्लेषी प्रोटिस्टा' है, वही दूसरे के लिए 'एक पादप' हो सकता है। क्राइसोफाइट, डायनोफ्लैजिलेट, युग्लीनॉइड, अवपंक कवक एवं प्रोटोजोआ सभी को इस पुस्तक में प्रोटिस्टा के अंतर्गत रखा गया है। प्राथमिक रूप से प्रोटिस्टा के सदस्य जलीय होते हैं। यूकैरियोटिक होने के कारण इनकी कोशिका में एक सुसंगठित केंद्रक एवं अन्य झिल्लीबद्ध कोशिकांग पाए जाते हैं। कुछ प्रोटिस्टा में कशाभ एवं पक्ष्माभ भी पाए जाते हैं। ये अलैंगिक, तथा कोशिका संलयन एवं युग्मनज (जाइगोट) बनने की विधि द्वारा लैंगिक प्रजनन करते हैं।

2.2.1 क्राइसोफाइट

इस समूह के अंतर्गत डाइएटम तथा सुनहरे शैवाल (डेस्मिड) आते हैं। ये स्वच्छ जल एवं लवणीय (समुद्री) पर्यावरण दोनों में पाए जाते हैं। ये अत्यंत सूक्ष्म होते हैं तथा जलधारा के साथ निश्चेष्ट रूप से बहते हैं। डाइएटम में कोशिका भित्ति साबुनदानी की तरह इसी के अनुरूप दो अतिछादित कवच बनाती है। इन भित्तियों में सिलिका होती है, जिस कारण ये नष्ट नहीं होते हैं। इस प्रकार मृत डाइएटम अपने परिवेश (वास स्थान) में कोशिका भित्ति के अवशेष बहुत बड़ी संख्या में छोड़ जाते हैं। करोड़ों वर्षों में जमा हुए इस अवशेष को 'डाइएटमी मृदा' कहते हैं। कणमय होने के कारण इस मृदा का उपयोग पॉलिश करने, तेलों तथा सिरप के निस्यंदन में होता है। ये समुद्र के मुख्य उत्पादक हैं।

2.2.2 डायनोफ्लैजिलेट

ये जीवधारी मुख्यत: समुद्री एवं प्रकाशसंश्लेषी होते हैं। इनमें उपस्थित प्रमुख वर्णकों के आधार पीले, हरे, भूरे, नीले अथवा लाल दिखते हैं। इनकी कोशिका भित्ति के बाह्य सतह

पर सेल्युलोस की कड़ी पट्टिकाएं होती हैं। अधिकतर डायनोफ्लैजिलेट में दो कशाभ होते हैं, जिसमें एक लंबवत् तथा दूसरा अनुप्रस्थ रूप से भित्ति पट्टिकाओं के बीच की खांच में उपस्थित होता है। प्राय: लाल डायनोफ्लैसिलेट की संख्या में विस्फोट होता है, जिससे समुद्र का जल लाल (लाल तरंगें) दिखने लगता है। इतनी बड़ी संख्या के जीव से निकले जीव-विष के कारण मछली एवं अन्य समुद्री जीव मर जाते हैं। उदाहरण: *गोनियालैक्स* ।

2.2.3 यूग्लीनॉइड

इनमें से अधिकांशत: स्वच्छ जल में पाए जाने वाले जीवधारी हैं, जो स्थिर जल में पाए जाते हैं। इनमें कोशिका भित्ति की जगह एक प्रोटीनयुक्त पदार्थ की पर्त पेलिकिल होती है, जो इनकी संरचना को लचीला बनाती है। इनमें दो कशाभ होते हैं जिसमें एक छोटा तथा दूसरा लंबा होता है। यद्यपि सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में ये प्रकाशसंश्लेषी होते हैं, लेकिन सूर्य के प्रकाश के नहीं होने पर अन्य सूक्ष्म जीवधारियों का शिकार कर परपोषी की तरह व्यवहार करते हैं। आश्चर्यजनक रूप से युग्लीनॉइड में पाए जाने वाले वर्णक उच्च पादपों में उपस्थित वर्णकों के समान होते हैं। उदाहरण: *युग्लीना* (चित्र 2.4 ब)।

2.2.4 अवपंक कवक

अवपंक कवक मृतपोषी प्रोटिस्टा हैं। ये सड़ती हुई टहनियों तथा पत्तों के साथ गति करते हुए जैविक पदार्थों का भक्षण करते हैं। अनुकूल परिस्थितियों में ये समूह (प्लाज्मोडियम) बनाते हैं, जो कई फीट तक की लंबाई का हो सकता है। प्रतिकूल परिस्थितियों में ये बिखरकर सिरों पर बीजाणुयुक्त फलनकाय बनाते हैं। इन बीजाणुओं का परिक्षेपण वायु के साथ होता है।

2.2.5 प्रोटोजोआ

सभी प्रोटोजोआ परपोषी होते हैं, जो परभक्षी अथवा परजीवी के रूप में रहते हैं। ये प्राणियों के पुरातन संबंधी हैं। प्रोटोजोआ को चार प्रमुख समूहों में बाँटा जा सकता है।

अमीबीय प्रोटोजोआ: ये जीवधारी स्वच्छ जल, समुद्री जल तथा नम मृदा में पाए जाते हैं। ये अपने कूटपादों की सहायता से अपने शिकार को पकड़ते हैं। इनके समुद्री प्रकारों की सतह पर सिलिका के कवच होते हैं। इनमें से कुछ जैसे *एंटअमीबी* परजीवी होते हैं।

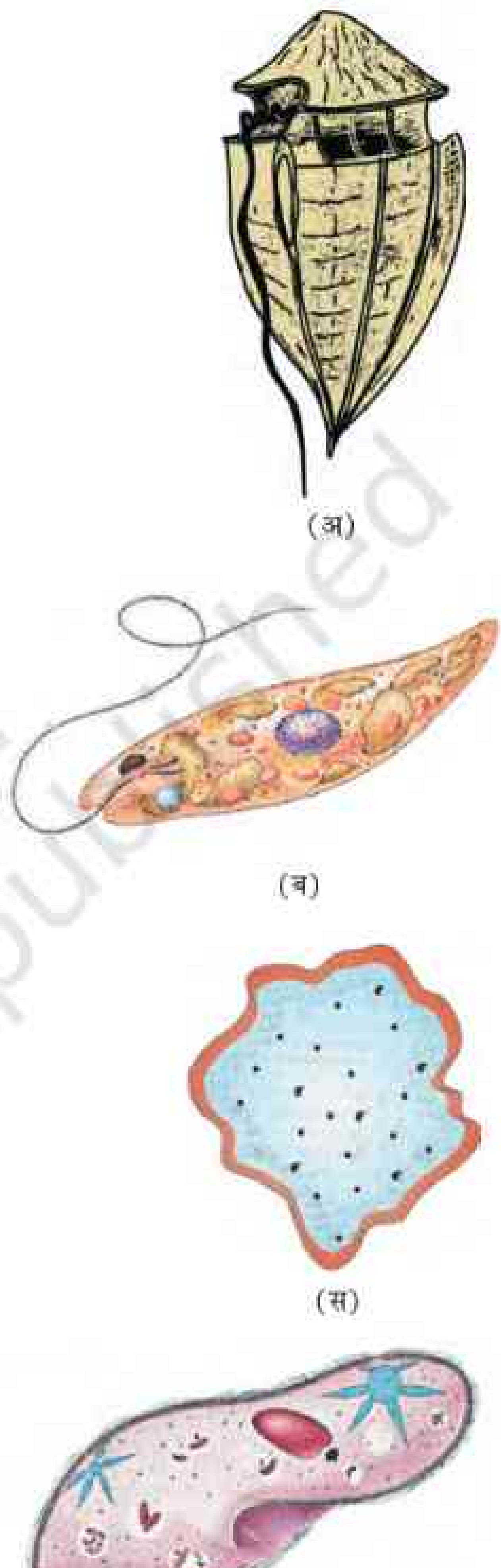

चित्र 2.4 प्रोटोजोआँन - (अ) डायनोफ्लैजिलेट (ब) यूग्लीना (स) अवपंक कवक (द) पैरामीशियम

© NCERT not to be republished

कशाभी प्रोटोजोआ: इस समूह के सदस्य स्वच्छंद अथवा परजीवी होते हैं, इनके शरीर पर कशाभ पाया जाता है। परजीवी कशाभी प्रोटोजोआ बीमारी के कारण हैं, जिनसे निद्रालु व्याधि नामक बीमारी होती है। उदाहरण: *ट्रिपैनोसोमा* ।

पक्ष्माभी प्रोटोजोआ: ये जलीय तथा अत्यंत सक्रिय गति करने वाले जीवधारी हैं, क्योंकि इनके शरीर पर हजारों की संख्या में पक्ष्माभ पाए जाते हैं। इनमें एक गुहा (ग्रसिका) होती है जो कोशिका की सतह के बाहर की तरफ खुलती है। पक्ष्माभों की लयबद्ध गति के कारण जल से पूरित भोजन गलेट की तरफ भेज दिया जाता है। उदाहरण-*पैरामीशियम*। (चित्र 2.4 द)

स्पोरोजोआ: इस समूह में वे विविध जीवधारी आते हैं जिनके जीवन चक्र में संक्रमण करने योग्य बीजाणु जैसी अवस्था पाई जाती है। इसमें सबसे कुख्यात प्लाज्मोडियम (मलेरिया परजीवी) प्रजाति है, जिसके कारण मानव की जनसंख्या पर आघात पहुँचाने वाला प्रभाव पड़ा है।

2.3 कवक (फंजाई) जगत

परपोषी जीवों में फंजाई (कवक) का जीव जगत में विशेष अद्भुत स्थान है। इनकी आकारिकी तथा वास स्थानों में बहुत भिन्नता होती है। आपने नम रोटी व सड़े हुए फलों में कवक को देखा होगा। सामान्य छत्रक (मशरूम) तथा कुकुरमुत्ता (टोडस्टूल) भी फंजाई हैं। सरसों की पत्तियों पर स्थित सफेद धब्बे परजीवी फंजाई के कारण होते हैं। कुछ एककोशिक फंजाई जैसे यीस्ट का उपयोग रोटी तथा बीयर बनाने के लिए किया जाता है। अन्य फंजाई पौधों तथा जंतुओं के रोग के कारण होते हैं। उदाहरण के लिए गेहूँ में किट्ट रोग पक्सिनिया के कारण होता है। कुछ फंजाई जैसे *पेनिसिलियम* से प्रतिजैविक (एंटिबायोटिक) का निर्माण होता है। फंजाई विश्वव्यापी हैं और ये हवा, जल, मिट्टी में तथा जंतु एवं पौधों पर पाए जाते हैं। ये गरम तथा नम स्थानों पर सरलता से उग जाते हैं। क्या आपने कभी सोचा है कि हम अपने भोजन को रेफ्रिजरेटर में क्यों रखते हैं? हाँ, इससे हम अपने भोजन को बैक्टीरिया अथवा फंजाई के कारण खराब होने से बचाते हैं।

फंजाई तंतुमयी है, लेकिन यीस्ट जो एककोशिक है इसका अपवाद है। ये लंबी, पतली धागे की तरह की संरचनाएं होती हैं, जिन्हें कवक तंतु कहते हैं। कवक तंतु के जाल को कवक जाल (माइसीलियम) कहते हैं। कुछ कवक तंतु सतत नलिकाकार होते हैं, जिनमें बहुकेंद्रकित कोशिका द्रव्य (साइटोप्लाज्म) भरा होता है, जिन्हें संकोशिकी कवक तंतु कहते हैं। अन्य कवक तंतुओं में पटीय होते हैं। फंजाई की कोशिका भित्ति काइटिन तथा पॉलिसैकेराइड की बनी होती हैं।

अधिकांश फंजाई परपोषित होती हैं। वे मृत बस्ट्रेट्स से घुलनशील कार्बनिक पदार्थों को अवशोषित कर लेती हैं, अतः इन्हें **मृतजीवी** कहते हैं। जो फंजाई सजीव पौधों तथा जंतुओं पर निर्भर करती हैं, उन्हें **परजीवी** कहते हैं। ये शैवाल तथा लाइकेन के साथ तथा उच्चवर्गीय पौधों के साथ कवक मूल बना कर भी रह सकते हैं, ऐसी फंजाई **सहजीवी** कहलाती है।

फंजाई में जनन कायिक-खंडन, विखंडन, तथा मुकुलन विधि द्वारा होता है। अलैंगिक जनन बीजाणु, जिसे कोनिडिया कहते है अथवा धानी-बीजाणु अथवा चलबीजाणु, द्वारा

होता है। लैंगिक जनन निषिक्तांड (ऊस्पोरा), ऐस्कस बीजाणु तथा बेसिडियम बीजाणु द्वारा होता है। विभिन्न बीजाणु सुस्पष्ट संरचनाओं में उत्पन्न होते हैं जिन्हें फलनकाय कहते हैं। लैंगिक चक्र में निम्नलिखित तीन सोपान होते हैं:

(i) दो चल अथवा अचल युग्मकों के प्रोटोप्लाज्म का संलयन होना। इस क्रिया को **प्लैज्मोगैमी** कहते हैं।

(ii) दो केंद्रकों का संलयन होना जिसे **केंद्र संलयन** कहते हैं।

(iii) युग्मनज में मिऑसिस के कारण अगुणित बीजाणु बनना लैंगिक जनन में संयोज्य संगम के दौरान दो अगुणित कवक तंतु पास-पास आते हैं और संलयित हो जाते हैं। कुछ फंजाई में दो गुणित कोशिकाओं में संलयन के तुरंत बाद एक द्विगुणित (2n) कोशिका बन जाती है, यद्यपि अन्य फंजाई (ऐस्कोमाइसिटीज) में एक मध्यवर्ती द्विकेंद्रकी अवस्था (n+n) अर्थात् एक कोशिका में दो केंद्रक बनते हैं; ऐसी परिस्थिति को **केंद्रक युग्म** कहते हैं तथा इस अवस्था को फंगस की **द्विकेंद्रक प्रावस्था** कहते हैं। बाद में पैतृक केंद्रक संलयन हो जाते हैं और कोशिका द्विगुणित बन जाती है। फंजाई फलनकाय बनाती है, जिसमें न्यूनीकरण विभाजन होता है जिसके कारण अगुणित बीजाणु बनते हैं।

कवक जाल की आकारिकी, बीजाणु बनने तथा फलन काय बनने की विधि जगत को विभिन्न वर्गों में विभक्त करने का आधार बनते हैं।

2.3.1 फाइकोमाइसिटीज

फाइकोमाइसिटीज जलीय आवासों, गली-सड़ी लकड़ी, नम तथा सीलन भरे स्थानों अथवा पौधों पर अविकल्पी परजीवी के रूप में पाए जाते हैं। कवक जाल अपटीय तथा बहुकेंद्रकित होता है। अलैंगिक जनन चल बीजाणु अथवा अचल बीजाणु द्वारा होता है। ये बीजाणु धानी में अंतर्जातीय उत्पन्न होते हैं। दो युग्मकों के संलयन से युग्माणु बनते हैं। इन युग्मकों की आकारिकी एक जैसी (समयुग्मकता) अथवा भिन्न (असमयुग्मकी अथवा विषमयुग्मकी) हो सकती है। इसके सामान्य उदाहरण हैं *म्यूकर, राइजोपस* (रोटी के कवक पहले ही बता चुके हैं) तथा *ऐलबूगो* (सरसों पर परजीवी फंजाई) हैं।

2.3.2 ऐस्कोमाइसिटीज

इसे सामान्यत: थैली फंजाई भी कहते हैं। विरले पाए जाने वाले ऐस्कोमाइसिटीज एककोशिक जैसे यीस्ट (*सकैरोमाइसीज*) के अलावा ये बहुकोशिक जैसे *पेनिसिलियम*, होती है। ये मृतजीवी, अपघटक, परजीवी अथवा शमलरागी (पशुविष्टा

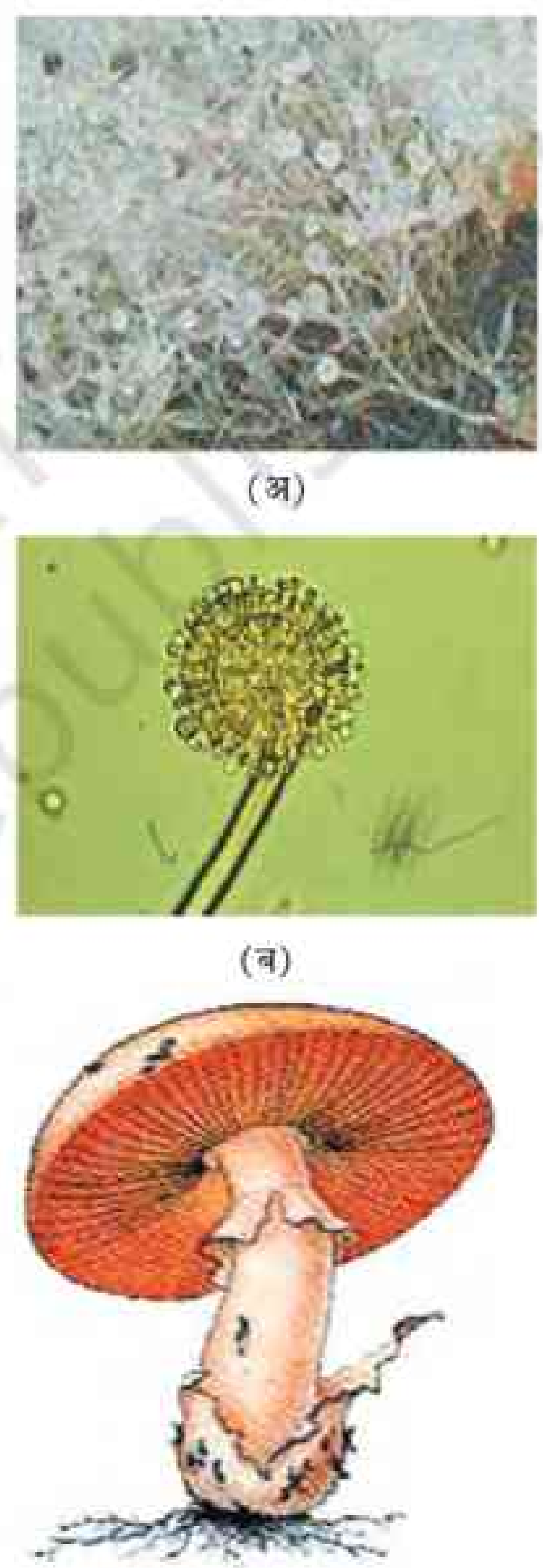

चित्र 2.5 फंजाई: (अ) म्यूकर (ब) ऐस्पर्जिलस (स) एगेरिकस

पर उगनेवाली) होते हैं। कवक जालशाखित तथा पटीय होता है। अलैंगिक बीजाणु कोनिडिया होते हैं जो विशिष्ट कवकजाल जिसे कोनिडिमधर कहते हैं, पर बहिर्जात रूप से उत्पन्न होते हैं। कोनिडिया अंकुरित होकर कवक जाल बनाते हैं। लैंगिक बीजाणु को ऐस्कस बीजाणु कहते हैं। ये बीजाणु थैलीसम ऐस्कस में अंतर्जातीय रूप से उत्पन्न होते हैं। ये ऐसाई (एक वचन ऐस्कस) विभिन्न प्रकार की फलनकाय में लगी रहती हैं, जिन्हें ऐस्कोकार्प कहते हैं। इसके कुछ उदाहरण हैं *ऐस्पर्जिलस,* (चित्र 2.5 ब) *क्लेवीसेप* तथा *न्यूरोस्पोरा* हैं। *न्यूरोस्पोरा* का उपयोग जैवरासायनिक तथा आनुवंशिक प्रयोगों में बहुत किया जाता है। इसी कारण यह पादप जगत के ड्रोसोफिला के समान प्रसिद्ध है। इस वर्ग में आने वाले मॉरिल तथा ट्रफल खाने योग्य होते हैं और इन्हें सुस्वादु भोजन समझा जाता है।

2.3.3 बेसिडियोमाइसिटीज

बेसिडियोमाइसिटीज के ज्ञात सामान्य प्रकार - मशरूम, ब्रेक्टफंजाई अथवा पफबॉल हैं। ये मिट्टी में, लट्ठे तथा वृक्ष के ठूँठों पर तथा सजीव पादपों के अंदर परजीवी के रूप में उगते हैं जैसे किट्ट तथा कंड (स्मट)। कवकजाल शाखित तथा पटीय होता है। इसमें अलैंगिक बीजाणु प्राय: नहीं होते हैं, लेकिन कायिक जनन खंडन विधि द्वारा बहुत सामान्य है। इसमें लैंगिक अंग नहीं होते, लेकिन इसमें प्लाज्मोगैमी विभिन्न स्ट्रेनो वाली दो कायिक कोशिकाओं अथवा जीन प्रारुप के संलयन से होती हैं। इसमें बनने वाली संरचना द्विकेंद्रकी होती है, जिससे अंतत: बेसिडियम बनते हैं। बेसिडियम में केंद्रक संलयन (कैरियोगैमी) तथा मिऑसिस होता है जिसके कारण चार बेसिडियम बीजाणु बनते हैं। बेसिडियमबीजाणु बेसिडियम पर बहिर्जातीय उत्पन्न होते हैं। बेसिडियम फलनकाय में लगे रहते हैं जिसे बेसिडियो कार्प कहते हैं, इसके कुछ सामान्य उदाहरण *ऐगैरिकस* (मशरूम) (चित्र 2.5 स), *आस्टीलैगो* (कंड) तथा *पक्सिनिया* (किट्ट फंगस) हैं।

2.3.4 ड्यूटिरोमाइसिटीज

इसे प्राय: अपूर्ण कवक भी कहते हैं; क्योंकि इसकी केवल अलैंगिक अथवा कायिक प्रवस्था ही ज्ञात हो पाई है। जब इस फंजाई की लैंगिक प्रवस्था की खोज हो जाती है, तब उसे उसके उचित वर्ग में रख दिया जाता है। यह भी संभव है कि अलैंगिक तथा कायिक प्रवस्थाओं को एक नाम दे दिया गया हो (और उन्हें ड्यूटिरोमासिटीज में रख दिया गया हो) और लैंगिक प्रवस्था को दूसरे वर्ग में। बाद में जब उनके अनुबंधों (कड़ी) का पता लगा और फंजाई की उचित पहचान हो गई। तब उन्हें ड्यूटिरोमासिटीज से निकाल लिया गया। एक बार जब ड्यूटिरोमासिटीज के सदस्यों की उचित (लैंगिक) प्रवस्था का पता लग जाए तब उन्हें एस्कोमाइसिटीज और बेसिडियोमाइसिटीज में सम्मिलित कर लेते हैं। ड्यूटिरोमाइसिटीज केवल अलैंगिक बीजाणुओं, जिन्हें कोनिडिया कहते हैं, से जनन करते हैं। इसके कवक जाल पटीय तथा शाखित होते हैं। इसके कुछ सदस्य मृतजीवी अथवा परजीवी होते हैं। लेकिन उनके अधिकांश सदस्य अपशिष्ट के अपघटक होते हैं और खनिज के चक्रण में सहायता करते हैं। इसके कुछ उदाहरण *आल्टरनेरिया, कोलीटोट्राइकम* तथा *ट्राईकोडर्मा* हैं।

2.4 पादप जगत (प्लांटी किंगडम)

पादप जगत में वे सभी जीव आते हैं जो यूकैरिऑटिक हैं और जिनमें क्लोरोफिल होते हैं। ऐसे जीवों को पादप कहते हैं। इनमें से कुछ पादप जैसे कीटभक्षी पौधे तथा परजीवी आंशिक रूप से विषमपोषी होते हैं। *ब्लेडरवर्ट* तथा वीनस फ्लाईट्रैप कीटभक्षी पौधों के और अमरबेल (*क्सकूटा*) परजीवी का उदाहरण हैं। पादप कोशिका में कोशिका भित्ति होती है जो सेल्यूलोज की बनी होती है और इसकी संरचना के बारे में विस्तृत विवरण अध्याय 3 में पढ़ेंगे। प्लांटी जगत में शैवाल, ब्रायोफाइट, टैरिडोफाइट, जिम्नोस्पर्म तथा एंजियोस्पर्म आते हैं।

पादप के जीवन चक्र में दो सुस्पष्ट अवस्थाएँ द्विगुणित बीजाणु-उद्‌भिद् तथा अगुणित युग्मकोद्‌भिद् होती हैं। इन दोनों में पीढ़ी एकांतरण होता है। विभिन्न प्रकार के पादप वर्गों में अगुणित तथा द्विगुणित प्रवस्थाओं की लंबाई, (और ये प्रवस्थाएँ मुक्तजीवी हैं अथवा दूसरों पर निर्भर करती हैं) के अनुसार विभिन्न होती हैं। युग्मनज (2n) में मिऑसिस विभाजन के द्वारा अगुणित (n) बीजाणु बनते हैं। ये बीजाणु अंकुरित होकर युग्मकोद्‌भिद् बनाते हैं। युग्मक (नर तथा मादा) युग्मकोद्‌भिद् पर बनते हैं जो संलयन होकर पुन: द्विगुणित युग्मनज बनाते हैं। युग्मनज से बीजाणु-उद्‌भिद् विकसित होता है। इस प्रक्रम को **संतति एकांतरण** कहते हैं। आप इस जगत का विस्तृत विवरण अध्याय 3 में पढ़ेंगे।

2.5 जंतु जगत (एनिमेलिया किंगडम)

इस जगत के जीव विषमपोषी यूकैरिऑटिक हैं जो बहुकोशिक हैं और उनकी कोशिका में कोशिका भित्ति नहीं होती। ये भोजन के लिए परोक्ष तथा अपरोक्ष रूप से पौधों पर निर्भर रहते हैं। ये अपने भोजन को एक आंतरिक गुहिका में पचाते हैं और भोजन को ग्लाइकोजन अथवा वसा के रूप में संग्रहण करते हैं। इनमें प्राणि समपोषण, अर्थात् भोजन, का अंतर्ग्रहण करना होता है। उनमें वृद्धि का एक निर्दिष्ट पैटर्न होता है और वे एक पूर्ण वयस्क जीव बन जाते हैं; जिसकी सुस्पष्ट आकृति तथा माप होती है। उच्चकोटि के जीवों में विस्तृत संवेदी तथा तंत्रिका प्रेरक क्रियाविधि विकसित होती है। इनमें से अधिकांश चलन करने में सक्षम होते हैं।

लैंगिक जनन नर तथा मादा के संगम से होता है और बाद में उसमें भ्रूण का विकास होता है। संघ के विभिन्न मुख्य अभिलक्षणों का विस्तृत वर्णन अध्याय 4 में किया गया है।

2.6 विषाणु (वाइरस), वाइराइड, प्रोसंक (प्रिओन) तथा लाइकेन

विटेकर द्वारा सुझाए पाँच जगत वर्गीकरण में लाइकेन व अकोशिक जीवों जैसे वाइरस, वाइराइड, तथा प्रोसंक (प्रिओन) का उल्लेख नहीं किया गया है। इनका संक्षिप्त परिचय नीचे दिया गया है।

हम सभी कभी न कभी जुकाम अथवा फ्लु से ग्रस्त होते हैं। क्या आप जानते हैं कि इसका वाइरस कैसे प्रभावित करता है? वाइरस का नाम वर्गीकरण में नहीं है, क्योंकि ये

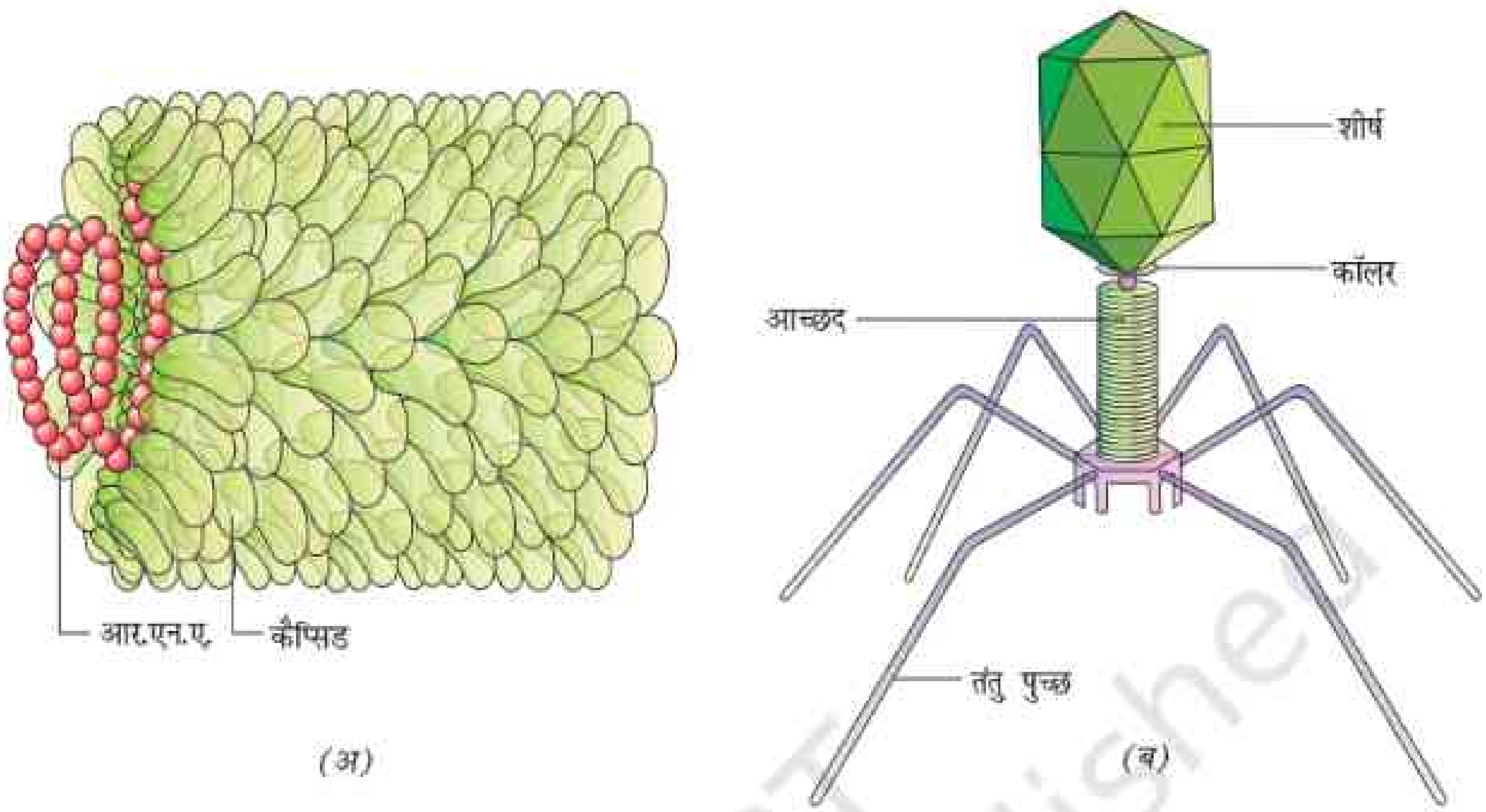

चित्र 2.6 (अ) टोबैको मोजेक वाइरस (टीएमवी) (ब) जीवाणु भोजी

वास्तविक 'जीवन' नहीं है- यदि हम यह मानते हैं कि सजीवों की कोशिका संरचना होती है। वाइरस अकोशिक जीव हैं जिनकी संरचना सजीव कोशिका के बाहर रवेदार होती है। एक बार जब ये कोशिका को संक्रमित कर देते हैं, तब ये मेजबान कोशिका की मशीनरी का उपयोग अपनी प्रतिकृति बनाने में करते हैं और मेजबान को मार देते हैं। *क्या आप वाइरस को सजीव अथवा निर्जीव कहेंगे?*

वाइरस का अर्थ है विष अथवा विषैला तरल। डिमित्री इवानोवस्की (1892) ने तंबाकू के मोजैक रोग के रोगाणुओं को पहचाना था, जिन्हें वाइरस नाम दिया गया। इनका माप बैक्टीरिया से भी छोटा था, क्योंकि ये बैक्टीरिया प्रूफ फिल्टर से भी निकल गए थे। एम. डब्ल्यु बेजेरिनेक (1898) ने पाया कि संक्रमित तंबाकू के पौधों का रस स्वस्थ तंबाकू के पौधे को भी संक्रमित करने में सक्षम है। उन्होंने इस रस (तरल) को *'कंटेजियम वाइवम फ्लुयइडम'* (संक्रामक जीवित तरल) कहा। डब्ल्यु. एम. स्टानले (1935) ने बताया कि वाइरस को रवेदार बनाया जा सकता है और इस रवे में मुख्यत: प्रोटीन होता है। वे अपनी विशिष्ट मेजबान कोशिका के बाहर निष्क्रिय होते हैं। वाइरस अविकल्पी परजीवी हैं।

वाइरस में प्रोटीन के अतिरिक्त आनुवंशिक पदार्थ भी होता है, जो आरएनए (RNA) अथवा डीएनए (DNA) हो सकता है। किसी भी वाइरस में आरएनए तथा डीएनए दोनों नहीं होते। वाइरस केंद्रक प्रोटीन (न्यूक्लियो प्रोटीन) और इसका आनुवंशिक पदार्थ संक्रामक होता है। प्राय: सभी पादप वाइरस में एक लड़ी वाला आरएनए होता है, और सभी जंतु वाइरस में एक अथवा दोहरी लड़ी वाला आरएनए अथवा डीएनए होता है। बैक्टीरियल वाइरस अथवा जीवाणुभोजी (बैक्टीरियोफेज-आवरण वाइरस जो बैक्टीरिया पर संक्रमण करता है) प्राय: दोहरी लड़ी

वाले डीएनए वाइरस होते हैं। प्रोटीन के आवरण (अस्तर) को कैप्सिड कहते हैं और यह छोटी-छोटी उप-इकाइयों जिन्हें पेटिकोशक (कैप्सोमीयर) कहते हैं, से मिलकर बनता है। कैप्सिड न्यूक्लिक एसिड को संरक्षित करता है ये पेटिकांशक कुंडलिनी अथवा बहुफलक ज्यामिती रूप में लगे रहते हैं। वाइरस से मम्पस, चेचक, हर्पीज तथा इंफ्लूएंजा नामक रोग हो जाते हैं। मनुष्यों में एड्स (AIDS) भी वाइरस के कारण होता है। पौधों में मोजैक बनना, पत्तियों का मुड़ना तथा कुंचन, पीला होना तथा शिरा स्पष्टता, बौना तथा अवरुद्ध वृद्धि होना इसके लक्षण हैं।

वाइराइड

सन 1971 में टी.ओ. डाइनर ने एक नया संक्रामक कारक खोजा जो वाइरस से भी छोटा तथा जिसके कारण 'पोटेटो स्पिंडल ट्यूबर' नामक रोग होता था। वाइराइडों में आरएनए तथा प्रोटीन आवरण (अस्तर), जो वाइरस में पाए जाते हैं उनका अभाव होता है। इसलिए यह वाइराइड के नाम से जाने जाते हैं। वाइराइड के आरएनए का आण्विक भार कम था।

प्रोसंक (प्रिओन)

आधुनिक चिकित्सा में कुछ संक्रामक न्यूरोलॉजिकल बीमारियाँ असामान्य रूप से फोल्ड प्रोटीन वाले कारकों द्वारा प्रेषित पाई गयीं। इन कारकों का आकार वाइरस के आकार के समान था। इन कारकों को प्रोसंग कहा गया। प्रोसंग द्वारा प्राणियों में होने वाली सबसे उल्लेखनीय बीमारियाँ बोवाइन स्पंजिफोर्म एन्सेफैलोपैथी है, जिन्हें आमतौर पर मवेशियों में मेडकाऊ रोग कहा जाता है और मनुष्यों में इसका समान प्रकार सी आर जैकब रोग (Creutzfeldt-Jakob Disease) होता है।

लाइकेन

लाइकेन शैवाल तथा कवक के सहजीवी सहवास अर्थात् पारस्परिक उपयोगी सहवास हैं। शैवाल घटक को **शैवालांश** तथा कवक के घटक को **माइकोबायंट** (कवकांश) कहते हैं, जो क्रमशः स्वपोषी तथा परपोषित होते हैं। शैवाल कवक (फंजाई) के लिए भोजन संश्लेषित करता है और कवक शैवाल के लिए आश्रय देता है तथा खनिज एवं जल का अवशोषण करता है। इनका सहवास इतना घनिष्ठ होता है कि यदि प्रकृति में लाइकेन को देख ले तो यह अनुमान लगाना असंभव है कि इसमें दो विभिन्न जीव हैं। लाइकेन प्रदूषण के बहुत अच्छे संकेतक हैं - वे प्रदूषित क्षेत्रों में नहीं उगते।

सारांश

सरल आकारिक लक्षणों पर आधारित पादपों और प्राणियों के वर्गीकरण को सर्वप्रथम अरस्तू ने प्रस्तावित किया था। बाद में लीनियस द्वारा सभी जीवधारियों को 'प्लांटी' तथा 'ऐनिमेलिया' जगत में वर्गीकृत किया गया। व्हिटैकर ने इसके बाद एक वृहत् पाँच जगत वर्गीकरण की पद्धति का प्रस्ताव किया। ये पाँच जगत मॉनेरा, प्रोटिस्टा, फंजाई, प्लांटी और ऐनिमेलिया हैं। पाँच जगत वर्गीकरण के प्रमुख मानदंड, कोशिका संरचना, दैहिक संगठन, पोषण एवं प्रजनन की विधि तथा जातिवृत्तीय संबंध हैं।

पाँच जगत वर्गीकरण के अंतर्गत बैक्टीरिया को मॉनेरा जगत में रखा गया है जो विश्वव्यापी है। इनमें उपापचय संबंधी विविधता अत्यंत वृहत् है। बैक्टीरिया में पोषण की विधि स्वपोषी अथवा परपोषी होती है।

प्रोटिस्टा जगत में क्राइसोफाइट, डायनोफ्लैजिलेट, युग्लीनॉइड, अवपंक कवक एवं प्रोटोजोआ जैसे एक कोशिक युकैरियोटिक जीवधारी सम्मिलित किए गए हैं। प्रोटिस्टा जीवधारियों की कोशिका में संगठित केंद्रक तथा झिल्लीबद्ध कोशिकांग पाए जाते हैं। इनमें प्रजनन अलैंगिक तथा लैंगिक दोनों प्रकार का होता है।

फंजाई (कवक) जगत की संरचना तथा आवास में बहुत विभिन्नता होती है। अधिकांश कवक में मृतजीवी प्रकार का पोषण होता है। उनमें लैंगिक तथा अलैंगिक जनन होता है। इस जगत के अंतर्गत चार वर्ग फाइकोमाइसिटीज, एस्कोमाइसिटीज, बेसिडिओमाइसिटीज तथा ड्यूटिरोमाइसिटीज आते हैं। प्लांटी (पादप-जगत) में सभी यूकैरियोटिक, क्लोरोफिलयुक्त जीव आते हैं। शैवाल, ब्रायोफाइट, टैरिजोफाइट, जिम्नोस्पर्म तथा एंजियोस्पर्म इस वर्ग में आते हैं। पौधों के जीवन चक्र में पीढ़ी युग्मकोद्भिद् और बीजाणु-उद्भिद् में एकांतरण होता है। परपोषित यूकैरिऑटिक बहुकोशिक जीवों, जिनकी कोशिका में कोशिका भित्ति नहीं होती, उन्हें एनिमेलिया किंगडम में शामिल किया गया है। इन जीवों में पोषण प्राणिसम होता है। इनमें प्रायः लैंगिक जनन होता है। कुछ अकोशिक जीव जैसे वाइरस तथा विरोइड एवं लाइकेन को वर्गीकरण के पाँच जगत प्रणाली में नहीं रखा गया है।

अभ्यास

1. वर्गीकरण की पद्धतियों में समय के साथ आए परिवर्तनों की व्याख्या कीजिए।
2. निम्नलिखित के बारे में आर्थिक दृष्टि से दो महत्वपूर्ण उपयोगों को लिखें:
   (क) परपोषी बैक्टीरिया
   (ख) आद्य बैक्टीरिया
3. डाइएटम की कोशिका भित्ति के क्या लक्षण हैं?
4. 'शैवाल पुष्पन' (Algal Bloom) तथा 'लाल तरंगें' (red-tides) क्या दर्शाती हैं।
5. वाइरस से विरोइड कैसे भिन्न होते हैं?
6. प्रोटोजोआ के चार प्रमुख समूहों का संक्षिप्त वर्णन कीजिए।
7. पादप स्वपोषी है। क्या आप ऐसे कुछ पादपों को बता सकते हैं, जो आंशिक रूप से परपोषित हैं?
8. शैवालांश तथा कवकांश शब्दों से क्या पता लगता है?
9. कवक (फंजाई) जगत के वर्गों का तुलनात्मक विवरण निम्नलिखित बिंदुओं पर करो:
   (क) पोषण की विधि
   (ख) जनन की विधि
10. युग्लीनॉइड के विशिष्ट चारित्रिक लक्षण कौन-कौन से हैं?
11. संरचना तथा आनुवंशिक पदार्थ की प्रकृति के संदर्भ में वाइरस का संक्षिप्त विवरण दो। वाइरस से होने वाले चार रोगों के नाम भी लिखें।
12. अपनी कक्षा में इस शीर्षक क्या वाइरस सजीव है अथवा निर्जीव, पर चर्चा करें?

© NCERT not to be republished

अध्याय 3

वनस्पति जगत

3.1 शैवाल
3.2 ब्रायोफ़ाइट
3.3 टेरिडोफाइट
3.4 जिम्नोस्पर्म
3.5 एंजियोस्पर्म

पिछले अध्याय में हमने विटेकर (1969) द्वारा सुझाए सजीवों के प्रमुख वर्ग के विषय में पढ़ा था। इसमें उन्होंने पाँच किंगडम मोनेरा, प्रोटिस्टा, फंजाई, एनिमेलिया तथा प्लांटी सुझाए थे। इस अध्याय में हम प्लांटी जगत, जिसे वनस्पति जगत भी कहते हैं, के बारे में तथा वर्गीकरण के विषय में विस्तार से पढ़ेंगे।

हमें यहाँ पर इस बात पर ध्यान देने की आवश्यकता है कि वनस्पति जगत के विषय में समयानुसार परिवर्तन आया है। फंजाई (कवक) तथा मोनेरा तथा प्रोटिस्टा वर्ग के सदस्य, जिनमें कोशिका भित्ति होती है, अब प्लांटी वर्ग से निकाल दिए गए हैं। यद्यपि वे पहले दिए गए वर्गीकरण के अनुसार एक ही जगत में होते थे। इसलिए सायनोबैक्टीरिया, जिन्हें नील हरित शैवाल कहते थे अब शैवाल नहीं है। इस अध्याय में हम प्लांटी के अंतर्गत शैवाल, ब्रायोफाइट, टैरिडोफाइट, जिम्नोस्पर्म तथा एंजियोस्पर्म के विषय में पढ़ेंगे।

आओ, इस तंत्र को प्रभावित करने वाले बिंदुओं को समझने के लिए एंजियोस्पर्म के वर्गीकरण को देखें। पहले दिए वर्गीकरण में हम आकारिकी के गुणों जैसे प्रकृति, रंग, पत्तियों की संख्या तथा आकृति के आधार आदि पर वर्गीकरण करते थे। वे मुख्यत: कायिक गुणों अथवा पुमंग की रचना के आधार पर हैं तथा (लीनियस के अनुसार) ऐसे वर्गीकरण **कृत्रिम** थे, क्योंकि उन्होंने बहुत ही समीप वाली संबंधित स्पीशीज को अलग कर दिया था। इसका कारण था कि वे बहुत ही कम गुणों पर आधारित थे। कृत्रिम वर्गीकरण में कायिक तथा लैंगिक गुणों को समान मान्यता दी गई थी। यह अब स्वीकार नहीं है, क्योंकि हम जानते हैं कि कायिक गुणों में प्राय: पर्यावरण के अनुसार परिवर्तन हो जाता है। इसके विपरीत, **प्राकृतिक वर्गीकरण** जीवों में प्राकृतिक संबंध तथा बाह्य गुणों के साथ-साथ भीतरी गुणों, जैसे-परा-रचना, शारीर, भ्रूण विज्ञान तथा पादप रसायन के आधार पर विकसित हुआ है। पुष्पी पादपों के इस वर्गीकरण को जॉर्ज बेंथम तथा जोसेफ़ डॉल्टन हूकर ने सुझाया था।

वर्तमान में हम **जातिवृत्तीय वर्गीकरण तंत्र**, जो विभिन्न जीवों में विकासीय संबंध पर आधारित है, को स्वीकार करते हैं। इससे यह पता लगता है कि समान टैक्सा के जीव के पूर्वज एक ही थे। अब, हम वर्गीकरण की कठिनाइयों को हल करने के लिए विभिन्न सूचनाओं तथा अन्य स्रोतों का उपयोग करते हैं। यह तब और भी कठिन हो जाता है, उसके पक्ष में कोई भी जीवाश्मी प्रमाण उपलब्ध न हो। **संख्यात्मक वर्गिकी** जिसे अब सरलता से कंप्यूटरीकृत किया जा सकता है, सभी अवलोकनीय गुणों पर आधारित है। सजीवों के सभी गुणों को एक नंबर तथा एक कोड दिया गया है और इसके बाद इसे प्रोसेस किया जाता है। इस प्रकार प्रत्येक गुण को समान महत्व दिया गया है और उसी समय सैकड़ों गुणों को ध्यान में रख सकते हैं। आज कल **वर्गिकीविद्** भ्रांतियों को दूर करने के लिए कोशिका वर्गिकी के कोशिका विज्ञानीय सूचनाओं जैसे **क्रोमोसोम** की संख्या, रचना, व्यवहार तथा रसायन वर्गिकी जो पादपों के रसायनिक कारकों का उपयोग करते हैं।

3.1 शैवाल

शैवाल क्लोरोफिलयुक्त, सरल, थैलॉयड, स्वपोषी तथा मुख्यतः जलीय (अलवणीय जल तथा समुद्री दोनों का) जीव है। वे अन्य आवास जैसे नमयुक्त पत्थरों, मिट्टी तथा लकड़ी में भी पाए जाते हैं। उनमें से कुछ कवक (लाइकेन में) तथा प्राणियों के संगठन में भी पाए जाते हैं (जैसे स्लाथ रीछ)।

शैवाल के माप तथा आकार में बहुत विभिन्नता होती है। ये कॉलोनिय जैसे *वॉल्वॉक्स* तथा तंतुमयी जैसे *यूलोथ्रिक्स, स्पाइरोगायरा* (चित्र 3.1) तक हो सकते हैं। इनमें से कुछ, शैवाल जैसे केल्प, बहुत विशालकाय होते हैं।

शैवाल कायिक, अलैंगिक तथा लैंगिक जनन करते हैं। कायिक जनन विखंडन विधि द्वारा होता है। इसके प्रत्येक खंड से थैलस बन जाता है। अलैंगिक जनन विभिन्न प्रकार के बीजाणुओं द्वारा होता है। सामान्यतः ये बीजाणु **ज़ूस्पोर** होते हैं। इनमें कशाभिक (फ्लैजिला) होता है और ये चलायमान होते हैं। अंकुरण के बाद इनसे पौधे बन जाते हैं। लैंगिक जनन में दो युग्मक संगलित होते हैं। ये युग्मक कशाभिक युक्त (फ्लैजिला युक्त) तथा माप में समान हो सकते हैं (जैसे *यूलोथ्रिक्स*) अथवा फ्लैजिला विहीन लेकिन समान माप वाले हो सकते हैं (जैसे *स्पाइरोगायरा*)। ऐसे जनन को **समयुग्मकी** कहते हैं। जब विभिन्न माप वाले दो युग्मक संगलित होते हैं तब उसे **असमयुग्मकी** कहते हैं (जैसे यूडोराइना) की कुछ स्पीशीज विषमयुग्मकी लैंगिक जनन में एक बड़े अचल (स्थैनिक) मादा युग्मक से एक छोटा चलायमान **नरयुग्मक** संमलित होता है। जैसे *वॉलवॉक्स, फ्यूक्स*।

शैवाल वर्ग तथा उनके महत्वपूर्ण गुणों का सारांश तालिका में दिया गया है।

मनुष्य के लिए शैवाल बहुत उपयोगी हैं। पृथ्वी पर प्रकाश-संश्लेषण के दौरान कुल स्थिरीकृत कार्बनडाइऑक्साइड का लगभग आधा भाग शैवाल स्थिर करते हैं। प्रकाश-संशलेषी

not to be republished © NCERT

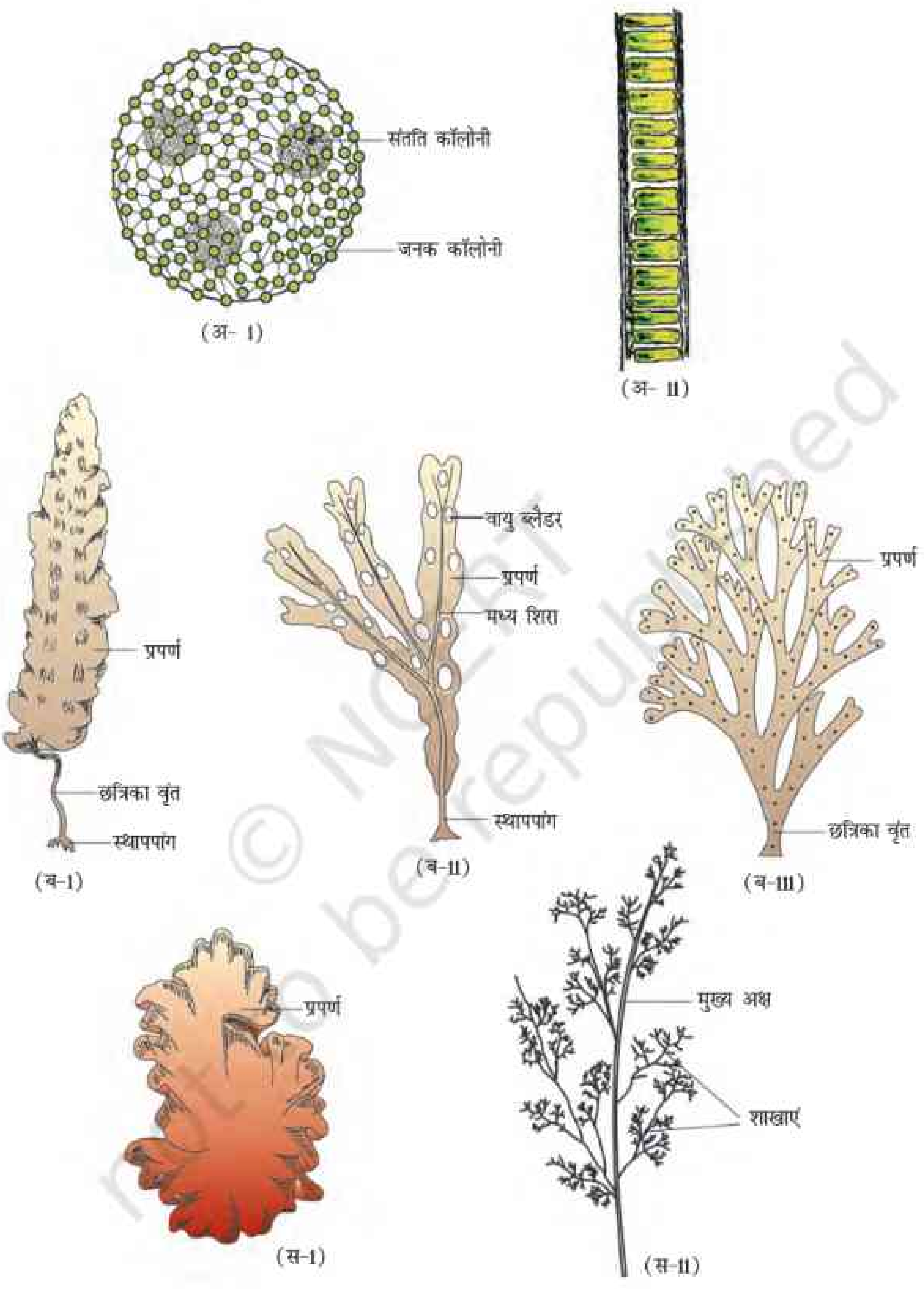

चित्र 3.1 शैवाल (अ) हरित शैवाल (i) वॉलवाक्स (ii) यूलोथ्रिक्स
(ब) भूरे शैवाल (i) लैमिनेरिया (ii) फ्यूकस (iii) डिक्टाइओटा
(स) लाल शैवाल (i) पोरफाइरा (ii) पॉलीसाइफोनिया

तालिका 3.1 शैवाल के डिवीजन अनुभाग तथा उनके प्रमुख अभिलक्षण

डिविजन	सामान्य नाम	प्रमुख वर्णक	संचित भोजन	कोशिका भित्ति	फ्लेजिला की संख्या तथा उनकी निवेशन की स्थिति	आवास
क्लोरोफाइसी	हरे शैवाल	क्लोरोफ़िल a, b	स्टार्च	सेल्यूलोज	2-8, समान, शीर्ष	अलवणजल, लवणीय जल, खारा जल
फीयोफाइसी	भूरे शैवाल	क्लोरोफ़िल a, c, फ्यूकोजैंथिन	मैनीटोल लैमिनेरिन	सेल्यूलोज तथा एलजिन	2, असमान, पार्श्वीय	अलवणजल, (बहुत कम) खारा जल, लवणीयजल
रोडोफाइसी	लाल शैवाल	क्लोरोफ़िल a,d, फाइकोएरीथ्रिन	फ्लोरिडिऑन स्टार्च	सेल्यूलोज	अनुपस्थित	अलवण जल, (कुछ) खारा जल, लवण जल (अधिकांश)

जीव होने के कारण शैवाल अपने आस-पास के पर्यावरण में घुलित ऑक्सीजन का स्तर बढ़ा देते हैं। ये ऊर्जा के प्राथमिक उत्पादक होने के कारण बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि ये जलीय प्राणियों के खाद्य चक्रों का आधार हैं। *पोरफायरा, लैमिनेरिया* तथा *सरगासम* की बहुत सी स्पीशीज (प्रजातियाँ), जो समुद्र की 70 स्पीशीज (प्रजातियाँ) में से है, भोजन के रूप में उपयोग की जाती है। कुछ समुद्री **भूरे** तथा **लाल शैवाल** बहुत ही अधिक **कैरागीन** (लाल शैवाल से) का उत्पादन करते हैं। जिनका व्यवसायिक उपयोग होता है। *जिलेडियम* तथा *ग्रेसिलेरिआ* से एगार प्राप्त होता है जिसका उपयोग सूक्ष्म जीवियों के संवर्धन में तथा आइसक्रीम और जैली बनाने में किया जाता है। *क्लोरैला* तथा *स्पिरुलाइना* एक कोशिक शैवाल हैं। इनमें प्रोटीन प्रचुर मात्रा में होता है। यहाँ तक कि इसका उपयोग अंतरिक्ष यात्री भी भोजन के रूप में करते हैं। शैवाल तीन प्रमुख भागों में विभक्त किया जाता है: **क्लोरोफाइसी, फीयोफाइसी** तथा **रोडोफाइसी।**

3.1.1 क्लोरोफाइसी

क्लोरोफाइसी के सदस्यों को प्राय: **हरा शैवाल** कहते हैं। ये एक कोशिक, कॉलोनीमय अथवा तंतुमयी हो सकते हैं। क्लोरोफिल a तथा b के प्रभावी होने के कारण इनका रंग हरी घास की तरह होता है। वर्णक सुस्पष्ट क्लोरोप्लास्ट में होते हैं। क्लोरोप्लास्ट डिस्क, प्लेट की तरह, जालिकाकार, कप के आकार, सर्पिल अथवा रिबन के आकार के हो सकते हैं। इसके अधिकांश सदस्यों के क्लोरोप्लास्ट में एक अथवा एक से अधिक पाइरीनॉइड होते हैं। पाइरीनॉइड स्टार्च होते हैं। कुछ शैवाल तेलबुदंक के रूप में भोजन संचित करते हैं। हरे शैवाल में प्राय: एक कठोर कोशिका भित्ति होती है। जिसकी भीतरी सतह सेल्यूलोज की तथा बाहरी सतह पेक्टोज की बनी होती है।

कायिक जनन प्राय: तंतु के टूटने से अथवा विभिन्न प्रकार के बीजाणु (स्पोर) के बनने से होता है। अलैंगिक जनन फ्लैजिलायुक्त जूस्पोर से होता है। जूस्पोर जूस्पोरेंजिया

(चल बीजाणुधानी) में बनते हैं। लैंगिक जनन में लैंगिक कोशिकाओं के बनने में बहुत विभिन्नता दिखाई पड़ती है। ये समयुगमकी, असमयुगमकी अथवा विषमयुमकी हो सकते हैं इसके सामान्य सदस्य *क्लैमाइडोमोनास, वॉलवॉक्स, यूलोथ्रिक्सि, स्पाइरोगायरा* तथा *कारा* (चित्र 3.1 अ) हैं।

3.1.2 फीयोफाइसी

फीयोफाइसी अथवा **भूरे शैवाल** मुख्यत: समुद्री आवास में पाए जाते हैं। उनके माप तथा आकार में बहुत विभिन्नताएं होती हैं। ये सरल शाखित, तंतुमयी (*एक्टोकार्पस*) से लेकर सघन शाखित जैसे केल्प तक हो सकते हैं। केल्प की ऊँचाई 100 मीटर तक हो सकती है। इनमें क्लोरोफिल a, c, कैरोटिनॉइड तथा जैंथोफिल होता है। इनका रंग जैतूनी हरे से लेकर भूरे के विभिन्न शेड तक हो सकता है। ये शेड जैंथोफिल वर्णक, फ्युकोजैंथिन की मात्रा पर निर्भर करते हैं। इनमें जटिल कार्बोहाइड्रेट के रूप में भोजन संचित होता है। यह भोजन लैमिनेरिन अथवा मैनीटोल के रूप में हो सकता है। कायिक कोशिका में सेल्यूलोज से बनी कोशिका भित्ति होती है जिसके बाहर की ओर एल्जिन का जिलैटिनी अस्तर होता है। प्रोटोप्लास्ट में लवक के अतिरिक्त केंद्र में रसधानी तथा केंद्रक होते हैं। पौधा प्राय: संलग्नक द्वारा अध:स्तर (स्बस्ट्रेटम) से जुड़ा रहता है और इसमें एक वृंत तथा पत्ती की तरह का प्रकाश-संश्लेषी अंग होता है। इसमें कायिक जनन विखंडन विधि द्वारा होता है। अलैंगिक जनन नाशपाती के आकार वाले दो फ्लैजिला युक्त जूस्पोर द्वारा होता है। इसके फ्लैजिला असमान होते हैं तथा वे पार्श्वीय रूप से जुड़े होते हैं।

इसमें लैंगिक जनन समयुग्मकी, असमयुग्मकी अथवा विषययुग्मकी हो सकता है। युग्मकों का संगम जल में अथवा अंडधानी (विषमयुग्मकी स्पीशीज) (प्रजाति) में हो सकता है। युग्मक पाइरीफोर्म (नाशपाती आकार) की होती हैं और इसके पार्श्व में दो फ्लेजिला होते हैं। इसके सामान्य सदस्य- *एक्टोकार्पस, डिक्टयोटा, लैमिनेरिया, सरगासम* तथा *फ्यूकस* हैं (चित्र 3.1 ब)।

3.1.3 रोडोफाइसी

रोडोफाइसी **लाल शैवाल** हैं। इनका लाल रंग लाल वर्णक, आर-फाइकोएरिथ्रिन के कारण है। अधिकांश लाल शैवाल समुद्र में पाए जाते हैं और इनकी बहुलता समुद्र के गरम क्षेत्र में अधिक होती है। ये पानी की सतह पर, जहाँ अधिक प्रकाश होता है, वहाँ भी पाए जाते हैं और समुद्र की गहराई में भी और जहाँ प्रकाश कम होता है, वहाँ भी पाए जाते हैं।

लाल शैवाल का लाल थैलस अधिकांशत: बहुकोशिक होता है और इनमें से कुछ की संरचना बड़ी जटिल होती है भोजन फ्लोरिडियन स्टार्च के रूप में संचित होता है। इस स्टार्च की रचना एमाइलो प्रोटीन तथा ग्लाइकोजन की तरह होती है।

इसमें कायिक जनन विखंडन, अलैंगिक जनन अचल स्पोर (बीजाणु) और लैंगिक जनन अचल युग्मकों द्वारा होता है। लैंगिक जनन विषमयुग्मकी होता है और इसके पश्चात

not to be republished © NCERT

निषेचनोत्तर विकास होता है। इसके सामान्य सदस्य- *पोलीसाइफोनिया, ग्रेसिलेरिया, पोरफायरा* तथा *जिलेडियम* हैं (चित्र 3.1 स)।

3.2 ब्रायोफाइट

ब्रायोफाइट में मॉस तथा लिवरवर्ट आते हैं जो प्राय: पहाड़ियों में नम तथा छायादार क्षेत्रों में पाए जाते हैं (चित्र 3.2)। ब्रायोफाइट को पादप जगत के जलस्थलचर भी कहते हैं;

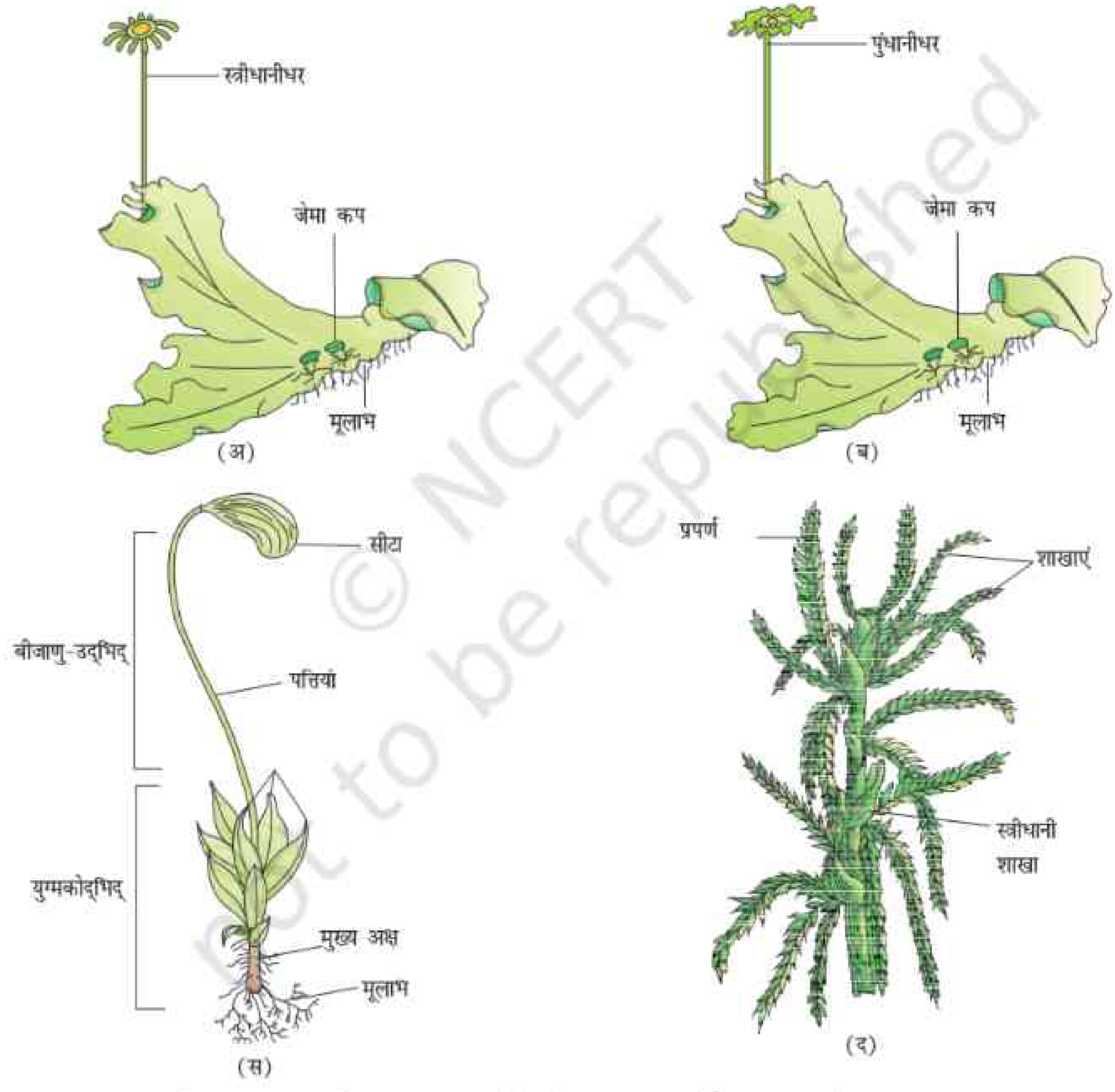

चित्र 3.2 ब्रायोफाइट (अ) लिवरवर्ट-मारकैंशिया (अ) मादा थैलस (ब) नर थैलस मॉस - (स) फ्यूनेरिया, युग्मकोद्भिद् तथा बीजाणुद्‌गमिद् (द) स्फैगनम युग्मकोद्भिद्

क्योंकि ये भूमि पर भी जीवित रह सकते हैं, किंतु लैंगिक जनन के लिए जल पर निर्भर करते हैं। ये प्रायः नम, सीलन (आर्द्र), तथा छायादार स्थानों पर पाए जाते हैं। ये अनुक्रमण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

इनकी पादपकाय शैवाल की अपेक्षा अधिक विभेदित होती है। यह थैलस की तरह होता है और शयान अथवा सीधा होता है और एक कोशिक तथा बहुकोशिक मूलाभ द्वारा स्बस्ट्रेटम से जुड़ा रहता है। इनमें वास्तविक मूल, तना अथवा पत्तियाँ नहीं होती। इनमें मूलसम, पत्तीसम अथवा तनासम संरचना होती है। ब्रायोफाइट की मुख्यकाय अगुणित होती है। ये युग्मक उत्पन्न करते हैं, इसलिए इन्हें **युग्मकोभिद्** कहते हैं। ब्रायोफाइट में लैंगिक अंग बहुकोशिक होते हैं। नर लैंगिक अंग को **पुंधानी** कहते हैं। ये द्विकशाभिक पुमंग उत्पन्न करते हैं। मादा जनन अंग को **स्त्रीधानी** कहते हैं। यह फ्लास्क के आकार का होता है जिसमें एक अंड होता है। पुमंग को पानी में छोड़ दिया जाता है। ये स्त्रीधानी के संपर्क में आते हैं और अंडे से संगलित हो जाते हैं, जिसके कारण युग्मनज बनता है। युग्मनज में तुरंत न्यूनीकरण विभाजन नहीं होता और इससे एक बहुकोशिक बीजाणु-उद्‌भिद् (स्पोरोफाइट) बन जाता है। स्पोरोफाइट मुक्तजीवी नहीं है, बल्कि यह प्रकाश संश्लेषी युग्मकोद्‌भिद् से जुड़ा रहता है और इससे अपना पोषण प्राप्त करता रहता है। **स्पोरोफाइट** की कुछ कोशिकाओं में न्यूनीकरण विभाजन होता है, जिससे अंगुणित बीजाणु अंकुरित हो कर युग्मकोद्‌भिद् में विकसित हो जाते हैं।

ब्रायोफाइट का बहुत कम आर्थिक महत्त्व है। लेकिन कुछ मॉस शाकाहारी स्तनधारियों, पक्षियों तथा अन्य प्राणियों को भोजन प्रदान करते हैं। *स्फेगनम* की कुछ स्पीशीज (जाति) पीट प्रदान करती हैं जिसका उपयोग ईंधन के रूप में करते हैं। इसका उपयोग पैकिंग में और सजीव पदार्थों को स्थानांतरित करने में भी करते हैं। इसका कारण यह है कि इनमें पानी को रोकने की क्षमता बहुत अधिक होती है। लाइकेन समेत मॉस सर्वप्रथम ऐसे सजीव हैं, जो चट्टानों पर उगते हैं। इनका परिस्थितिक दृष्टि से बहुत महत्व हैं। इन्होंने चट्टानों को अपघटित किया और अन्य उच्च कोटि के पौधों को उगने के अनुरूप बनाया। चूंकि मॉस मिट्टी पर एक सघन परत बना देते हैं, इसलिए वर्षा की बौछारें मृदा को अधिक हानि नहीं पहुँचा पाती और इस प्रकार ये मृदा अपक्षरण को रोकते हैं। ब्रायोफाइट को **लिवरवर्ट** तथा **मॉस** में विभक्त कर सकते हैं (चित्र 3.2)।

3.2.1 लिवरवर्ट

लिवरवर्ट प्रायः नमी छायादार स्थानों जैसे नदियों के किनारे, दल-दले स्थानों, गीली मिट्टी, पेड़ों की छालों आदि पर उगते हैं। लिवरवर्ट की पादपकाय थैलासाभ (*मारकेंशिया*) होती हैं। थैलस पृष्ठाधर होते हैं तथा अधःस्तर बिल्कुल चिपके रहते हैं। इसके पत्तीदार सदस्यों में पत्तियों की तरह की छोटी-छोटी संरचनाएँ होती हैं जो तने की तरह की रचना पर दो कतारों में होती हैं।

लिवरवर्ट में अलैंगिक जनन थैलस के विखंडन अथवा विशिष्ट संरचना जेमा द्वारा होता है। जेमा हरी बहुकोशिक अलैंगिक कलियाँ हैं। ये छोटे-छोटे पात्रों, जिन्हें **जेमा कप** कहते हैं, में स्थित होती हैं। ये अपने पैतृक पादप से अलग हो जाती हैं और इससे एक नया पादप उग आता है। लैंगिक जनन के दौरान नर तथा मादा लैंगिक अंग या तो उसी

थैलस पर अथवा दूसरे थैलस पर बनते हैं। स्पोरोफाइट में एक पाद, सीटा तथा कैप्स्यूल (*मारकेंशिया*) होता है। मिऑसिस के बाद कैप्सूल में स्पोर बनते हैं। स्पोर से अंकुरण होने के कारण मुक्तजीवी युग्मकोद्भिद् बनते हैं।

3.2.2 मॉस

जीवन चक्र की प्रभावी अवस्था युग्मकोद्भिद् होती है, जिसकी दो अवस्थाएँ होती हैं। पहली अवस्था प्रथम **तंतु** है जो स्पोर से बनता है। यह विसर्पी, हरा, शाखित तथा प्रायः तंतुमयी होता है। इसकी दूसरी अवस्था पत्ती की तरह की होती है जो प्रथम तंतु से **पार्श्वीय कली** के रूप में उत्पन्न होती है। इसमें एक सीधा, पतला तना सा होता है। जिस पर सर्पिल रूप में पत्तियां लगी रहती हैं। ये बहुकोशिक तथा शाखित मूलाभ द्वारा मिट्टी से जुड़ी रहती हैं। इस अवस्था में लैंगिक अंग विकसित होते हैं।

मॉस में कायिक जनन द्वितीयक प्रथम तंतु के विखंडन तथा मुकुलन द्वारा होता है। लैंगिक जनन में लैंगिक अंग पुंधानी तथा स्त्रीधानी पत्तीदार प्ररोह की चोटी पर स्थित होते हैं। निषेचन के बाद, युग्मनज से स्पोरोफाइट विकसित होता है जो पाद, सीटा तथा कैप्स्यूल में विभेदित रहता है। मॉस में स्पोरोफाइट लिवरवर्ट की अपेक्षा अधिक विकसित होता है। कैप्स्यूल में स्पोर होते हैं। मिऑसिस के बाद स्पोर बनते हैं। मॉस में स्पोर विकिरण की बहुत विस्तृत प्रणाली होती हैं। इसके सामान्य सदस्य- *फ्यूनेरिया, पोलिट्राइकम* तथा *स्फेगनम* (चित्र 3.2) होते हैं।

3.3 टैरिडोफाइट

टैरिडोफाइट का सजावट में बहुत अधिक आर्थिक महत्व है। फूल वाले अधिकांश फर्न का उपयोग सजाने में करते हैं और सजावटी पौधे के रूप में उगाते हैं। विकास की दृष्टि से ये स्थल पर उगने वाले सर्वप्रथम पौधे हैं, जिनमें संवहन ऊतक-जाइलम तथा फ्लोएम होते हैं। आप इन ऊतकों के विषय में विस्तार से अध्याय 6 में पढ़ेंगे। जीवाश्मी रिकार्ड के अनुसार टैरिडोफाइट 350 मिलियन वर्ष पूर्व प्रभावी वनस्पति थे और वे तने रूपी थे। टैरिडोफाइट के अंतर्गत हॉर्सटेल तथा फर्न आते हैं। टैरिडोफाइट ठंडे, गीले, छायादार स्थानों पर पाए जाते हैं। यद्यपि कुछ रेतीली मिट्टी में भी अच्छी तरह उगते हैं।

आपको याद होगा कि ब्रायोफाइट के जीवन में युग्मकोद्भिद् प्रभावी अवस्था होती है (चित्र 3.3)। लेकिन टेरिडोफाइट में मुख्य पादपकाय स्पोरोफाइट है, जिसमें वास्तविक मूल, तना तथा पत्तियाँ होती हैं। इन अंगों में सुस्पष्ट संवहन ऊतक होते हैं। टैरिडोफाइट में पत्तियाँ छोटी, लघुपर्ण उदाहरणतः *सिलैजिनैला* अथवा बड़ी, बृहत्पर्ण हो सकती है; जैसे फर्न। स्पोरोफाइट में बीजाणुधानी होती हैं; जो पत्ती की तरह के बीजाणुपर्ण पर लगी रहती हैं। कुछ टैरिडोफाइट में बीजाणुपर्ण सघन होकर एक सुस्पष्ट रचना बनाते हैं जिन्हें **शंकु** कहते हैं। उदाहरणतः *सिलैजिनेला, इक्वीसीटम* । बीजाणुधानी के स्थित बीजाणुमातृ कोशिका में मिऑसिस के कारण बीजाणु बनते हैं। बीजाणु अंकुरित होने पर एक अस्पष्ट, छोटा बहुकोशिक, मुक्तजीवी, अधिकांशतः प्रकाशसंश्लेषी थैलाभ युग्मकोद्भिद् बनाते हैं; जिसे प्रोथैलस कहते हैं। इन युग्मकोद्भिदों को उगने के लिए ठंडा, गीला, छायादार स्थान

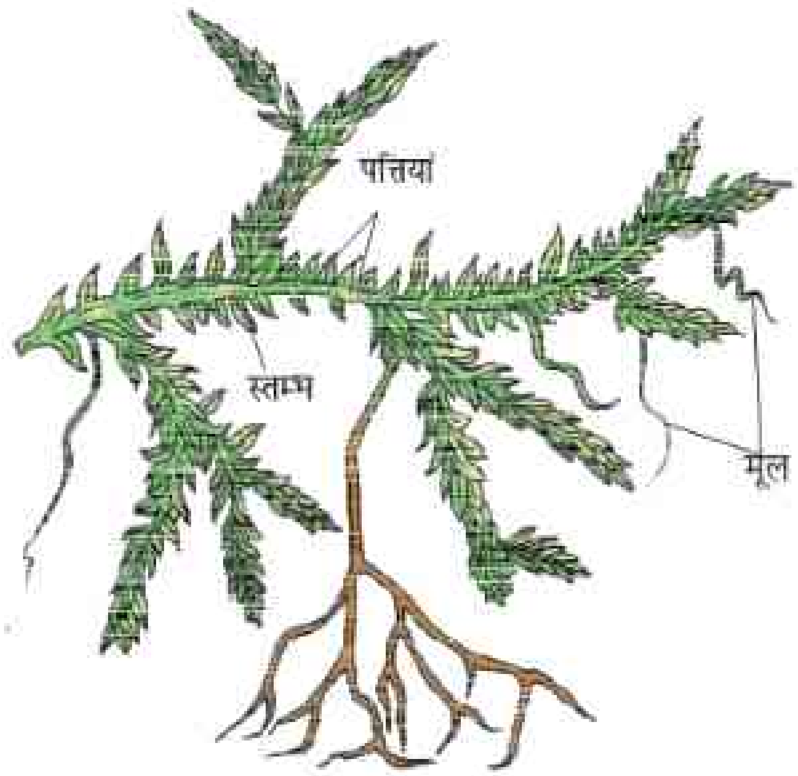

(अ)

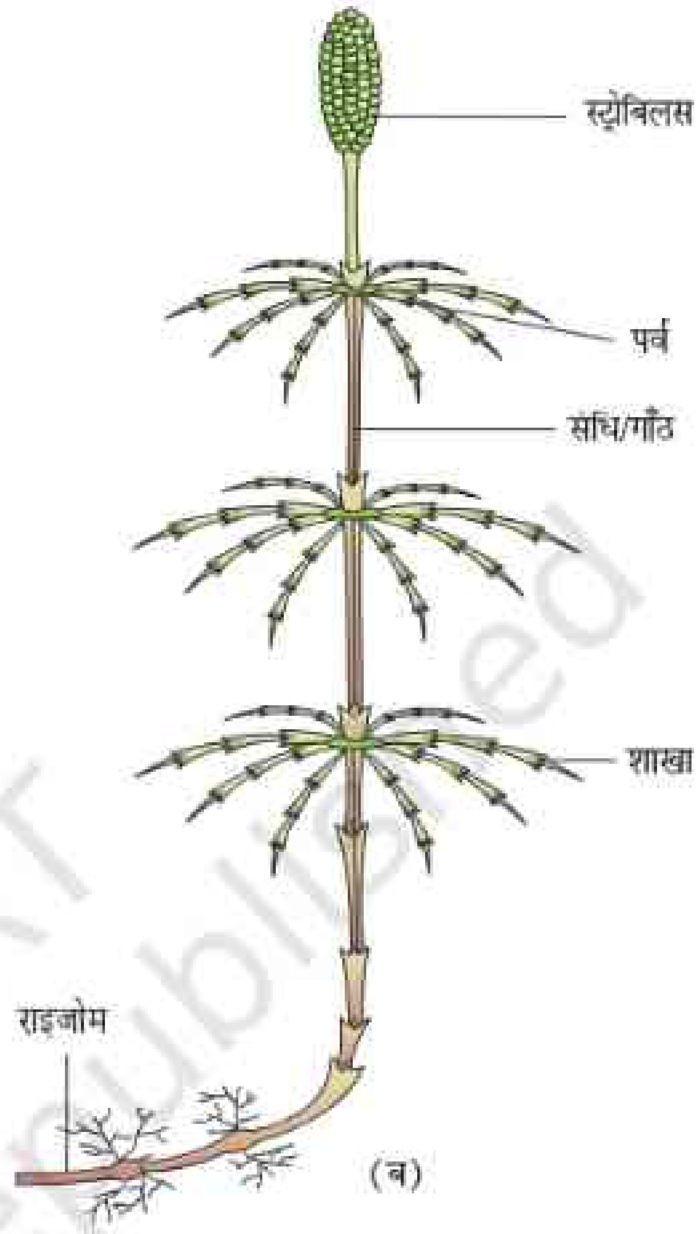

(ब)

(स)

(द)

चित्र 3.3 टैरिडोफाइट (अ) सेलैजिनैला (ब) इक्वीस्टिम (स) फर्न (द) सैलबीनिया

चाहिए। इसकी विशिष्ट, सीमित आवश्यकताएँ और निषेचन के लिए पानी की आवश्यकता कम होने के कारण जीवित टैरिडोफाइट का फैलाव भी सीमित है और कम भौगोलिक क्षेत्रों तक सीमित हैं। युग्मकोद्भिद् के नर तथा मादा अंग होते हैं; जिन्हें क्रमश: **पुंधानी** तथा **स्त्रीधानी** कहते हैं। पुंधानी से पुमणु के निकलने के बाद उसे स्त्रीधानी के मुँह तक पहुँचने के लिए पानी की आवश्यकता होती हैं। स्त्रीधानी में स्थित अंडे से नर युग्मक संगलन हो जाता है और युग्मनज बनता है। उसके बाद युग्मनज से बहुकोशिक, सुस्पष्ट स्पोरोफाइट बन जाता है जो टैरिडोफाइट की प्रभावी अवस्था है। यद्यपि अधिकांश टैरिडोफाइट में, जहाँ स्पोर एक ही प्रकार के होते हैं, उन पौधों को समबीजाणुक कहते हैं। *सिलैजिनेला, साल्वीनिया* में दो प्रकार के - बृहद् (बड़े) तथा लघु (छोटे) स्पोर बनते हैं; जिन्हें **विषमबीजाणु** कहते हैं। बड़े बृहद् बीजाणु (मादा) तथा छोटे लघु बीजाणु (नर) से क्रमश: मादा तथा नर युग्मकोद्भिद् बन जाते हैं ऐसे पौधों में मादा युग्मकोद्भिद् अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए पैतृक स्पोरोफाइट से जुड़ा रहता है। मादा युग्मकोद्भिद् में युग्मनज का विकास होता है; जिससे एक नया शैशव भ्रूण बनता है। यह घटना बहुत महत्त्वपूर्ण समझी जाती है जो **बीजी प्रकृति** की ओर ले जाती है।

टैरिडोफाइट के चार वर्ग (क्लास) होते हैं: साइलोपसीडा *(साइलोटम)*, लाइकोपसीडा *(सिलैजिनेला* तथा *लाइकोपोडियम)*, स्फीनोपसीडा *(इक्वीसीटम)* तथा टीरोपसीडा *(ड्रायोप्टैरीस, टैरिस तथा एडिएंटम)*।

3.4 जिम्नोस्पर्म

जिम्नोस्पर्म (*जिम्नोस* - अनावृत, *स्पर्म* - बीज) ऐसे पौधे हैं; जिनमें बीजांड अंडाशय भित्ति से ढके हुए नहीं होते और ये निषेचन से पूर्व तथा बाद में भी अनावृत ही रहते हैं। जिम्नोस्पर्म में मध्यम अथवा लंबे वृक्ष तथा झाड़ियाँ होती हैं (चित्र 3.4)। जिम्नोस्पर्म का *सिकुआ* वृक्ष सबसे लंबा है। इनकी मूल प्राय: मूसला मूल होती हैं। इसके कुछ जीनस की मूल कवक से सहयोग कर लेती हैं, जिसे **कवक मूल** कहते हैं, उदाहरण- *पाइनस* । जबकि कुछ अन्यों की छोटी विशिष्ट मूल नाइट्रोजन स्थिर करने वाले सायनो बैक्टीरिया के साथ सहयोग कर लेती हैं जिसे **प्रवाल मूल** कहते हैं उदाहरणत: *साइकैस* । इसके तने अशाखीय (*साइकैस*) अथवा शाखित (*पाइनस, सीड्रस*) होते हैं। इनकी पत्तियां सरल तथा संयुक्त होती हैं। *साइकैस* में पिच्छाकार पत्तियाँ कुछ वर्षों तक रहती है। जिम्नोस्पर्म में पत्तियाँ अधिक ताप, नमी, तथा वायु को सहन कर सकती हैं। शंक्वाकार पौधों में पत्तियाँ सुई की तरह होती हैं। इनकी पत्तियों का सतही क्षेत्रफल कम, मोटी क्यूटिकल तथा गर्तिकरंध्र होते हैं। इन गुणों के कारण पानी की हानि कम होती है।

Reprint 2025-26

जिम्नोस्पर्म विषम बीजाणु होते हैं; वे अगुणित लघुबीजाणु तथा वृहद् बीजाणु बनाते हैं। बीजाणुधानी में दो प्रकार के बीजाणु उत्पन्न होते हैं। बीजाणुधानी बीजाणुपर्ण पर होते हैं। बीजाणुपर्ण सर्पिल की तरह तने पर लगे रहते हैं। ये शलथ अथवा सघन शंकु बनाते हैं। शंकु जिन पर लघुबीजाणुपर्ण तथा लघुबीजाणुधानी होती हैं; उन्हें लघुबीजाणुधानिक अथवा नरशंकु कहते हैं। प्रत्येक लघुबीजाणु से नर युग्मकोद्भिद् संतति उत्पन्न होती है, जो बहुत ही न्यूनीकृत होती है और यह कुछ ही कोशिकाओं में सीमित रहती हैं। इस न्यूनीकृत नर युग्मकोद्भिद् को परागकण कहते हैं। परागकणों का विकास लघुबीजाणुधानी में होता है। जिस शंकु पर गुरु बीजाणुपर्ण तथा गुरु बीजाणुधानी होती है; उन्हें गुरु बीजाणुधानिक अथवा मादा शंकु कहते हैं। दो प्रकार के नर अथवा मादा शंकु एक ही वृक्ष (पाइनस) अथवा विभिन्न वृक्षों पर (साइकैस) पर स्थित हो सकते हैं। गुरु बीजाणु मातृ कोशिका बीजांड काय की एक कोशिका से विभेदित हो जाता है। बीजांडकाय एक अस्तर द्वारा सुरक्षित रहता है और इस सघन रचना को बीजांड कहते हैं। बीजांड गुरु बीजाणुपर्ण पर होते हैं, जो एक गुच्छा बनाकर मादा शंकु बनाते हैं। गुरु बीजाणु मातृ कोशिका में मिऑसिस द्वारा चार गुरु बीजाणु बन जाते हैं। गुरु बीजाणुधानी (बीजांडकाय) स्थित अकेला गुरुबीजाणु मादा युग्मकोद्भिद् में विकसित होता है। इसमें दो अथवा दो से अधिक स्त्रीधानी अथवा मादा जनन अंग होते हैं। बहुकोशिक मादा युग्मकोद्भिद् भी गुरु बीजाणुधानी में ही रह जाता है।

जिम्नोस्पर्म में दोनों ही नर तथा मादा युग्मकोद्भिद् ब्रायोफाइट तथा टैरिडोफाइट की तरह स्वतंत्र नहीं होते। वे स्पोरोफाइट पर बीजाणुधानी में ही रहते हैं। बीजाणुधानी से परागकण बाहर निकलते हैं। ये गुरु बीजाणुपर्ण पर स्थित बीजांड के छिद्र तक हवा द्वारा ले जाए जाते हैं। परागकण से एक परागनली बनती है जिसमें नर युग्मक होता हैं। यह परागनली स्त्रीधानी की ओर जाती है और वहाँ पर शुक्राणु छोड़ देती है। निषेचन के बाद युग्मनज बनता है, जिससे भ्रूण विकसित होता है और बीजांड से बीज बनते हैं। ये बीज ढके हुए नहीं होते।

3.5 एंजियोस्पर्म

पुष्पी पादपों अथवा एंजियोस्पर्म में परागकण तथा बीजांड विशिष्ट रचना के रूप में विकसित होते हैं जिसे **पुष्प** कहते हैं। जबकि जिम्नोस्पर्म में बीजांड अनावृत होते हैं। एंजियोस्पर्म पुष्पी पादप हैं, जिसमें बीज फलों के भीतर होते हैं। यह पादपों में सबसे बड़ा वर्ग है। उनके वासस्थान भी बहुत व्यापक हैं। इनका माप सूक्ष्मदर्शी जीवों वुल्फिया से लेकर सबसे ऊंचे वृक्ष यूकेल्पिट्स

(अ)

(ब)

(स)

चित्र 3.4 जिम्नोस्पर्म (अ) साइकस (ब) पाइनस (स) गिंकगो

(100 मीटर से अधिक ऊंचाई) तक होता है। इनसे हमें भोजन, चारा, ईंधन, औषधियाँ तथा अन्य दूसरे आर्थिक महत्त्व के उत्पाद प्राप्त होते हैं। ये दो वर्गों *द्विबीजपत्री* तथा *एकबीजपत्री* में विभक्त होते हैं (चित्र 3.5)।

(अ)

(ब)

चित्र 3.5 ऐंजिओस्पर्म (अ) द्विबीजपत्री (ब) एकबीजपत्री

सारांश

पादप जगत में शैवाल, ब्रायोफाइट, टैरिडोफाइट, जिम्नोस्पर्म तथा एंजियोस्पर्म आते हैं। शैवाल में क्लोरोफिल होता है। वे सरल, थैलासाभ, स्वपोषी तथा मुख्यत: जलीय जीव हैं। वर्णक के प्रकार तथा भोजन संग्रह के प्रकार के आधार पर शैवाल को तीन वर्गों (क्लास) में विभक्त किए गए हैं, ये हैं - क्लोरोफाइसी, फीयोफाइसी तथा रोडोफाइसी। शैवाल प्राय: विखंडन द्वारा कायिक प्रवर्धन करते हैं। अलैंगिक जनन में विभिन्न प्रकार के बीजाणु द्वारा तथा लैंगिक जनन लैंगिक कोशिकाओं द्वारा करते हैं। लैंगिक कोशिकाएँ समयुग्मकी, असमयुग्मकी तथा विषमयुग्मकी हो सकती हैं।

ब्रायोफाइट ऐसे पौधे हैं जो मिट्टी में उगते हैं लेकिन उनका लैंगिक जनन पानी पर निर्भर करता है। शैवाल की अपेक्षा उनकी पादपकाय अधिक विभेदित होती है। यह थैलस की तरह होता है। और शयान अथवा सीधा हो सकता है। ये मूलाभ द्वारा स्वस्ट्रेटम से जुड़े रहते हैं। इनमें मूल की तरह, तने की तरह तथा पत्तियों की तरह की रचनाएँ होती है। ब्रायोफाइट लिबरवर्ट तथा मॉस में विभक्त होते हैं। लिवरवर्ट थैलसाभ तथा पृष्ठाधर होते हैं। मॉस सीधे, पतले तने वाले होते हैं जिस पर पत्तियाँ सर्पिल ढंग से लगी रहती हैं। ब्रायोफाइट की मुख्यकाय युग्मकोद्भिद् होती है जो युग्मकों को उत्पन्न करते हैं। इसमें नर लैंगिक अंग होते है जिसे पुंधानी कहते हैं। मादा लैंगिक अंग को स्त्रीधानी कहते हैं। नर तथा मादा युग्मक इससे पैदा होते हैं जो संगलित हो

कर युग्मनज बनाते हैं। युग्मनज से बहुकोशिक रचना बनती है, जिसे बीजाणु-उद्‌भिद् कहते हैं। इससे अगुणित बीजाणु बनते हैं। बीजाणुओं से युग्मकोद्‌भिद् बनते हैं।

टैरिडोफाइट में मुख्य पौधा बीजाणु-उद्‌भिद् होता है। इसमें वास्तविक मूल, तना तथा पत्तियाँ होती हैं। इसमें सुविकसित संवहन ऊतक होते हैं। बीजाणु-उद्‌भिद् में बीजाणुधानी होती है। जिसमें मिऑसिस द्वारा बीजाणु बनते हैं। बीजाणु अंकुरित होकर युग्मकोद्‌भिद् बनाते हैं। इन्हें वृद्धि के लिए ठंडे, नम स्थानों की आवश्यकता होती है। युग्मकोद्‌भिद् में नर तथा मादा लैंगिक अंग होते हैं; जिन्हें क्रमशः पुंधानी तथा स्त्रीधानी कहते हैं। नरयुग्मक के मादा युग्मक तक जाने के लिए पानी की आवश्यकता होती है। निषेचन के बाद युम्मनज बनता है। युग्मनज से बीजाणु-उद्‌भिद् बनता है।

जिम्नोस्पर्म वे पौधे होते हैं, जिनमें बीजांड किसी अंडाशय भित्ति से ढका नहीं होता। निषेचन के बाद बीज अनावृत रहते हैं और इसीलिए इन्हें अनावृत बीजी पौधे कहते हैं। जिम्नोस्पर्म लघु बीजाणु तथा गुरु बीजाणु उत्पन्न करते हैं, जो लघु बीजाणुधानी तथा गुरु बीजाणुधानी (बीजांड) में बनते हैं। ये धानियाँ बीजाणु पर्ण में होती हैं। बीजाणु पर्ण – लघु बीजाणुपर्ण तथा गुरु बीजाणुपर्ण अक्ष पर सर्पिल रूप में लगी रहती हैं। जिनसे क्रमशः नर शंकु तथा मादा शंकु बनते हैं। परागकण अंकुरित होते हैं और पराग नली बनती है; जिससे नर युग्मक अंडाशय में निकल जाता हैं। यहां पर यह स्त्रीधानी में स्थित अंडकोशिका से संगलन हो जाता है। निषेचन के बाद, युग्मनज भ्रूण में तथा बीजांड बीज में विकसित हो जाता हैं।

अभ्यास

1. शैवाल के वर्गीकरण का क्या आधार है?
2. लिवरवर्ट, मॉस, फर्न, जिम्नोस्पर्म तथा एंजियोस्पर्म के जीवन-चक्र में कहाँ और कब निम्नीकरण विभाजन होता है?
3. पौधे के तीन वर्गों के नाम लिखो, जिनमें स्त्रीधानी होती है। इनमें से किसी एक के जीवन-चक्र का संक्षिप्त वर्णन करो।
4. निम्नलिखित की सूत्रगुणता बताओ: मॉस के प्रथम तंतुक कोशिका; द्विबीजपत्री के प्राथमिक भ्रूणपोष का केंद्रक, मॉस की पत्तियों की कोशिका; फर्न के प्रोथैलस की कोशिकाएं, मारकेंशिया की जेमा कोशिका; एकबीजपत्री की मैरिस्टेम कोशिका, लिवरवर्ट के अंडाशय तथा फर्न के युग्मनज।
5. शैवाल तथा जिम्नोस्पर्म के आर्थिक महत्त्व पर टिप्पणी लिखो।
6. जिम्नोस्पर्म तथा एंजियोस्पर्म दोनों में बीज होते हैं, फिर भी उनका वर्गीकरण अलग-अलग क्यों हैं?
7. विषम बीजाणुता क्या है? इसकी सार्थकता पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखो। इसके दो उदाहरण दो।
8. उदाहरण सहित निम्नलिखित शब्दावली का संक्षिप्त वर्णन करो:
   (i) प्रथम तंतु (ii) पुंधानी (iii) स्त्रीधानी (iv) द्विगुणितक (v) बीजाणुपर्ण (v) समयुग्मकी

9. निम्नलिखित में अंतर करो:
   (i) लाल शैवाल तथा भूरे शैवाल
   (ii) लिवरवर्ट तथा मॉस
   (iii) विषम बीजाणुक तथा सम बीजाणुक टेरिडोफाइट
10. स्तंभ I में दिए गए पादपों की स्तंभ II में दिए गए पादप वर्गों से मिलान करो।

स्तंभ I (पादप)	**स्तंभ II (वर्ग)**
(अ) *क्लैमाइडोमोनॉस*	(i) मॉस
(ब) *साइकस*	(ii) टैरिडोफाइट
(स) *सिलैजिनेला*	(iii) शैवाल
(द) *स्फ़ैगनम*	(iv) जिम्नोस्पर्म

11. जिम्नोस्पर्म के महत्वपूर्ण अभिलक्षणों का वर्णन करो।

© NCERT not to be republished

अध्याय 4

प्राणि जगत

4.1 वर्गीकरण का आधार

4.2 प्राणियों का वर्गीकरण

जब आप अपने चारों ओर देखते हैं तो आप प्राणियों को विभिन्न संरचना एवं स्वरूपों में पाते हैं। अब तक लगभग दस लाख से अधिक प्राणियों का वर्णन किया जा चुका है, अत: वर्गीकरण का महत्व अधिक हो जाता है। इससे नई खोजी गई प्रजातियों को वर्गीकरण में उचित स्थान पर रखने में सहायता मिलती है।

4.1 वर्गीकरण का आधार

प्राणियों की संरचना एवं आकार में भिन्नता होते हुए भी उनकी कोशिका व्यवस्था, शारीरिक सममिति, प्रगुहा की प्रकृति, पाचन-तंत्र, परिसंचरण-तंत्र व जनन-तंत्र की रचना में कुछ आधारभूत समानताएं पाई जाती हैं। इन विशेषताओं को वर्गीकरण के आधार के रूप में प्रयुक्त किया गया है। इनमें से कुछ का वर्णन यहाँ किया गया है।

4.1.1 संगठन के स्तर

यद्यपि प्राणि जगत के सभी सदस्य बहुकोशिक हैं, लेकिन सभी एक ही प्रकार की कोशिका के संगठन को प्रदर्शित नहीं करते हैं। उदाहरण के लिए, स्पंज में कोशिका बिखरे हुए समूहों में हैं। अर्थात् वे **कोशिकीय स्तर** का संगठन दर्शाती हैं। कोशिकाओं के बीच श्रम का कुछ विभाजन होता है। सिलेंटरेट कोशिकाओं की व्यवस्था अधिक होती हैं। उसमें कोशिकाएं अपना कार्य संगठित होकर ऊतक के रूप में करती हैं। इसलिए इसे **ऊतक स्तर** का संगठन कहा जाता है। इससे **उच्च स्तर** का संगठन जो प्लेटीहेल्मिंथीज के सदस्य तथा अन्य उच्च संघों में पाया जाता है जिसमें ऊतक संगठित होकर अंग का निर्माण करता है और प्रत्येक अंग एक विशेष कार्य करता है। प्राणी में जैसे, ऐनेलिड, आर्थोपोड, मोलस्क, एकाइनोडर्म तथा रज्जुकी के अंग मिलकर तंत्र के रूप में शारीरिक

© NCERT not to be republished

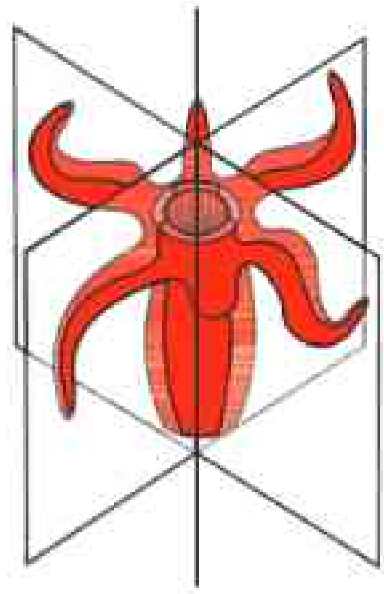

चित्र 4.1 (अ) अरीय सममिति

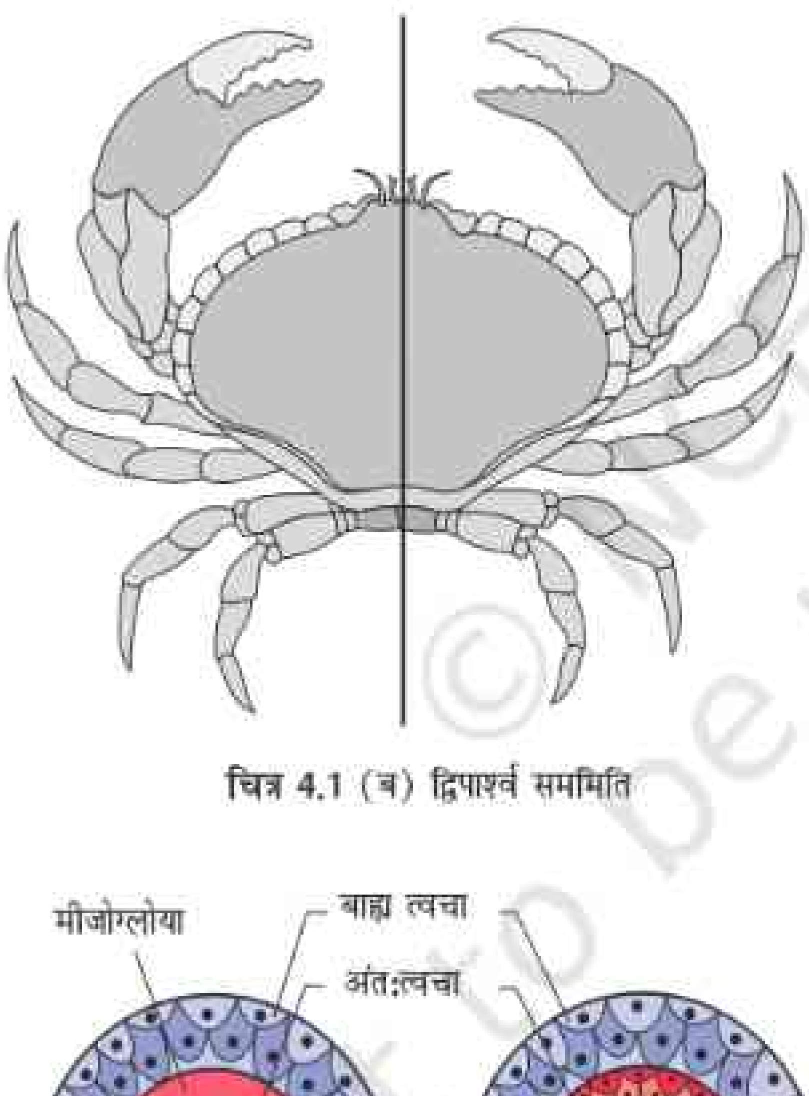

चित्र 4.1 (ब) द्विपार्श्व सममिति

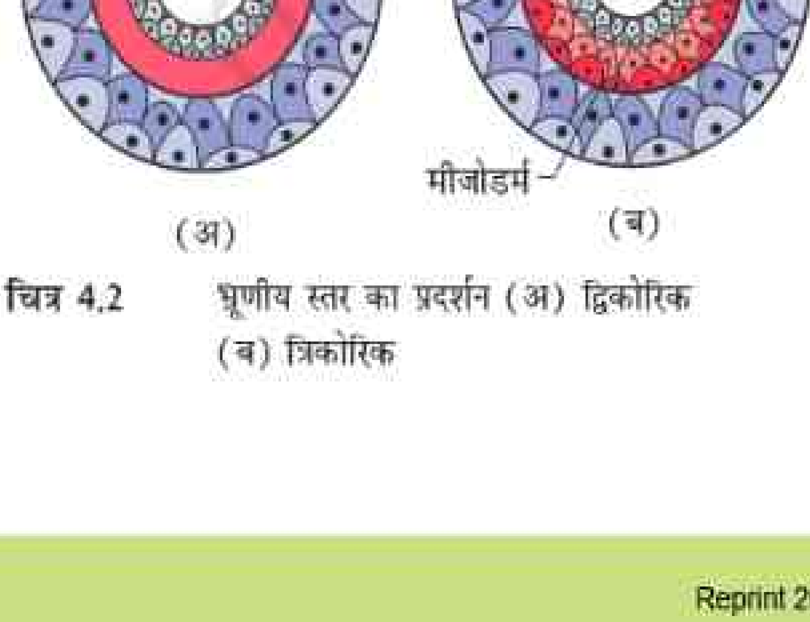

(अ) (ब)

चित्र 4.2 भ्रूणीय स्तर का प्रदर्शन (अ) द्विकोरिक (ब) त्रिकोरिक

कार्य करते हैं। प्रत्येक तंत्र एक विशिष्ट कार्य करता है। इस तरह की संरचना अंगतंत्र के **स्तर का संगठन** कहा जाता है। विभिन्न प्राणि समूहों में अंगतंत्र विभिन्न प्रकार की जटिलताएं प्रदर्शित करते हैं। उदाहरण के लिए पाचन भी अपूर्ण व पूर्ण होता है। अपूर्ण पाचन तंत्र में एक ही बाह्य द्वार होता है, जो मुख तथा गुदा दोनों का कार्य करता है, जैसे प्लेटीहेल्मिंथीज। पूर्ण पाचन-तंत्र में दो बाह्य द्वार होते हैं मुख तथा गुदा। इसी प्रकार परिसंचरण-तंत्र भी दो प्रकार का है खुला तथा बंद।

(i) **खुले परिसंचरण**-तंत्र में रक्त का बहाव हृदय से सीधे बाहर भेजा जाता है तथा कोशिका एवं ऊतक इसमें डूबे रहते हैं।

(ii) **बंद परिसंचरण-तंत्र**– रक्त का संचार हृदय से भिन्न-भिन्न व्यास की वाहिकाओं के द्वारा होता है। (उदाहरण– धमनी, शिरा तथा कोशिकाएं)

4.1.2 सममिति

प्राणी को सममिति के आधार पर भी श्रेणीबद्ध किया जा सकता है। स्पंज मुख्यत: **असममिति** होते हैं; अर्थात् किसी भी केंद्रीय अक्ष से गुजरने वाली रेखा इन्हें दो बराबर भागों विभाजित नहीं करती। जब किसी भी केंद्रीय अक्ष से गुजरने वाली रेखा प्राणि के शरीर को दो समरूप भागों में विभाजित करती है तो इसे **अरीय सममिति** कहते हैं। सीलेंटरेट, टीनोफोर, तथा एकाइनोडर्म में इसी प्रकार की सममिति होती है (चित्र 4.1 अ)। किंतु ऐनेलिड, आर्थोपोड, आदि में एक ही अक्ष से गुजरने वाली रेखा द्वारा शरीर दो समरूप दाएं व बाएं भाग में बाँटा जा सकता है। इसे **द्विपार्श्व सममिति** कहते हैं। (चित्र 4.1 ब)

4.1.3 द्विकोरिक तथा त्रिकोरकी संगठन

जिन प्राणियों में कोशिकाएं दो भ्रूणीय स्तरों में व्यवस्थित होती हैं यथा- **बाह्य एक्टोडर्म** (बाह्य त्वचा) तथा **आंतरिक एंडोडर्म** (अंत: त्वचा) वे **द्विकोरिक** कहलाते हैं। जैसे सिलेन्टरेट (चित्र 4.2 अ) वे प्राणी जिनके विकसित भ्रूण में तृतीय भ्रूणीय स्तर **मीजोडर्म** होता है, **त्रिकोरकी** कहलाते हैं (जैसे प्लेटीहेल्मिंथीज से रज्जुकी तक चित्र. 4.2 ब)।

4.1.4 प्रगुहा (सीलोम)

शरीर भित्ति तथा आहार नाल के बीच में गुहा की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति वर्गीकरण का महत्वपूर्ण आधार है। मीजोडर्म (मध्य त्वचा) से आच्छादित शरीर गुहा को **देहगुहा** (प्रगुहा) कहते हैं। तथा इससे युक्त प्राणी को **प्रगुही** प्राणी कहते हैं। उदाहरण– ऐनेलिड, मोलस्क, आर्थोपोड, एकाइनोडर्म, हेमीकॉर्डेट तथा कॉर्डेट। कुछ प्राणियों में यह गुहा मीसोडर्म से आच्छादित नहीं होती, बल्कि मध्य त्वचा (मीसोडर्म) बाह्य त्वचा एवं अंत: त्वचा के बीच बिखरी हुई थैली के रूप में पाई जाती है, उन्हें **कूटगुहिक** कहते हैं जैसे– ऐस्केल्मिंथीज। जिन प्राणियों में शरीर गुहा नहीं पाई जाती है उन्हें **अगुहीय** कहते हैं, जैसे– प्लेटीहेल्मिंथीज (चित्र 4.3 स)।

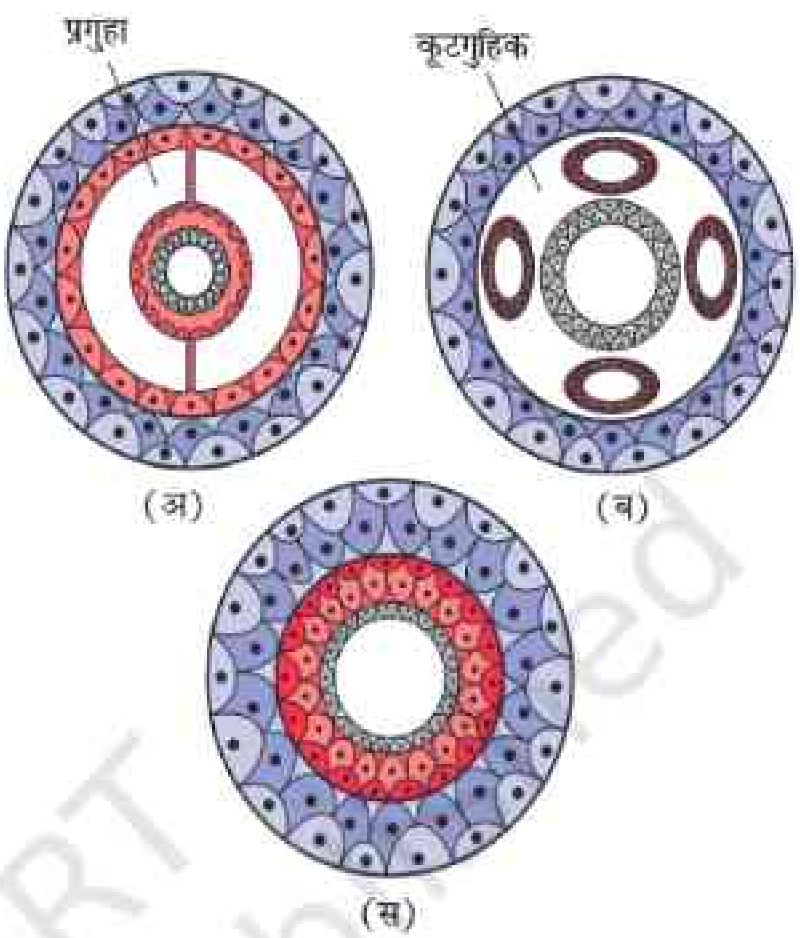

चित्र 4.3 (अ) प्रगुहीय (ब) कूटगुहिक (स) अगुहीय का अनुप्रस्थ रेखाचित्र

4.1.5 खंडीभवन (सैगमेंटेशन)

कुछ प्राणियों में शरीर बाह्य तथा आंतरिक दोनों ओर श्रेणीबद्ध खंडों में विभाजित रहता है, जिनमें कुछेक अंगों की क्रमिक पुनरावृति होती है। उस प्रक्रिया को **खंडीभवन** कहते हैं। उदाहरण के लिए के केंचुए में शरीर का विखंडी खंडीभवन होता है और यह **विखंडावस्था** कहलाती है।

4.1.6 पृष्ठरज्जु

शलाका रूपी पृष्ठरज्जु (नोटोकोर्ड) मध्यत्वचा (मीसोडर्म) से उत्पन्न होती है जो भ्रूणीय परिवर्धन विकास के समय पृष्ठ सतह में बनती होती है। पृष्ठरज्जु युक्त प्राणी को रज्जुकी (कॉर्डेट) कहते हैं तथा पृष्ठरज्जु रहित प्राणी को अरज्जुकी (नोनकॉर्डेट) कहते हैं।

4.2 प्राणियों का वर्गीकरण

प्राणियों का विस्तृत वर्गीकरण उपर्युक्त वर्णित मौलिक लक्षणों के आधार पर किया गया है, जिसका वर्णन इस अध्याय के शेष भाग में किया गया है (चित्र 4.4)।

4.2.1 संघ पोरीफेरा (Porifera)

इस संघ के प्राणियों को सामान्यत: स्पंज कहते हैं। सामान्यत: लवणीय एवं असममिति होते हैं। ये सब आद्यबहुकोशिक प्राणी हैं (चित्र 4.5), जिनका शरीर संगठन कोशिकीय स्तर का है। स्पंजों में जल परिवहन तथा नाल-तंत्र पाया जाता है। जल सूक्ष्म रंध्र **ऑस्टिया** द्वारा शरीर की केंद्रीय **स्पंज गुहा** (स्पंजोशील) में प्रवेश करता है तथा बड़े रंध्र **ऑस्कुलम** द्वारा बाहर निकलता है। जल परिवहन का यह रास्ता भोजन जमा करने,

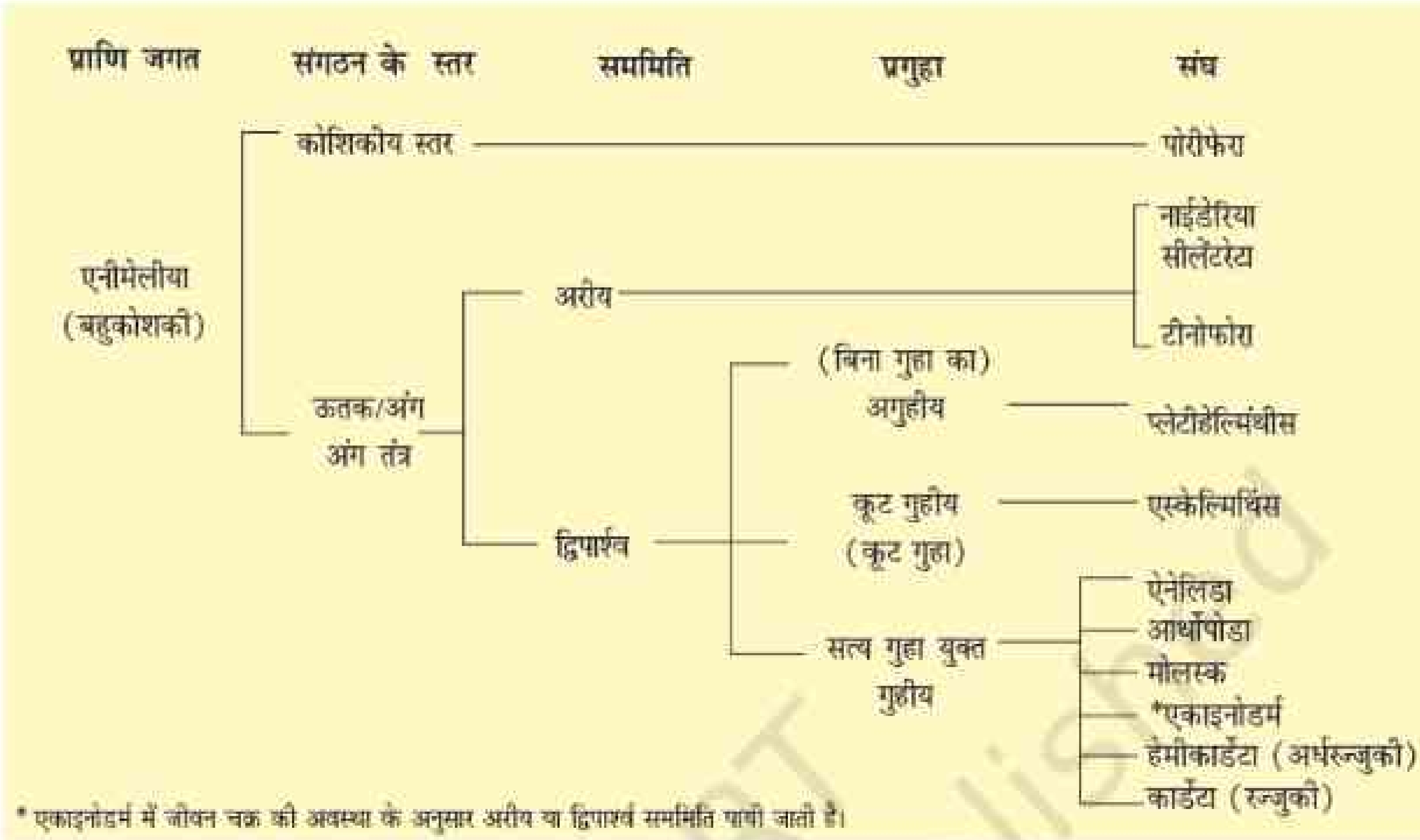

चित्र 4.4 मौलिक लक्षणों के आधार पर प्राणि जगत का विस्तृत वर्गीकरण

श्वसन तथा अपशिष्ट पदार्थों को उत्सर्जित करने में सहायक होता है। **कोएनोसाइट** या कॉलर कोशिकाएं **स्पंजगुहा** तथा **नाल-तंत्र** को स्तरित करती हैं। कोशिकाओं में पाचन होता है (अंतराकोशिक)। कंकाल शरीर को आधार प्रदान करता है। जो कंटिकाओं तथा स्पॉजिन तंतुओं का बना होता है। स्पंज प्राणी में नर तथा मादा पृथक् नहीं होते। वे उभयलिंगाश्रयी होते हैं। अंडे तथा शुक्राणु दोनों एक द्वारा ही बनाए जाते हैं। उनमें अलैंगिक जनन विखंडन द्वारा तथा लैंगिक जनन युग्मकों द्वारा होता है। निषेचन आंतरिक होता तथा परिवर्धन अप्रत्यक्ष होता है, जिसमें वयस्क से भिन्न आकृति की लार्वा अवस्था पाई जाती है। उदाहरण साइकन (साइफा), **स्पांजिला** (स्वच्छ जलीय स्पंज) तथा **यूस्पंजिया** (बाथस्पंज)।

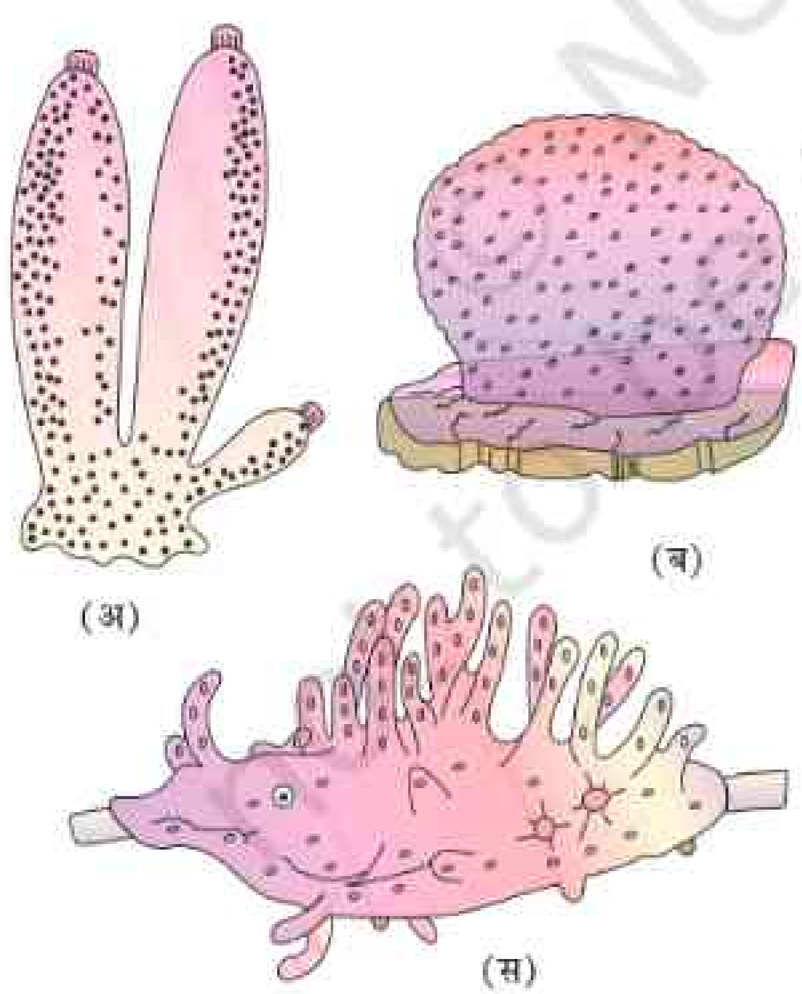

चित्र 4.5 पोरीफेरा के उदाहरण: (अ) *साइकन* (साइफा) (ब) *यूस्पॉजिया* (स) *स्पॉजिला*

4.2.2 संघ सिलेन्ट्रेटा (नाइडेरिया)

ये जलीय अधिकांशत: समुद्री स्थावर अथवा मुक्त तैरने वाले सममिति प्राणी हैं (चित्र 4.6)। नाइडेरिया नाम इनकी दंश कोशिका, नाइडोब्लास्ट या निमेटोब्लास्ट से बना है। यह कोशिकाएं स्पर्शकों तथा शरीर में अन्य स्थानों पर पाई जाती हैं। दंशकोरक (नाइडोब्लास्ट) स्थिरक, रक्षा तथा शिकार

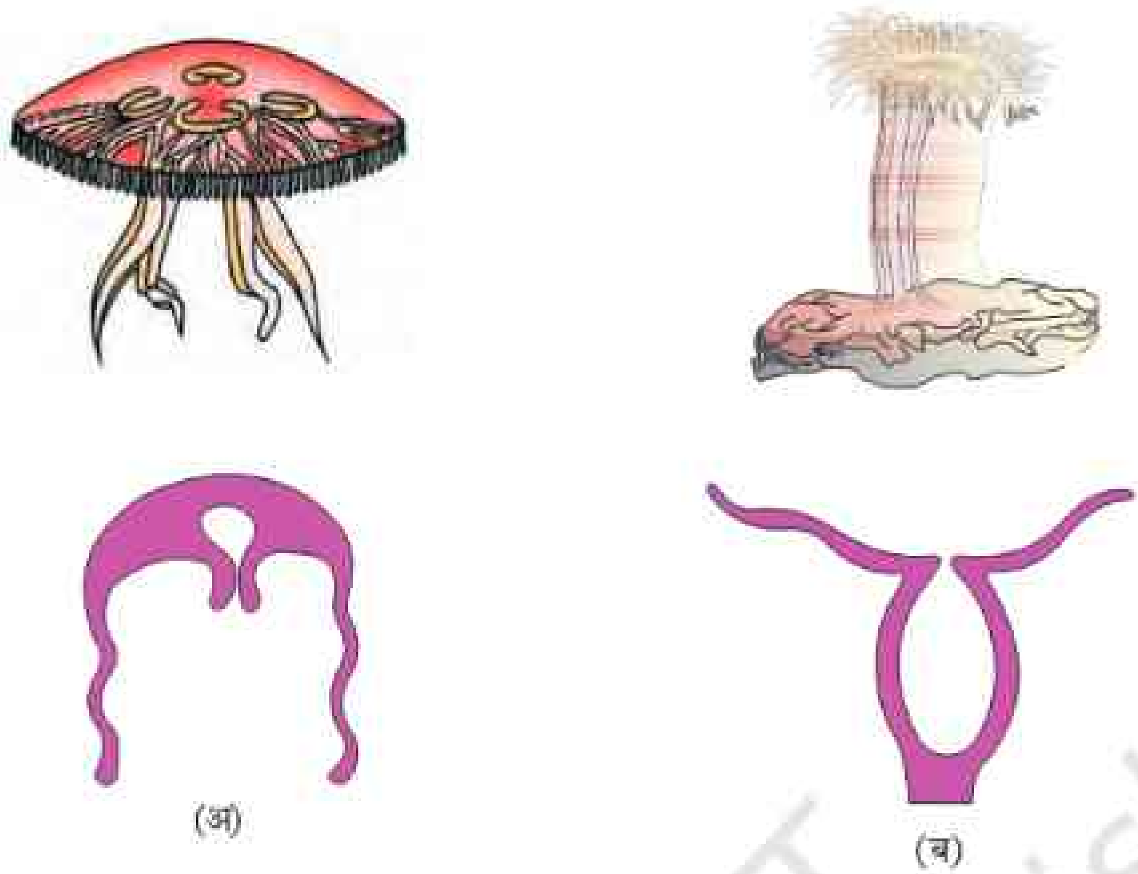

चित्र 4.6 सिलेन्ट्रेटा के उदाहरण: (अ) ओरेलिया (मेडुसा) (ब) एडमसिया (पालिप) से अपनी काया का बाह्य रूप

पकड़ने में सहायक हैं (चित्र 4.7)। नाइडेरिया में ऊतक स्तर संगठन होता है और ये द्विकोरकी होते हैं। इन प्राणियों में केंद्रीय जठर संवहनी (गैस्ट्रोवेस्क्यूलर) गुहा पाई जाती है, जो **अधोमुख** (हाईपोस्टोम) पर स्थित मुख द्वारा खुलती है। इनमें अंत:कोशिकी एवं अंतराकोशिक दोनों प्रकार का है। इनके कुछ सदस्यों (जैसे प्रवाल/**कोरल**) में कैल्सियम कार्बोनेट से बना कंकाल पाया जाता है। इनका शरीर दो आकारों **पालिप** तथा **मेडुसा** से बनता है। पॉलिप स्थावर तथा बेलनाकार होता है। जैसे– हाइड्रा। मेडुसा छत्री के आकार का तथा मुक्त प्लावी होता है। जैसे– *ओरेलिया* या जेली फिश। वे नाइडेरिया जिन में दोनों पॉलिप तथा मेडुसा दोनों रूप में पाए जाते हैं, उनमें पीढ़ी एकांतरण (मेटाजनेसिस) होता है जैसे *ओबेलिया* में। पॉलिप अलैंगिक जनन के द्वारा मेडुसा उत्पन्न करता है तथा मेडुसा लैंगिक जनन के द्वारा पॉलिप उत्पन्न करता है। उदाहरण– *फाइसेलिया* (पुर्तगाली युद्ध मानव) *एडमसिया* (समुद्र ऐनीमोन) *पेनेट्युला* (समुद्री पिच्छ) *गोरगोनिया* (समुद्री व्यंजन) तक्ष तथा *मेन्डरीना* (ब्रेन कोरल)।

चित्र 4.7 नाइडोब्लास्ट का आरेखीय दृश्य

4.2.3 संघ टीनोफोर

टीनोफोर (कंकतधर) को सामान्यत: **समुद्री अखरोट** (सी वालनट) या **कंकाल जैली** (कॉम्ब जैली) कहते हैं। ये सभी समुद्रवासी अरीय सममिति, द्विकोरिक जीव होते हैं तथा इनमें ऊतक श्रेणी का शरीर संगठन होता है। शरीर में आठ बाह्य पक्ष्माभी कंकत पट्टिका होती है, जो चलन में सहायता करती है (चित्र 4.8)। पाचन अंत:कोशिक तथा अंतरा: कोशिक दोनों प्रकार का होता है। **जीवसंदीप्ति** (प्राणी के द्वारा प्रकाश उत्सर्जन करना)

© NCERT not to be republished

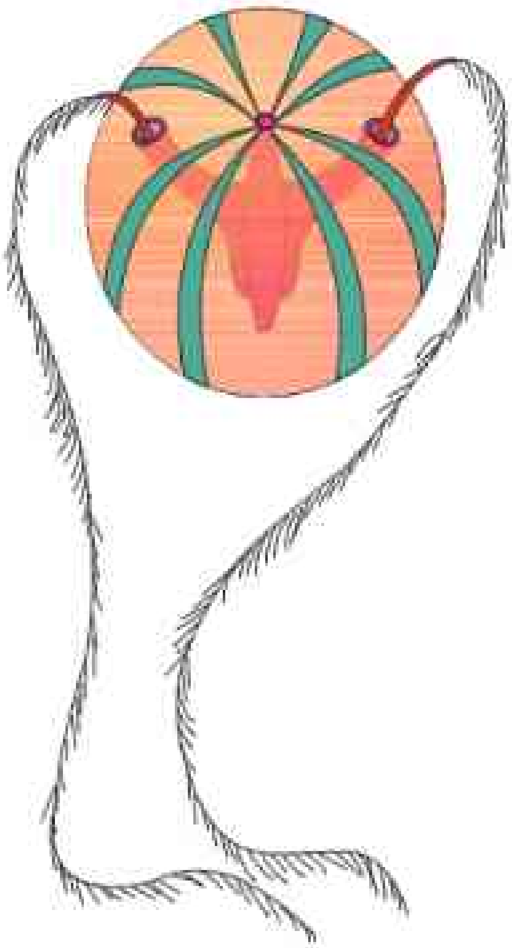

चित्र 4.8 टीनोप्लाना (प्लूरोब्रेकिआ) का उदाहरण

टीनोफोर की मुख्य विशेषता है। नर एवं मादा अलग नहीं होते हैं। जनन केवल लैगिंक होता है। निषेचन बाह्य होता है तथा अप्रत्यक्ष परिवर्धन होता है, जिसमें लार्वा अवस्था नहीं होती (उदाहरण-प्लूरोब्रेकिआ तथा टीनोप्लाना)।

4.2.4 संघ प्लेटीहैल्मिंथीज (चपटे कृमि)

इस संघ के प्राणी पृष्ठाधर रूप से चपटे होते हैं। इसलिए इन्हें सामान्यत: चपटे कृमि कहा जाता है। इस समूह के अधिकांश प्राणी मनुष्य तथा अन्य प्राणियों में अंत: परजीवी के रूप में पाए जाते हैं। चपटे कृमि द्विपार्शव सममिति, त्रिकोरकी तथा अप्रगुही होते हैं। इनमें अंग स्तर का शरीर संगठन होता है। परजीवी प्राणी में अंकुश तथा चूषक पाए जाते हैं (चित्र 4.9)। कुछ चपटेकृमि खाद्य पदार्थ को परपोषी से सीधे अपने शरीर की सतह से अवशोषित करते हैं। ज्वाला कोशिकाएं परासरण नियंत्रण तथा उर्त्सजन में सहायता करती हैं। नर मादा अलग नहीं होते हैं। निषेचन आंतरिक होता है तथा परिवर्धन में बहुत सी लार्वा अवस्थाएं पाई जाती हैं। प्लैनेरिया में पुनरुद्भवन की असीम क्षमता होती है। उदाहरण– टीनिया (फीताकृमि), फेसियोला (पर्णकृमि)

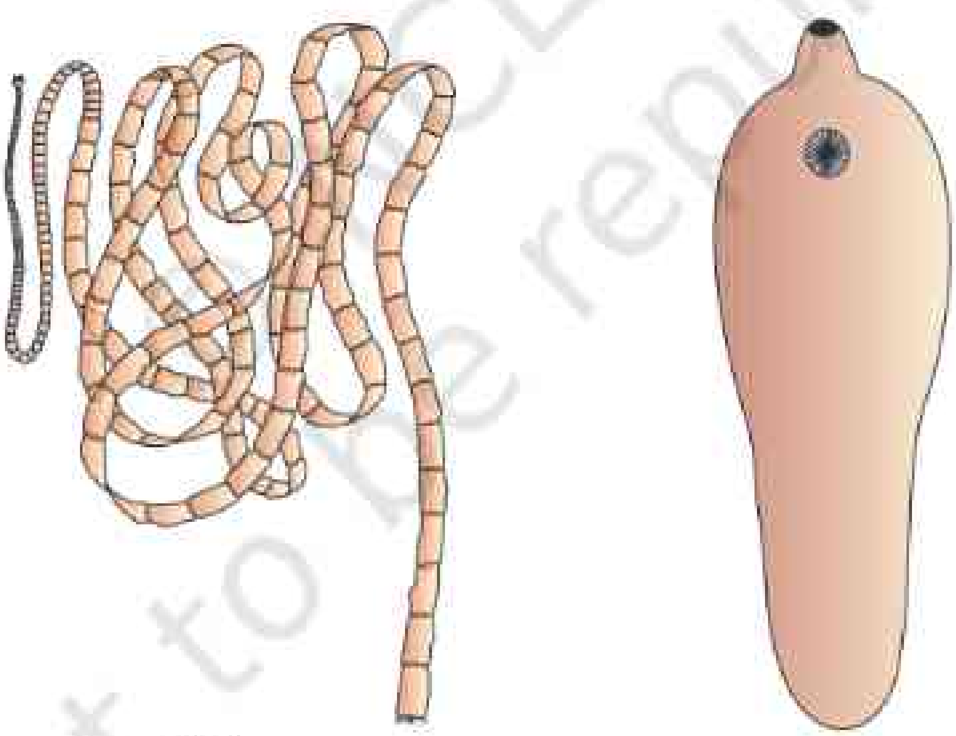

(अ) (ब)

चित्र 4.9 प्लेटीहैल्मिंथीज के उदाहरण (क) फीताकृमि (टीनिया) (ब) पर्णकृमि (फैसियोला)

not to be republished

4.2.5 संघ ऐस्केलमिंथीज (गोल कृमि)

ऐस्केलमिंथीज प्राणी अनुप्रस्थ काट में गोलाकार होते हैं, अत: इन्हें **गोलकृमि** कहते हैं। ये मुक्तजीवी, जलीय अथवा स्थलीय तथा पौधे एवं प्राणियों में परजीवी भी होते हैं। ये **द्विपार्श्व** सममिति, त्रिकोरकी, तथा कूटप्रगुही प्राणी होते हैं। इनका शरीर संगठन **अंगतंत्र**

स्तर का है। आहार नाल पूर्ण होती है, जिसमें सुपरिवर्धित पेशीय ग्रसनी होती है। उत्सर्जन नाल शरीर से अपशिष्ट पदार्थों को उत्सर्जन रंध्र के द्वारा बाहर निकालती है (चित्र 4.10)। नर तथा मादा (एकलिंगाश्रयी) होते हैं। प्राय: मादा नर से बड़ी होती है। निषेचन आंतरिक होता है तथा (परिवर्धन प्रत्यक्ष (शिशु वयस्क के समान ही दिखते हैं) अथवा अप्रत्यक्ष (लार्वा अवस्था द्वारा) होता है। उदाहरण– *एस्केरिस* (गोलकृमि), *वुचेरेरिया* (फाइलेरियाकृमि) *एनसाइलोस्टोमा* (अंकुशकृमि)

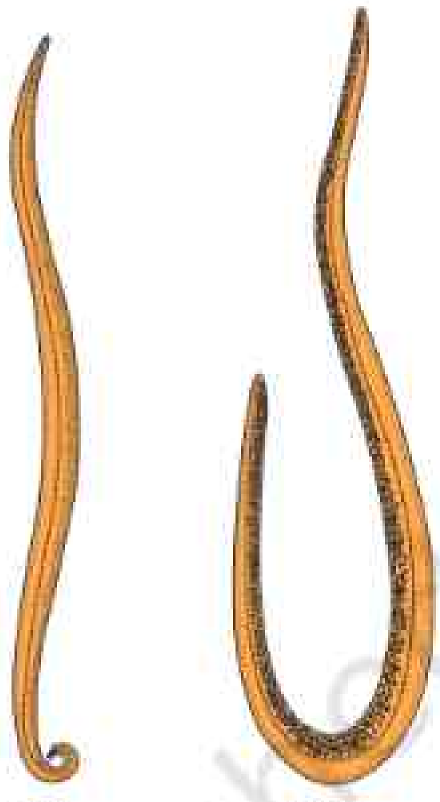

चित्र 4.10 एस्कहेल्मिन्थीज़ के उदाहरण: गोलकृमि

4.2.6 संघ ऐनेलिडा

ये प्राणी जलीय (लवणीय तथा अलवण जल) अथवा स्थलीय, स्वतंत्र जीव तथा कभी-कभी परजीवी होते हैं। ये अंगतंत्र स्तर के संगठन को प्रदर्शित करते हैं तथा द्विपार्श्व सममिति होते हैं। ये त्रिकोरकी क्रमिक पुनरावृत्ति, विखंडित खंडित तथा गुहीय प्राणी होते हैं। इनकी शरीर सतह स्पष्टत: **खंड** अथवा **विखंडों** में बँटा होता है। (लैटिन *एनुलस* अर्थात् सूक्ष्म वलय) इसलिए इस संघ को एनेलिडा कहते हैं (चित्र 4.11)। इन प्राणियों में अनुदैर्ध्य तथा वृत्ताकार दोनों प्रकार की पेशियां पाई जाती हैं जो चलन में सहायता करती हैं। जलीय एनेलिडा जैसे *नेरिस* में पार्श्वपाद (उपांग) **पैरापोडिया** पाए जाते हैं जो तैरने में सहायता करते हैं। इसमें बंद परिसंचरण-तंत्र उपस्थित होता है। **वृक्कक** (एक वचन **नेफ्रिडियम**) परासरण नियमन तथा उत्सर्जन में सहायक हैं। तंत्रिका-तंत्र में एक जोड़ी गुच्छिकाएं (एक वचन-गैंग्लियोन) होती है, जो पार्श्व तंत्रिकाओं द्वारा दोहरी अधर तंत्रिका रज्जु से जुड़ी होती हैं (चित्र 4.11)। नेरीस, एक जलीय एनेलिड है, जिसमें नर तथा मादा अलग होते हैं (एकलिंगाश्रयी) लेकिन केंचुए तथा जोंक में नर तथा मादा पृथक् नहीं होते (उभयलिंगाश्रयी) हैं। जनन लैंगिक विधि द्वारा होता है। उदाहरण– *नेरीस* फेरेटिमा (केंचुआ) तथा *हीरुडिनेरिया* (रक्तचूषक जोंक)

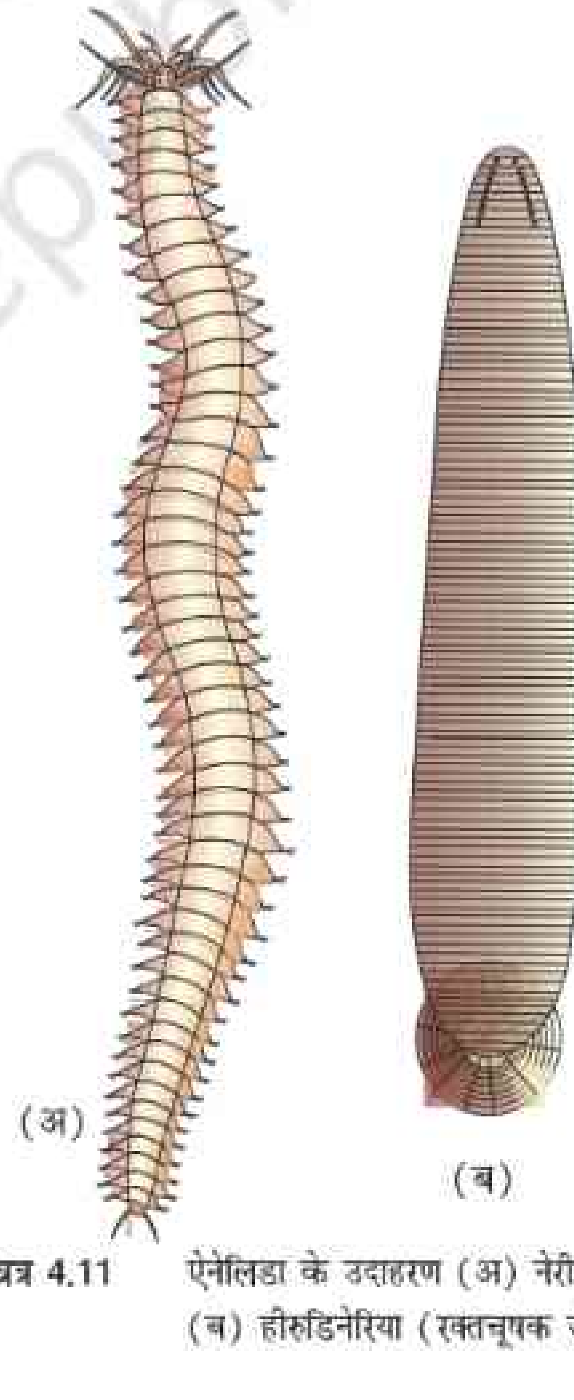

चित्र 4.11 ऐनेलिडा के उदाहरण (अ) नेरीस (ब) हीरुडिनेरिया (रक्तचूषक जोंक)

4.2.7 आर्थोपोडा

आर्थोपोडा प्राणि जगत का सबसे बड़ा संघ है, जिसमें कीट भी सम्मिलित हैं। लगभग दो तिहाई जाति पृथ्वी पर आर्थोपोडा

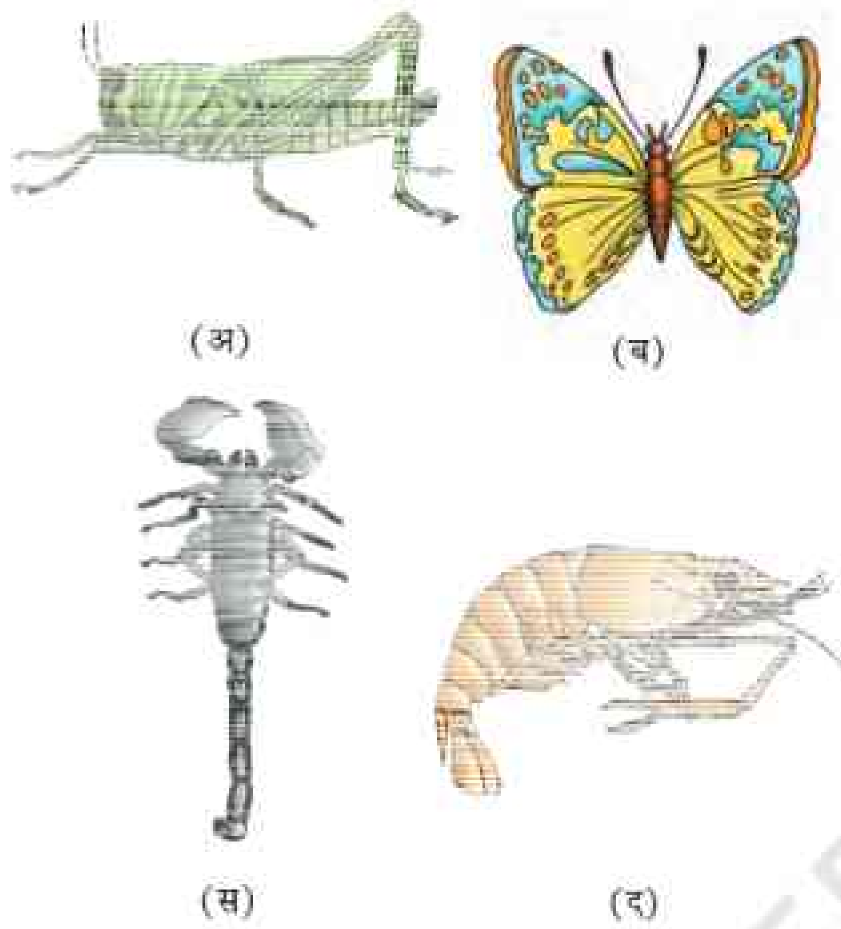

चित्र 4.12 आर्थ्रोपोडा के उदाहरण: (अ) टिड्डी (ब) तितली (स) बिच्छू (द) झींगा (प्रॉन)

चित्र 4.13 मोलस्का के उदाहरण: (अ) पाइला (सेबघोंघा) (ब) ऑक्टोपस

ही हैं (चित्र 4.12)। इसमें अंग-तंत्र स्तर का शरीर संगठन होता है। तथा ये द्विपार्श्व सममिति, त्रिकोरकी, विखंडित तथा प्रगुही प्राणी हैं। आर्थ्रोपोड का शरीर काईटीनी बहिकंकाल से ढका रहता है। **शरीर सिर, वक्ष** तथा उदर में विभाजित होते हैं। (आर्थ्रोस मतलब संधि, पोडा मतलब उपांग) इसमें **संधियुक्त पाद** होता है। श्वसन अंग क्लोम, पुस्त-क्लोम, पुस्त फुप्फुस अथवा श्वसनिकाओं के द्वारा होता है। परिसंचरण-तंत्र खुला होता है। संवेदी अंग जैसे- शृंगिकाएं, नेत्र (सामान्य तथा संयुक्त), संतुलनपुटी (स्टेटोसिस्ट) उपस्थित होते हैं। उत्सर्जन **मैलपिगी नलिका** के द्वारा होता है। नर-मादा पृथक होते हैं तथा अधिकांशत: अंडप्रजक होते हैं। परिवर्धन प्रत्यक्ष अथवा लार्वा अवस्था द्वारा (अप्रत्यक्ष) होता है। आर्थिक रूप से महत्वपूर्ण कीट है: *ऐपिस* (मधुमक्खी) व बाबिक्स (रेशम कीट), *लैसिफर* (लाख कीट); रोग वाहक कीट, एनाफलीज, *क्यूलेक्स* तथा *एडीज* (मच्छर); यूथपीड़क टिड्डी (*लोकस्टा*); तथा जीवित जीवाश्म *लिमूलस* (राज कर्कट किंग क्रेब) आदि।

4.2.8 संघ मोलस्का (कोमल शरीर वाले प्राणी)

मोलस्का **दूसरा सबसे बड़ा** प्राणी संघ है (चित्र 4.13)। ये प्राणी स्थलीय अथवा जलीय (लवणीय एवं अलवणीय) तथा अंगतंत्र स्तर के संगठन वाले होते हैं। ये द्विपार्श्व सममिति त्रिकोरकी तथा प्रगुही प्राणी हैं। शरीर कोमल परंतु कठोर कैल्सियम के कवच से ढका रहता है। इसका शरीर अखंडित जिसमें **सिर, पेशीय पाद** तथा **एक अंतरंग ककुद** होता है। त्वचा की नरम तथा स्पंजी परत ककुद के ऊपर प्रावार बनाती है। ककुद तथा प्रावार के बीच के स्थान को प्रावार गुहा कहते हैं, जिसमें पख के समान क्लोम पाए जाते हैं, जो श्वसन एवं उत्सर्जन दोनों में सहायक हैं। सिर पर संवेदी स्पर्शक पाए जाते हैं। मुख में भोजन के लिए रेती के समान घिसने का अंग होता है। इसे **रेतीजिह्वा** (रेडुला) कहते हैं। सामान्यत: नर

© NCERT not to be republished

मादा पृथक् होते हैं तथा अंडप्रजक होते हैं। परिवर्धन सामान्यत: लार्वा के द्वारा होता है।

उदाहरण– *पाइला* (सेब घोंघा), *पिंकटाडा* (मुक्ता शुक्ति), *सीपिया* (कटलफिश), *लोलिगो* (स्क्विड), *ऑक्टोपस* (बेताल मछली), *एप्लाइसिया* (समुद्री खरगोश), *डेन्टेलियम* (रद कवचर), *कीटोप्लयूरा* (काइटन)

4.2.9 संघ एकाइनोडर्मेटा (शूलयुक्त प्राणी)

इस संघ के प्राणियों में कैल्सियम युक्त अंत: कंकाल पाया जाता है। इसलिए इनका नाम एकाइनोडर्मेटा (शूलयुक्त शरीर) (चित्र 4.14) है। सभी समुद्रवासी हैं तथा अंग-तंत्र स्तर का संगठन होता है। वयस्क एकाइनोडर्म अरीय रूप से सममिति होते हैं, जबकि लार्वा द्विपार्श्व रूप से सममिति होते हैं। ये सब त्रिकोरकी तथा प्रगुही प्राणी होते हैं। पाचन-तंत्र पूर्ण होता है तथा सामान्यत: मुख अधर तल पर एवं मलद्वार पृष्ठ तल पर होता है। **जल संवहन-तंत्र** इस संघ की विशिष्टता है, जो चलन (गमन) तथा भोजन पकड़ने में तथा श्वसन में सहायक है। स्पष्ट उत्सर्जन-तंत्र का अभाव होता है। नर एवं मादा पृथक् होते हैं तथा लैंगिक जनन पाया जाता है। निषेचन सामान्यत: बाह्य होता है। परिवर्धन अप्रत्यक्ष एवं मुक्त प्लावी लार्वा अवस्था द्वारा होता है।

उदाहरण *एस्टेरियस* (तारा मीन) *एकाइनस* (समुद्री-अर्चिन) *एंटीडोन* (समुद्री लिली) *कुकुमेरिया* (समुद्री ककड़ी) तथा *ओफीयूरा* (भंगुर तारा)

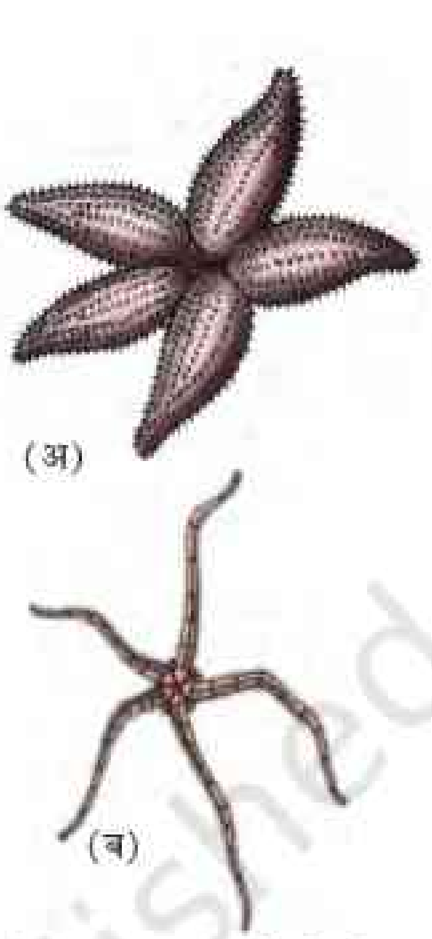

चित्र 4.14 एकाइनोडर्मेटा के उदाहरण: (अ) तारामीन (ब) भंगुरतारा

4.2.10 संघ हेमीकार्डेटा

इन्हें हेमीकॉर्डेटा पहले कशेरुकी संघ में एक उप संघ के रूप में रखा गया था; लेकिन अब इसे अरज्जुकियों में एक अलग संघ के रूप में रखा गया है। हेमीकार्डेटा के कॉलर क्षेत्र में अल्पविकसित संरचना होती है जिसे स्टोमोकार्ड कहते हैं जो पृष्ठरज्जु के समान संरचना है।

इस संघ के प्राणी **कृमि के समान** तथा समुद्री जीव हैं जिनका संगठन अंगतंत्र स्तर का होता है। ये सब द्विपार्श्व रूप से सममिति, त्रिकोरकी तथा प्रगुही प्राणी हैं। इनका शरीर बेलनाकार है तथा **शुंड**, तथा **कॉलर** लंबे **वक्ष** में विभाजित होता है (चित्र 4.15)। परिसंचरण-तंत्र बंद प्रकार का होता है। श्वसन क्लोम द्वारा होता है तथा शुंड ग्रंथि इसके उत्सर्जी अंग है। नर एवं मादा अलग होते हैं। निषेचन बाह्य होता है। परिवर्धन लार्वा (टॉनेरिया लार्वा) के द्वारा (अप्रत्यक्ष) होता है।

उदाहरण– *बैलैनोग्लोसस* तथा *सैकोग्लोसस*

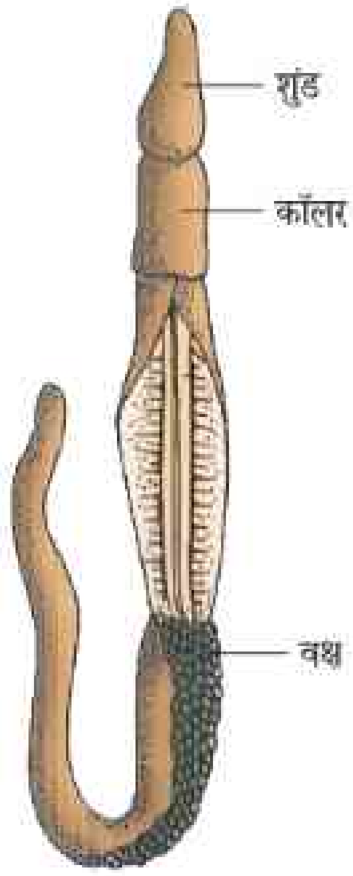

चित्र 4.15 बेलैनोग्लोसस

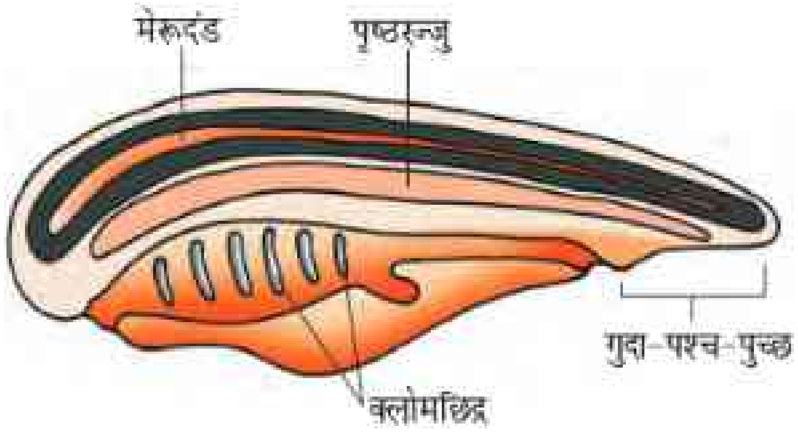

चित्र 4.16 रज्जुकी की विशिष्टताएं

4.2.11 संघ– कॉर्डेटा (रज्जुकी)

कशेरुकी संघ के प्राणियों में तीन मूलभूत लक्षण –**पृष्ठ रज्जु**, **पृष्ठ खोखली तंत्रिका-रज्जु** तथा युग्मित ग्रसनी **क्लोम छिद्र** पाए जाते हैं। ये सब द्विपार्श्वतः सममित त्रिकोरकी तथा प्रगुही प्राणी हैं। इनमें अंग तंत्र स्तर का संगठन पाया जाता है। इसमें गुदा-पश्च पुच्छ तथा बंद परिसंचरण-तंत्र होता है (चित्र 4.16)। सारणी 4.1 अरज्जुकी एवं रज्जुकी में विशिष्ट लक्षणों की तुलना।

सारणी 4.1 अरज्जुकी एवं रज्जुकी में विशिष्ट लक्षणों की तुलना।

	रज्जुकी	अरज्जुकी
1	पृष्ठ रज्जु उपस्थित होता है।	पृष्ठ रज्जु अनुपस्थित होता है।
2	केंद्रीय तंत्रिका-तंत्र, पृष्ठीय एवं खोखला तथा एकल होता है	केंद्रीय तंत्रिका-तंत्र अधरतल में, ठोस एवं दोहरा होता है।
3	ग्रसनी में क्लोम छिद्र पाए जाते हैं।	क्लोम छिद्र अनुपस्थित होते हैं।
4	हृदय अधर भाग में होता है।	हृदय पृष्ठ भाग में होता है (अगर उपस्थित है)।
5	एक गुदा-पश्च पुच्छ उपस्थित होती है।	गुदा-पश्चपुच्छ अनुपस्थित होती है।

चित्र 4.17 एसिडिया

संघ कॉर्डेटा तीन उपसंघों में विभाजित किया गया है– **यूरोकॉर्डेटा** या **ट्यूनिकेटा**, **सेफैलोकॉर्डेटा** तथा **वर्टीब्रेटा**।

उपसंघ यूरोकॉर्डेटा तथा सेफैलोकॉर्डेटा को सामान्यतः प्रोटोकॉर्डेटा कहते हैं (चित्र 4.17)। ये सभी समुद्री प्राणी हैं। यूरोकॉर्डेटा में पृष्ठरज्जु केवल लार्वा की पूंछ में पाई जाती है, जबकि सेफैलोकॉर्डेटा में पृष्ठ रज्जु सिर से पूंछ तक फैली रहती है जो जीवन के अंत तक बनी रहती है।

उदाहरण– यूरोकॉर्डेटा– *एसिडिया, सैल्पा, डोलिओलम*

सेफैलोकॉर्डेटा– *ब्रैंकिओस्टोमा* (एम्फीऑकसस या लैंसलेट)

कशेरुकी संघ के प्राणियों में पृष्ठ रज्जु भ्रूणीय अवस्था में पाई जाती है। वयस्क अवस्था में पृष्ठरज्जु अस्थिल अथवा **उपास्थिल मेरुदंड** में परिवर्तित हो जाती है। कशेरुकी रज्जुकी भी हैं, किन्तु सभी रज्जुकी, कशेरुकी नहीं होते। रज्जुकी के मुख्य लक्षण के अतिरिक्त कशेरुकी में दो-तीन अथवा चार प्रकोष्ठ वाला पेशीय अधर हृदय होता है। वृक्क उत्सर्जन तथा जल संतुलन का कार्य करते हैं तथा पख

© NCERT not to be republished

(फिन) या पाद के रूप में दो जोड़ी युग्मित उपांग होते हैं।

उपसंघ वर्टीब्रेटा को पुन: निम्न उपवर्ग में विभाजित किया गया है–

वर्टीब्रेटा
↓
डिवीजन

- अनैथोस्टोमाटा (जबड़ों का अभाव)
  - वर्ग
    1. साइक्लोस्टोमेटा
- नैथोस्टोमेटा (जबड़े उपस्थित)
  - पिसीज पख उपस्थित
    - वर्ग
      1. कांड्रीक्थीज
      2. ओस्टिक्थीज
  - टेट्रापोडा चतुष्पाद (पाद उपस्थित)
    1. एम्फीबिया (उभयचर)
    2. रेप्टिलिया (सरीसृप)
    3. एवीज
    4. मैमल्स (स्तनी वर्ग)

4.2.11.1 वर्ग– साइक्लोस्टोमेटा

साइक्लोस्टोमेटा वर्ग के सभी प्राणी कुछ मछलियों के बाह्य परजीवी होते हैं। इसका शरीर लंबा होता है, जिसमें श्वसन के लिए 6–15 जोड़ी **क्लोम छिद्र** होते हैं। साइक्लोस्टोम में बिना जबड़ों का चूषक तथा वृत्ताकार मुख होता है (चित्र 4.18)। इसके शरीर में शल्क तथा युग्मित पखों का अभाव होता है। कपाल तथा मेरुदंड उपास्थिल होता है। परिसंचरण-तंत्र बंद प्रकार का है। साइक्लोस्टोम समुद्री होते हैं; किंतु जनन के लिए अलवणीय जल में प्रवास करते हैं। जनन के कुछ दिन के बाद वे मर जाते हैं। इसके लार्वा कायांतरण के बाद समुद्र में लौट जाते हैं।

उदाहरण– *पेट्रोमाइज़ॉन* (लैम्प्रे) तथा *मिक्सीन* (हैग फीश)

चित्र 4.18 जबड़ा रहित कशेरुकी-पेट्रोमाइज़ॉन

4.2.11.2 वर्ग कांड्रीक्थीज

ये धारारेखीय शरीर के समुद्री प्राणी हैं तथा इसका अंत कंकाल उपास्थिल है। (चित्र 4.19) मुख अधर पर स्थित होता है। **पृष्ठ रज्जु चिरस्थाई** होती है। क्लोम छिद्र अलग

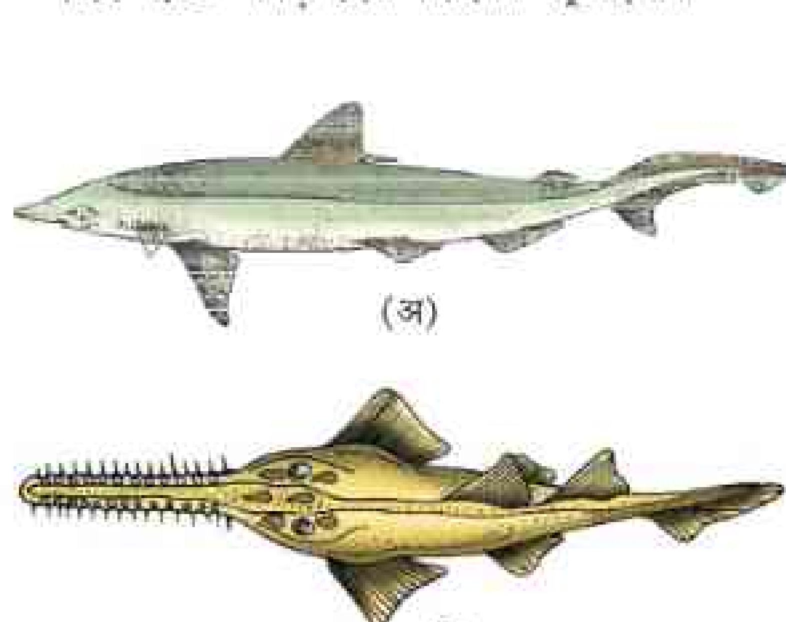

(अ)

(ब)

चित्र 4.19 कॉन्ड्रीक्थीज मछलियों के उदाहरण: (अ) स्कॉलियोडोन (कुत्तामछली) (ब) प्रीस्टिस (आरामछली)

© NCERT not to be republished

अलग होते हैं तथा **प्रच्छद** (ऑपरकुलम) से ढके नहीं होते। त्वचा दृढ़ एवं सूक्ष्म **पट्टाभ शल्कयुक्त** होती है। पट्टाभ दांत पट्टाभ शल्क के रूप में रूपांतरित और पीछे की ओर मुड़े दंत होते हैं। इनके जबड़े बहुत शक्तिशाली होते हैं। ये सब मछलियां हैं। वायु कोष की अनुपस्थिति के कारण ये डूबने से बचने के लिए लगातार तैरते रहते हैं। ह्रदय दो प्रकोष्ठ वाला होता है, जिसमें एक अलिंद तथा एक निलय होता है। इनमें से कुछ में **विद्युत अंग** होते हैं (*टॉरपीडो*) तथा कुछ में **विष दंश** (*ट्रायगोन*) होते हैं। ये सब **असमतापी** (पोइकिलोथर्मिक) हैं, अर्थात् इनमें शरीर का ताप नियंत्रित करने की क्षमता नहीं होती है। नर तथा मादा अलग होते हैं। नर में श्रोणि पख में आलिंगक (क्लेस्पर) पाए जाते हैं। निषेचन आंतरिक होता है तथा अधिकांश जरायुज होते हैं।

उदाहरण– *स्कॉलियोडोन* (कुत्ता मछली) *प्रीस्टिस* (आरा मछली) *कारकेरोडोन* (विशाल सफेद शार्क) *ट्राइगोन* (व्हेल शार्क)

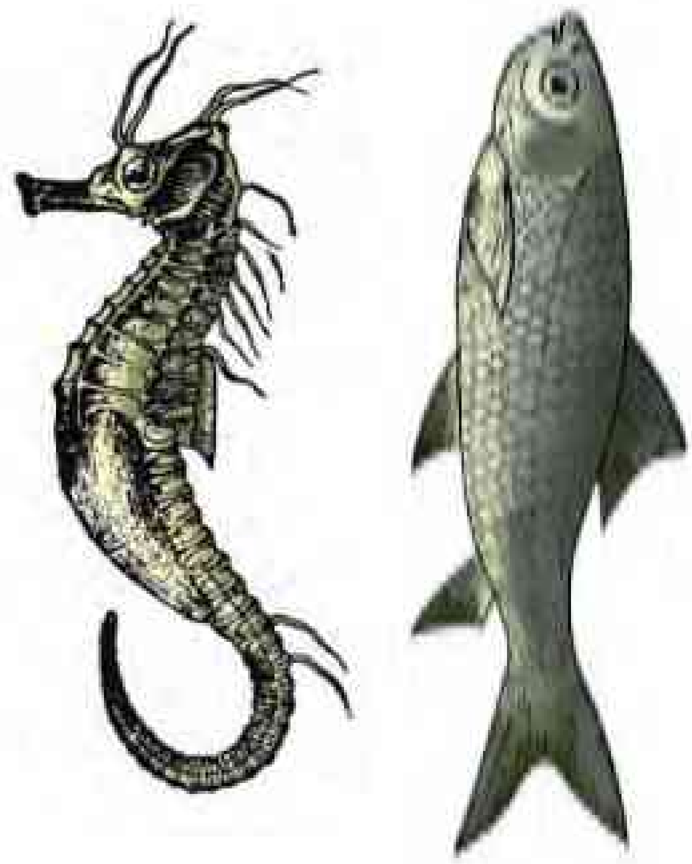

(अ) (ब)

चित्र 4.20 अस्थिल मछलियों के उदाहरण: समुद्री घोड़ा (ब) कतला

4.2.11.3 वर्ग ओस्टिक्थीज

इस वर्ग की मछलियां लवणीय तथा अलवणीय दोनों प्रकार के जल में पाई जाती हैं। इनका अंत: कंकाल अस्थिल होता है (चित्र 4.20)। इनका शरीर धारारेखित होता है। मुख अधिकांशत: अग्र सिरे के अंत में होता है। इनमें चार जोड़ी क्लोम छिद्र दोनों ओर **प्रच्छद** (ऑपरकुलम) से ढके रहते हैं। त्वचा साइक्लोयड, टीनोयॉड शल्क से ढकी रहती है। इनमें **वायु कोष** उपस्थित होता है। जो उत्पलावन में सहायक है। ह्रदय दो प्रकोष्ठ का होता है (एक अलिंद तथा एक निलय) ये सभी असमतापी होते हैं। नर तथा मादा अलग अलग होते हैं। ये अधिकांशत: अंडज होते हैं। निषेचन प्राय: बाह्य होता है। परिवर्धन प्रत्यक्ष होता है।

उदाहरण: समुद्री-*एक्सोसिटस* (उड़न मछली) *हिपोकेम्पस* (समुद्री घोड़ा) *अलवणीयलेबिओ* (रोहु), *कत्ला*, *क्लेरियस* (मांगुर) एक्वेरियम *बेटा* (फाइटिंग फिश), *पेट्रोफ्इसम* (एंगज मछली)

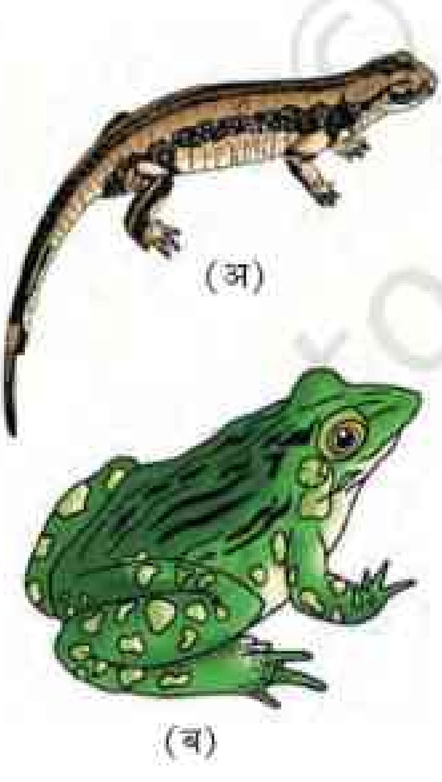

(अ)

(ब)

चित्र 4.21 उभयचर के उदाहरण:
(अ) सैलामेंडर
(ब) मेंढक

4.2.11.4 वर्ग एम्फीबिया (उभयचर)

जैसा कि नाम से इंगित है, (ग्रीक एम्फी–दो + बायोस–जीवन) कि उभयचर जल तथा स्थल दोनों में रह सकते हैं (चित्र 4.21)। इनमें अधिकांश में दो जोड़ी पैर होते हैं। शरीर **सिर** तथा **धड़** में विभाजित होता है। कुछ में पूंछ उपस्थित होती है। उभयचर की त्वचा नम (शल्क रहित) होती है, नेत्र पलक वाले होते हैं। बाह्य

© NCERT not to be republished

कर्ण की जगह **कर्णपटल** पाया जाता है। आहार नाल, मूत्राशय तथा जनन पथ एक कोष्ठ में खुलते हैं जिसे **अवस्कर** कहते हैं और जो बाहर खुलता है। श्वसन क्लोम, फुप्फुस तथा त्वचा के द्वारा होता है। हृदय तीन प्रकोष्ठ का बना होता है। (दो अलिंद तथा एक निलय)। ये असमतापी प्राणी है। नर तथा मादा अलग अलग होते हैं। निषेचन बाह्य होता है। ये अंडोत्सर्जन करते हैं तथा विकास परिवर्धन प्रत्यक्ष अथवा लार्वा के द्वारा होता है।

उदाहरण– *बूफो* (टोड), *राना टिग्रीना* (मेंढक), *हायला* (वृक्ष मेंढक) *सैलेमेन्ड्रा* (सैलामेंडर) *इक्थियोफिस* (पादरहित उभयचर)

4.2.11.5 वर्ग सरीसृप

सरीसृप नाम प्राणियों के रेंगने या सरकने के द्वारा गमन के कारण है (*लैटिन* शब्द *रेपेरे* अथवा *रेपटम* रेंगना या सरकना)। ये सब अधिकांशतः स्थलीय प्राणी हैं, जिनका शरीर शुष्क शल्क युक्त त्वचा से ढका रहता है। इसमें किरेटिन द्वारा निर्मित बाह्य त्वचीय **शल्क** या **प्रशल्क** पाए जाते हैं (चित्र 4.22)। इनमें बाह्य कर्ण छिद्र नहीं पाए जाते हैं। कर्णपटल बाह्य कान का प्रतिनिधित्व करता है। दो जोड़ी पाद उपस्थित हो सकते हैं। हृदय सामान्यतः तीन प्रकोष्ठ का होता है। लेकिन मगरमच्छ में चार प्रकोष्ठ का होता है। सरीसृप असमतापी होते हैं। सर्प तथा छिपकली अपनी शल्क को त्वचीय केंचुल के रूप में छोड़ते हैं। लिंग अलग-अलग होते हैं। निषेचन आंतरिक होता है। ये सब अंडज हैं तथा परिवर्धन प्रत्यक्ष होता है।

उदाहरण – *किलोन* (टर्टल), *टेस्ट्यूडो* (टोरटॉइज), *केमलियॉन* (वृक्ष छिपकली) *केलोटस* (बगीचे की छिपकली) *ऐलीगेटर* (ऐलीगेटर), *क्रोकोडाइलस* (घडियाल), *हैमीडेक्टायलस* (घरेलू छिपकली) जहरीले सर्प-*नाजा* (कोबरा), *बंगैरस* (क्रेत), *वाइपर*

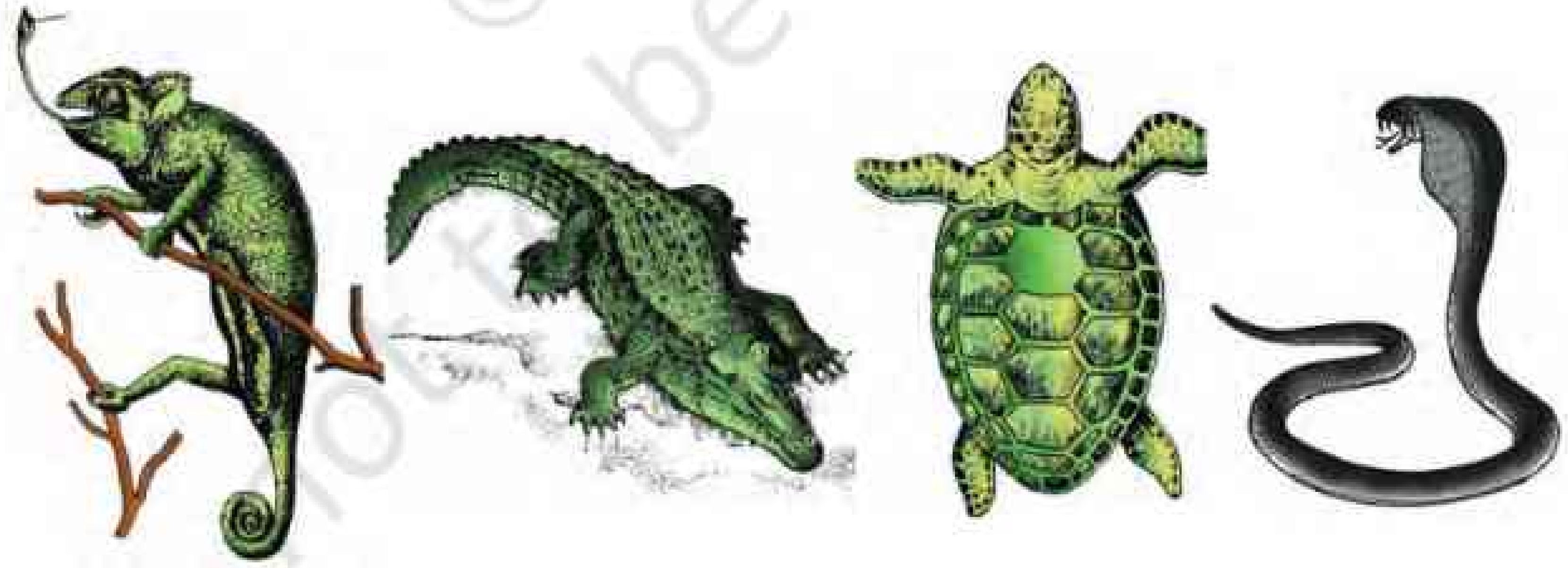

(अ) (ब) (स) (द)

चित्र 4.22 सरीसृपः (अ) वृक्ष छिपकली (ब) घडियाल (स) कछुआ (किलोन) (द) नाग (साँप)

4.2.11.6 वर्ग एवीज (पक्षी)

एवीज का मुख्य लक्षण शरीर के ऊपर **पंखों** की उपस्थिति तथा उड़ने की क्षमता है (कुछ नहीं उड़ने वाले पक्षी जैसे ऑस्ट्रिच-शुतुरमुर्ग को छोड़कर)। इनमें **चोंच** पाई जाती है (चित्र 4.23)। अग्रपाद रूपांतरित होकर **पख** बनाते हैं। पश्चपाद में सामान्यत: शल्क होते हैं जो रूपांतरित होकर चलने, तैरने तथा पेड़ों की शाखाओं को पकड़ने में सहायता करते हैं। त्वचा शुष्क होती है, पूंछ में तेल ग्रंथि को छोड़कर कोई और त्वचा ग्रंथि नहीं पाई जाती। अंत:कंकाल की लंबी अस्थियाँ खोखली होती हैं तथा **वायुकोष** युक्त होती हैं। इनके पाचन पथ में सहायक संरचना क्रॉप तथा पेषणी होती हैं। हृदय पूर्ण चार प्रकोष्ठ का बना होता है। यह **समतापी** (होमियोथर्मस) होते हैं, अर्थात् इनके शरीर का ताप नियत बना रहता है। श्वसन फुप्फुस के द्वारा होता है। वायु कोष फुप्फुस से जुड़कर सहायक श्वसन अंग का निर्माण करता है।

उदाहरण *कार्वस* (कौआ), *कोलुम्बा* (कपोत), *सिटिकुला* (तोता), *स्ट्रथिओ* (ओस्ट्रिच), *पैवो* (मोर), *एटीनोडायटीज* (पेंग्विन), *सूडोगायपस* (गिद्ध)

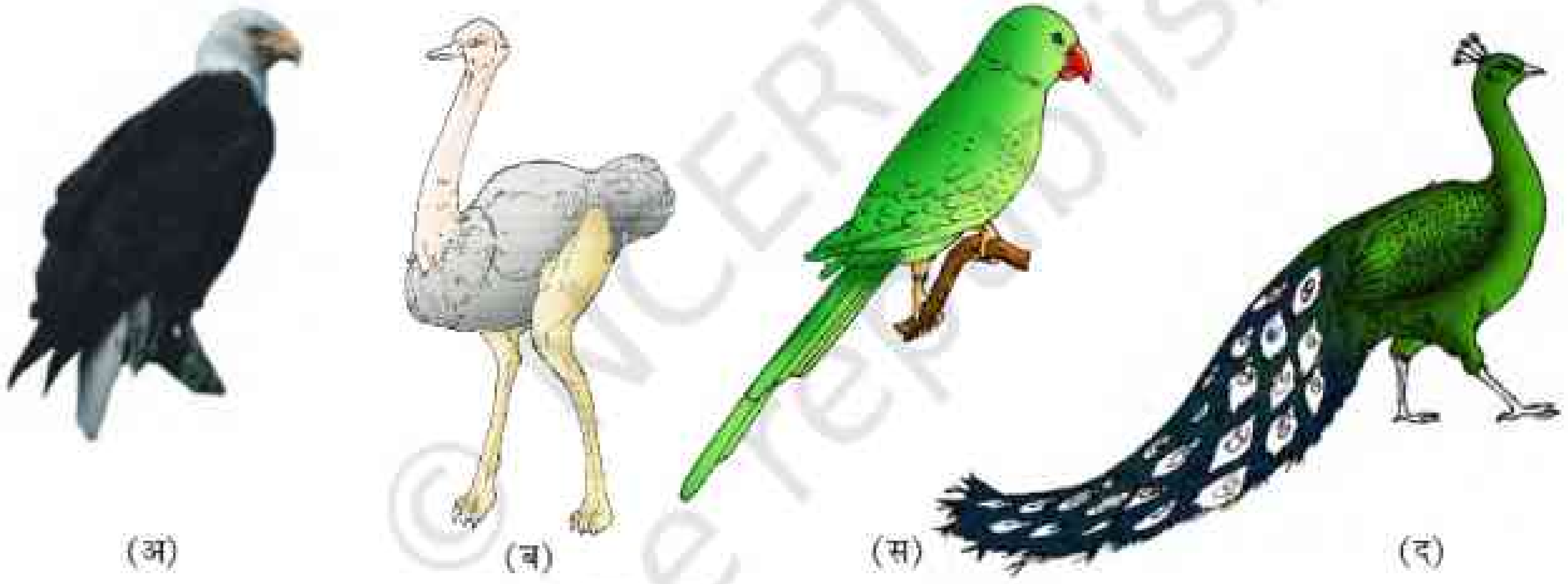

चित्र 4.23 कुछ पक्षी: (अ) चील (ब) शुतुरमुर्ग (स) तोता (द) मोर

4.2.11.7 वर्ग स्तनधारी

इस वर्ग के प्राणी सभी प्रकार के वातावरण में पाए जाते हैं जैसे ध्रुवीय ठंडे भाग, रेगिस्तान, जंगल घास के मैदान तथा अंधेरी गुफाओं में। इनमें से कुछ में उड़ने तथा पानी में रहने का अनुकूलन होता है। स्तनधारियों का सबसे मुख्य लक्षण दूध उत्पन्न करने वाली ग्रंथि (**स्तन ग्रंथि**) है जिनसे बच्चे पोषण प्राप्त करते हैं। इनमें दो जोड़ी पाद होते हैं, जो चलने-दौड़ने, वृक्ष पर चढ़ने के लिए, बिल में रहने, तैरने अथवा उड़ने के लिए अनुकूलित होते हैं (चित्र 4.24)। इनकी त्वचा पर **रोम** पाए जाते हैं। बाह्य **कर्णपल्लव** पाए जाते हैं। जबड़े में विभिन्न प्रकार के दाँत, जो मसूड़ों की गर्तिका में लगे होते हैं। हृदय चार प्रकोष्ठ का होता है। श्वसन की क्रिया पेशीय डायफ्राम के द्वारा होती है। लिंग अलग होते हैं तथा निषेचन आंतरिक होता है। कुछ को छोड़कर सभी स्तनधारी बच्चे को जन्म देते हैं (जरायुज) तथा परिवर्धन प्रत्यक्ष होता है।

उदाहरण– अंडज-*औरनिथोरिंकस*, (प्लैटीपस या डकबिल) जरायुज– *मैक्रोपस* (कंगारु), *टैरोपस* (फ्लाइंग फौक्स), *केमिलस* (ऊँट), *मकाका* (बंदर), *रैट्स* (चूहा), *केनिस* (कुत्ता), *फेसिस* (बिल्ली), *एलिफस* (हाथी), *इक्वुस* (घोड़ा), *डेलिफिनस* (सामान्य डॉलफिन), *वैलेनिप्टेरा* (ब्लू व्हेल), *पैंथरा टाइग्रिस* (बाघ), *पैंथरा लियो* (शेर)

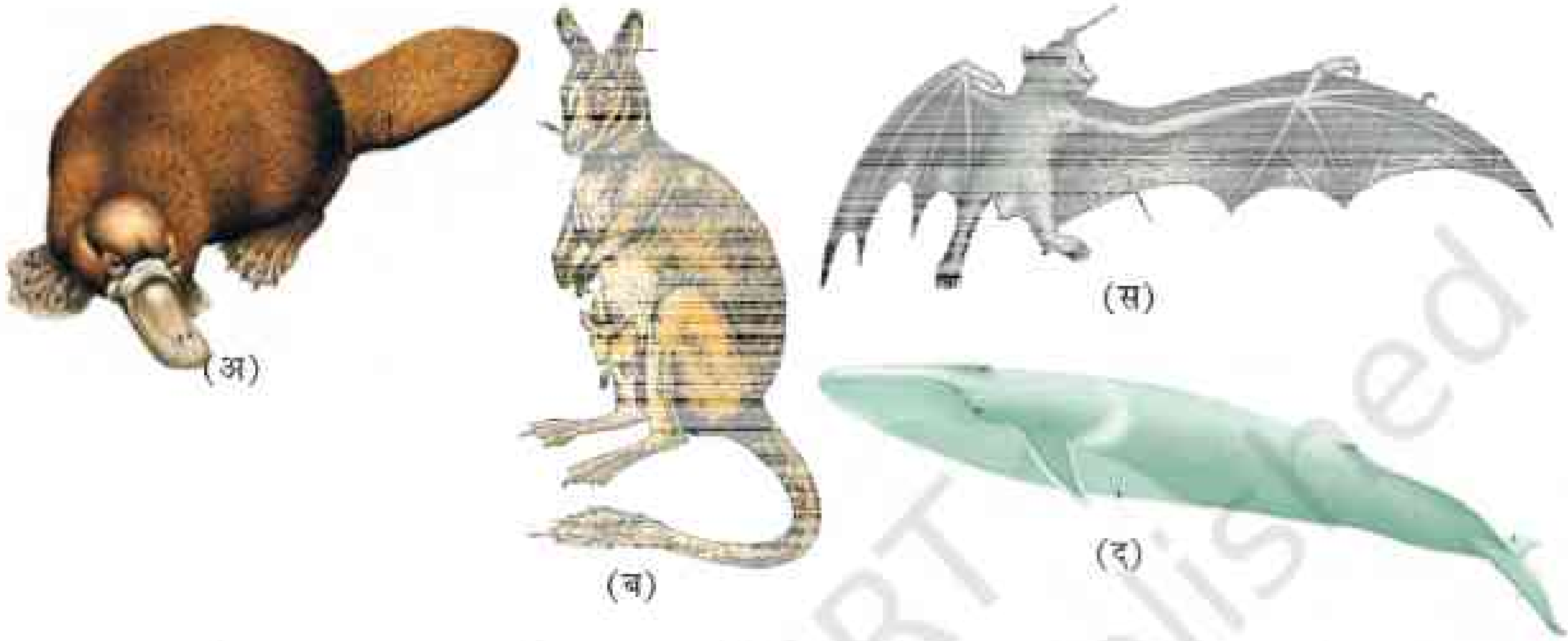

चित्र 4.24 कुछ स्तनधारी : (अ) डकबिल (ब) कंगारू (स) चमगादड़ (द) ब्लूव्हेल

सारणी 4.2 प्राणि-जगत के विभिन्न संघों के प्रमुख लक्षण

संघ	संगठन की स्तर	सममिति	गुहा	खंडीभवन	पाचन तंत्र	परिसंचरण तंत्र	श्वसन तंत्र	विशेष लक्षण
पोरिफेरा	कोशिक	अनेक प्रकार की	अनुपस्थित	अनुपस्थित	अनुपस्थित	अनुपस्थित	अनुपस्थित	शरीर में छिद्र तथा नाल तंत्र
सिलेन्ट्रेटा या नाइडेरिया	ऊतक	अरीय	अनुपस्थित	अनुपस्थित	अपूर्ण	अनुपस्थित	अनुपस्थित	निडोब्लस्ट (दंश) कोशिका उपस्थित
टीनोफोरा	ऊतक	अरीय	अनुपस्थित	अनुपस्थित	अपूर्ण	अनुपस्थित	अनुपस्थित	कंकत चलन के लिए पट्टिकाएं
प्लेटीहेल्मि - थीज	अंग तथा अंगतंत्र	द्विपार्श्व	अनुपस्थित	अनुपस्थित	अपूर्ण	अनुपस्थित	अनुपस्थित	चपटा शरीर, चूषक
ऐस्केलमि- -थीज	अंगतंत्र	द्विपार्श्व	कूट प्रगुही	अनुपस्थित	पूर्ण	अनुपस्थित	अनुपस्थित	प्राय: कृमिरूप, लंबे
ऐनेलिडा	अंगतंत्र	द्विपार्श्व	प्रगुही	उपस्थित	पूर्ण	उपस्थित	अनुपस्थित	शरीर वलयों की तरह खंडित
आर्थ्रोपोडा	अंगतंत्र	द्विपार्श्व	प्रगुही	उपस्थित	पूर्ण	उपस्थित	उपस्थित	बाह्य कंकाल काइटिनी संधिपाद

मोलस्का	अंगतंत्र	द्विपार्श्व	प्रगुही	अनुपस्थित	पूर्ण	उपस्थित	उपस्थित	बाह्य कंकाल कवच प्रायः उपस्थित
एकाइनोड-मेटा	अंगतंत्र	अरीय	प्रगुही	अनुपस्थित	पूर्ण	उपस्थित	उपस्थित	जल संवहनतंत्र, अरीय सममित
हेमीकॉर्डेटा	अंगतंत्र	द्विपार्श्व	प्रगुही	अनुपस्थित	पूर्ण	उपस्थित	उपस्थित	कृमि के समान, शुंड, कॉलर तथा धड़ उपस्थित
कॉर्डेटा (रज्जुकी)	अंगतंत्र	द्विपार्श्व	प्रगुही	उपस्थित	पूर्ण	उपस्थित	उपस्थित	पृष्ठ-रज्जु, खोखली पृष्ठ तंत्रिका रज्जु, क्लोम छिद्र तथा पाद, अथवा पख

सारांश

मूलभूत लक्षण जैसे संगठन के स्तर, सममिति, कोशिका संगठन, गुहा, खंडीभवन, पृष्ठरज्जु आदि प्राणि जगत के वर्गीकरण के आधार हैं। इन लक्षणों के अलावा कई ऐसे भी लक्षण हैं जो संघ या वर्ग के विशिष्ट लक्षण होते हैं।

पॉरीफेरा, जिसमें बहुकोशकीय प्राणी होते हैं, का कोशिकीय स्तर का संगठन तथा कशाभी कीपकोशिका (कोएनोसाइट) मुख्य लक्षण है। सीलेंटरेटा में स्पर्शक एवं दंशकोरक (निडोब्लास्ट) पाए जाते हैं। ये सामान्यतयाः जलीय, स्थिर या स्वतंत्र तैरने वाले होते हैं। टीनोफोर लवणीय तथा कंकत पट्टिका वाले जीव होते हैं। प्लेटीहेल्मिंथीज (चपटे कृमि) प्राणियों का शरीर चपटी तथा द्विपार्श्व सममिति वाला होता है। परजीवी प्लेटीहेल्मिंथ में स्पष्ट चूषक और अंकुश होते हैं। ऐस्के लमिंथीज कूटप्रगुही वाले गोलाकृति प्राणी होते हैं।

ऐनेलिड प्राणी विखंडतः खंडित होते हैं, जिनमें प्रगुहा होती है, में बाह्य एवं अंत खंड एकीकृत एवं गुदा होते हैं। आर्थोपोडा प्राणि जगत का बड़ा समूह होता है जिसमें संधियुक्त पाद होता है। मोलस्का का कोमल शरीर के ल्सियमी कवच से ढका होता है तथा बाहरी कंकाल काइटिन का होता है। ऐकाइनोडर्म की त्वचा कांटेदार होती है। इन प्राणियों का मुख्य लक्षण जल संवहन तंत्र होता है। हेमीकॉर्डेटा कृमि की तरह लवणीय प्राणी होते हैं। इन प्राणियों का शरीर बेलनाकार होता है जिसमें शुंड, कालर एवं वक्ष होते हैं।

संघ कॉर्डेटा के प्राणियों में पृष्ठरज्जु (नोटोकार्ड) या तो प्रारंभिक भ्रूणीय अवस्था में अथवा जीवन की किसी अवस्था में पाया जाता है। इसके दूसरे सामान्य लक्षण पृष्ठीय, खोखली तंत्रिका-रज्जु तथा क्लोम छिद्र होते हैं। कुछ कशेरुकी (प्राणियों में जबड़े का अभाव अग्नेथा) तथा अन्य में जबड़े (नैथोस्टोमेटा) मिलते हैं। साइक्लोस्टोमेटा ऐग्नेथा का प्रतिनिधित्व करता है। ये अत्यंत प्राचीन कॉर्डेटा होते हैं तथा मछलियों के बाह्य परजीवी होते हैं।

नैथोस्टोमेटा को दो अधिवर्ग में विभाजित किया गया है– पिसीज तथा टेट्रापोडा। वर्ग कोंड्रिक्थीज तथा ऑस्टिक्थीज का चलन पख द्वारा होता हैं तथा ये पिसीज के अंतर्गत हैं। कोंड्रिक्थीज लवणीय मछलियों में वहिकंकाल उपास्थिल होता है। उभयचर (एंफिबिया), सरीसृप (रेप्टीलिया), पक्षिवर्ग (एवीज) तथा स्तनधारी (मैमेलिया) वर्गों में दो जोड़े पाद होते हैं तथा ये टेट्रापोडा के अंतर्गत रखे गए हैं। उभयचर थल

एवं जल दोनों में पाए जाते हैं। सरीसृप की त्वचा सूखी एवं करेटिनित होती है। सांपों में पाद अनुपस्थित रहते हैं। मछलियाँ, उभयचर तथा सरीसृप असमतापी (अनियततापी) हैं। पक्षी समतापी जीव होते हैं तथा शरीर पर पंख होते हैं जो उड़ने में सहायता करते हैं। ये पंख रूपांतरित अग्रपाद हैं। पश्चपाद चलने, तैरने, टिकने पक्षिसाद या आलिंगन के लिए अनुकूलित होते हैं। स्तनधारियों के विशिष्ट लक्षणों में स्तन ग्रंथि एवं त्वचा पर बाल प्रमुख हैं। ये सामान्यतया जरायुज (बच्चे देने वाले) होते हैं।

अभ्यास

1. यदि मूलभूत लक्षण ज्ञात न हों तो प्राणियों के वर्गीकरण में आप क्या परेशानियाँ महसूस करेंगे?
2. यदि आपको एक नमूना (स्पेसिमेन) दे दिया जाए तो वर्गीकरण हेतु आप क्या कदम अपनाएंगे?
3. देहगुहा एवं प्रगुहा का अध्ययन प्राणियों के वर्गीकरण में किस प्रकार सहायक होता है?
4. अंत: कोशिकीय एवं बाह्य कोशिकीय पाचन में विभेद करें।
5. प्रत्यक्ष तथा अप्रत्यक्ष परिवर्धन में क्या अंतर है?
6. परजीवी प्लेटिहेल्मिंथीज के विशेष लक्षण बताएं।
7. आर्थोपोडा प्राणि-समूह का सबसे बड़ा वर्ग है, इस कथन के प्रमुख कारण बताएं।
8. जल संवहन-तंत्र किस वर्ग के मुख्य लक्षण हैं?
   (अ) पोरीफेरा (ब) टीनोफोरा (स) एकाइनोडर्मेटा (द) कॉर्डेटा
9. सभी कशेरुकी (वर्टिब्रेट्स) रज्जुकी (कॉर्डेटस) हैं, लेकिन सभी रज्जुकी कशेरुकी नहीं हैं। इस कथन को सिद्ध करें।
10. मछलियों में वायु-आशय (एयर ब्लैडर) की उपस्थिति का क्या महत्व है?
11. पक्षियों में उड़ने हेतु क्या-क्या रूपांतरण हैं?
12. अंडजनक तथा जरायुज द्वारा उत्पन्न अंडे या बच्चे संख्या में बराबर होते हैं? यदि हाँ तो क्यों? यदि नहीं तो क्यों?
13. निम्नलिखित में से शारीरिक खंडीभवन किसमें पहले देखा गया?
    (अ) प्लेटिहेल्मिंथीज (ब) एस्केलमिंथीज (स) ऐनेलिडा (द) आर्थोपोडा
14. निम्न का मिलान करें-

(i) प्रच्छद	(अ) टीनेफोरा
(ii) पार्श्वपाद	(ब) मोलस्का
(iii) शल्क	(स) पोरीफोरा
(iv) कंकत पट्टिका (कामबप्लेट)	(द) रेप्टेलिया
(v) रेडूला	(ई) ऐनेलिडा
(vi) बाल	(फ) साइक्लोस्टोमेटा एवं कॉन्ड्रीक्थीज
(vii) कीपकोशिका (कोएनोसाइट)	(ग) मैमेलिया
(viii) क्लोमछिद्र	(घ) ऑस्टिक्थीज

15. मनुष्यों पर पाए जाने वाले कुछ परजीवों के नाम लिखें।

© NCERT not to be republished

इकाई दो

पादप एवं प्राणियों में संरचनात्मक संगठन

अध्याय 5
पुष्पी पादपों की आकारिकी

अध्याय 6
पुष्पी पादपों का शारीर

अध्याय 7
प्राणियों में संरचनात्मक संगठन

पृथ्वी पर जीवन के विविध स्वरूपों का वर्णन केवल अवलोकन के आधार पर किया गया, जोकि पहले खुली आँखों से बिना किसी यांत्रिक मदद से था और बाद में आवर्धक लेंस और सूक्ष्मदर्शी यंत्र द्वारा किया गया। इस वर्णन में व्यापक तौर पर बाह्य एवं आंतरिक संरचनात्मक विशिष्टिता को ध्यान में रखा गया। इसके अतिरिक्त अवलोकनीय तथा इंद्रियगोचर (अववोधक) जीवन प्रतिभासों को भी वर्णन के एक भाग के रूप में आलेखित किया गया। प्रायोगिक जीव विज्ञान और अधिक स्पष्ट रूप में शरीर क्रिया विज्ञान या शरीर विज्ञान के पूर्णतः स्थापित होने से पहले प्रकृति विज्ञानियों ने केवल जीव विज्ञान के एक हिस्से का वर्णन किया था। यद्यपि, पर्याप्त समय तक जीव विज्ञान भी प्राकृतिक इतिहास के रूप में रहा। विस्तृत विवरण की दृष्टि से यह वर्णन आश्चर्यपूर्ण था। हालांकि यह एक छात्र की प्रारंभिक प्रतिक्रिया में निरस किस्म की हो सकती है, लेकिन यह ध्यान में रखने कि विस्तृत विवरण को बाद के दिनों में न्युनकारी जीव विज्ञान द्वारा प्रयुक्त किया गया योग्य है जो वैज्ञानिकों का ध्यान जीव प्रक्रमों पर जीवन के स्वरूप एवं संरचना से कहीं अधिक खींचा। अतः यह वर्णन शरीर विज्ञान या विकासीय जीव विज्ञान के शोधप्रश्नों के गठन में बहुत ही सार्थक एवं मददगार साबित हुए। इस इकाई के अनुगामी अध्यायों में पादपों एवं प्राणियों के संरचनात्मक संगठन के बारे में बताया जाएगा जिसमें शरीर क्रिया वैज्ञानिक एवं व्यवहारिक प्रत्याभासों का संरचनात्मक आधार भी शामिल होगा। सुविधा की दृष्टि से आकारिकी एवं शारीर विशिष्टताओं का वर्णन पादपों एवं प्राणियों के लिए अलग-अलग किया गया है।

© NCERT not to be republished

कैथेराइन एसाव
(1898 - 1997)

कैथेराइन एसाव का जन्म 1898 में यूक्रेन में हुआ था। आपने रूस और जर्मनी में कृषि विज्ञान पर अध्ययन किया और संयुक्त राज्य अमेरिका से 1931 में डाक्टरेट की उपाधि प्राप्त की थी। आपने अपने प्रारंभिक प्रकाशनों में यह बताया था कि कर्ली टाप वाइरस पौधे में आहार-चालन या फलोएम ऊतक द्वारा फैलता है। डा॰ एसाव की 1954 में प्रकाशित *पादप शरीर (प्लांट एनोटोमी)* ने एक परिवर्तनात्मक एवं विकासात्मक उपागम को अपनाया जिससे पादप संरचना के बारे में समझ व्यापक हुई, तथा पूरे विश्वभर में अथाह प्रभाव छोड़ा। अर्थात् सीधे सीधे इस विशेष विज्ञान में पुनर्जागरण ला दिया।

सन् 1960 में, कैथेराइन एसाव की *एनाटॉमी ऑफ सीड प्लांटस* (बीज पादपों का शारीर) प्रकाशित हुई। इसे वेबेस्टर ऑफ प्लांट बॉयलोजी एवं इनसाइक्लोपीडिया (विश्व कोश) के रूप में संदर्भित किया गया था। सन् 1957 में, आपको नेशनल ऐकेडिमीक ऑफ साइंसेज के लिए चुना गया और आप इस सम्मान को पाने वाली 6वीं महिला बनीं। इस सम्मानीय पुरस्कार के अतिरिक्त आपने यू.एस.ए. के राष्ट्रपति जार्ज बुश से 1989 में नेशनल मेडल आफ साइंस भी प्राप्त किया।

जब 1997 मे केथेराइन एसाव मृत्यु की गोद में समा गए तब मिसूरी बॉटेनकल गार्डेन, एनाटॉमी एवं मार्फोलाजी के निदेशक पीटर रैवेन ने याद करते हुए कहा था, 'वह 99 वर्षों की आयु तक पादप जीवविज्ञान के क्षेत्र में' 'परिपूर्ण प्रभुत्व' युक्त बनी रहीं।

not to be republished

अध्याय 5

पुष्पी पादपों की आकारिकी

5.1 मूल

5.2 तना (स्तंभ)

5.3 पत्ती

5.4 पुष्पक्रम

5.5 पुष्प

5.6 फल

5.7 बीज

5.8 कुछ प्ररूपी पुष्पी पादपों का अर्ध तकनीकी विवरण

5.9 सोलैनेसी

यद्यपि एंजियोस्पर्म की **आकारिकी** अथवा बाह्य संरचना में बहुत विविधता पाई जाती है फिर भी इन उच्च पादपों का विशाल समूह हमें अपनी ओर आकर्षित करता है। इन उच्च पादपों में मूल, स्तंभ, पत्तियाँ, पुष्प तथा फलों की उपस्थिति इसका मुख्य अभिलक्षण है।

अध्याय 2 तथा 3 में हमने पौधों के वर्गीकरण के विषय में अध्ययन किया है जो आकारिकी तथा अन्य अभिलक्षणों पर आधारित थे। वर्गीकरण तथा उच्च पादपों को भली-भाँति समझने के लिए (अथवा सभी जीवों के लिए) हमें संबंधित मानक वैज्ञानिक शब्दावली तथा मानक परिभाषाओं के ज्ञान की आवश्यकता होती है। हमें विभिन्न पादपों की विविधता, जो पौधों में पर्यावरण के अनुकूलन का परिणाम है जैसे विभिन्न आवासों के प्रति अनुकूलन, संरक्षण, चढ़ना तथा संचयन, आदि के विषय में भी ज्ञान प्राप्त करने की आवश्यकता होती है।

यदि आप किसी खरपतवार को उखाड़ें तो आप देखेंगे कि उन सभी में मूल, तना तथा पत्तियाँ होती हैं। उनमें फूल तथा फल भी लगे हो सकते हैं। पुष्पी पादप का भूमिगत भाग मूल तंत्र जबकि ऊपरी भाग प्ररोह तंत्र होता है (चित्र 5.1)।

5.1 मूल

अधिकांश द्विबीजपत्री पादपों में मूलांकुर के लंबे होने से **प्राथमिक मूल** बनती है जो मिट्टी में उगती है। इसमें पार्श्वयी मूल होती हैं जिन्हें **द्वितीयक** तथा **तृतीयक मूल** कहते हैं। प्राथमिक मूल तथा इसकी शाखाएँ मिलकर **मूसला मूलतंत्र** बनाती हैं। इसका उदाहरण सरसों का पौधा है (चित्र 5.2 अ)। एकबीजपत्री पौधों में प्राथमिक मूल अल्पायु होती है और इसके स्थान पर अनेक मूल निकल जाती हैं। ये मूल तने के आधार से निकलती

हैं। इन्हें **झकड़ा मूलतंत्र** कहते हैं। इसका उदाहरण गेहूँ का पौधा है (चित्र 5.2 ब)। कुछ पौधों जैसे घास तथा बरगद में मूल मूलांकुर की बजाय पौधे के अन्य भाग से निकलती हैं। इन्हें **अपस्थानिक मूल** कहते हैं (चित्र 5.2 स)। मूल तंत्र का प्रमुख कार्य मिट्टी से पानी तथा खनिज लवण का अवशोषण, पौधे को मिट्टी में जकड़ कर रखना, खाद्य पदार्थों का संचय करना तथा पादप नियमकों का संश्लेषण करना है।

5.1.1 मूल के क्षेत्र

मूल का शीर्ष अंगुलित्त जैसे **मूल गोप** से ढका रहता है (चित्र 5.3)। यह कोमल शीर्ष की तब रक्षा करता है जब मूल मिट्टी में अपना रास्ता बना रही होती है। मूल गोप से कुछ मिलीमीटर ऊपर **मेरिस्टेमी क्रियाओं का क्षेत्र** होता है। इस क्षेत्र की कोशिकाएँ बहुत छोटी, पतली भित्ति वाली होती हैं तथा उनमें सघन प्रोटोप्लाज्म होता है। उनमें बार-बार विभाजन होता है। इस क्षेत्र में समीपस्थ स्थित कोशिकाएं शीघ्रता से लंबाई में बढ़ती हैं और मूल

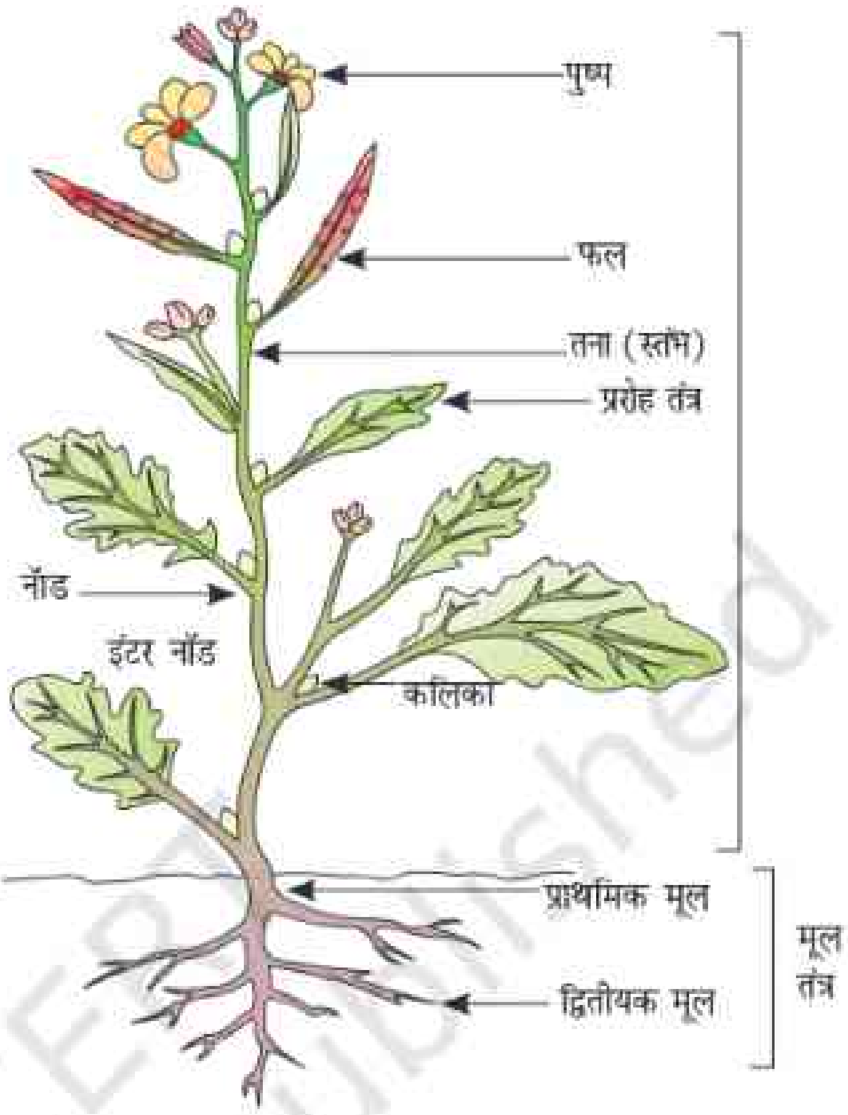

चित्र 5.1 पुष्पी पादप के भाग

चित्र 5.2 विभिन्न प्रकार की जड़ें (अ) मूसला मूल (ब) तंतुक मूल (स) अपस्थानिक मूल

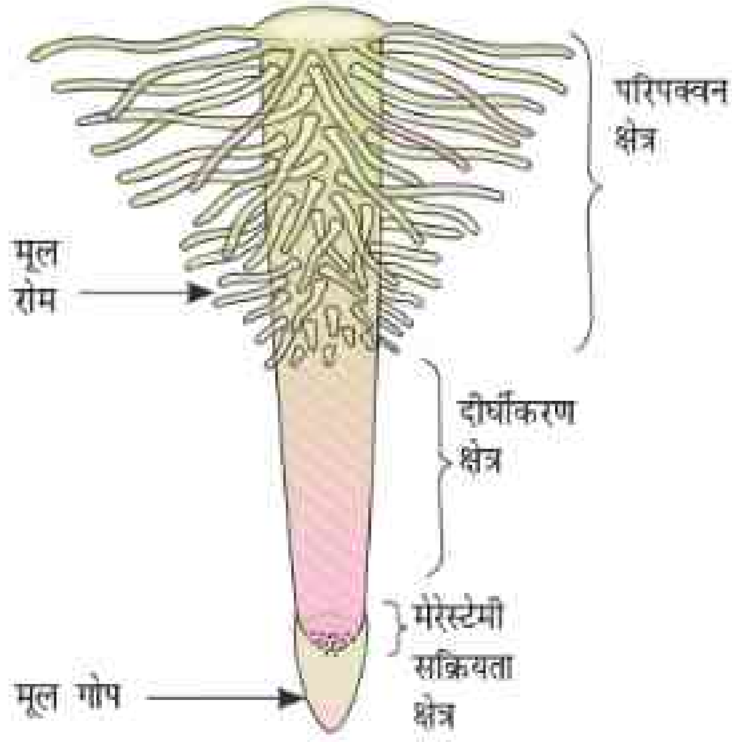

चित्र 5.3 मूल शीर्ष के क्षेत्र

चित्र 5.4 पत्ती की संरचना (अ) पत्ती के भाग (ब) जालिका शिराविन्यास (स) समानांतर शिराविन्यास

को लंबाई में बढ़ाती हैं। इस क्षेत्र को **दीर्घीकरण क्षेत्र** कहते हैं। दीर्घीकरण क्षेत्र की कोशिकाओं में विविधता तथा परिपक्वता आती है। इसलिए दीर्घीकरण के समीप स्थित क्षेत्र को **परिपक्व क्षेत्र** कहते हैं। इस क्षेत्र से बहुत पतली तथा कोमल धागे की तरह की संरचनाएँ निकलती हैं जिन्हें **मूलरोम** कहते हैं। ये मूल रोम मिट्टी से पानी तथा खनिज लवणों का अवशोषण करते हैं।

5.2 तना

ऐसे कौन से अभिलक्षण हैं जो तने तथा मूल में विभेद स्थापित करते हैं? तना अक्ष का ऊपरी भाग है जिस पर शाखाएँ, पत्तियाँ, फूल तथा फल होते हैं। यह अंकुरित बीज के भ्रूण के प्रांकुर से विकसित होता है। तने पर **गाँठ** तथा **पोरियाँ** होती हैं। तने के उस क्षेत्र को जहां पर पत्तियाँ निकलती है गांठ कहते हैं। ये गांठें अंतस्थ अथवा कक्षीय हो सकती हैं। जब तना शैशव अवस्था में होता है, तब वह प्राय: हरा होता है और बाद में वह काष्ठीय तथा गहरा भूरा हो जाता है।

तने का प्रमुख कार्य शाखाओं को फैलाना, पत्ती, फूल तथा फल को संभाले रखना है। यह पानी, खनिज लवण तथा प्रकाश संश्लेषी पदार्थों का संवहन करता है। कुछ तने भोजन संग्रह करने, सहारा तथा सुरक्षा देने और कायिक प्रवर्धन करने के भी कार्य संपन्न करते हैं।

5.3 पत्ती

पत्ती पार्श्वीय, चपटी संरचना होती है जो तने पर लगी रहती है। यह गाँठ पर होती है और इसके कक्ष में कली होती है। **कक्षीय कली** बाद में शाखा में विकसित हो जाती हैं। पत्तियाँ प्ररोह के शीर्षस्थ मेरिस्टेम से निकलती हैं। ये पत्तियाँ अग्राभिसारी रूप में लगी रहती हैं। ये पौधों के बहुत ही महत्त्वपूर्ण कायिक अंग हैं, क्योंकि ये भोजन का निर्माण करती हैं।

एक प्ररूपी पत्ती के तीन भाग होते हैं– पर्णधार, पर्णवृंत तथा स्तरिका (चित्र 5.4 अ)। पत्ती **पर्णाधार** की सहायता से तने से जुड़ी रहती है और इसके आधार पर दो

© NCERT not to be republished

पार्श्व छोटी पत्तियाँ निकल सकती हैं जिन्हें अनुपर्ण कहते हैं। एकबीजपत्री में पर्णधार चादर की तरह फैलकर तने को पूरा अथवा आंशिक रूप से ढक लेता है। कुछ लेग्यूमी तथा कुछ अन्य पौधों में पर्णाधार फूल जाता है। ऐसे पर्णाधार को **पर्णवृंततल्प** (पल्वाइनस) कहते हैं। **पर्णवृंत** पत्ती को इस तरह सजाता है जिससे कि इसे अधिकतम सूर्य का प्रकाश मिल सके। लंबा पतला, लचीला पर्णवृंत स्तरिका को हवा में हिलाता रहता है ताकि ताजी हवा पत्ती को मिलती रहे। **स्तरिका** पत्ती का हरा तथा फैला हुआ भाग है जिसमें शिराएं तथा शिरिकाएँ होती हैं। इसके बीच में एक सुस्पष्ट शिरा होती है जिसे **मध्यशिरा** कहते हैं। शिराएँ पत्ती को दृढ़ता प्रदान करती है और पानी, खनिज तथा भोजन के स्थानांतरण के लिए नलिकाओं की तरह कार्य करती हैं। विभिन्न पौधों में स्तरिका की आकृति उसके सिरे, चोटी, सतह तथा कटाव में विभिन्नता होती है।

5.3.1 शिराविन्यास

पत्ती पर शिरा तथा शिरिकाओं के विन्यास को **शिराविन्यास** कहते हैं। जब शिरिकाएँ स्तरिका पर एक जाल-सा बनाती हैं तब उसे **जालिका शिराविन्यास** कहते हैं (चित्र 5.4 ब)। यह प्राय: द्विबीजपत्री पौधों में मिलता है। जब शिरिकाएँ समानांतर होती हैं उसे **समानांतर शिराविन्यास** कहते हैं (चित्र 5.4 स)। यह प्राय: एक बीजपत्री पौधों में मिलता है।

5.3.2 पत्ती के प्रकार

जब पत्ती की स्तरिका अछिन्न होती है अथवा कटी हुई लेकिन कटाव मध्यशिरा तक नहीं पहुँच पाता, तब वह **सरल पत्ती** कहलाती है। जब स्तरिका का कटाव मध्य शिरा तक पहुँचे और बहुत पत्रकों में टूट जाए तो ऐसी पत्ती को **संयुक्त पत्ती** कहते हैं। सरल तथा संयुक्त पत्तियों, दोनों में पर्णवृत के कक्ष में कली होती है। लेकिन संयुक्त पत्ती के पत्रकों के कक्ष में कली नहीं होती।

चित्र 5.5 संयुक्त पतियां (अ) पिच्छाकारी संयुक्त पत्ती (ब) हस्ताकार संयुक्त पत्ती

संयुक्त पत्तियाँ दो प्रकार की होती हैं। (चित्र 5.5) **पिच्छाकार संयुक्त पत्तियों** में बहुत से पत्रक एक ही **अक्ष** (एक्सिस) जो मध्यशिरा के रूप में होती है, पर स्थित होते हैं। इसका उदाहरण नीम है।

हस्ताकार संयुक्त पत्तियों में पत्रक एक ही बिंदु अर्थात् पर्णवृंत की चोटी से जुड़े रहते हैं। उदाहरणत: सिल्क कॉटन वृक्ष।

5.3.3 पर्णविन्यास

तने अथवा शाखा पर पत्तियों के विन्यस्त रहने के क्रम को पर्णविन्यास कहते हैं। यह प्राय: तीन प्रकार का होता है- एकांतर, सम्मुख तथा चक्करदार। (चित्र 5.6) **एकांतर** प्रकार के पर्णविन्यास में एक अकेली पत्ती प्रत्येक गांठ पर एकांतर रूप में लगी रहती है।

(अ) गुड़हल (ब) अमरूद (स) चंपा

चित्र 5.6: विभिन्न प्रकार का पर्णविन्यास (अ) एकांतरण (ब) सम्मुख (स) चक्करदार

उदाहरणतः गुड़हल, सरसों, सूर्यमुखी। सम्मुख प्रकार के पर्णविन्यास में प्रत्येक गांठ पर एक जोड़ी पत्ती निकलती है और एक दूसरे के **सम्मुख** होती हैं। इसका उदाहरण है केलोट्रोपिस (आक), और अमरूद। यदि एक ही गांठ पर दो से अधिक पत्तियाँ निकलती हैं और वे उसके चारों और एक चक्कर सा बनाती हैं तो उसे **चक्करदार** पर्णविन्यास कहते हैं जैसे *एल्सटोनिआ* (डेविल ट्री)।

चित्र 5.7 असीमाक्षी पुष्पक्रम

5.4 पुष्पक्रम

फूल एक रुपांतरित प्ररोह है जहां पर प्ररोह का शीर्ष मेरिस्टेम पुष्पी मेरिस्टेम में परिवर्तित हो जाता है। पोरियाँ लंबाई में नहीं बढ़ती और अक्ष दबकर रह जाती है। गांठों पर क्रमानुसार पत्तियों की बजाय पुष्पी उपांग निकलते हैं। जब प्ररोह शीर्ष फूल में परिवर्तित होता है, तब वह सदैव अकेला होता है। पुष्पी अक्ष पर फूलों के लगने के क्रम को **पुष्पक्रम** कहते हैं। शीर्ष का फूल में परिवर्तित होना है अथवा सतत रूप से वृद्धि करने के आधार पर पुष्पक्रम को दो प्रकार असीमाक्षी तथा ससीमाक्षी में बांटा गया है। **असीमाक्षी** प्रकार के पुष्पक्रम के प्रमुख अक्ष में सतह वृद्धि होती रहती है और फूल पार्श्व में अग्राभिसारी क्रम में लगे रहते हैं (चित्र 5.7)।

ससीमाक्षी पुष्पक्रम में प्रमुख अक्ष के शीर्ष पर फूल लगता है, इसलिए इसमें सीमित वृद्धि होती है। फूल तलाभिसारी क्रम में लगे रहते हैं जैसा कि चित्र 5.8 में दिखाया गया है।

5.5 पुष्प

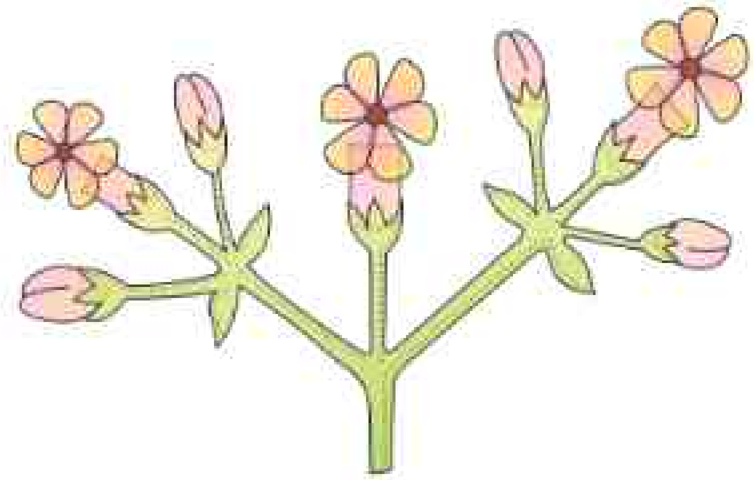
चित्र 5.8 ससीमाक्षी पुष्पक्रम

एंजियोस्पर्म में पुष्प (फूल) एक बहुत महत्वपूर्ण ध्यानकर्षी रचना है। यह एक रूपांतरित प्ररोह है जो लैंगिक जनन के लिए होता है। एक प्ररूपी फूल में विभिन्न प्रकार के विन्यास होते हैं जो क्रमानुसार फूले हुए पुष्पावृंत जिसे **पुष्पासन** कहते हैं, पर लगे रहते हैं। ये हैं-केलिक्स, कोरोला, पुमंग तथा जायांग।

केलिक्स तथा कोरोला सहायक अंग हैं जबकि पुमंग तथा जायांग लैंगिक अंग हैं। कुछ फूलों जैसे प्याज में केल्किस तथा कोरोला में कोई अंतर नहीं होता। इन्हें परिदलपुंज (पेरिऐंथ) कहते हैं। जब फूल में पुंकेसर तथा पुमंग दोनों ही होते हैं तब उसे द्विलिंगी अथवा **उभयलिंगी** कहते हैं। यदि किसी फूल में केवल एक पुंकेसर अथवा अंडप हो तो उसे **एकलिंगी** कहते हैं।

सममिति में फूल **त्रिज्यसममिति** (नियमित) अथवा **एकव्याससममित** (द्विपार्श्विक) हो सकते हैं। जब किसी फूल को दो बराबर भागों में विभक्त किया जा सके तब उसे **त्रिज्यसममिति** कहते हैं। इसके उदाहरण हैं सरसों, धतूरा, मिर्च। लेकिन जब फूल को केवल एक विशेष ऊर्ध्वाधर समतल से दो समान भागों में विभक्त किया जाए तो उसे **एकव्याससममित** कहते हैं। इसके उदाहरण हैं- मटर, गुलमोहर, सेम, *केसिया* आदि। जब कोई फूल बीच से किसी भी ऊर्ध्वाधर समतल से दो समान भागों में विभक्त न हो सके तो उसे **असममिति** अथवा **अनियमित** कहते हैं। जैसे कि *केना*।

एक पुष्प **त्रितयी, चतुष्टयी, पंचतयी** हो सकता है यदि उसमें उनके उपांगों की संख्या 3,4 अथवा 5 के गुणक में हो सकती है। जिस पुष्प में सहपत्र होते हैं (पुष्पवृंत के आधार पर छोटी-छोटी पत्तियाँ होती है) उन्हें **सहपत्री** कहते हैं और जिसमें सहपत्र नहीं होते, उन्हें **सहपत्रहीन** कहते हैं।

पुष्पवृंत पर केल्किस, केरोला, पुमंग तथा अंडाशय की सापेक्ष स्थिति के आधार पर पुष्प को अधोजायांगता (हाइपोगाइनस), परिजायांगता (पेरीगाइनस), तथा अधिजायांता (ऐपीगाइनस) (चित्र 5.9)। **अधोजायांगता** में जायांग सर्वोच्च स्थान पर स्थित होता है और अन्य अंग नीचे होते हैं। ऐसे फूलों में अंडाशय **ऊर्ध्ववर्ती** होते हैं। इसके सामान्य उदाहरण सरसों, गुड़हल तथा बैंगन हैं। **परिजायांगता** में अंडाशय मध्य में होता है और अन्य भाग पुष्पासन के किनारे पर स्थित होते हैं तथा ये लगभग समान ऊँचाई तक होते हैं। इसमें अंडाशय **आधा अधोवर्ती** होता है। इसके सामान्य उदाहरण हैं- पल्म, गुलाब, आड़ू हैं। **अधिजायांगता** में पुष्पासन के किनारे ऊपर की ओर वृद्धि करते हैं तथा वे अंडाशय को पूरी तरह घेर लेते हैं और इससे संलग्न हो जाते हैं। फूल के अन्य भाग अंडाशय के ऊपर उगते हैं। इसलिए अंडाशय **अधोवर्ती** होता है। इसके उदाहरण हैं सूरजमुखी के अरपुष्पक, अमरूद तथा घीया।

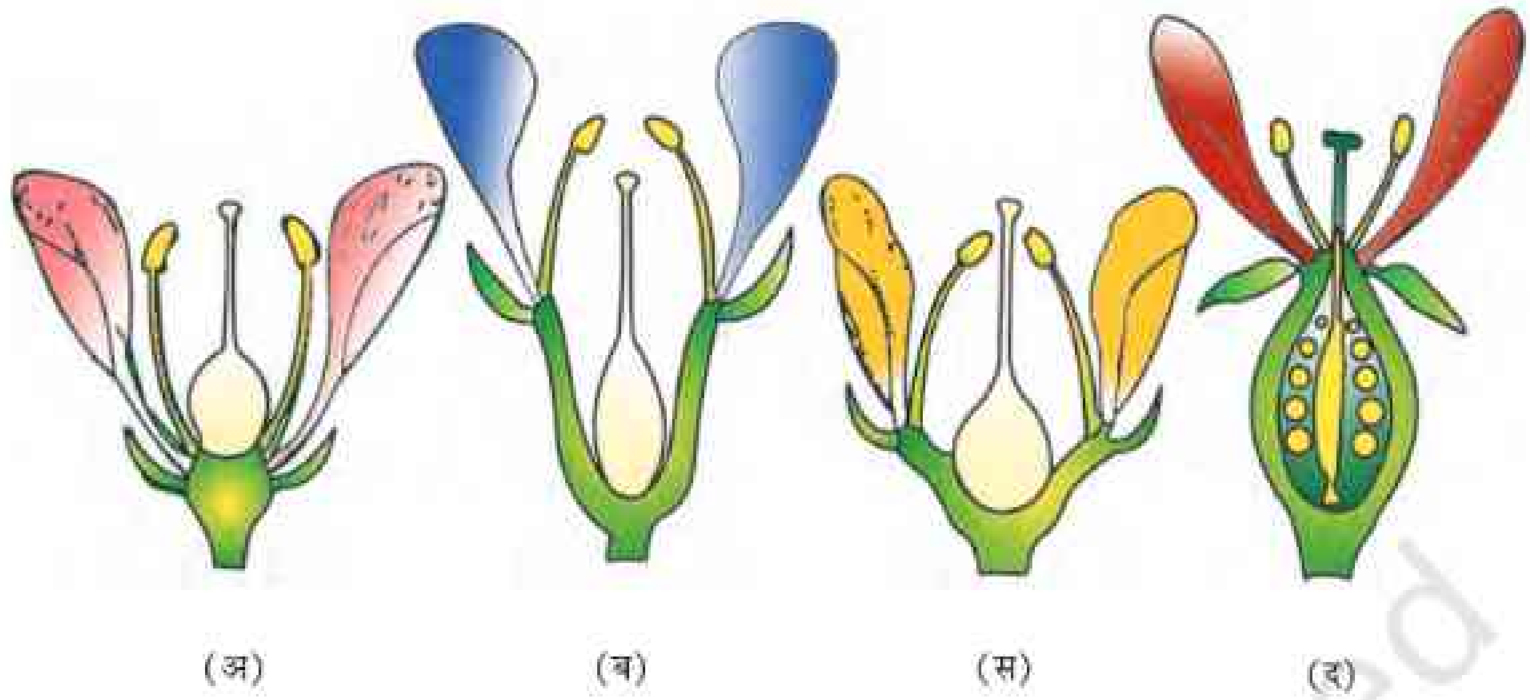

चित्र 5.9 पुष्पासन पर पुष्पीय भागों की स्थिति (अ) अधोजायांगता (ब तथा स) परिजायांगता (द) अधिजायांगता

5.5.1 पुष्प के भाग

प्रत्येक पुष्प में चार चक्र होते हैं जैसे केल्किस, कोरोला, पुमंग तथा जायांग (चित्र 5.10)।

5.5.1.1 केल्किस

केल्किस पुष्प का सबसे बाहरी चक्र है और इसकी इकाई को बाह्य दल कहते हैं। प्राय: बाह्य दल हरी पत्तियों की तरह होते हैं और कली की अवस्था में फूल की रक्षा करते हैं। **केल्किस संयुक्त बाह्य दली** (जुड़े हुए बाह्य दल) अथवा **पृथक बाह्य दली** (मुक्त बाह्य दल) होते हैं।

5.5.1.2 कोरोला

कोरोला, दल (पंखुड़ी) का बना होता है। दल प्राय: चमकीले रंगदार होते हैं। ये परागण के लिए कीटों को अपनी ओर आकर्षित करते हैं। केल्किस की तरह कोरोला भी **संयुक्त दली** अथवा **पृथक्‌दलीय** हो सकता है। पौधों में कोरोला की आकृति तथा रंग भिन्न-भिन्न होता है। जहाँ तक आकृति का संबंध है, वह नलिकाकार, घंटाकार, कीप के आकार का तथा चक्राकार हो सकती है।

चित्र 5.10 पुष्प के भाग

पुष्पदल विन्यास पुष्पकली में उसी चक्र की अन्य इकाइयों के सापेक्ष बाह्य दल अथवा दल के लगे रहने के क्रम को पुष्प दल विन्यास कहते हैं। पुष्प दल विन्यास के प्रमुख प्रकार कोर स्पर्शी, व्यावर्तित, कोरछादी, वैक्जीलेरी होते हैं (चित्र 5.11)। जब चक्र के बाह्यदल अथवा दल एक दूसरे के किनारों को केवल स्पर्श करते हों उसे **कोरस्पर्शी** कहते हैं; जैसे *केलोट्रॉपिस*। यदि किसी दल अथवा बाह्य दल का किनारा अगले दल पर तथा दूसरे तीसरे आदि पर अतिव्याप्त हो तो उसे **व्यावर्तित** कहते हैं। इसके उदाहरण: गुडहल, भिंडी तथा कपास हैं। यदि बाह्य दल अथवा दल दूसरे पर अतिव्याप्त हो तो उसकी कोई विशेष दिशा नहीं होती। इस प्रकार की स्थिति को **कोरछादी** कहते हैं। इसके उदाहरण - *केसिया*, गुलमोहर हैं। मटर, सेम में पाँच दल होते हैं। इनमें से सबसे बड़ा (मानक) दो पार्श्वों को (पंख) और ये दो सबसे छोटे अग्र दलों (कूटक) को अतिव्यापित करते हैं। इस प्रकार के पुष्पदल विन्यास को **वैक्जीलरी** अथवा पैपिलिओनेसियस कहते हैं।

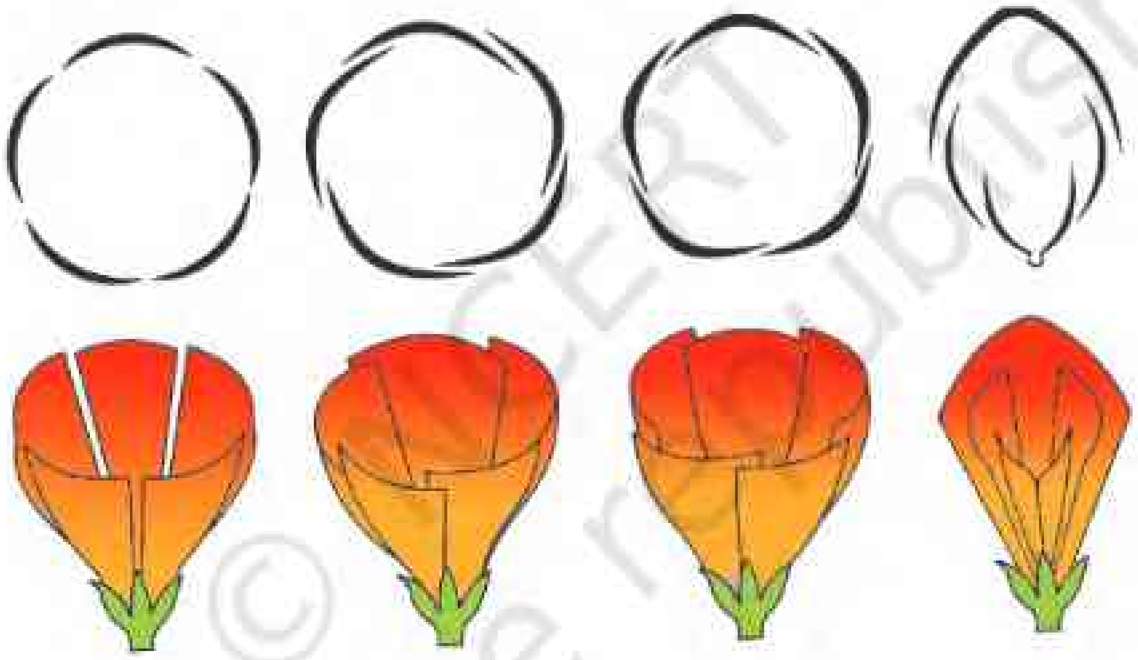

चित्र 5.11 पुष्पदल विन्यास के विभिन्न प्रकार (अ) कोरस्पर्शी (ब) व्यावर्तित (स) कोरछादी (द) वैक्जीलेरी

5.5.1.3 पुमंग

पुमंग पुंकेसरों से मिलकर बनता है। प्रत्येक पुंकेसर जो फूल के नर जनन अंग हैं, में एक तंतु तथा एक परागकोश होता है। प्रत्येक परागकोश प्राय: द्विपालक होता है और प्रत्येक पालि में दो कोष्ठक, परागकोष होते हैं। पराग कोष में परागकण होते हैं। बंध्य पुंकेसर जनन करने में असमर्थ होते हैं और वह **स्टेमिनाएड** कहलाते हैं।

पुंकेसर फूल के अन्य भागों जैसे दल अथवा आपस में ही जुड़े हो सकते हैं। जब पुंकेसर दल से जुड़े होते हैं, तो उसे **दललग्न (ऐपीपेटलस)** कहते हैं जैसे बैंगन में। यदि ये परिदल पुंज से जुड़े हों तो उसे **परिदल लग्न (ऐपीफिलस)** कहते हैं जैसे लिली में। फूल में पुंकेसर मुक्त (बहु पुंकेसरी) अथवा जुड़े हो सकते हैं। पुंकेसर एक गुच्छे अथवा बंडल (**एकसंघी**) जैसे गुड़हल में है; अथवा दो बंडल (**द्विसंघी**) जैसे

मटर में अथवा दो से अधिक बंडल (**बहुसंघी**) जैसे सिट्रस में हो सकते हैं। उसी फूल के तंतु की लंबाई में भिन्नता हो सकती है जैसे सेल्विया तथा सरसों में।

5.5.1.4 जायांग

जायांग फूल के मादा जनन अंग होते हैं। ये एक अथवा अधिक अंडप से मिलकर बनते हैं। अंडप के तीन भाग होते हैं- वर्त्तिका, वर्तिकाग्र तथा अंडाशय। **अंडाशय** का आधारी भाग फूला हुआ होता है जिस पर एक लम्बी नली होती है जिसे वर्तिका कहते हैं। वर्त्तिका अंडाशय को वर्त्तिकाग्र से जोड़ती है। **वर्त्तिकाग्र** प्राय: **वर्त्तिका** की **चोटी** पर होती है और परागकण को ग्रहण करती है। प्रत्येक अंडाशय में एक अथवा अधिक बीजांड होते हैं जो चपटे, गद्देदार **बीजांडासन** से जुड़े रहते हैं। जब एक से अधिक अंडप होते हैं तब वे पृथक (मुक्त) हो सकते हैं, (जैसे कि गुलाब और कमल में) इन्हें **वियुक्तांडपी** (एपोकार्पस) कहते हैं। जब अंडप जुड़े होते हैं, जैसे मटर तथा टमाटर, तब उन्हें **युक्तांडपी** (सिनकार्पस) कहते हैं। निषेचन के बाद बीजांड से बीज तथा अंडाशय से फल बन जाते हैं।

बीजांडन्यास : अंडाशय में बीजांड के लगे रहने का क्रम को बीजांडन्यास (प्लैसेनटेशन) कहते हैं। बीजांडन्यास सीमांत, स्तंभीय, भित्तीय, आधारी, केंद्रीय तथा मुक्त स्तंभीय प्रकार का होता है (चित्र 5.12)। **सीमांत** में बीजांडासन अंडाशय के अधर सीवन के साथ-साथ कटक बनाता है और बीजांड कटक पर स्थित रहते हैं जो दो कतारें बनाती हैं जैसे कि मटर में। जब बीजांडासन अक्षीय होता है और बीजांड बहुकोष्ठकी अंडाशय पर लगे होते हैं तब ऐसे बीजांडन्यास को **स्तंभीय** कहते हैं। इसका उदाहरण हैं गुड़हल, टमाटर तथा नींबू। **भित्तीय** बीजांडन्यास में बीजांड अंडाशय की भीतरी भित्ति पर अथवा परिधीय भाग में लगे रहते हैं। अंडाशय एक कोष्ठक होता है लेकिन आभासी पट बनने के कारण दो कोष्ठक में विभक्त हो जाता है। इसके उदाहरण हैं क्रुसीफर (सरसों) तथा *आर्जेमोन* हैं। जब बीजांड केंद्रीय कक्ष में होते हैं और यह पुटीय नहीं होते जैसे कि *डायऐंथस* तथा *प्रिमरोज*, तब इस प्रकार के बीजांडन्यास को **मुक्तस्तंभीय** कहते हैं। **आधारी** बीजांडन्यास में बीजांडासन अंडाशय के आधार पर होता है और इसमें केवल एक बीजांड होता है। इसके उदाहरण सूरजमुखी, गेंदा हैं।

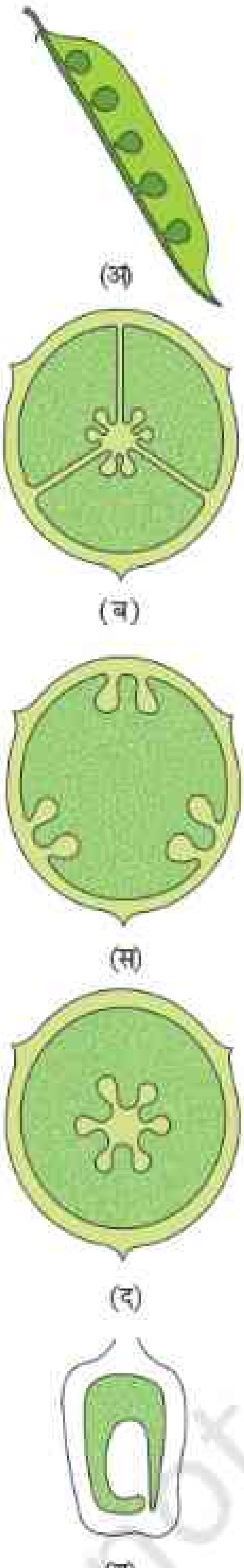

चित्र 5.12 बीजांडन्यास के प्रकार (अ) सीमांत (ब) स्तंभीय (स) भित्तीय (द) मुक्तस्तंभीय (य) आधारी

5.6 फल

फल पुष्पी पादपों का एक प्रमुख अभिलक्षण है। यह एक परिपक्व अंडाशय होता है जो निषेचन के बाद विकसित होता है। यदि फल बिना निषेचन के विकसित हो तो उसे **अनिषेकी (पार्थेनोकर्णिक)** फल कहते हैं।

प्राय: फल में एक भित्ति अथवा फल भित्ति तथा बीज होते हैं। फल भित्ति शुष्क अथवा गूदेदार हो सकती है। जब फल भित्ति मोटी तथा गूदेदार होती है तब

© NCERT not to be republished

उसमें एक बाहरी भित्ति होती जिसे **बाह्यफल** भित्ति कहते हैं। इसके मध्य में **मध्यफल** भित्ति तथा भीतरी ओर **अंत:फल** भित्ति होती है।

आम तथा नारियल में फल के प्रकार को अष्ठिल (ड्रूप) कहते हैं (चित्र 5.13)। ये फल एकांडपी ऊर्ध्वर्ती अंडाशय से विकसित होते हैं और इनमें एक बीज होता है। आम में फल भित्ति बाह्यफल भित्ति, गूदेदार एवं खाने योग्य मध्यफल भित्ति तथा भीतरी कठोर पथरीली अंत:फल भित्ति के सुस्पष्ट रूप से विभेदित होती है। नारियल में मध्यफल भित्ति तंतुमयी होती है।

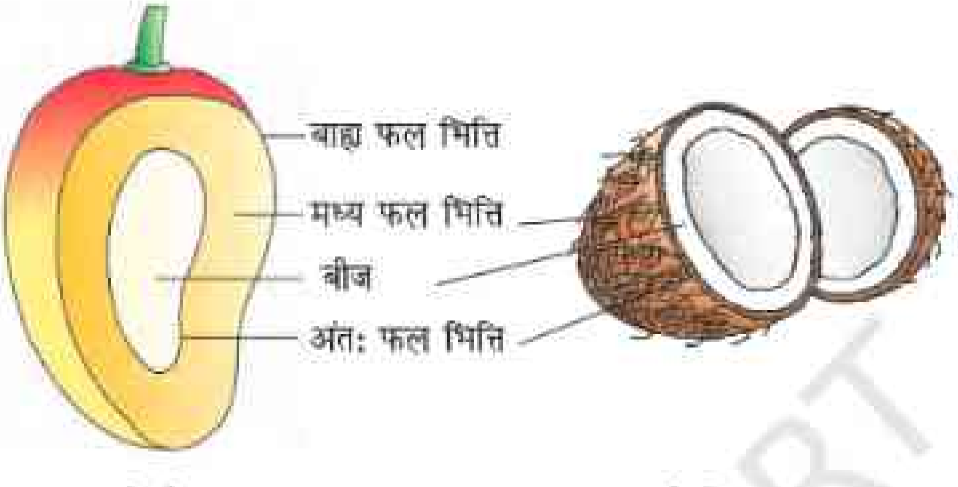

चित्र 5.13 फल के भाग (अ) आम (ब) नारियल

© NCERT not to be republished

5.7 बीज

निषेचन के बाद बीजांड से बीज बन जाते हैं। बीज में प्राय: एक बीजावरण तथा भ्रूण होता है। भ्रूण में एक मूलांकुर, एक भ्रूणीय अक्ष तथा एक (गेहूं, मक्का) अथवा दो (चना, मटर) बीजपत्र होते हैं।

5.7.1 द्विबीजपत्री बीज की संरचना

बीज की बाहरी परत को **बीजावरण** कहते हैं। बीजावरण की दो सतहें होती हैं- बाहरी को **बीजचोल** और भीतरी स्तह को **टेगमेन** कहते हैं। बीज पर एक क्षत चिह्न की तरह का ऊर्ध्व होता है जिसके द्वारा बीज फल से जुड़ा रहता है। इसे नाभिका कहते हैं। प्रत्येक बीज में नाभिका के ऊपर छिद्र होता है जिसे **बीजांडद्वार** कहते हैं। बीजावरण हटाने के बाद आप बीज पत्रों के बीच भ्रूण को देख सकते हैं। भ्रूण में एक भ्रूणीय अक्ष और दो गूदेदार बीज पत्र होते हैं। बीज पत्रों में भोज्य पदार्थ संचित रहता है। अक्ष के निचले नुकीले भाग को मूलांकुर तथा ऊपरी पत्तीदार भाग को प्रांकुर कहते है (चित्र 5.14)। **भ्रूणपोष** भोजन संग्रह करने वाला ऊतक है जो द्विनिषेचन के परिणामस्वरूप

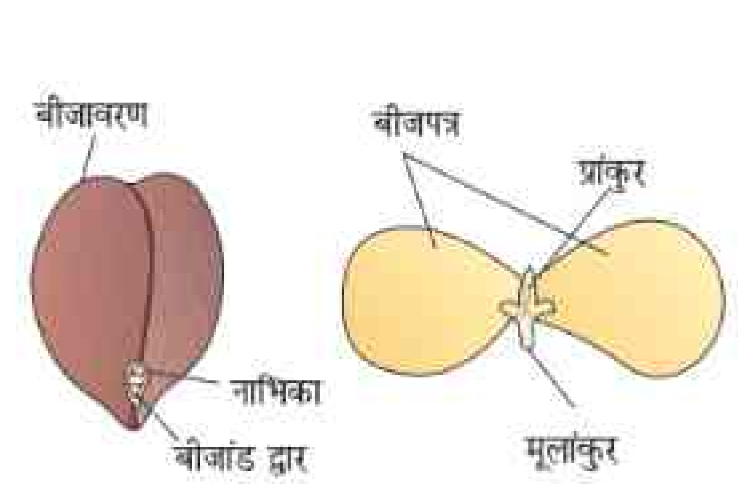

चित्र 5.14 द्विबीजपत्री बीज की संरचना

बनते हैं। चना, सेम तथा मटर में भ्रूणपोष पतला होता है। इसलिए ये अभ्रूणपोषी हैं जबकि अरंड में यह गूदेदार होता है (भ्रूण पोषी है)।

5.7.2 एकबीजपत्री बीज की संरचना

प्राय: एकबीजपत्री बीज भ्रूणपोषी होते हैं लेकिन उनमें से कुछ अभ्रूणपोषी होते हैं। उदाहरणत: आर्किड। अनाज के बीजों जैसे मक्का में बीजावरण झिल्लीदार, तथा फल भित्ति से संग्लित होता है। भ्रूणपोष स्थूलीय होता है और भोजन का संग्रहण करता है। भ्रूणपोष की बाहरी भित्ति भ्रूण से एक प्रोटीनी सतह द्वारा अलग होती है जिसे **एल्यूरोन सतह** कहते हैं। भ्रूण आकार में छोटा होता है और यह भ्रूण पोष के एक सिरे पर खाँचे में स्थित होता है। इसमें एक बड़ा तथा ढालाकार बीजपत्र होता है जिसे **स्कुटेलम** कहते हैं। इसमें एक छोटा अक्ष होता है जिसमें **प्रांकुर** तथा **मूलांकुर** होते हैं। प्रांकुर तथा मूलांकुर एक चादर से ढके होते हैं, जिसे क्रमश: **प्रांकुरचोल** तथा **मूलांकुरचोल** कहते हैं। (चित्र 5.15)

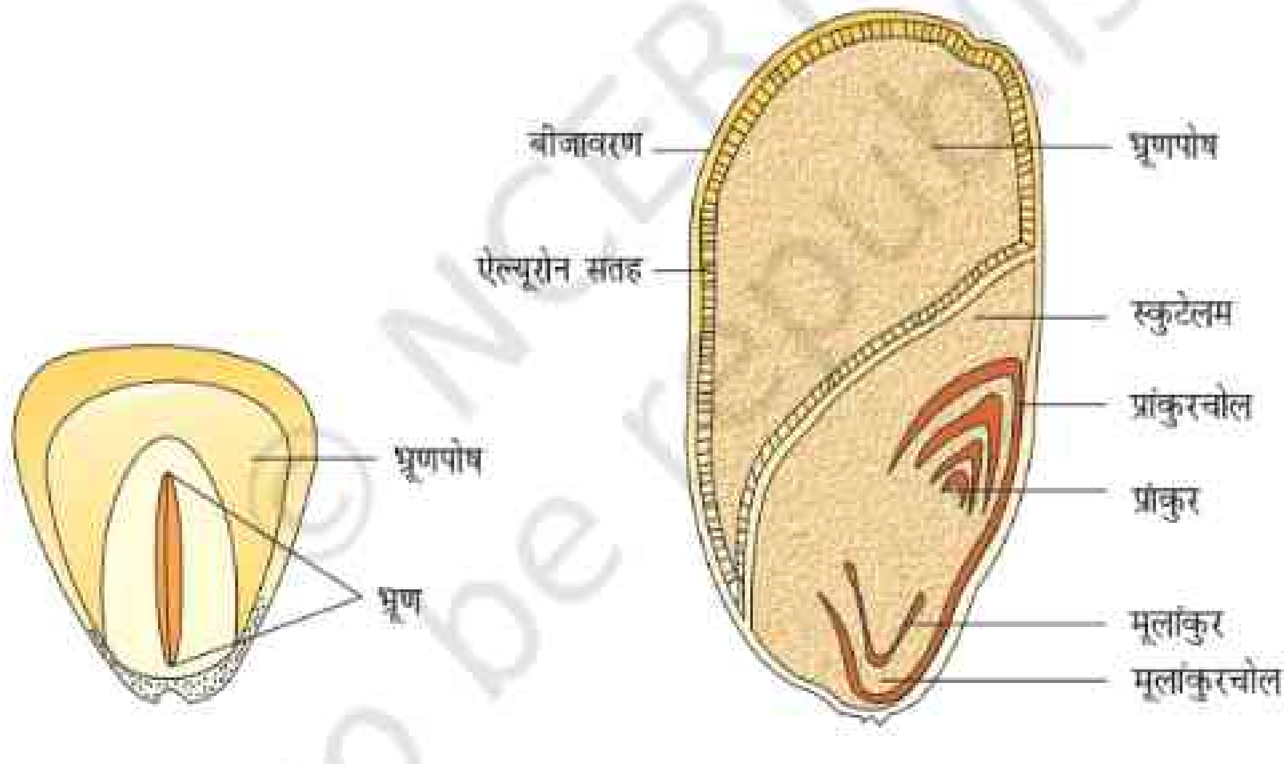

चित्र 5.15 एकबीजपत्री बीज की संरचना

5.8 एक प्ररूपी पुष्पीपादप (एंजियोस्पर्म) का अर्द्धतकनीकी विवरण

पुष्पीपादप को वर्णित करने के लिए बहुत से आकारिकी अभिलक्षणों का उपयोग किया जाता है। पुष्पीपादपों का वर्णन संक्षिप्त, सरल तथा वैज्ञानिक भाषा में क्रमवार होना चाहिए। पौधे के वर्णन में उसकी प्रकृति, कायिक अभिलक्षण मूल, तना तथा पत्तियाँ और उसके बाद पुष्पी अभिलक्षण, पुष्प विन्यास, फूल के भाग का वर्णन आता है। पौधे के विभिन्न भागों के वर्णन के बाद पुष्पी भाग के पुष्पी चित्र तथा पुष्पी सूत्र बताने पड़ते हैं। पुष्पी

सूत्र को कुछ संकेतों द्वारा इंगित किया जाता है। पुष्पी सूत्र में सहपत्र को $\underline{Br}$ से, केल्किस को $\underline{K}$ से, कोरोला को $\underline{C}$ से, परिदल पुंज को P से, पुमंग को A से तथा जायांग को G से लिखते हैं। ऊर्ध्ववर्ती अंडाशय को G और अधोवर्ती अंडाशय को $\underline{G}$ से लिखते हैं। नर फूल के लिए ♂ मादा के लिए ♀ तथा द्विलिंगी के लिए ⚥ चिह्नों से इंगित करते हैं। त्रिज्य सममिति को '⊕' तथा एक व्यास सममित को '%' इंगित करते हैं। युक्त दलों की संख्या को ब्रेकेट से बंद करते हैं और आसंजन को पुष्पी चिह्नों के ऊपर रेखा खींचते हैं। पुष्पीचित्र से फूल के भागों की संख्या, उनके विन्यस्त क्रम और उनके संबंध (चित्र 5.16) के विषय में जानकारी प्राप्त होती है। मातृ अक्ष की स्थिति फूल के सापेक्ष होती है जिसे डॉट द्वारा पुष्पी चित्र के ऊपर इंगित करते हैं। केल्किस, कोरोला, पुमंग तथा जायांग क्रमवार चक्कर में दिखाए जाते हैं। कैल्किस सबसे बाहर की ओर तथा जायांग सबसे भीतर होता है। यह सासंजन तथा आसंजन को चक्कर के भागों तथा चक्कर के बीचों को इंगित करता है। सरसों के पौधे (कुटुंब: ब्रेसिकेसी) के पुष्पी चित्र तथा पुष्पी सूत्र दिखाए गए हैं (चित्र 5.16)।

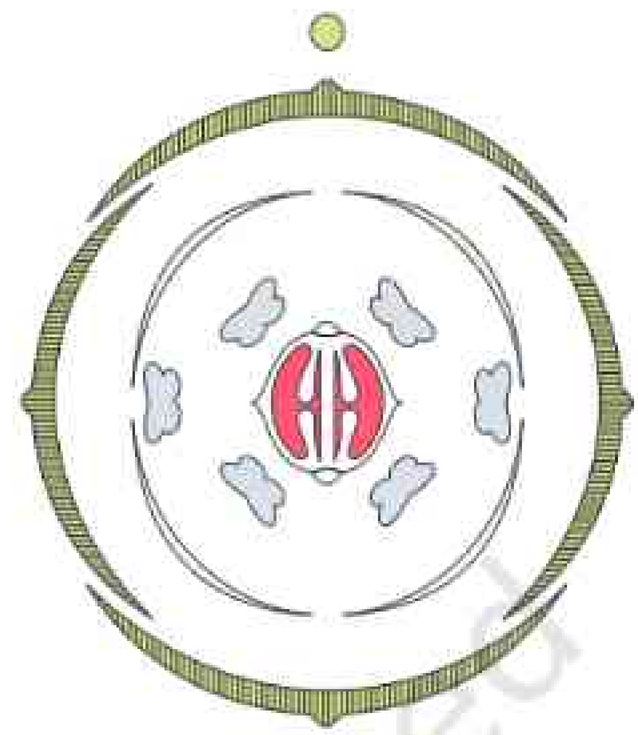

⊕⚥ $K_{2+2}\ C_4\ A_{2+4}\ \underline{G}_{(2)}$

चित्र 5.16 (अ) पुष्पीसूत्र
(ब) पुष्पी चित्र

5.9 सोलैनेसी

यह एक बड़ा कुल है। प्राय: इसे आलू कुल भी कहते हैं। ये उष्णकटिबंधीय, उपोष्ण तथा शीतोष्ण में फैले रहते हैं। (चित्र 5.17)

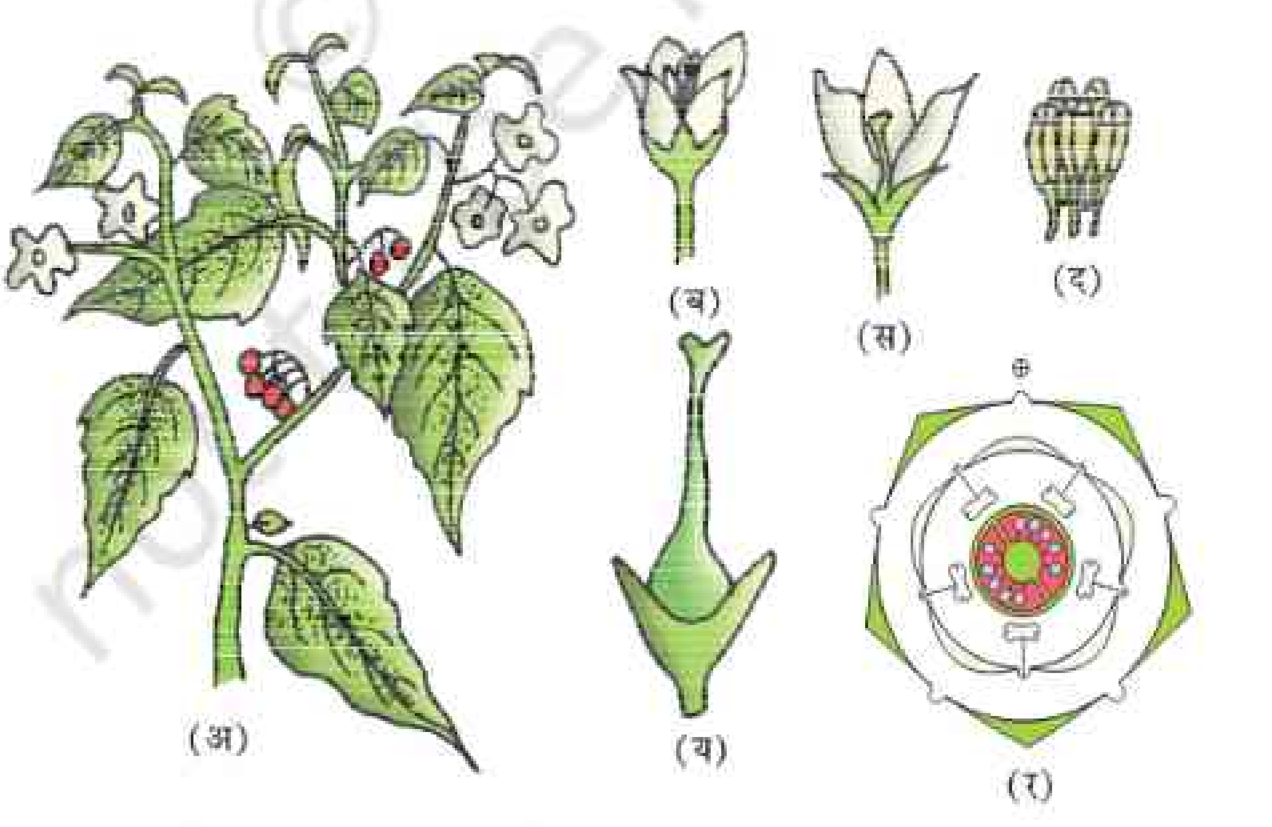

चित्र 5.17 सोलैनम नाइग्रम (मकोय) का पौधा (अ) पुष्पीशाखा (ब) पुष्प (स) पुष्प की अनुदैर्ध्यकाट (द) पुंकेसर (य) अंडप (र) पुष्पी चित्र

© NCERT not to be republished

कायिक अभिलक्षण

इसके पौधे प्रायः शाकीय, झाड़ियाँ तथा छोटे वृक्ष वाले होते हैं

तनाः शाकीय, कभी-कभी काष्ठीय; वायवीय, सीधा, सिलिंडिराकर, शाखित, ठोस अथवा खोखला, रोमयुक्त अथवा अरोमिल, भूमिगत जैसे आलू (*सोलैनम ट्यूबीरोसम*),

पत्तियाँः एकांतर, सरल, कर्मी संयुक्त पिच्छाकार अनुपर्णी, जालिका विन्यास

पुष्पी अभिलक्षणः

पुष्पक्रमः एकल, कक्षीय, ससीमाक्षी जैसे *सोलैनम* में;

फूलः उभयलिंगी, त्रिज्यसममिति

केल्किसः पाँच बाह्य दल, संयुक्त, दीर्घस्थायी, कोरस्पर्शी पुष्प दल विन्यास

कोरोलाः पाँच दल, संयुक्त, कोरस्पर्शी पुष्पदल विन्यास

पुमंगः पाँच पुंकेसर, दललग्न

जायांगः द्विअंडपी, युक्तांडपी, तिरछी अंडाशय ऊर्ध्वावर्ती, द्विकोष्ठी, बीजांडासन फूला हुआ जिसमें बहुत से बीजांड

फलः संपुट अथवा सरस

बीजः भ्रूणपोषी, अनेक

पुष्पी सूत्र : $\oplus$ ⚥ $K_{(5)}\ \overset{\frown}{C_{(5)}\ A_{5}}\ \underline{G}_{(2)}$

आर्थिक महत्व

इस कुल के अधिकांश सदस्य भोजन (टमाटर, बैंगन, आलू), मसाले (मिर्च), औषधि (बेलाडोना, *अश्वगंधा*); धूमक (तंबाकू), सजावटी पौधे (पिटुनिआ) के स्रोत हैं।

सारांश

यदि हम समस्त पादप जगत पर दृष्टि डालें तो पुष्पीय पादप सर्वाधिक विकसित होते हैं। ये आकार, माप, संरचना, पोषण की विधि, जीवन काल, प्रकृति तथा आवास में अत्यधिक विविधता प्रदर्शित करते हैं। इनमें मूल तथा प्ररोह तंत्र भली भाँति विकसित होते हैं। इनमें मूल तंत्र मूसला अथवा झकड़ा मूल पाई जाती हैं। समान्यता द्विबीजपत्री पादपों में मूसला जबकि एक बीजपत्री पादपों में झकड़ा मूल होती हैं। कुछ पादपों में मूल भोजन के संग्रहण तथा यांत्रिक सहारे तथा श्वसन के लिए रूपांतरित हो जाती हैं। प्ररोह तंत्र तना, पत्ती, पुष्प तथा फलों में बँटा रहता है। तने के आकारिकीय अभिलक्षण जैसे गाँठों तथा पोरियों की उपस्थिति, बहुकोशिक रोम, तथा धनात्मक प्रकाशानुवर्ती प्रकृति आदि की उपस्थिति से तने तथा मूल में अंतर को आसानी से समझा जा सकता है। पत्ती तने की पार्श्वीय उर्द्धव पर गांठ से बर्हिजाति रूप में विकसित होती है। यह रंग में हरी होती है ताकि प्रकाश संश्लेषण को क्रिया संपन्न हो सके। पत्तियां आकार, माप, किनारे, शीर्ष, तथा पत्ती की स्तरिका के कटाव में सुस्पष्ट विविधताएं प्रदर्शित करती हैं।

© NCERT not to be republished

पुष्प एक प्रकार के प्ररोह का रूपांतरित रूप है जो लैंगिक जनन संपन्न करता है। पुष्प विभिन्न प्रकार के पुष्पक्रम में विन्यस्त रहते हैं। यह संरचना, ज्यामिति, अन्य भागों के सापेक्ष अंडाशय की स्थिति, दलों बाह्य दलों, अंडाशय आदि का क्रमबद्ध विन्यास में भी विविधता प्रदर्शित करता है। निषेचन के पश्चात अंडाशय से फल तथा बीजांड से बीजों का निर्माण होता है। बीज एकबीजपत्री अथवा द्विबीजपत्रीय हो सकते हैं वे आकार, माप तथा जीवन क्षमता काल में विविध रूप के होते हैं। पुष्पीय अभिलक्षण पुष्पीय पादपों के वर्गीकरण तथा पहचान के आधार माने जाते हैं। इसका वर्णन कुलों के अर्द्ध तकनीकी विवरण से चित्रों सहित किया जा सकता है। अतः एक पुष्पी पादप का वर्णन वैज्ञानिक शब्दावली का उपयोग करते हुए निर्दिष्ट क्रम में कर सकते हैं। पुष्पीय अभिलक्षण संक्षिप्त रूप पुष्पीय चित्रों, पुष्पीय अंगों द्वारा निरूपित कर सकते हैं।

अभ्यास

1. एक पिच्छाकार संयुक्त पत्ती हस्ताकार संयुक्त पत्ती से किस प्रकार भिन्न हैं?
2. विभिन्न प्रकार के पर्णविन्यास का उदाहरण सहित वर्णन करो।
3. निम्नलिखित की परिभाषा लिखो।
   (अ) पुष्प दल विन्यास (ब) बीजांडासन (स) त्रिज्या सममिति (द) एकव्यास सममित
   (इ) ऊर्ध्ववर्ती (एफ) परिजायांगी पुष्प (जी) दललग्न पुंकेसर
4. निम्नलिखित में अंतर लिखो।
   (अ) असीमाक्षी तथा ससीमाक्षी पुष्पक्रम
   (ब) वियुक्तांडपी तथा युक्तांडपी अंडाशय
5. निम्नलिखित के चिह्नित चित्र बनाओ
   (अ) चने के बीज तथा (ब) मक्के के बीज का अनुदैर्घ्यकाट
6. सोलैनेसी कुल के एक पुष्प को उदाहरण के रूप में लो तथा उनका अर्द्धतकनीकी विवरण प्रस्तुत करो। पुष्पीय चित्र भी बनाओ।
7. पुष्पी पादपों में पाए जाने वाले विभिन्न प्रकार के बीजांडासन्यासों का वर्णन करो।
8. पत्तियों के विभिन्न रूपांतरण पौधे की कैसे सहायता करते हैं?
9. पुष्पक्रम की परिभाषा करो। पुष्पी पादपों में विभिन्न प्रकार के पुष्पक्रमों के आधार का वर्णन करो।
10. पुष्पासन पर स्थिति के अनुसार लगे पुष्पी भागों का वर्णन करो।

© NCERT not to be republished

अध्याय 6

पुष्पी पादपों का शारीर

6.1 ऊतक तंत्र

6.2 द्विबीजपत्री तथा एकबीजपत्री पादपों का शारीर

आप बड़े प्राणियों पादप तथा जंतु (प्राणी)-दोनों में रचनात्मक समानता तथा बाह्य आकारिकी में विभिन्नता देख सकते हैं। इस प्रकार जब हम भीतरी रचना का अध्ययन करते हैं, तब हमें बहुत सी समानताओं तथा विभिन्नताओं का पता लगता है। इस अध्याय में हम उच्च पौधों में भीतरी रचनात्मक तथा कार्यात्मक संरचनाओं के विषय में पढ़ेंगे। पौधों की भीतरी संरचना के अध्ययन को शारीर कहते हैं। पौधों में कोशिका आधार भूत इकाई है। कोशिकाएँ ऊतकों में और ऊतक अंगों में संगठित होते हैं। पौधे के विभिन्न अंगों की भीतरी संरचना में अंतर होता है। एंजियोस्पर्म में ही एकबीजपत्री की शारीरीकी द्विबीजपत्री से भिन्न होती है। भीतरी संरचना पर्यावरण के प्रति अनुकूलन को भी दर्शाती है।

6.1 ऊतक तंत्र

हम अब तक विभिन्न प्रकार के ऊतकों तथा उनमें स्थित कोशिकाओं के प्रकार के आधार पर चर्चा कर रहे थे। आओ, अब हम देखें कि पौधे के विभिन्न स्थानों पर स्थित ऊतक कैसे एक दूसरे से भिन्न होते हैं। उनकी रचना तथा कार्य भी उनकी स्थिति के अनुसार होते हैं। रचना तथा स्थिति के आधार पर ऊतक तंत्र तीन प्रकार का होता है। ये तंत्र हैं- बाह्यत्वचीय ऊतक तंत्र, भरण अथवा मौलिक ऊतक तंत्र, संवहनी ऊतक तंत्र।

6.1.1 बाह्य त्वचीय ऊतक तंत्र

बाह्यत्वचीय ऊतक तंत्र पौधे का सबसे बाहरी आवरण है। इसके अंतर्गत बाह्य त्वचीय कोशिकाएं रंध्र तथा बाह्यत्वचीय उपांग - मूलरोम आते हैं। **बाह्यत्वचा** पौधों के भागों की बाहरी त्वचा है। इसकी कोशिकाएं लंबी तथा एक दूसरे से सटी हुई होती हैं और एक

© NCERT not to be republished

अखंड सतह बनाती है। बाह्यत्वचा प्रायः एकल सतह वाली होती है। बाह्यत्वचीय कोशिकाएं पैरेंकाइमी होती है जिनमें बहुत कम मात्रा में साइटोप्लाज्म होता है जो कोशिका भित्ति के साथ होता है। इसमें एक बड़ी रसधानी होती है। बाह्यत्वचा की बाहरी सतह मोम की मोटी परत से ढकी होती है, जिसे **क्यूटिकल** कहते हैं। क्यूटिकल पानी की हानि को रोकती है। मूल में क्यूटिकल नहीं होती।

रंध्र ऐसी रचनाएँ हैं, जो पत्तियों की बाह्यत्वचा पर होते हैं। रंध्र वाष्पोत्सर्जन तथा गैसों के विनिमय को नियमित करते हैं। प्रत्येक रंध्र में दो सेम के आकार की दो कोशिकाएं होती हैं जिन्हें **द्वारकोशिकाएं** कहते हैं। घास में द्वार कोशिकाएं डंबलाकार होती हैं। द्वारकोशिका की बाहरी भित्ति पतली तथा आंतरिक भित्ति मोटी होती है। द्वार कोशिकाओं में क्लोरोप्लास्ट होता है और यह रंध्र के खुलने तथा बंद होने के क्रम को नियमित करता है। कभी-कभी कुछ बाह्यत्वचीय कोशिकाएं जो रंध्र के आस-पास होती हैं। उनकी आकृति, माप तथा पदार्थों में विशिष्टता आ जाती है। इन कोशिकाओं को **सहायक कोशिकाएं** कहते हैं। रंध्रीय छिद्र, द्वारकोशिका तथा सहायक कोशिकाएं मिलकर **रंध्री तंत्र** का निर्माण करती हैं (चित्र 6.1)।

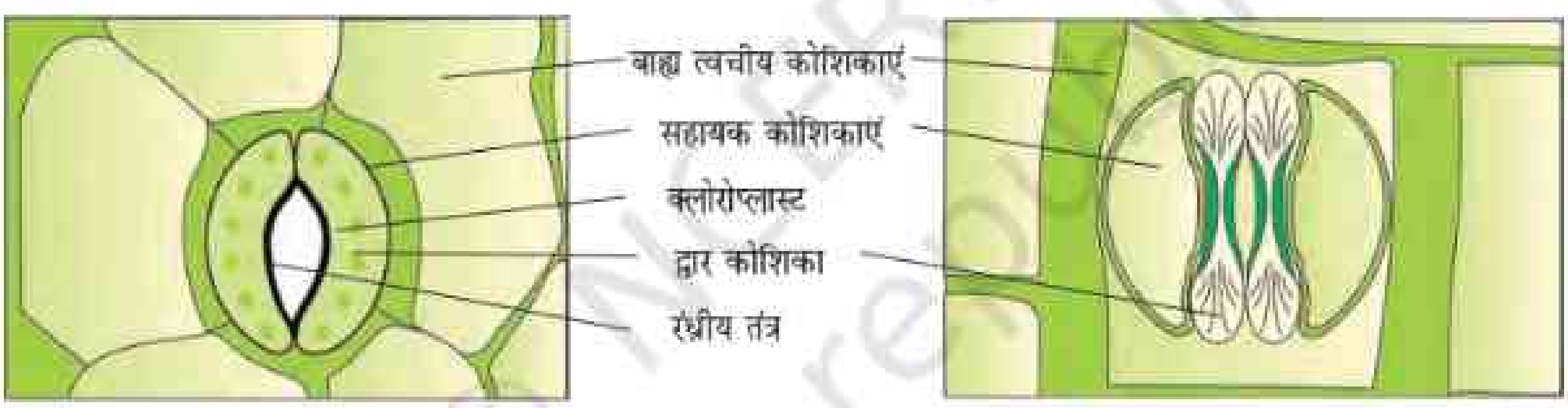

चित्र 6.1 रंध्री तंत्र (अ) सेम के आकार वाली द्वार कोशिका सहित रंध्र (ब) डंबलाकार द्वार कोशिका सहित रंध्र

बाह्यत्वचा की कोशिकाओं पर अनेक रोम होते हैं। इन्हें मूलरोम कहते हैं ये बाह्यत्वचा की कोशिकाओं का एककोशिकीय दीर्घाकिरण स्वरूप होती है जो जल एवं खनिजतत्वों के अवशोषण में सहायक होती हैं। तने पर पाए जाने वाले ये बाह्य त्वचीय रोम **त्वचारोम** (ट्राइकोम्स) कहलाते हैं प्ररोह तंत्र में यह त्वचारोम बहुकोशिकीय होते हैं। ये शाखित या अशाखित तथा कोमल या नरम हो सकते हैं ये स्रावी हो सकते हैं ये वाष्पोतसर्जन से होने वाले जल की हानि रोकते हैं।

6.1.2 भरण ऊतक तंत्र

बाह्यत्वचा तथा संवहन बंडल के अतिरिक्त सभी ऊतक **भरण ऊतक** बनाते हैं। इसमें सरल ऊतक जैसे पैरेंकाइमा, कॉलेंकाइमा तथा स्कलेरंकाइमा होते हैं। प्राथमिक तने में पेरेंकाइमी कोशिकाएं प्रायः वल्कुट, (कॉर्टेक्स) परिरंभ, पिथ तथा मज्जाकिरण में होती हैं। पत्तियों में भरण ऊतक पतली भित्ति वाले तथा क्लोरोप्लास्ट युक्त होते हैं और इसे **पर्णमध्योतक** (मेजोफिल) कहते हैं।

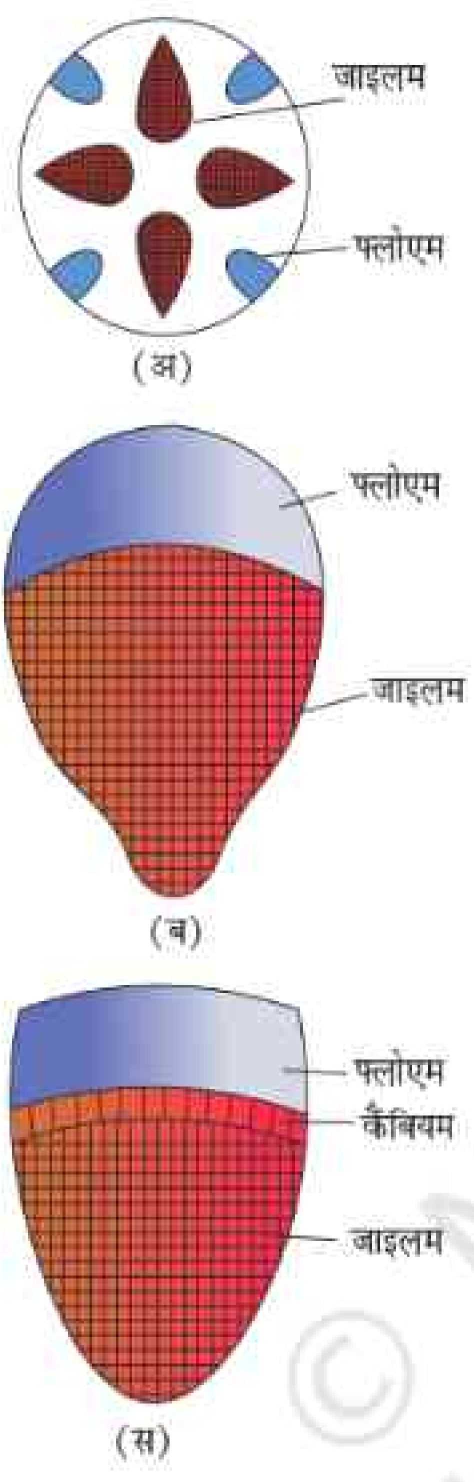

चित्र 6.2 विभिन्न प्रकार के संवहन बंडल (अ) अरीय (ब) संयुक्त बंद (स) संयुक्त खुला

6.1.3 संवहनी ऊतक तंत्र

संवहनी तंत्र में जटिल ऊतक, जाइलम तथा फ्लोएम होते हैं। जाइलम तथा फ्लोएम दोनों मिलकर संवहन बंडल बनाते हैं (चित्र 6.2)। द्विबीजपत्री में जाइलम तथा फ्लोएम के बीच **कैंबियम** होता है। ऐसे संवहनी बंडलों जिनमें कैंबियम होता है और वे लगातार द्वितीयक जाइलम तथा फ्लोएम बनाते रहते हैं उन्हें **खुला संवहन बंडल** कहते हैं। एकबीजपत्री पादपों में कैंबियम नहीं होता। चूंकि वे द्वितीयक ऊतक नहीं बनाते इसलिए उन्हें **बंद संवहन बंडल** कहते हैं।

जब जाइलम तथा फ्लोएम एकांतर तरीके से भिन्न त्रिज्या पर होते हैं, तब ऐसे बंडल को **अरीय** कहते है जैसे मूल में। संयुक्त बंडल में जाइलम तथा फ्लोएम एक ही त्रिज्या पर स्थित होते हैं जैसे तने तथा पत्तियों में। **संयुक्त संवहन** बंडल में प्राय: फ्लोएम जाइलम के बाहर की ओर स्थित होता है।

6.2 द्विबीजपत्री तथा एकबीजपत्री पादपों का शारीर

मूल, तने तथा पत्तियों में ऊतक की संरचना का भलीभाँति अध्ययन करने के लिए पौधे के इन भागों की परिपक्व अनुप्रस्थ काट का अध्ययन करना चाहिए।

6.2.1 द्विबीजपत्री मूल

चित्र 6.3 (अ) को देखो। इसमें सूरजमुखी मूल की अनुप्रस्थ काट को दिखाया गया है। भीतरी ऊतकों के विन्यास को निम्नलिखित रूप में प्रस्तुत किया गया है।

सबसे बाहरी भित्ति **मूलीय त्वचा** है। इसमें नलिकाकार सजीव घटक होते हैं। इनमें से कुछ कोशिकाएँ बाहर की ओर निकली होती हैं जो एक **कोशिकीय मूल रोम** बनाती हैं। वल्कुट में पतली भित्ति वाली पैरेंकाइमी कोशिकाओं की कई परतें होती हैं। इनके बीच में **अंतराकोशिकीय** स्थान होता है। वल्कुट की सबसे भीतरी परत अंतस्त्वचा होती है। इसमें नालाकर की कोशिकाओं की एकल सतह

© NCERT not to be republished

होती है। इन कोशिकाओं में अंतरा कोशिकीय स्थान नहीं होता। अंतस्त्वचा की कोशिकाओं की स्पर्श रेखीय तथा अरीय भित्तियों पर **कैस्पेरियन पट्टियों** के रूप में जल अपारगम्य, मोमी पदार्थ सूबेरिन होता है। अंतस्त्वचा से भीतर की ओर मोटी भित्ति पैरेंकाइमी कोशिकाएँ होती हैं जिसे **परिरंभ** कहते हैं। इन कोशिकाओं में द्वितीयक वृद्धि के दौरान संवहन कैंबियम तथा पार्श्वीय मूल प्रेरित होती है। पिथ छोटी अथवा अस्पष्ट होती है। पैरेंकाइमी कोशिकाएँ जो जाइलम तथा फ्लोएम बंडल के बीच में हैं उन्हें **कंजकटिव ऊतक** कहते हैं। दो से चार तक जाइलम तथा फ्लोएम के खंड होते हैं। इसके बाद जाइलम तथा फ्लोएम के बीच एक कैंबियम छल्ला बनता हैं अंतस्त्वचा के अंदर की ओर सारे ऊतक जैसे परिरंभ, संवहन ऊतक तथा पिथ मिलकर **रंभ** (स्टेल) बनाते हैं।

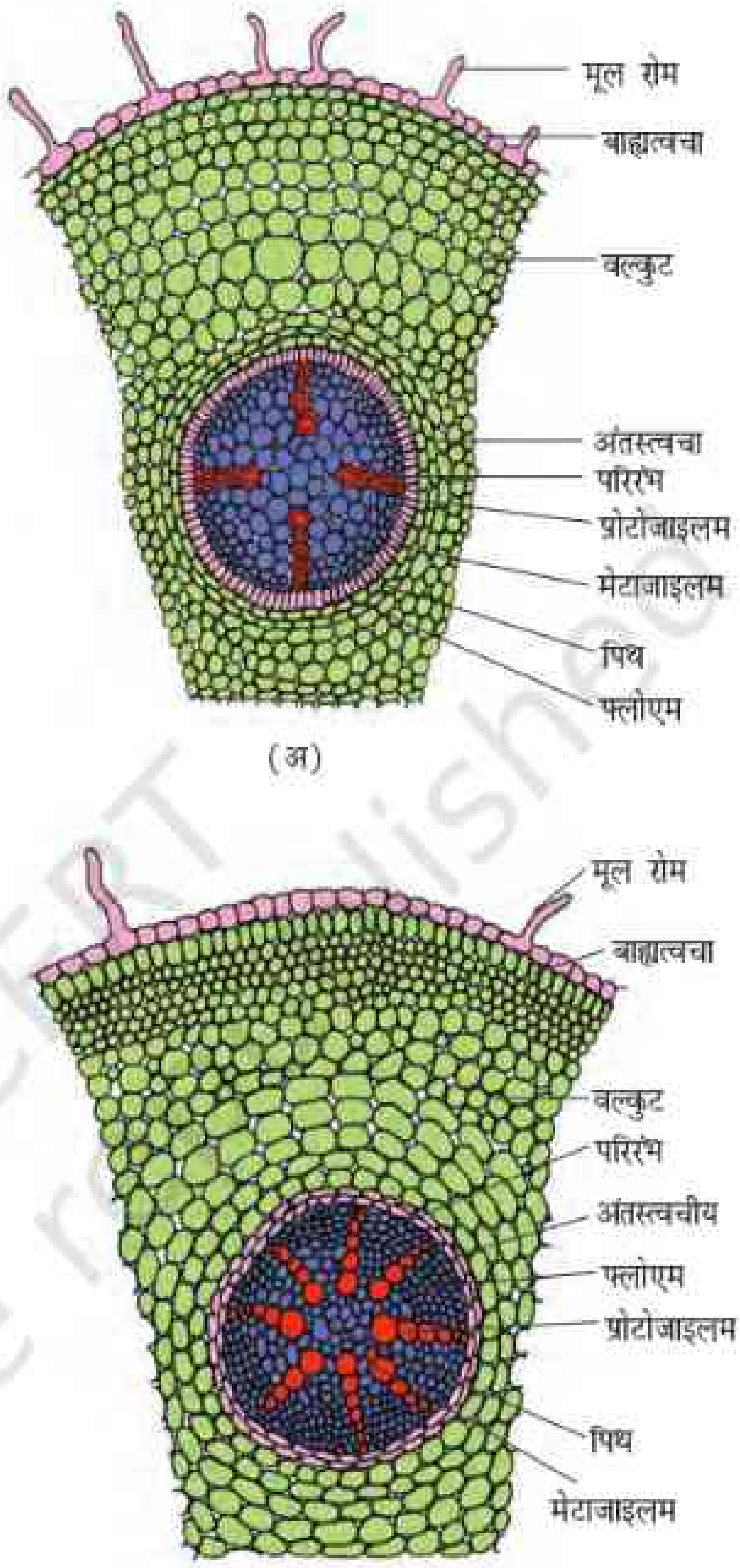

चित्र 6.3 अनुप्रस्थकाट (अ) द्विबीजपत्री मूल (प्राथमिक) (ब) एकबीजपत्री मूल

6.2.2 एकबीजपत्री मूल

एक बीजपत्री मूल का शारीर बहुत अधिक द्विबीजपत्री मूल के शारीर के समान होता है (चित्र 6.3 ब)। इसमें बाह्यत्वचा, वल्कुट, अंतस्त्वचा, परिरंभ, संवहन बंडल तथा पिथ होते हैं। एक बीजपत्री में इनकी संख्या प्राय: छ: से अधिक (बहु-आदिदारुक) होती है जबकि द्विबीजपत्री में कुछ ही जाइलम बंडल होते हैं। पिथ बड़ी तथा बहुत विकसित होती है तथा एकबीजपत्री मूल में कैंबियम नहीं होता। इसलिए इसमें द्वितीयक वृद्धि नहीं होती है।

6.2.3 द्विबीजपत्री तना

एक प्ररुप शैशव द्विबीजपत्री तने की अनुप्रस्थ काट में निम्नलिखित संरचनाएँ होती हैं। **बाह्यत्वचा** तने की सबसे बाहरी रक्षी सतह है (चित्र 6.4 अ)। यह क्यूटीकल पतली परत से ढकी होती है। इस पर कुछ बहुकोशकीय, एक पंक्तिक त्वचारोम तथा कुछ रंध्र होते हैं। बाह्यत्वचा तथा परिरंभ के बीच कोशिकाओं की बहुत सी सतहें होती है, जिसे वल्कुट कहते है। इसके

तीन क्षेत्र होते हैं। **बाहरी अधस्त्वचा** (हाइपोडर्मिस) ये कॉलेंकाइमा कोशिकाओं की कुछ परतें होती हैं जो बाह्यत्वचा के नीचे होती हैं। ये शैशव तने को यांत्रिक सहारा देती हैं। वल्कुट सतहें अधस्त्वचा के नीचे होती हैं। इसमें गोलाकार पतली भित्ति वाले पैरेंकाइमा कोशिकाओं की कुछ परतें होती हैं। उसमें सुस्पष्ट अंतरा कोशिकीय स्थान होता है। **अंतस्त्वचा** वल्कुट की सबसे भीतरी सतह होती है और इसमें नाल आकार की

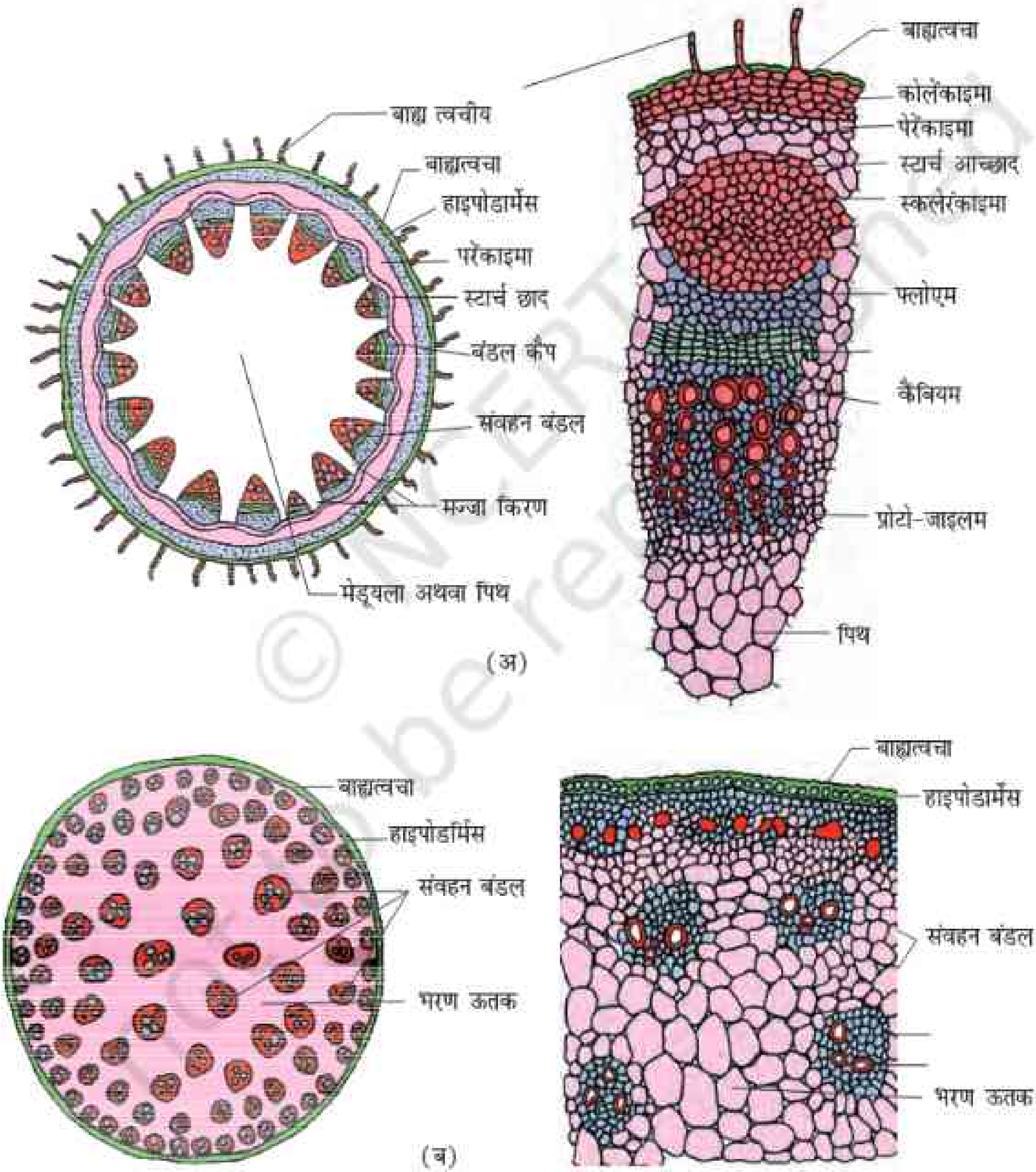

चित्र 6.4 तने की अनुप्रस्थ काट (अ) द्विबीजपत्री (ब) एकबीजपत्री

कोशिकाओं की एक सतह होती है। इन कोशिकाओं में स्टार्च प्रचुर मात्रा में होता है, इसलिए इसे **स्टार्च आच्छद** भी कहते हैं। परिरंभ अंतस्त्वचा के नीचे और फ्लोएम के ऊपर होती है। इसमें स्कलेरेंकाइमा की कोशिकाएँ अर्द्धचंद्राकार समूह में होती है। संवहन बंडलों के बीच अरीय रूप में विन्यस्त पैरेंकाइमा कोशिकाओं की कुछ सतहें होती हैं जो मज्जाकिरण बनाते हैं। बहुसंख्य **संवहन बंडल** एक छल्ले में होते हैं। संवहन बंडलों का छल्ले में बना होना द्विबीजपत्री तने का गुण है। प्रत्येक संवहन बंडल संयुक्त मध्यादिदारुक तथा खुले होते हैं। तने में **पिथ** केंद्र में होती हैं इसमें गोलाकार, पैरेंकाइमी कोशिकाएँ होती हैं। इन कोशिकाओं के बीच में अंतरा कोशिकीय स्थान होता है।

6.2.4 एकबीजपत्री तना

एकबीजपत्री तने की शारीरिक रचना द्विबीजपत्री तने से कुछ भिन्न है, लेकिन ऊतकों के विन्यस्त रहने के क्रम में कोई अंतर नहीं हैं। चित्र 6.4 अ में आप देखेंगे कि एकबीजपत्री तने की बाह्यत्वचा पर त्वचारोम नहीं होते। एकबीजपत्री तने में अधस्त्वचा स्कलेरंकाइमा कोशिकाओं की बनी होती है। वल्कुट में कई सतहें होती हैं, इसमें बहुत से बिखरे हुए संवहन बंडल होते हैं। इसके संवहन बंडल के चारों ओर स्कलेंकाइमी बंडल आच्छद होता है (चित्र 6.4 ब)। संवहन बंडल संयुक्त तथा बंद होते हैं। परिधीय संवहन बंडल प्राय: छोटे और केंद्र में बड़े होते हैं। संवहन बंडल में फ्लोएम पैरेंकाइमा नहीं होते और इसमें जल रखने वाली गुहिकाएँ होती हैं।

6.2.5 पृष्ठाधार (द्विबीजपत्री) पत्ती

पृष्ठाधर पत्ती के फलक की लंबवत् काट तीन प्रमुख भागों जैसे बाह्यत्वचा, पर्ण मध्योतक तथा संवहन तंत्र दिखाते हैं। **बाह्यत्वचा** जो ऊपरी सतह (अभ्यक्ष बाह्यत्वचा) तथा निचली सतह (अपाक्ष बाह्यत्वचा) को घेरे रहती हैं उस पर क्यूटीकल होती है। निचली बाह्यत्वचा पर ऊपरी सतह की अपेक्षा रंध्र बहुत अधिक संख्या में होते हैं। ऊपरी सतह पर रंध्र नहीं भी हो सकते हैं। ऊपरी तथा निचली बाह्यत्वचा के बीच स्थित सभी ऊतकों को **पर्णमध्योतक** कहते हैं। पर्णमध्योतक जिसमें क्लोरोप्लास्ट होते हैं और प्रकाश संश्लेषण करते हैं, पैरेंकाइमा कोशिकाओं से बनते हैं। और इसमें दो प्रकार की कोशिकाएं होती है- **(i) खंभ पैरेंकाइमा** तथा **(ii) स्पंजी पैरेंकाइमा** है। खंभ पैरेंकाइमा ऊपरी बाह्यत्वचा के बिल्कुल नीचे होते हैं और इनकी कोशिकाएँ लंबी होती हैं। ये लंबवत समानांतर होती हैं। स्पंजी पैरेंकाइमा खंभ कोशिकाओं से नीचे होती हैं और निचली बाह्यत्वचा तक जाती है। इस क्षेत्र की कोशिकाएँ अंडाकर अथवा गोल होती हैं। इन कोशिकाओं के बीच बहुत खाली स्थान तथा वायु गुहिकाएँ होती हैं। **संवहन तंत्र** में संवहन बंडल होते हैं। इन बंडल शिराओं तथा मध्यशिरा संवहन बंडल का माप शिराओं के माप पर आधारित होता है। शिराओं की मोटाई द्विबीजपत्री पत्तियों की जालिका शिराविन्यास में भिन्न होती है। संवहन बंडल संयुक्त बहि:फ्लोएमी तथा मध्यादिदारुक होते हैं। प्रत्येक संवहन बंडल के चारों

not to be republished © NCERT

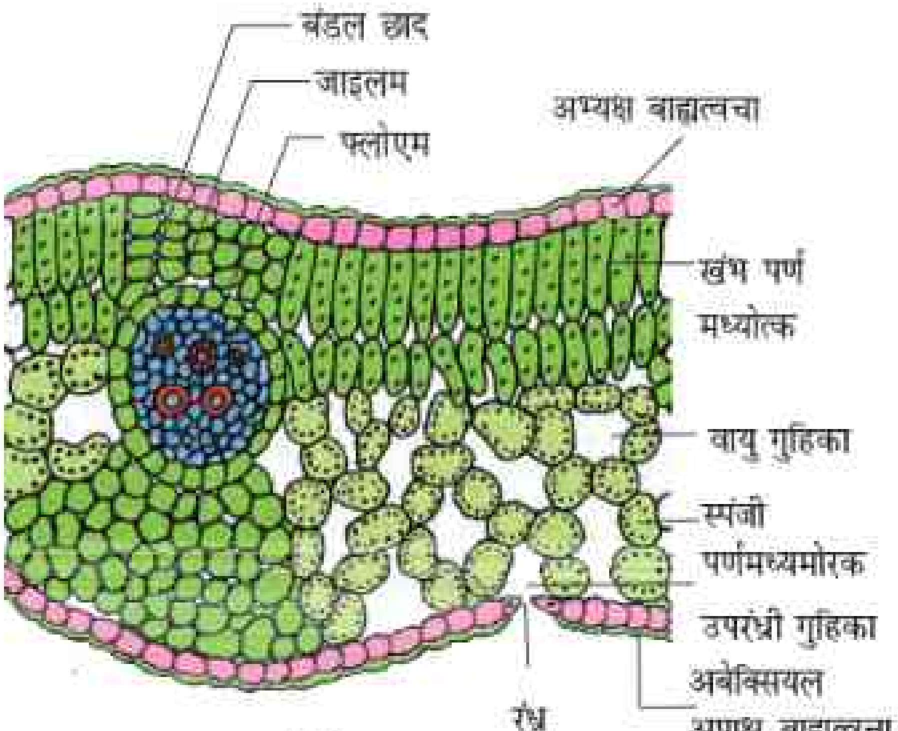

(अ)

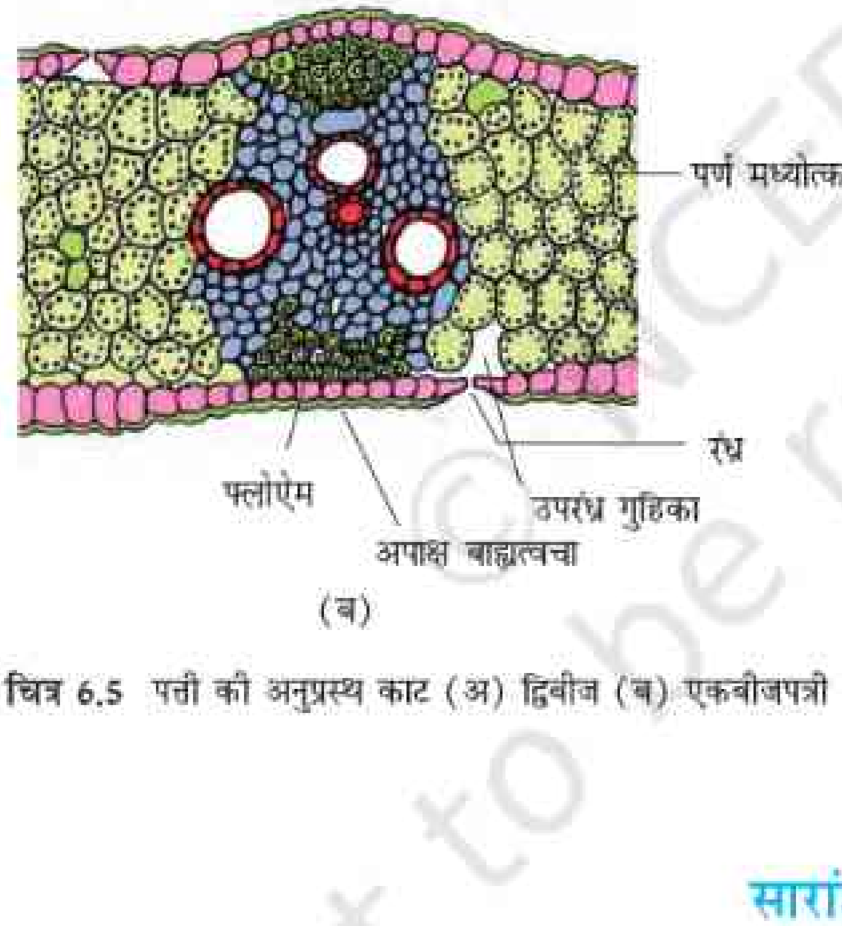

(ब)

चित्र 6.5 पत्ती की अनुप्रस्थ काट (अ) द्विबीज (ब) एकबीजपत्री

ओर मोटी भित्ति वाली कोशिकाओं की एक परत होती है जो सघन होती हैं। इसे **बंडल आच्छद** कहते हैं। चित्र 6.5 (अ) देखो और संवहन बंडल में जाइलम के स्थान को देखो।

6.2.6 समद्धि पार्श्व (एकबीजपत्री) पत्ती

एक समृद्धि पार्श्व पत्ती का शारीर तथा पृष्ठाध ार पत्ती का शारीर अधिकांश समान ही है; लेकिन उनमें कुछ भिन्नता भी देख सकते हैं इसमें ऊपरी तथा निचली बाह्यत्वचा पर एक समान क्यूटीकल होती है और उसमें दोनों सतह पर रंध्रों की संख्या लगभग समान होती है चित्र 6.5(ब)।

घास में ऊपरी बाह्यत्वचा कुछ कोशिकाएँ लंबी, खाली तथा रंगहीन होती हैं। इन कोशिकाओं को **आवर्ध त्वक्कोशिका** कहते हैं। जब कोशिकाएँ स्फीत होती हैं, तब ये कोशिकाएँ मुड़ी हुई पत्तियों को खुलने में सहायता करती हैं। वाष्पोत्सर्जन की अधिक दर होने पर ये पत्तियाँ वाष्पोत्सर्जन की दर कम करने के लिए मुड़ जाती हैं। एक बीजपत्री की पत्तियों में शिरा विन्यास समानांतर होता है इसका पता तब लगता है जब हम पत्ती की लंबवत काट देखते हैं जिसमें संवहन बंडल का माप भी एक समान होता है।

सारांश

शारीरिकी दृष्टि से पौधा विभिन्न प्रकार के ऊतकों से बना है। ऊतक मुख्यत: मेरिस्टेमेटिक (शीर्ष, पाश्र्वीय तथा अंतर्वेशी) तथा स्थायी (सरल तथा जटिल) में विभक्त होते हैं। ऊतक अनेकों कार्य करते हैं जैसे स्वांगीकरण, यांत्रिक सहारा, संचय तथा पानी, खनिज लवण तथा प्रकाशसंश्लेषी जैसे पदार्थों का संवहन। बाह्य त्वचीय तंत्र में बाह्य त्वचीय कोशिकाएँ, रंध्र तथा बाह्य त्वचीय उपांग होते हैं। तीन प्रकार के ऊतक तंत्र होते हैं- जैसे बाह्य त्वचीय, भरण तथा संवहन। भरण ऊतक तंत्र के तीन क्षेत्र होते हैं- वल्कुट (कॉर्टेक्स), परिरंभ तथा पिथ। संवहन ऊतक तंत्र में जाइलम तथा फ्लोएम होता है। जाइलम तथा फ्लोएम की स्थिति के अनुसार संवहन बंडल विभिन्न प्रकार के होते हैं।

संवहन बंडल संवहन रचना बनाते हैं और पानी, खनिज तथा खाद्य पदार्थों का स्थानांतरण करते हैं। द्विबीजपत्री तथा एक बीजपत्री पौधों की आंतरिक रचना में बहुत अंतर होता है। ये प्रकार, संख्या तथा संवहन बंडल की स्थिति के आधार पर अलग-अलग होते हैं। द्वितीयक वृद्धि द्विबीजपत्री पौधों के तने तथा मूल में होती है।

अभ्यास

1. निम्नलिखित में शारीर के आधार पर अंतर करो
   (अ) एकबीजपत्री मूल तथा द्विबीजपत्री मूल
   (ब) एकबीजपत्री तना तथा द्विबीजपत्री तना
2. आप एक शैशव तने की अनुप्रस्थ काट का सूक्ष्मदर्शी से अवलोकन करें। आप कैसे पता करेंगे कि यह एकबीजपत्री तना अथवा द्विबीजपत्री तना है? इसके कारण बताओ।
3. सूक्ष्मदर्शी किसी पौधे के भाग की अनुप्रस्थ काट निम्नलिखित शारीर रचनाएँ दिखाती है।
   (अ) संवहन बंडल संयुक्त, फैले हुए तथा उसके चारों ओर स्केलेरेंकाइमी आच्छद हैं
   (ब) फ्लोएम पैरेंकाइमा नहीं है।
   आप कैसे पहचानोगे कि यह किसका है?
4. रंध्रीतंत्र क्या है? रंध्र की रचना का वर्णन करो और इसका चिह्नित चित्र बनाओ।
5. पुष्पी पादपों में तीन मूलभूत ऊतक तंत्र बताओ। प्रत्येक तंत्र के ऊतक बताओ।
6. पादप शारीर का अध्ययन हमारे लिए कैसे उपयोगी है?
7. पृष्ठाधर पत्ती की भीतरी रचना का वर्णन चिह्नित चित्रों की सहायता से करो।
8. त्वक कोशिकाओं की रचना तथा स्थिति उन्हें किस प्रकार विशिष्ट कार्य करने में सहायता करती है?

© NCERT not to be republished

अध्याय 7

पाणियों में संरचनात्मक संगठन

7.1 अंग एवं अंग तंत्र
7.2 मेंढक

आपने पिछले अध्याय में प्राणि जगत के अनेक एक कोशिकीय (unicellular) व बहुकोशिकीय (multicellular) जीवों का अध्ययन किया। एक कोशिकीय प्राणियों में जीवन की समस्त जैविक क्रियाएं जैसे- पाचन, श्वसन तथा जनन, एक ही कोशिका द्वारा संपन्न होती हैं। बहुकोशकीय प्राणियों के जटिल शरीर में उपर्युक्त आधारभूत क्रियाएं भिन्न-भिन्न कोशिका समूहों द्वारा व्यवस्थित रूप से संपन्न की जाती हैं। सरल प्राणी हाइड्रा का शरीर विभिन्न प्रकार की कोशिकाओं का बना हुआ है, जिनमें प्रत्येक कोशिका की संख्या हजारों में होती है। मानव का शरीर अरबों कोशिकाओं का बना हुआ है, जो विविध कार्य संपन्न करता है। ये कोशिकाएं शरीर में एक साथ कैसे काम करती हैं? जैसा कि आपने पहले की कक्षाओं में पढ़ा है, बहुकोशिकीय प्राणियों में समान कोशिकाओं का समूह, अंतरकोशिकीय पदार्थों सहित एक विशेष कार्य करता है, कोशिकाओं का ऐसा संगठन **ऊतक** (tissue) कहलाता है।

आपको आश्चर्य हो सकता है कि सभी जटिल प्राणियों का शरीर केवल चार प्रकार के आधारभूत ऊतकों का बना हुआ है। ये सब ऊतक एक विशेष अनुपात एवं प्रतिरूप से संगठित होकर अंगों का निर्माण करते हैं, जैसे- आमाशय, फुप्फुस (lungs), हृदय और वृक्क (kidney)। जब दो या दो से अधिक अंग अपनी भौतिक एवं रासायनिक पारस्परिक-क्रिया से एक निश्चित कार्य को संपन्न कर अंग-तंत्र का निर्माण करते हैं जैसे-पाचन तंत्र, श्वसन तंत्र इत्यादि। समस्त शरीर की जैविक क्रियाएं, कोशिका, ऊतक, अंग तथा अंग तंत्र में श्रम विभाजन के द्वारा संपन्न होती हैं और पूरे शरीर को जीवित रखने के लिए योगदान देती हैं।

© NCERT not to be republished

7.1 अंग और अंगतंत्र

बहुकोशीय प्राणियों में जैसा कि आपने पहले की कक्षाओं में पढ़ा है, ऊतक संगठित होकर अंग और अंगतंत्र की रचना करते हैं। इस तरह का संगठन लाखों कोशिकाओं द्वारा निर्मित जीव की सभी क्रियाओं को अधिक दक्षतापूर्वक एवं समन्वित रूप से चलाने के लिए आवश्यक होता है। शरीर के प्रत्येक अंग एक या एक से अधिक प्रकार के ऊतकों से बना होता हैं। उदाहरणार्थ, हृदय में चारों तरह के ऊतक होते हैं, उपकला, संयोजी, पेशीय तथा तंत्रकीय ऊतक। ध्यान पूर्वक अध्ययन के बाद हम यह देखते हैं कि अंग और अंगतंत्र की जटिलता एक निश्चित इंद्रियगोचर प्रवृत्ति को प्रदर्शित करती है। यह इंद्रियगोचर प्रवृत्ति एक विकासीय प्रवृत्ति कहलाती है। (इसके बारे में आप कक्षा 12 में विस्तार से पढ़ेंगे)।

इस अध्याय में, आपको मेंढक की शारीर (anatomy) और आकारिकी (morphology) के संगठन एवं क्रियाविधि के बारे में जानकारी प्राप्त होगी। आकारिकी आपको जीवों की बाह्य संरचना या बाह्य दिखने वाले आकार का अध्ययन कराती है। पौधों या सूक्ष्म जीवों के संदर्भ में, आकारिकी शब्द का वस्तुत: मतलब यही है। प्राणियों के संबंध में आकारिकी का मतलब शरीर के बाह्य अंगों की बनावट या शरीर के बाह्य भागों का अध्ययन है। प्राणियों में शारीर का पारंपरिक मतलब आंतरिक अंगों की संरचना के अध्ययन से है। अब आप मेंढक के आकारिकी एवं शारीरकी का अध्ययन करेंगे। जो कशेरुकी का प्रतिनिधित्व करता है।

7.2 मेंढक

मेंढक वह प्राणी है जो मीठे जल तथा धरती दोनों पर निवास करता है तथा कशेरुकी संघ के एंफीबिया वर्ग से संबंधित होता है। भारत में पाई जाने वाली मेंढक की सामान्य जाति *राना टिग्रीना* है।

इसके शरीर का ताप स्थिर नहीं होता है। शरीर का ताप वातावरण के ताप के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। इस प्रकार के प्राणियों को असमतापी या अनियततापी कहते हैं। मेंढक के रंग को परिवर्तित होते हुए आपने अवश्य देखा होगा, जिस समय ये घास तथा नम जमीन पर होते हैं। क्या आप बता सकते हो, ऐसा क्यों होता है? उनमें अपने शत्रुओं से छिपने के लिए रंग परिवर्तन की क्षमता होती है, जिसे छद्मावरण कहा जाता है। इस रक्षात्मक रंग परिवर्तन क्रिया को अनुहरण (mimicry) कहते हैं। आपने यह भी देखा होगा कि मेंढक शीत व ग्रीष्म ऋतु में नहीं दिखते। इस अंतराल में ये सर्दी तथा गर्मी से अपनी रक्षा करने के लिए गहरे गड्ढों में चले जाते हैं। इस प्रक्रिया को क्रमश: शीत निष्क्रियता (hibernation) व ग्रीष्म निष्क्रियता (aestivation) कहते हैं।

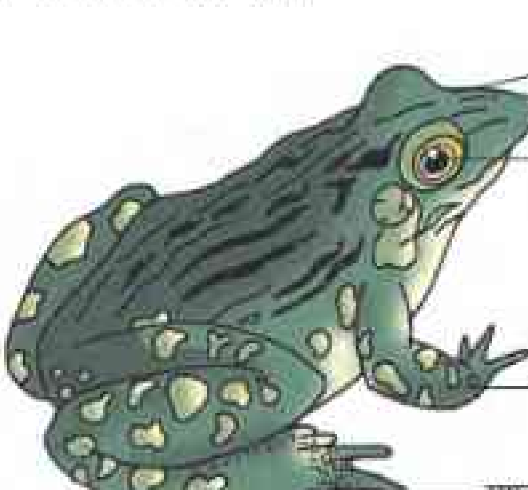

चित्र 7.1 मेंढक का बाह्य चित्र

© NCERT not to be republished

7.2.1 बाह्य आकारिकी

क्या आपने कभी मेंढक की त्वचा को छुआ है? मेंढक की त्वचा श्लेषमा (म्युकस) से ढकी होने के कारण चिकनी तथा फिसलनी होती है। इसकी त्वचा सदैव आर्द्र रहती है। मेंढक की ऊपरी सतह धानी हरे रंग की होती है, जिसमें अनियमित धब्बे होते हैं, जबकि नीचे की सतह हल्की पीली होती है। मेंढक कभी पानी नहीं पीता; बल्कि त्वचा द्वारा इसका अवशोषण करता है।

मेंढक का शरीर सिर व धड़ में विभाजित रहता है। (चित्र 7.1) पूंछ व गर्दन का अभाव होता है। मुख के ऊपर एक जोड़ी नासिका द्वार खुलते हैं। आँखें बाहर की ओर निकली व निमेषकपटल से ढकी होती हैं ताकि जल के अंदर आँखों का बचाव हो सके। आँखों के दोनों ओर (कान) टिम्पैनम या कर्ण पटह उपस्थित होते हैं, जो ध्वनि संकेतों को ग्रहण करने का कार्य करते हैं। अग्र व पश्चपाद चलने, फिरने, टहलने व गड्ढा बनाने का काम करते हैं। अग्र पाद में चार अंगुलियाँ होती हैं; जबकि पश्चपाद में पाँच होती हैं। तथा पश्चपाद लंबें व मांसल होते हैं। पश्च पाद की झिल्लीयुक्त अंगुलि जल में तैरने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। मेंढक में लैंगिक द्विरूपता देखी जाती है। नर मेंढक में आवाज उत्पन्न करने वाले वाक् कोष (vocal sacs) के साथ-साथ अग्रपाद की पहली अंगुलि में मैथुनांग होते हैं। ये अंग मादा मेंढक में नहीं मिलते हैं।

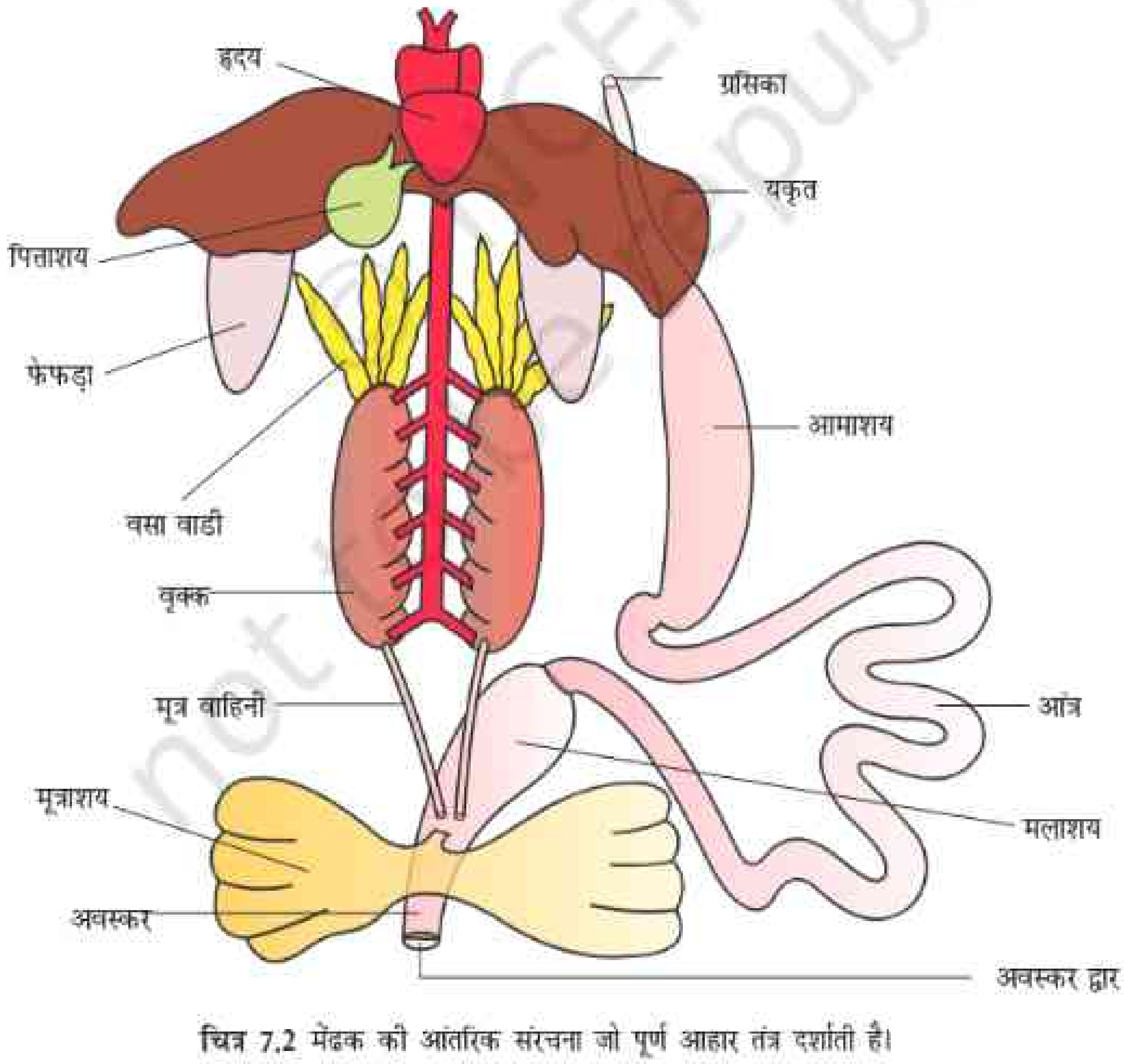

चित्र 7.2 मेंढक की आंतरिक संरचना जो पूर्ण आहार तंत्र दर्शाती है।

7.2.2 आंतरिक आकारिकी

मेंढक की देह गुहा में पाचन तंत्र, श्वसन तंत्र, तंत्रिका तंत्र, संचरण तंत्र, जनन तंत्र पूर्ण अच्छी तरह परिवर्धित संरचनाओं एवं कार्यों युक्त होते हैं। मेंढक का पाचन तंत्र आहार नाल तथा आहर ग्रंथि का बना होता है (चित्र 7.2)। मेंढक मांसाहारी है, अतः इसकी आहारनाल लंबाई में छोटी होती है। इसका मुख, मुखगुहिका में खुलता है जो ग्रसनी से होते हुए ग्रसिका तक जाती है। ग्रसिका एक छोटी नली है जो आमाशय में खुलती है। आमाशय आगे चलकर आंत्र, मलाशय और अंत में अवस्कर (cloaca) द्वारा बाहर खुलता है। इसका मुँह मुखगुहिका द्वारा ग्रसनी में खुला है जो ग्रसिका तक जाती है।

यकृत पित्त रस स्रावित करता है जो पित्ताशय में एकत्रित रहता है। अग्नाश्य जो एक पाचक ग्रंथि है, जो अग्नाशयी रस स्रवित करता है जिसमें पाचक एंजाइम होते हैं। मेंढक अपनी द्विपालित जीभ से भोजन का शिकार पकड़ता है। इसके भोजन का पाचन आमाशय की दीवारों द्वारा स्रवित हाइड्रोक्लोरिक अम्ल तथा पाचक रसों द्वारा होता है। अर्धपाचित भोजन काइम कहलाता है जो आमाशय से ग्रहणी में जाता है। ग्रहणी पित्ताशय से पित्त और अग्नाशय से अग्नाशयी रस मूल पित्त वाहिनी द्वारा प्राप्त करती है। पित्तरस वसा तथा अग्नाशयी रस कार्बोहाइड्रेटों तथा प्रोटीन का पाचन करता है। पाचन की अंतिम प्रक्रिया आँत में होती है। पाचित भोजन आँत के अंदर अंकुर और सूक्ष्मांकुरों द्वारा अवशोषित होते हैं। अपाचित भोजन अवस्कर द्वार से बाहर निष्कासित कर दिया जाता है।

मेंढक जल व थल दोनों स्थानों पर दो विभिन्न विधियों द्वारा श्वसन कर सकते हैं। इसकी त्वचा एक जलीय श्वसनांग का कार्य करती है। इसे त्वचीय श्वसन कहते हैं। विसरण द्वारा पानी में घुली हुई ऑक्सीजन का विनिमय होता है। जल के बाहर त्वचा, मुख गुहा और फेफड़े वायवीय श्वसन अंगों का कार्य करते हैं। फेफड़ों के द्वारा श्वसन फुप्फसीय श्वसन कहलाता है। फेफड़े एक लंबें अंडाकार गुलाबी रंग की थैलीनुमा संरचनाएं होती हैं, जो देहगुहा के वक्षीय भाग में पाई जाती हैं। वायु नासा छिद्रों से होकर मुख गुहा तथा फेफड़ों में पहुँचती है। ग्रीष्म निष्क्रियता व शीत निष्क्रियता के दौरान मेंढक त्वचा से श्वसन करते हैं।

मेंढक का परिसंचरण तंत्र, सुविकसित बंद प्रकार का होता है। इसमें लसीका परिसंचरण भी पाया जाता है। अर्थात् ऑक्सीजनित अथवा विऑक्सीजनित रक्त हृदय में मिश्रित हो जाते हैं। रुधिर परिसंचरण तंत्र हृदय, रक्त वाहिकाओं और रुधिर से मिलकर बनता है। लसीका तंत्र लसीका, लसीका नलिकाओं और लसीका ग्रंथियों का बना होता है। हृदय एक त्रिकोष्ठीय मांसल संरचना है, जो कि देह गुहा के ऊपरी भाग में स्थित है। यह पतली पारदर्शी झिल्ली, हृदय-आवरण (पेरीकार्डियम) द्वारा ढका रहता है। एक त्रिकोष्ठीय संरचना, जिसे शिराकोटर (साइनस वेनोसस) कहते हैं, हृदय के दाहिने अलिंद से जुड़ा रहता है तथा महाशिराओं से रक्त प्राप्त करता है। हृदय की अधर सतह पर दाएं अलिंद के ऊपर एक थैलानुमा रचना धमनी शंकु होता है, जिसमें निलय (ventricle) खुलता है। हृदय से रक्त धमनियों द्वारा शरीर के सभी भागों में भेजा जाता है। इसे धमनी तंत्र कहते हैं। शिराएं शरीर के विभिन्न भागों से रक्त एकत्रित कर हृदय में पहुँचाती हैं,

यह शिरा-तंत्र कहलाता है। मेंढक में विशेष संयोजी शिराएं यकृत तथा आँतों के मध्य वृक्क तथा शरीर के निचले भागों के मध्य पाई जाती है। इन्हें क्रमश: यकृत निवाहिका तंत्र एवं वृक्कीय निवाहिका तंत्र कहते हैं। रक्त प्लेज्मा तथा रक्त-कणिकाओं से मिलकर बना है। रक्त कणिकाएं हैं- लाल रुधिर कणिकाएं (रक्ताणु) एवं श्वेत रुधिर कणिकाएं (श्वेताणु) एवं पट्टिकाणु (प्लेटलेट)। लाल रुधिर कणिकाओं में लाल रंग का श्वसन रंजक हीमोग्लोबिन पाया जाता है। इन कणिकाओं में केंद्रक पाया जाता है। लसीका रुधिर से भिन्न होता है; क्योंकि इसमें कुछ प्रोटीन व लाल रुधिर कणिकाएं अनुपस्थित होती हैं। परिसंचरण के दौरान रक्त पोषकों गैसों व जल को नियत स्थानों तक ले जाता है। रुधिर परिसंचरण मांसल हृदय की पंपन क्रिया द्वारा होता है।

नाइट्रोजनी अपशिष्ट को शरीर से बाहर निकालने के लिए मेंढक में पूर्ण विकसित उत्सर्जी तंत्र होता है। उत्सर्जी अंग में मुख्यत: एक जोड़ी वृक्क, मूत्रवाहिनी, अवस्कर द्वार तथा मूत्राशय होते हैं। ये गहरे लाल रंग के सेम के आकार के होते हैं और देहगुहा में थोड़ा सा पीछे की ओर कशेरुक दंड के दोनों ओर स्थित होते हैं। प्रत्येक वृक्क कई सरंचनात्मक व क्रियात्मक इकाइयों, मूत्रजन नलिकाओं या वृक्काओं का बना होता है। नर मेंढक में मूत्र नलिका वृक्क से मूत्र जनन नलिका के रूप में बाहर आती है। मूत्रवाहिनी अवस्कर द्वार में खुलती है। मादा मेंढक में मूत्र वाहिनी एवं अंडवाहिनी अवस्कर द्वार में अलग-अलग खुलती हैं। एक पतली दीवार वाला मूत्राशय भी मलाशय के अधर भाग पर स्थित होता है, जो कि अवस्कर में खुलता है। मेंढक यूरिया का उत्सर्जन करता है इसलिए **यूरिया-उत्सर्जी** प्राणी कहलाता है। उत्सर्जी अपशिष्ट रक्त द्वारा वृक्क में पहुँचते हैं, जहाँ पर ये अलग कर दिए जाते हैं और उनका उत्सर्जन कर दिया जाता है।

नियंत्रण व समन्वय तंत्र मेंढक में पूर्ण विकसित होता है। इनमें अंत: स्रावी ग्रंथियाँ (endocrine system) व तंत्रिका तंत्र दोनों पाए जाते हैं। विभिन्न अंगों में आपसी समन्वयन कुछ रसायनों द्वारा होता है जिन्हें हॉर्मोन कहते हैं। ये अंत:स्रावी ग्रंथियों द्वारा स्रावित होते हैं। मेंढक की मुख्य अंत:स्रावी ग्रंथियाँ हैं - पीयूष (पिट्यूटरी), अवटु (थॉइराइड), परावटु (पैराथाईराइड), थाइमस, पीनियल काय, अग्नाशयी द्वीपकाएं, अधि वृक्क (adrenal) और जनद (gonad)। तंत्रिका तंत्र (मस्तिष्क तथा मेरु रज्जु) केंद्रीय तंत्रिका तंत्र, परिधीय तंत्रिका तंत्र (कपालीय व मेरु तंत्र) और स्वायत्त तंत्रिका तंत्र (ओटोनोमिक नर्वस सिस्टम) अनुकंपी और परानुकंपी (सिंपेथेटिक व पैरासिंपेथिटक) तंत्र का बना होता है। मस्तिष्क से 10 जोड़ी कपाल तंत्रिकाएं निकलती है। मस्तिष्क, हड्डियों से निर्मित मस्तिष्क बॉक्स अथवा कपाल के अंदर बंद रहता है। यह अग्र मस्तिष्क, मध्य मस्तिष्क और पश्च मस्तिष्क में विभाजित होता है। अग्र मस्तिष्क में घ्राण पालियाँ, जुड़वाँ, युग्मित, प्रमस्तिष्क गोलार्ध और केवल एक अग्रमस्तिष्क पश्च (diencephalon) होते हैं। मध्य मस्तिष्क एक जोड़ा दृक पालियों का बना होता है। पश्च मस्तिष्क, अनुमस्तिष्क एवं मेडूला ऑब्लांगेटा का बना होता है। मेडूला ऑब्लांगेटा महारंध्र से निकलकर मेरुदंड में स्थित मेरुरज्जु से जुड़ा रहता है।

मेंढक में भिन्न प्रकार के संवेदी अंग पाए जाते हैं। जैसे- स्पर्श अंग (संवेदी पिप्पल) स्वाद अंग (स्वाद कलिकाएं) गंध (नासिका उपकला) दृष्टि (नेत्र) व श्रवण (कर्ण पटह और आंतरिक कर्ण)। इन सब में आँखें और आंतरिक कर्ण सुव्यवस्थित होते हैं और बचे हुए दूसरे संवेदी अंग केवल तंत्रिका सिरों पर कोशिकाओं के गुच्छे होते हैं। मेंढक में एक जोड़ी गोलाकार नेत्र गड्ढों में स्थित होते हैं। ये साधारण नेत्र होते हैं। मेंढक में बाह्य कर्ण अनुपस्थित होता है केवल कर्णपट ही बाहर से दिखाई देता है। कर्ण एक ऐसा अंग है जो सुनने के साथ-साथ संतुलन का काम भी करता है।

मेंढक में मादा व नर जनन तंत्र अलग एवं पूर्ण सुव्यवस्थित होते हैं। नर जननांग एक जोड़ी पीले अंडाकार वृषण होते हैं जो, वृक्क के ऊपरी भाग से पेरिटोनियम के दोहरीवलय, मेजोर्कियम नामक झिल्ली द्वारा चिपके रहते हैं। (चित्र 7.3)। शुक्र वाहिकाएं संख्या में 10-12 होती हैं जो वृषण से निकलने के बाद अपनी ओर के वृक्क में धंस जाती हैं। वृक्क में ये विडर नाल में खुलती हैं, जो अंत में मूत्रवाहिनी में खुलती है। अब मूत्रवाहिनी मूत्र-जनन वाहिनी कहलाती है, जो वृक्क से बाहर आकर अवस्कर में खुलती है। अवस्कर एक छोटा मध्यकक्ष होता है, जो कि उत्सर्जी पदार्थ, मूत्र तथा शुक्राणुओं को बाहर भेजने का कार्य करता है।

मादा में वृक्क के पास एक जोड़ी अंडाशय उपस्थित होते हैं (चित्र 7.4) लेकिन इनका वृक्क से कोई क्रियात्मक संबंध नहीं होता है। एक जोड़ी अंडवाहिनियाँ अवस्कर में अलग-अलग खुलती हैं। एक परिपक्व मादा एक बार में 2,500 से 3,000 अंडे दे सकती है। इनमें बाह्य निषेचन पानी में होता है। भ्रूण परिवर्धन लार्वा के माध्यम से होता है, लार्वा टैडपोल कहलाता है।

मेंढक मनुष्य के लिए लाभदायक प्राणी है। यह कीटों को खाता है और इस तरह फसलों की रक्षा करता है। मेंढक वातावरण संतुलन बनाए रखते हैं; क्योंकि यह पारिस्थितिकी तंत्र की एक महत्वपूर्ण भोजन शृंखला की एक कड़ी है। कुछ देशों में मांसल पाद मनुष्यों द्वारा भोजन के रूप में इस्तेमाल किए जाते हैं।

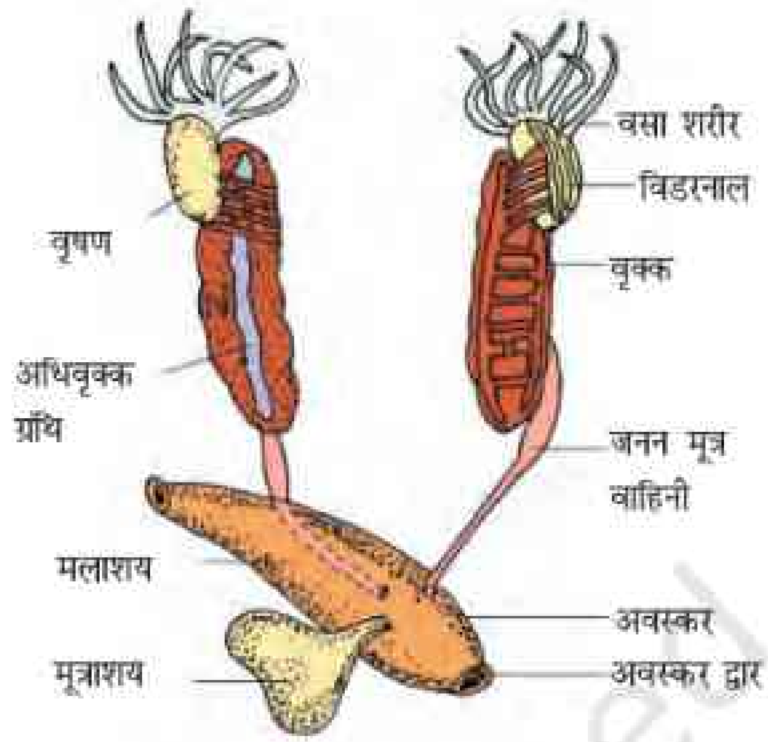

चित्र 7.3 नर जनन तंत्र

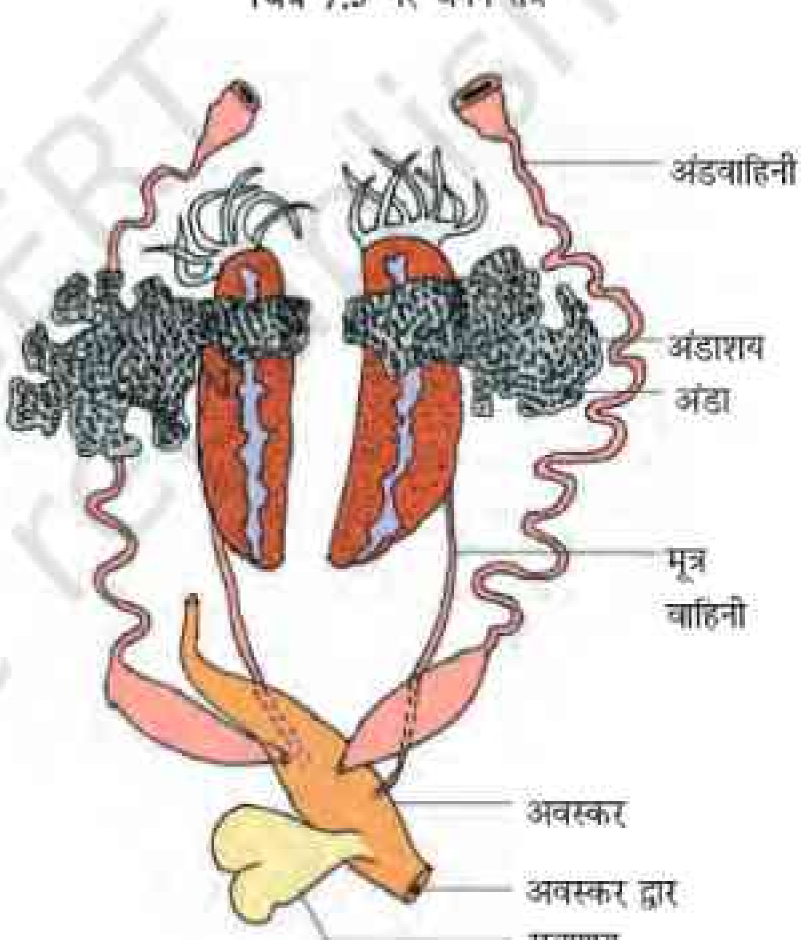

चित्र 7.4 मादा जनन तंत्र

सारांश

कोशिका ऊतक, अंग और अंग तंत्र कार्य को इस प्रकार विभक्त कर लेते हैं कि शरीर का बना रहना सुनिश्चित रहे और इस तरह वे श्रम विभाजन प्रदर्शित करते हैं। कोशिकाओं का ऐसा समूह जो अंतराकोशीय पदार्थों से बना होता है तथा एक या अधिक कार्य करता है, ऊतक कहलाता है। उपकला शरीर के चादर जैसे ऊतक होते हैं बाह्य सतह और गुहिकाओं, वाहिनियों और नलिकाओं का आस्तर है। उपकलाओं की एक मुक्त सतह होती है जिसके एक तरफ शरीर तरह तथा दूसरी तरफ बाह्य वातावरण होता है। इनकी कोशिकाएं संरचनात्मक एवं क्रियात्मक रूप से संधियों से जुड़ी रहती हैं।

भारतीय बुलफ्राग, *राना टिग्रीना* भारत में पाया जाने वाला सामान्य मेंढक है। इसका शरीर त्वचा से ढका रहता है। त्वचा पर श्लेष्म ग्रंथियाँ पाई जाती है जो अत्यधिक संवहनी होती है तथा श्वसन (जल तथा थल) में सहायता करती है। शरीर, सिर और धड़ में विभक्त रहता है। एक पेशीय जिह्वा उपस्थित रहती है जो किनारे से कटी हुई ओर द्विपालित (बाईलोब्ड) होती है। यह शिकार को पकड़ने में मदद करती है। आहारनाल, ग्रसिका, आमाशय, आंत्र और मलाशय की बनी होती है, जो अवस्कर द्वारा बाहर की ओर खुलती है। मुख्य पाचन ग्रंथियाँ, यकृत और अग्नाशय हैं। यह पानी में त्वचा द्वारा तथा जमीन पर फेफड़ों द्वारा श्वसन करता है। रुधिर परिसंचरण तंत्र बंद और एकल प्रकार का होता है। लाल रुधिर कणिकाएं केंद्रक युक्त होती हैं तंत्रिका तंत्र, केंद्रीय, परिधीय और स्वायत्त प्रकार का होता है। जनन तंत्र के मूल अंग वृक्क एवं मूत्र जनन नलिकाएं हैं, जो अवस्कर में खुलती है। नर जननांग एक जोड़ी वृषण तथा मादा जननांग एक जोड़ी अंडाशय होते है। एक मादा एक बार में 2500 से 3000 अंडे देती है। निषेचन और परिवर्धन बाह्य होता है। अंडों से टेडपोल निकलता है, जो मेंढक में कायांतरित हो जाता है।

अभ्यास

1. मेंढक के पाचन तंत्र का नामांकित चित्र बनाइए।
2. निम्न के कार्य बताइए:
   (अ) मेंढक की मूत्रवाहिनी (ब) मैलपिगी नलिका (स) केंचुए की देहभित्ति

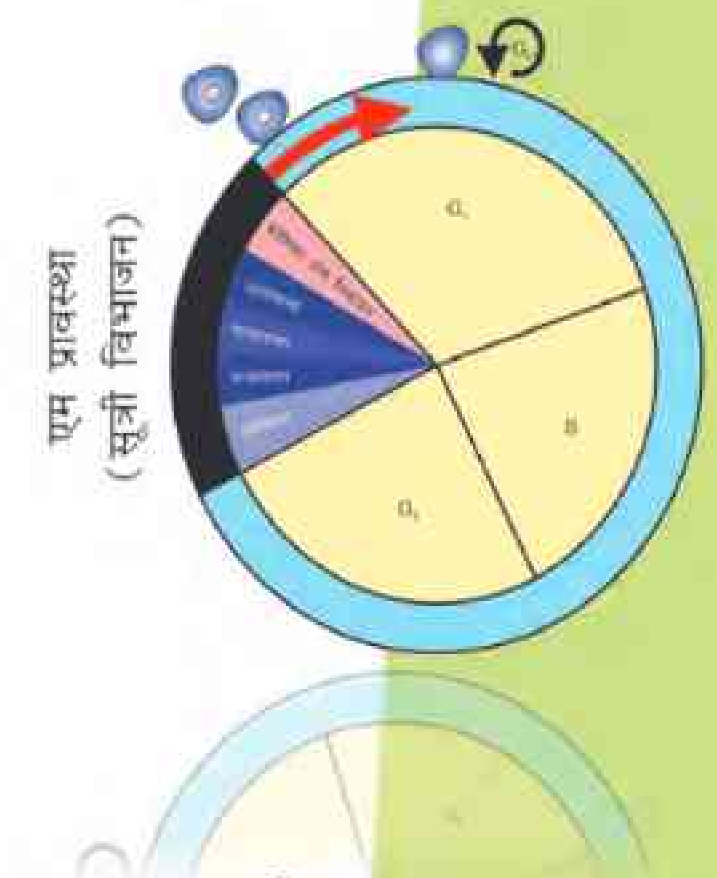

इकाई तीन

कोशिका : संरचना एवं कार्य

अध्याय 8
कोशिका : जीवन की इकाई

अध्याय 9
जैव अणु

अध्याय 10
कोशिका चक्र और कोशिका विभाजन

जीव विज्ञान जीवित जीवों का अध्ययन है। उनके स्वरूप एवं आकृति का विस्तृत विवरण ही सहज उनकी विविधता को प्रस्तुत करता है। कोशिका सिद्धांत या परिकल्पना इस विविध स्वरूपों में निहित एकत्व को इंगित करता है अर्थात् जीवन के सभी स्वरूप में कोशिकीय संगठन बताता है। इस खंड में दिए गए अध्यायों के अंतर्गत कोशिका संरचना तथा विखंडन द्वारा कोशिका वृद्धि का एक वर्णन प्रस्तुत किया गया है। इसके साथ ही कोशिका सिद्धांत जीवन प्रत्याभासों अर्थात शरीर वैज्ञानिक व व्यावहारिक प्रक्रमों के रहस्य का बोध भी पैदा करती है। यह रहस्य जीवित प्रतिभासों के कोशिकीय संगठन की अक्षतता (अखंडता) की आवश्यकता थी, जिसे प्रदर्शित या अवलोकित किया गया। शरीर विज्ञान एवं व्यावहारिक प्रक्रमों को समझने एवं अध्ययन करने के लिए कोई भी व्यक्ति को भौतिक-रासायनिक उपागम अपनाना है तथा परिक्षण हेतु कोशिकामुक्त प्रणाली इस्तेमाल करना पड़ता है। यह उपागम हमें आण्विक भाषा में विभिन्न प्रक्रमों को वर्णित करने के योग्य बनाता है। यह उपागम जीवित ऊतकों में तत्वों एवं यौगिकों के विश्लेषण द्वारा स्थापित होता है। इससे हमें पता लग पाएगा कि एक जीवित जैविक में किस प्रकार के कार्बनिक यौगिक उपस्थित हैं। अगले चरण में, यह प्रश्न पूछा जा सकता है कि कोशिका के अंदर ये यौगिक क्या कर रहे हैं? और किस प्रकार से ये संपूर्ण शरीर विज्ञान प्रक्रम, जैसेकि - पाचन, उत्सर्जन, स्मरण, सुरक्षा, पहचानना आदि करते हैं। दूसरे शब्दों में, हम प्रश्न का उत्तर देते हैं, समस्त शरीर वैज्ञानिक प्रक्रमों का अणु आधार क्या है? यह किसी बीमारी के दौरान प्रगट असामान्य प्रक्रमों को भी स्पष्ट कर सकता है । जीवित जैविकों के इस भौतिक-रसायन उपागम को समझने एवं अध्ययन की प्रक्रिया 'न्युनीकरण जीव विज्ञान' कहलाती है। यहाँ पर जीव विज्ञान को समझने के लिए भौतिक एवं रसायनशास्त्र की तकनीकों एवं संकल्पता का उपयोग किया जाता है। इस खंड के अध्याय 9 में जैव अणु का संक्षिप्त विवरण प्रदान किया गया है।

© NCERT not to be republished

जी.एन. रामाचंद्रन
(1922 - 2001)

जी.एन. रामाचंद्रन प्रोटीन संरचना के क्षेत्र में एक उत्कृष्ट व्यक्तित्व थे तथा मद्रास स्कूल ऑफ फॉरमेशनल एनालिसिस ऑफ बायोपालीमर के स्थापक थे। सन् 1954 में नेचर में प्रकाशित कोलाजेन के तिहरी कुंडलित संरचना की खोज तथा 'रामचंद्रन प्लाट' के उपयोग से प्रोटीन के बहुलक के विश्लेषण से संरचनात्मक जीव विज्ञान के क्षेत्र में उन्हें सर्वोत्कृष्ट उपलब्धि प्राप्त हुई। आपका जन्म आठ अक्टूबर 1922 को दक्षिण भारत के समुद्रतटीय क्षेत्र कोचीन के निकट एक गाँव में हुआ था। आपके पिता एक स्थानीय कॉलेज में गणित के प्रोफेसर थे, अत: रामचंद्रन की गणित के प्रति रुचि पैदा करने में उनका पर्याप्त प्रभाव पड़ा था। आपने अपनी स्कूली शिक्षा पूरी करने के उपरांत मद्रास विश्वविद्यालय से भौतिकशात्र में बी.एस.सी. ऑनर्स में सर्वोच्च स्थान प्राप्त किया। आप ने 1949 में कैम्ब्रिज विश्वविद्यालय से पी. एच. डी. की उपाधि प्राप्त की। जब आप कैंब्रिज विश्वविद्यालय में थे, तब आपकी मुलाकात लाइनस पावलिंग से हुई तथा उनके α हेलिक्स तथा β शीट संरचना के मॉडल पर प्रकाशित कार्य से आप बहुत प्रभावित थे जिससे आप कोलैजन की संरचना को हल करने की ओर आकर्षित हुए। आप 78 वर्ष की आयु में 7 अप्रैल, 2001 को स्वर्गवासी हुए।

not to be republished

अध्याय 8

कोशिका : जीवन की इकाई

8.1 कोशिका क्या है?

8.2 कोशिका सिद्धांत

8.3 कोशिका का समग्र अध्ययन

8.4 प्रोकैरियोटिक कोशिकाएं

8.5 यूकैरियोटिक कोशिकाएं

जब आप अपने चारों तरफ देखते हैं तो जीव व निर्जीव दोनों को आप पाते हैं। आप अवश्य आश्चर्य करते होंगे एवं अपने आप से पूछते होंगे कि ऐसा क्या है, जिस कारण जीव, जीव कहलाते हैं और निर्जीव जीव नहीं हो सकते। इस जिज्ञासा का उत्तर तो केवल यही हो सकता है कि जीवन की आधारभूत इकाई जीव कोशिका की उपस्थित एवं अनुपस्थित है।

सभी जीवधारी कोशिकाओं से बने होते हैं। इनमें से कुछ जीव एक कोशिका से बने होते हैं जिन्हें एककोशिक जीव कहते हैं, जबकि दूसरे, हमारे जैसे अनेक कोशिकाओं से मिलकर बने होते हैं बहुकोशिक जीव कहते हैं।

8.1 कोशिका क्या है?

कोशिकीय जीवधारी (1) स्वतंत्र अस्तित्व यापन व (2) जीवन के सभी आवश्यक कार्य करने में सक्षम होते हैं। कोशिका के बिना किसी का भी स्वतंत्र जीव अस्तित्व नहीं हो सकता। इस कारण जीव के लिए कोशिका ही मूलभूत से संरचनात्मक व क्रियात्मक इकाई होती है।

एंटोनी वैन ल्युवेनहाक ने पहली बार कोशिका को देखा व इसका वर्णन किया था। राबर्ट ब्राउन ने बाद में केंद्रक की खोज की। सूक्ष्मदर्शी की खोज व बाद में इनके सुधार के बाद फ्रेजकन्ट्रास्ट व इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी द्वारा कोशिका की विस्तृत संरचना का अध्ययन संभव हो सका।

8.2 कोशिका सिद्धांत

1838 में जर्मनी के वनस्पति वैज्ञानिक मैथीयस स्लाइडेन ने बहुत सारे पौधों के अध्ययन के बाद पाया कि ये पौधे विभिन्न प्रकार की कोशिकाओं से मिलकर बने होते हैं, जो पौधों में ऊतकों का निर्माण करते हैं। लगभग इसी समय 1839 में एक ब्रिटिश प्राणि वैज्ञानिक थियोडोर श्वान ने विभिन्न जंतु कोशिकाओं के अध्ययन के बाद पाया कि कोशिकाओं के बाहर एक पतली पर्त मिलती है जिसे आजकल 'जीवद्रव्यझिल्ली' कहते हैं। इस वैज्ञानिक ने पादप ऊतकों के अध्ययन के बाद पाया कि पादप कोशिकाओं में कोशिका भित्ति मिलती है जो इसकी विशेषता है। उपरोक्त आधार पर श्वान ने अपनी परिकल्पना रखते हुए बताया कि प्राणियों और वनस्पतियों का शरीर कोशिकाओं और उनके उत्पाद से मिलकर बना है।

स्लाइडेन व श्वान ने संयुक्त रूप से कोशिका सिद्धांत को प्रतिपादित किया। यद्यपि इनका सिद्धांत यह बताने में असफल रहा कि नई कोशिकाओं का निर्माण कैसे होता है। पहली बार रडोल्फ बिर्चो (1855) ने स्पष्ट किया कि कोशिका विभाजित होती है और नई कोशिकाओं का निर्माण पूर्व स्थित कोशिकाओं के विभाजन से होता है (ओमनिस सेलुल-इ सेलुला)। इन्होंने स्लाइडेन व श्वान की कल्पना को रूपांतरित कर नई कोशिका सिद्धांत को प्रतिपादित किया। वर्तमान समय के परिप्रेक्ष्य में कोशिका सिद्धांत निम्नवत हैः

- सभी जीव कोशिका व कोशिका उत्पाद से बने होते हैं।
- सभी कोशिकाएं पूर्व स्थित कोशिकाओं से निर्मित होती हैं।

8.3 कोशिका का समग्र अवलोकन

आरंभ में आप प्याज के छिलके और/या मनुष्य की गाल की कोशिकाओं को सूक्ष्मदर्शी से देख चुके होंगे। उनकी संरचना का स्मरण करें। प्याज की कोशिका जो एक प्रारूपी पादप कोशिका है, जिसके बाहरी सतह पर एक स्पष्ट कोशिका भित्ति व इसके ठीक नीचे कोशिका झिल्ली होती है। मनुष्य की गाल की कोशिका के संगठन में बाहर की तरफ केवल एक झिल्ली संरचना निकलती दिखाई पड़ती है। प्रत्येक कोशिका के भीतर एक सघन झिल्लीयुक्त संरचना मिलती है, जिसे केंद्रक कहते हैं। इस केंद्रक में गुणसूत्र (क्रोमोसोम) होता है, जिसमें आनुवंशिक पदार्थ डीएनए होता है। जिस कोशिका में झिल्लीयुक्त केंद्रक होता है, उसे यूकैरियोट व जिसमें झिल्लीयुक्त केंद्रक नहीं मिलता उसे प्रोकैरियाट कहते हैं। दोनों यूकैरियाटिक व प्रोकैरियोटिक कोशिकाओं में इसके आयतन को घेरे हुए एक अर्द्धतरल आव्यूह मिलता है जिसे कोशिकाद्रव्य कहते हैं। दोनों पादप व जंतु कोशिकाओं में कोशिकीय क्रियाओं हेतु कोशिकाद्रव्य एक प्रमुख स्थल होता है। कोशिका की 'जीव अवस्था' संबंधी विभिन्न रासायनिक अभिक्रियाएं यहीं संपन्न होती हैं।

यूकैरियोटिक कोशिका में केंद्रक के अतिरिक्त अन्य झिल्लीयुक्त विभिन्न संरचनाएं मिलती हैं, जो **कोशिकांग** कहलाती हैं जैसे- अंतप्रद्रव्यी जालिका (ऐन्डोप्लाजमिक रेटीकुलम) सूत्र कणिकाएं (माइटोकॉन्ड्रिया) सूक्ष्मकाय (माइक्रोबॉडी), गाल्जीसामिश्र, लयनकाय (लायसोसोम) व रसधानी प्रोकैरियोटिक कोशिका में झिल्लीयुक्त कोशिकाओं का अभाव होता है।

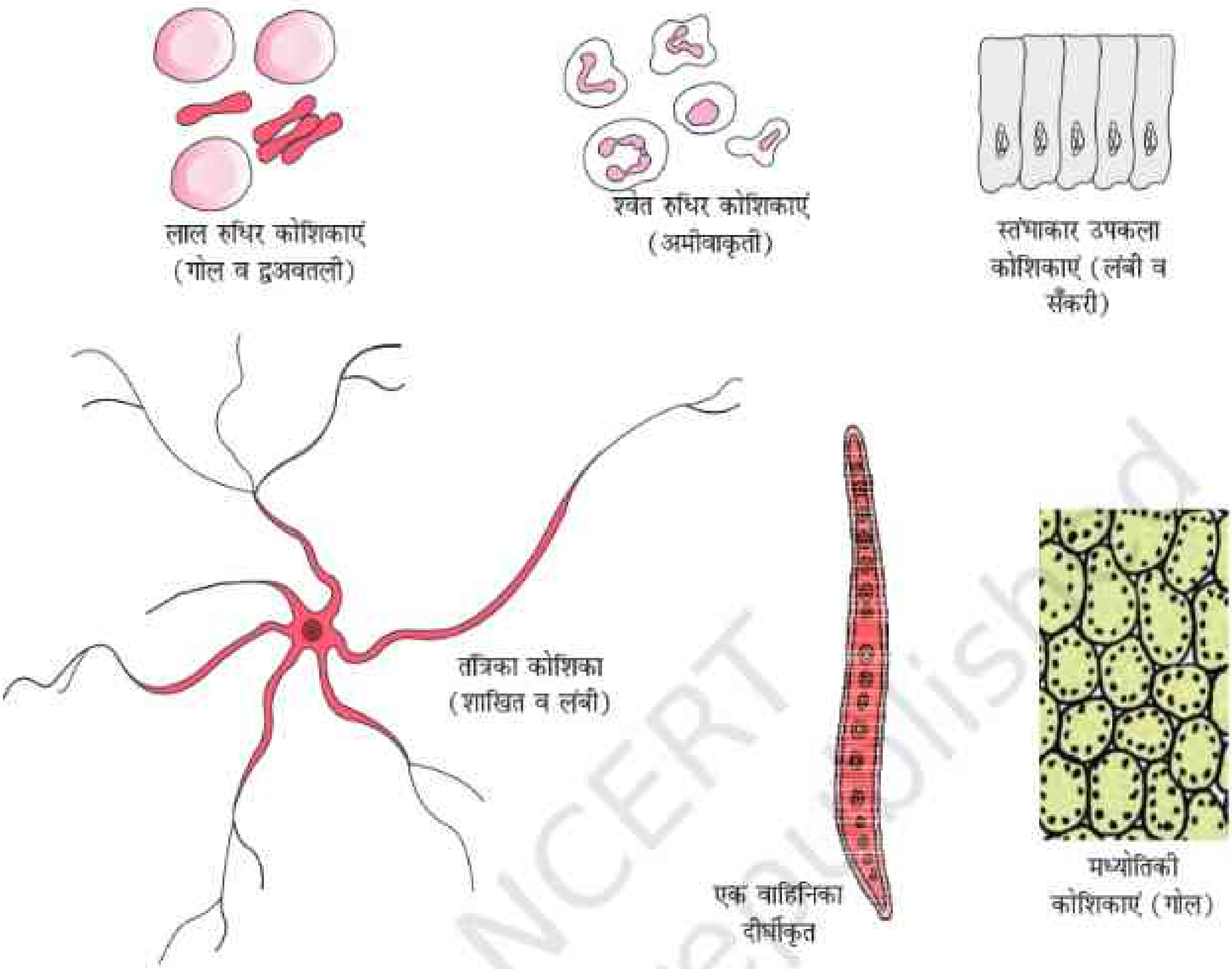

चित्र 8.1 विभिन्न प्रकार के आकार की कोशिकाओं का चित्र द्वारा प्रदर्शन

© NCERT not to be republished

यूकैरियोटिक व प्रोकैरियोटिक दोनों कोशिकाओं में झिल्ली रहित अंगक राइबोसोम मिलते हैं। कोशिका के भीतर राइबोसोम केवल कोशिका द्रव्य में ही नहीं; बल्कि दो अंगकों- हरित लवक (पौधों में) व सूत्र कणिका में व खुरदरी अंतर्द्रव्यी जालिका में भी मिलते हैं।

जंतु कोशिकाओं में झिल्ली रहित तारककाय केंद्रक जैसे अन्य अंगक मिलते हैं, जो कोशिका विभाजन में सहायता करते हैं।

कोशिकाएं माप, आकार व कार्य की दृष्टि से काफी भिन्न होती हैं (चित्र 8.1)। उदाहरणार्थ- सबसे छोटी कोशिका माइकोप्लाज्मा 0.3 μm (माइक्रोमीटर) लंबाई की, जबकि जीवाणु (बैक्टीरिया)में 3 से 5 μm (माइक्रोमीटर) की होती हैं। पृथक की गई सबसे बड़ी कोशिका शुतरमुर्ग के अंडे के समान है। बहुकोशिकीय जीवधारियों में मनुष्य की लाल रक्त कोशिका का व्यास लगभग 7.0 μm (माइक्रोमीटर) होता है। तंत्रिका कोशिकाएं सबसे लंबी कोशिकाओं में होती हैं। ये बिंबाकार बहुभुजी, स्तंभी, घनाभ, धागे की तरह या असमाकृति प्रकार की हो सकती हैं। कोशिकाओं का रूप उनके कार्य के अनुसार भिन्न हो सकता है।

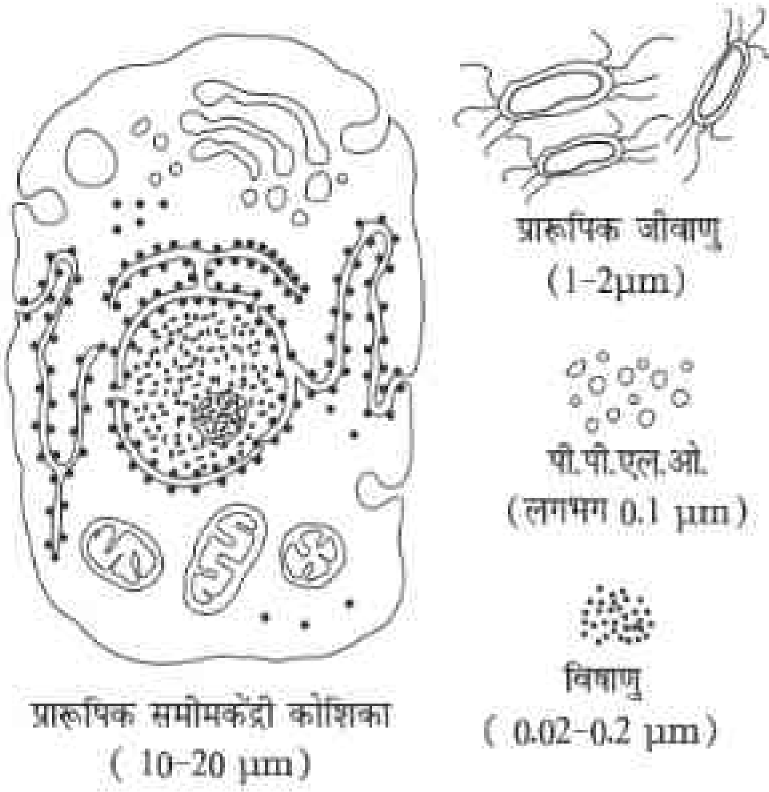

चित्र 8.2 ससीमकेंद्री कोशिका का अन्य सजीवों के साथ तुलनात्मकता का चित्र द्वारा प्रदर्शन

8.4 प्रोकैरियोटिक कोशिकाएं

प्रोकैरियोटिक कोशिकाएं, जीवाणु, नीलहरित शैवाल, माइकोप्लाज्मा और प्ल्यूरो निमोनिया सम जीव (PPLO) मिलते हैं। सामान्यतया ये यूकैरियोटिक कोशिकाओं से बहुत छोटी होती हैं और काफी तेजी से विभाजित होती हैं (चित्र 8.2)। माप का आकार काफी भिन्न होती हैं। जीवाणु के चार मूल आकार होते हैं- दंडाकार (बेसिलस), गोलाकार (कोकस), कोशाकार (विब्रो) व सर्पिल (स्पाइलर)।

प्रोकैरियोटिक कोशिका का मूलभूत संगठन आकार व कार्य में विभिन्नता के बावजूद एक सा होता है। सभी प्रोकैरियोटिक में कोशिका भित्ति होती हैं जो कोशिका झिल्ली से घिरी होती है केवल माइकोप्लाज्मा को छोड़कर। कोशिका में साइटोप्लाज्म एक तरल मैट्रिक्स के रूप में भरा रहता है। इसमें कोई स्पष्ट विभेदित केंद्रक नहीं पाया जाता है। आनुवंशिक पदार्थ मुख्य रूप से नग्न व केंद्रक झिल्ली द्वारा परिबद्ध नहीं होता है। जिनोमिक डीएनए के अतिरिक्त (एकल गुणसूत्र / गोलाकार डीएनए) जीवाणु में सूक्ष्म डीएनए वृत्त जिनोमिक डीएनए के बाहर पाए जाते हैं। इन डीएनए वृत्तों को प्लाज्मिड कहते हैं। ये प्लाज्मिड डीएनए जीवाणुओं में विशिष्ट समलक्षणों को बताते हैं। उनमें से एक प्रतिजीवी के प्रतिरोधी होते हैं।

आप उच्च कक्षाओं में पढ़ेंगे कि प्लाज्मिड डीएनए वृत्त जीवाणु का बाहरी डीएनए के साथ रूपांतरण के प्रवोधन हेतु उपयोगी है। केंद्रक झिल्ली यूकैरियोटिकों में पाई जाती है। राइबोसोम के अलावा प्रोकैरियोटिको में यूकैरियोटिकों अंगक नहीं पाए जाते हैं। प्रोकैरियोटिकों में कुछ विशेष प्रकार के अंतर्विष्ट मिलते हैं। प्रोकैरियोटिक की यह विशेषता कि उनमें कोशिका झिल्ली एक विशिष्ट विभेदित आकार में मिलती है जिसे मीसोसोम कहते हैं ये तत्व कोशिका झिल्ली अंतर्वलन होते हैं।

8.4.1 कोशिका आवरण और इसके रूपांतर

अधिकांश प्रोकैरियोटिक कोशिकाओं, विशेषकर जीवाणु कोशिकाओं में एक जटिल रासायनिक कोशिका आवरण मिलता है। इनमें कोशिका आवरण दृढ़तापूर्वक बंधकर तीन स्तरीय संरचना बनाते हैं; जैसे बाह्य परत ग्लाइकोकेलिक्स, जिसके पश्चात् क्रमशः कोशिका भित्ति एवं जीवद्रव्य झिल्ली होती है। यद्यपि आवरण के प्रत्येक परत का कार्य भिन्न है, पर यह तीनों मिलकर एक सुरक्षा इकाई बनाते हैं।

जीवाणुओं को उनकी कोशिका आवरण में विभिन्नता व ग्राम द्वारा विकसित अभिरंजनविधि के प्रति विभिन्न व्यवहार के कारण दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है, जैसे- जो ग्राम अभिरंजित होते हैं, उसे **ग्राम धनात्मक** एवं अन्य जो अभिरंजित नहीं हो पाते, उन्हें **ग्राम ऋणात्मक** कहते हैं।

ग्लाइकोकेलिक्स विभिन्न जीवाणुओं में रचना एवं मोटाई में भिन्न होती है। कुछ में यह ढीली आच्छद होती है जिसे **अवपंक पर्त** कहते हैं व दूसरों में यह मोटी व कठोर आवरण के रूप में हो सकती है जो **संपुटिका** (केपसूल) कहलाती है। **कोशिकाभित्ति** कोशिका के आकार को निर्धारित करती है। वह सशक्त संरचनात्मक भूमिका प्रदान करती है, जो जीवाणु को फटने तथा निपातित होने से बचाती है।

जीवद्रव्यझिल्लिका प्रकृति में वर्णात्मक होती है और इसके द्वारा कोशिका बाह्य वातावरण से संपर्क बनाए रखने में सक्षम होती है। संरचना अनुसार यह झिल्ली यूकैरियोटिक झिल्ली जैसी होती है। एक विशेष झिल्लीमय संरचना, जो जीवद्रव्यझिल्ली के कोशिका में फैलाव से बनती है, को **मीसोजोम** कहते हैं। यह फैलाव **पुटिका, नलिका** एवं **पटलिका** के रूप में होता है। यह कोशिका भित्ति निर्माण, डीएनए प्रतिकृति व इसके संतति कोशिका में वितरण को सहायता देता है या श्वसन, स्रावी प्रक्रिया, जीवद्रव्यझिल्ली के पृष्ठ क्षेत्र, एंजाइम मात्रा को बढ़ाने में भी सहायता करता है। कुछ प्रोकैरियोटिक जैसे नीलहरित जीवाणु के कोशिका द्रव्य में झिल्लीमय विस्तार होता है जिसे वर्णकी लवक कहते हैं। इसमें वर्णक पाए जाते हैं।

जीवाणु कोशिकाएं चलायमान अथवा अचलायमान होती हैं। यदि वह चलायमान हैं तो उनमें कोशिका भित्ति जैसी पतली संरचना मिलती हैं। जिसे कशाभिका कहते हैं जीवाणुओं में कशाभिका की संख्या व विन्यास का क्रम भिन्न होता है। जीवाणु कशाभिका (फ्लैजिलम) तीन भागों में बँटा होता है- **तंतु, अंकुश व आधारीय शरीर**। तंतु, कशाभिका का सबसे बड़ा भाग होता है और यह कोशिका सतह से बाहर की ओर फैला होता है।

जीवाणुओं के सतह पर पाई जाने वाली संरचना **रोम** व **झालर** इनकी गति में सहायक नहीं होती है। रोम लंबी नलिकाकार संरचना होती है, जो विशेष प्रोटीन की बनी होती है। झालर लघुशूक जैसे तंतु है जो कोशिका के बाहर प्रवर्धित होते हैं। कुछ जीवाणुओं में, यह उनको पानी की धारा में पाई जाने वाली चट्टानों व पोषक ऊतकों से चिपकने में सहायता प्रदान करती हैं।

8.4.2 राइबोसोम व अंतर्विष्ट पिंड

प्रोकैरियोटिक में राइबोसोम कोशिका की जीवद्रव्यझिल्ली से जुड़े होते हैं। ये 15 से 20 नैनोमीटर आकार की होती हैं और दो उप इकाइयों में 50S व 30S की बनी होती हैं, जो आपस में मिलकर 70S प्रोकैरियोटिक राइबोसोम बनाते हैं। राइबोसोम के उपर प्रोटीन संश्लेषित होती है। बहुत से राइबोसोम एक संदेषवाहक आरएनए से संबद्ध होकर एक शृंखला बनाते हैं। जिसे **बहुराइबोसोम** अथवा **बहुसूत्र** कहते हैं। बहुसूत्र का राइबोसोम संदेशवाहक आरएनए से संबद्ध होकर प्रोटीन निर्माण में भाग लेता है।

अंतर्विष्ट पिंड : प्रोकैरियोटिक कोशिकाओं में बचे हुए पदार्थ कोशिकाद्रव्य में अंतर्विष्ट पिंड के रूप में संचित होते हैं। ये झिल्ली द्वारा घिरे नहीं होते एवं कोशिकाद्रव्य में स्वतंत्र रूप से पड़े रहते हैं, उदाहरणार्थ-फॉस्फेट कणिकाएं, साइनोफाइसिन कणिकाएं और ग्लाइकोजन कणिकाएं। गैस रसधानी नील हरित, बैंगनी और हरी प्रकाश-संश्लेषी जीवाणुओं में मिलती हैं।

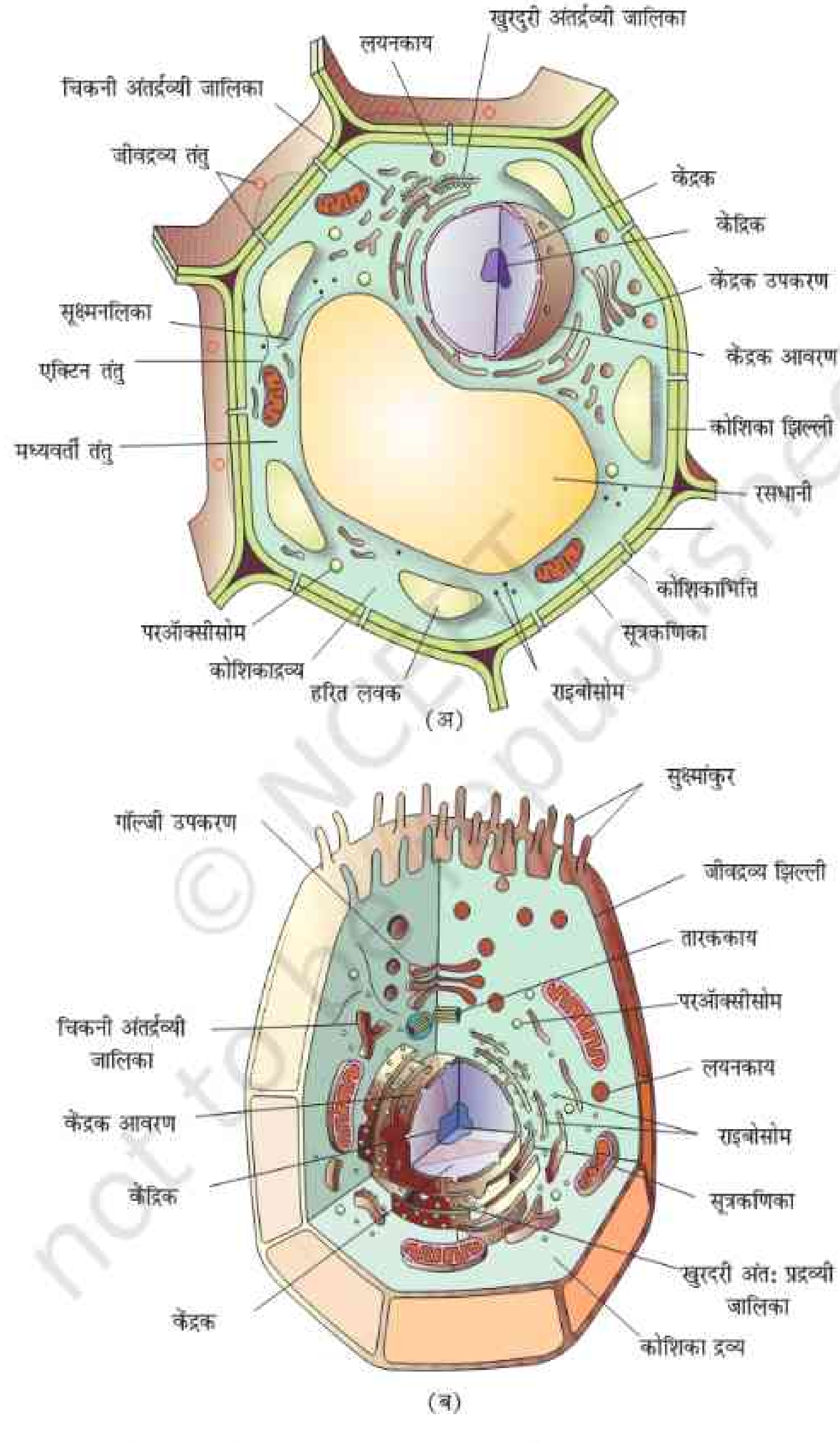

चित्र 8.3 चित्र प्रदर्शित करता है (अ) पादप कोशिका (ब) प्राणि कोशिका

8.5 यूकैरियोटिक कोशिकाएं (ससीमकेंद्रकी कोशिकाएं)

सभी आद्यजीव, पादप, प्राणी व कवक में यूकैरियोटिक कोशिकाएं होती हैं। यूकैरियोटिक कोशिकाओं में झिल्लीदार अंगकों की उपस्थिति के कारण कोशिकाद्रव्य विस्तृत कक्षयुक्त प्रतीत होता है। यूकैरियोटिक कोशिकाओं में झिल्लीमय केंद्रक आवरण युक्त व्यवस्थित केंद्रक मिलता है। इसके अतिरिक्त यूकैरियोटिक कोशिकाओं में विभिन्न प्रकार के जटिल गतिकीय एवं कोशिकीय कंकाल जैसी संरचना मिलती है। इनमें आनुवंशिक पदार्थ गुणसूत्रों के रूप में व्यवस्थित रहते हैं।

सभी यूकैरियोटिक कोशिकाएं एक जैसी नहीं होती हैं। पादप व जंतु कोशिकाएं भिन्न होती हैं। पादप कोशिकाओं में कोशिका भित्ति, लवक एवं एक बड़ी केंद्रीय रसधानी मिलती है, जबकि प्राणी कोशिकाओं में ये अनुपस्थित होती हैं दूसरी तरफ प्राणी कोशिकाओं में तारकाय मिलता है जो लगभग सभी पादप कोशिकाओं में अनुपस्थित होता है (चित्र 8.3)। आइए! अब प्रत्येक कोशिकीय अंगक की संरचना व कार्यविधि का अध्ययन करें।

8.5.1 कोशिका झिल्ली

वर्ष 1950 के इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी की खोज के बाद कोशिका झिल्ली की विस्तृत संरचना का ज्ञान संभव हो सका है। इस बीच मनुष्य की लाल रक्तकणिकाओं की कोशिका झिल्ली के रासायनिक अध्ययन के बाद जीवद्रव्यझिल्ली की संभावित संरचना के बारे में जानकारी प्राप्त हो सकी।

अध्ययनों के बाद इस बात की पुष्टि हुई की कोशिकाझिल्ली मुख्यत: लिपिड व प्रोटीन की बनी होती है। इसमें प्रमुख लिपिड, फास्फोलिपिड होते हैं, जो दो सतहों में व्यवस्थित होती है। लिपिड झिल्ली के अंदर व्यवस्थित होते हैं, जिनका ध्रुवीय सिरा बाहर की ओर व जल भीरू पुच्छ सिरा अंदर की ओर होता है। इससे सुनिश्चित होता है कि संतृप्त हाइड्रोकार्बन की बनी हुई अध्रुवीय पुच्छ जलीय वातावरण से सुरक्षित रहती हैं (चित्र 8.4)। इसके अतिरिक्त फास्फोलिपिड झिल्ली में कोलेस्टेराल भी होता है।

बाद में, जैव रासायनिक अनुसंधानों से यह स्पष्ट हो गया है कि कोशिका झिल्ली में प्रोटीन व कार्बोहाइड्रेट पाया जाता है। विभिन्न कोशिकाओं में प्रोटीन व लिपिड का अनुपात भिन्न-भिन्न होता है। मनुष्य की रुधिराणु (इरीथ्रोसाइट) की झिल्ली में लगभग 52 प्रतिशत प्रोटीन व 40 प्रतिशत लिपिड मिलता है। झिल्ली में पाए जाने वाले प्रोटीन को अलग करने की सुविधा के आधार पर दो अंगभूत व परिधीय प्रोटीन भागों में विभक्त कर सकते हैं। परिधीय प्रोटीन झिल्ली की सतह पर होता है, जबकि अंगभूत प्रोटीन आंशिक या पूर्णरूप से झिल्ली में धंसे होते हैं।

कोशिका झिल्ली का उन्नत नमूना 1972 में सिंगर व निकोल्सन द्वारा प्रतिपादित किया गया जिसे तरल किर्मीर नमूना के रूप में व्यापक रूप से स्वीकार कर किया गया (चित्र 8.4)। इसके अनुसार लिपिड के अर्धतरलीय प्रकृति के कारण फास्फोलिपिड द्विसतह के भीतर प्रोटीन पार्श्विक गति करता है। झिल्ली के भीतर गति करने की क्षमता उसकी तरलता पर निर्भर करती है।

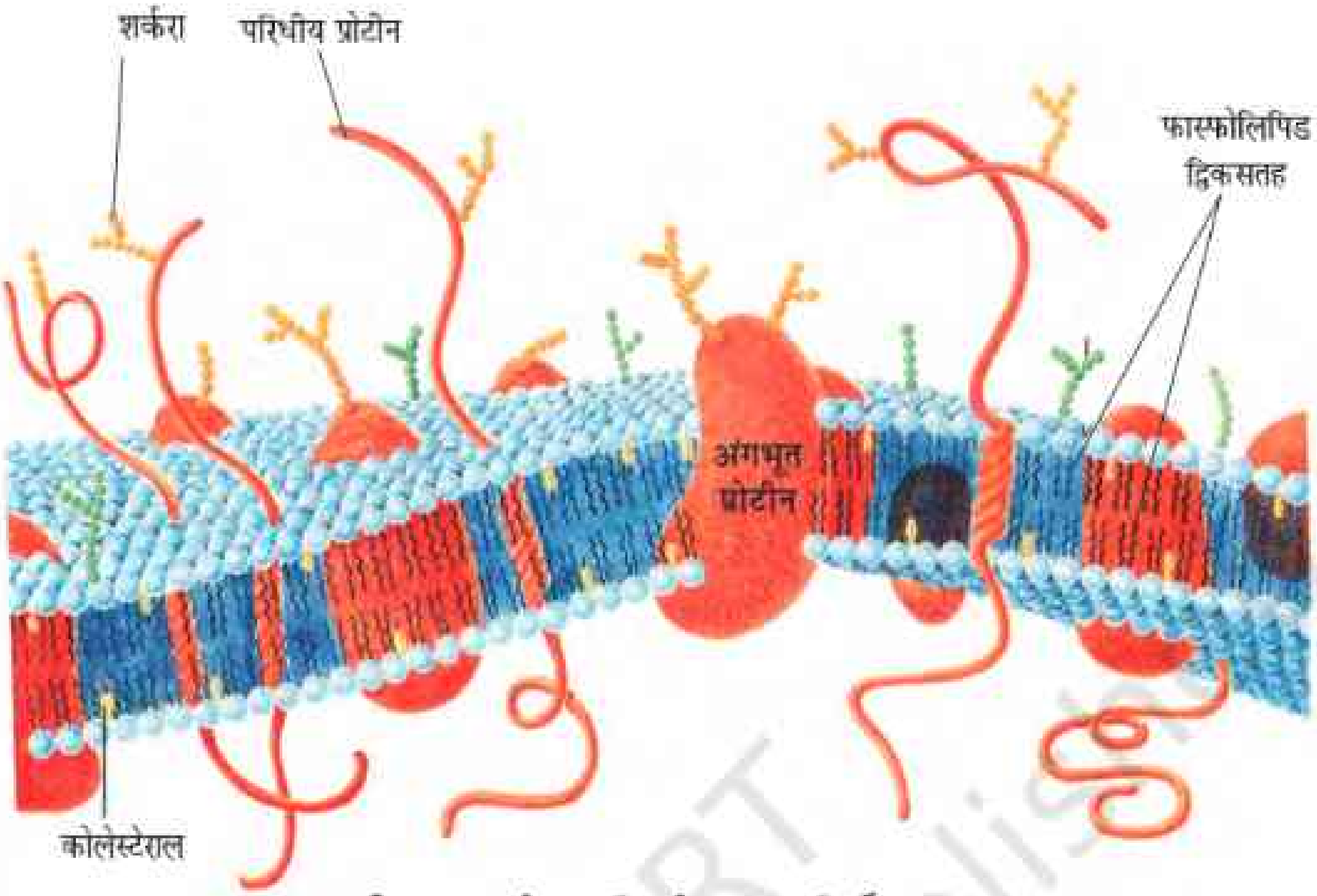

चित्र 8.4 जीवद्रव्य झिल्ली का तरल किर्मीर नमूना

झिल्ली की तरलीय प्रकृति इसके कार्य जैसे– कोशिकावृद्धि, अंतरकोशिकीय संयोजन का निर्माण, स्रवण, अंतकोशिक, कोशिका विभाजन इत्यादि की दृष्टि में महत्वपूर्ण है।

जीवद्रव्यझिल्ली का सर्वाधिक महत्वपूर्ण कार्य यह है कि इससे अणुओं का परिवहन होता है। यह झिल्ली इसके दोनों तरफ मिलने वाले अणुओं के लिए चयनित पारगम्य है। कुछ अणु बिना ऊर्जा की आवश्यकता के इस झिल्ली से होकर आते हैं जिसे **निष्क्रिय परिवहन** कहते हैं। उदासीन विलेय सांद्रप्रवणता के अनुसार जैसे– उच्च सांद्रता से निम्न सांद्रता की ओर साधारण विसरण द्वारा इस झिल्ली से होकर जाते हैं। जल भी इस झिल्ली से उच्च सांद्रता से निम्न सांद्रता की ओर गति करता है। विसरण द्वारा जल के प्रवाह को **परासरण** कहते हैं। चूँकि ध्रुवीय अणु जो अध्रुवीय लिपिड द्विसतह से होकर नहीं जा सकते, उन्हें झिल्ली से होकर परिवहन के लिए झिल्ली की वाहक प्रोटीन की आवश्यकता होती है।

कुछ आयन या अणुओं का झिल्ली से होकर परिवहन उनकी सांद्रता प्रवणता के विपरीत जैसे निम्न से उच्च सांद्रता की ओर होता है। इस प्रकार के परिवहन हेतु ऊर्जा आधारित प्रक्रिया होती है, जिसमें एटीपी का उपयोग होता है जिसे **सक्रिय परिवहन** कहते हैं। यह एक पंप के रूप में कार्य करता है जैसे– सोडियम आयन/पोटैसियम आयन पंप।

8.5.2 कोशिका भित्ति

आपको याद ही होगा कि कवक व पौधों की जीवद्रव्यझिल्ली के बाहर पाए जाने वाली दृढ़ निर्जीव आवरण को कोशिका भित्ति कहते हैं। कोशिका भित्ति कोशिका को केवल

यांत्रिक हानियों और संक्रमण से ही रक्षा नहीं करता है; बल्कि यह कोशिकाओं के बीच आपसी संपर्क बनाए रखने तथा अवांछनीय वृहद अणुओं के लिए अवरोध प्रदान करता है। शैवाल की कोशिका भित्ति सेलुलोज, गैलेक्टेन्स, मैनान्स व खनिज जैसे कैल्सियम कार्बोनेट की बनी होती है, जबकि दूसरे पौधों में यह सेलुलोज, हेमीसेलुलोज, पेक्टीन व प्रोटीन की बनी होती है। नव पादप कोशिका की कोशिका भित्ति में स्थित **प्राथमिक भित्ति** में वृद्धि की क्षमता होती है, जो कोशिका की परिपक्वता के साथ घटती जाती है व इसके साथ कोशिका के भीतर की तरफ द्वितीय भित्ति का निर्माण होने लगता है।

मध्यपटलिका मुख्यतय: कैल्सियम पेक्टेट की बनी सतह होती है जो आस-पास की विभिन्न कोशिकाओं को आपस में चिपकाएं व पकड़े रहती है। कोशिका भित्ति एवं मध्य पटलिका में जीवद्रव्य तंतु (प्लाज्मोडैस्मेटा) आड़े-तिरछे रूप में स्थित रहते हैं। जो आस-पास की कोशिका द्रव्य को जोड़ते हैं।

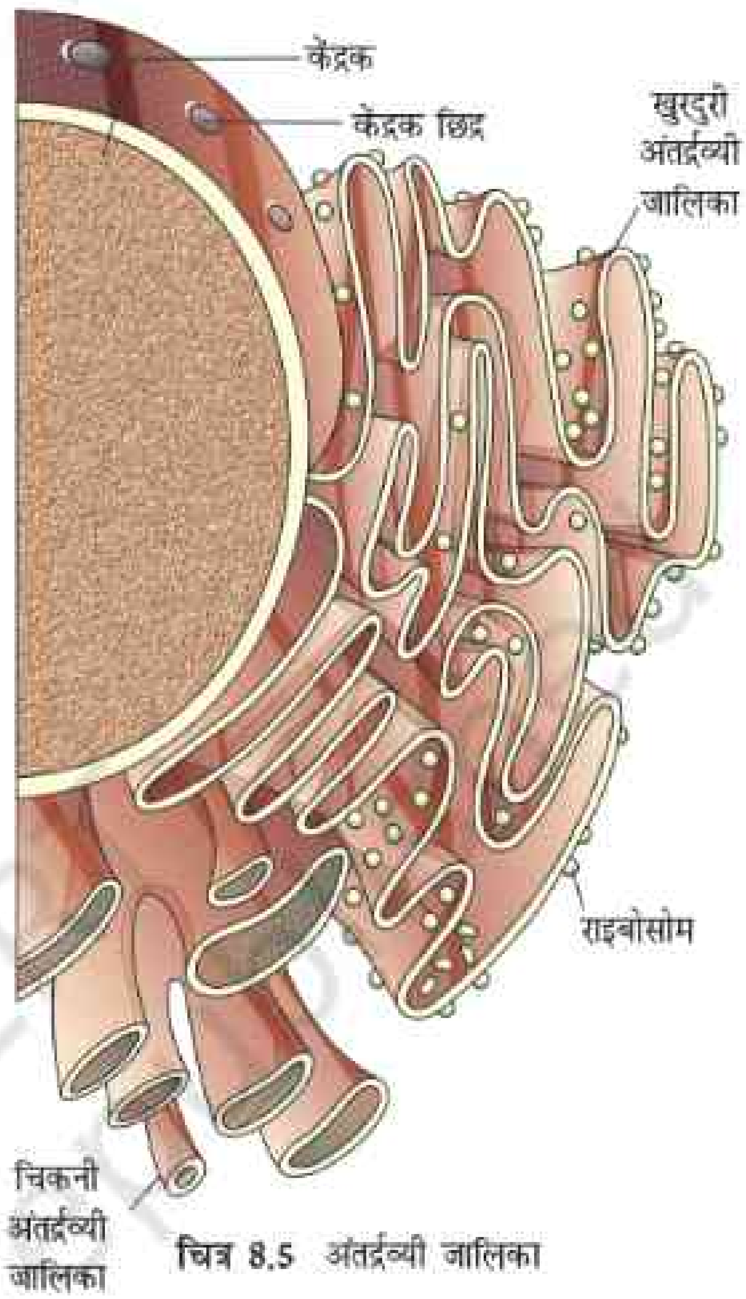

चित्र 8.5 अंतर्द्रव्यी जालिका

8.5.3 अंत: झिल्लिका तंत्र

झिल्लीदार अंगक कार्य व संरचना के आधार पर एक दूसरे से काफी अलग होते हैं, इनमें बहुत से ऐसे होते हैं जिनके कार्य एक दूसरे से जुड़े रहते हैं उन्हें अंत: झिल्लिका तंत्र के अंतर्गत रखते हैं। इस तंत्र के अंतर्गत अंतर्द्रव्यी जालिका, गॉल्जीकाय, लयनकाय, व रसधानी अंग आते हैं। सूत्रकणिका (माइटोकॉन्ड्रिया), हरितलवक व परऑक्सीसोम के कार्य उपरोक्त अंगों से संबंधित नहीं होते, इसलिए इन्हें अंत: झिल्लिका तंत्र के अंतर्गत नहीं रखते हैं।

8.5.3.1 अंतर्द्रव्यी जालिका (ऐन्डोप्लाज्मिक रेटीकुलम)

इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी से अध्ययन के पश्चात् यह पता चला कि यूकैरियोटिक कोशिकाओं के कोशिकाद्रव्य में चपटे, आपस में जुड़े, थैली युक्त छोटी नलिकावत जालिका तंत्र बिखरा रहता है जिसे अंतर्द्रव्यी जालिका कहते हैं (चित्र 8.5)।

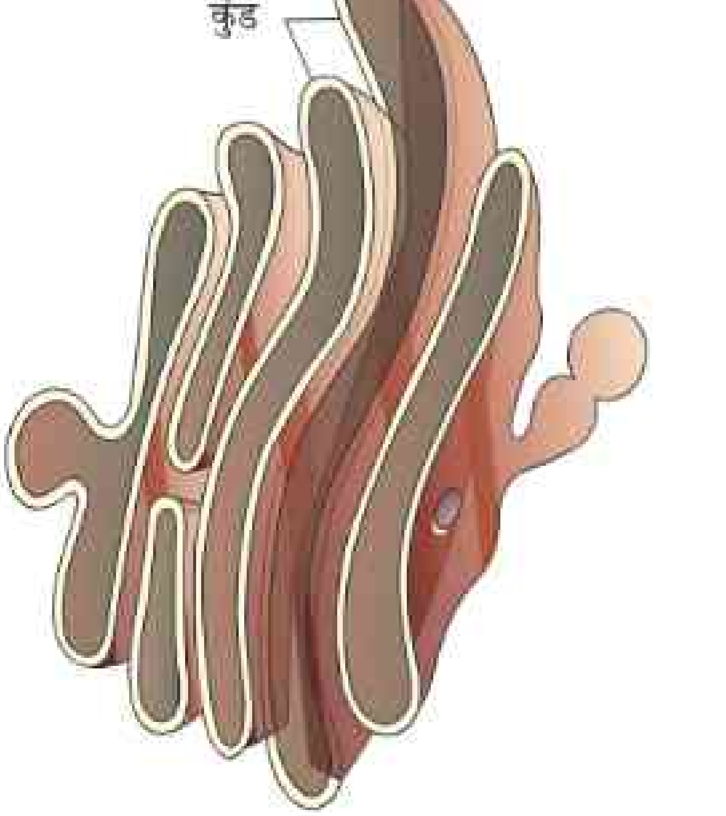

चित्र 8.6 गॉल्जी उपकरण

प्राय: राइबोसोम अंतर्द्रव्यी जालिका के बाहरी सतह पर चिपके रहते हैं। जिस अंतर्द्रव्यी जालिका के सतह पर यह राइबोसोम मिलते हैं, उसे खुरदरी अंतर्द्रव्यी जालिका कहते हैं। राइबोसोम की अनुपस्थिति पर अंतर्द्रव्यी जालिका

चिकनी लगती है, अत: इसे चिकनी अंतर्द्रव्यी जालिका कहते हैं। जो कोशिकाएं प्रोटीन संश्लेषण एवं स्रवण में सक्रिय भाग लेती हैं उनमें खुरदरी अंतप्रद्रव्यी जालिका बहुतायत से मिलती है। ये काफी फैली हुई तथा केंद्रक के बाह्य झिल्लिका तक फैली होती है।

चिकनी अंतर्द्रव्यी जालिका प्राणियों में लिपिड संश्लेषण के मुख्य स्थल होते हैं। लिपिड की भाँति स्टीरायडल हार्मोन चिकने अंतर्द्रव्यी जालिका में होते हैं।

8.5.3.2 गॉल्जी उपकरण

केमिलो गॉल्जी (1898) ने पहली बार केंद्रक के पास घनी रंजित जालिकावत संरचना तंत्रिका कोशिका में देखी। जिन्हें बाद में उनके नाम पर गॉल्जीकाय कहा गया (चित्र 8.6)। यह बहुत सारी चपटी डिस्क आकार की थैली या कुंड से मिलकर बनी होती है जिनका व्यास 0.5 माइक्रोमीटर से 1.0 माइक्रोमीटर होता है। ये एक दूसरे के समानांतर ढेर के रूप में मिलते हैं जिसे जालिकाय कहते हैं। गॉल्जीकाय में कुंडों की संख्या अलग-अलग होती है। गॉल्जीकुंड केंद्रक के पास सकेंद्रित व्यवस्थित होते हैं, जिनमें निर्माणकारी सतह (उन्नतोदर सिस) व परिपक्व सतह (उत्तलावतल ट्रांस) होती है। अंगक सिस व ट्रांस सतह पूर्णतया अलग होते हैं; लेकिन आपस में जुड़े रहते हैं।

गॉल्जीकाय का मुख्य कार्य द्रव्य को संवेष्टित कर अंतर-कोशिकी लक्ष्य तक पहुँचाना या कोशिका के बाहर स्रवण करना है। संवेष्टित द्रव्य अंतप्रद्रव्यी जालिका से पुटिका के रूप में गॉल्जीकाय के सिस सिरे से संगठित होकर परिपक्व सतह की ओर गति करते हैं। इससे स्पष्ट है कि गॉल्जीकाय का अंतर्द्रव्यी जालिका से निकटतम संबंध है। अंतर्द्रव्यी जालिका पर उपस्थित राइबोसोम द्वारा प्रोटीन का संश्लेषण होता है जो गॉल्जीकाय के ट्रांस सिरे से निकलने के पूर्व इसके कुंड में रूपांतरित हो जाते हैं। गॉल्जीकाय ग्लाइको प्रोटीन व ग्लाइकोलिपिड निर्माण का प्रमुख स्थल है।

8.5.3.3 लयनकाय (लाइसासोम)

यह झिल्ली पुटिका संरचना होती है जो संवेष्टन विधि द्वारा गॉल्जीकाय में बनते हैं। पृथकीकृत लयनकाय पुटिकाओं में सभी प्रकार की जल-अपघटकीय एंजाइम (जैसे-हाइड्रोलेजेज लाइपेसेज, प्रोटोएसेज व कार्बोडाइड्रेजेज) मिलतें हैं जो अम्लीय परिस्थितियों में सर्वाधिक सक्रिय होते हैं। ये एंजाइम कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, लिपिड, न्यूक्लिक अम्ल आदि के पाचन में सक्षम हैं।

8.5.3.4 रसधानी (वैक्यौल)

कोशिकाद्रव्य में झिल्ली द्वारा घिरी जगह को रसधानी कहते हैं। इनमें पानी, रस, उत्सर्जित पदार्थ व अन्य उत्पाद जो कोशिका के लिए उपयोगी नहीं है, भी इसमें मिलते हैं। रसधानी एकल झिल्ली से आवृत्त होती है जिसे टोनोप्लास्ट कहते हैं। पादप कोशिकाओं में यह कोशिका का 90 प्रतिशत स्थान घेरता है।

पौधों में बहुत से आयन व दूसरे पदार्थ सांद्रता प्रवणता के विपरीत टफेनोप्लास्ट से होकर रसधानी में अभिगमित होते हैं, इस कारण से इनकी सांद्रता रसधानी में कोशिकाद्रव्य की अपेक्षा काफी अधिक होती है।

अमीबा में **संकुचनशील रसधानी** उत्सर्जन के लिए महत्वपूर्ण है। बहुत सारी कोशिकाओं जैसे आद्यजीव में **खाद्य रसधानी** का निर्माण खाद्य पदार्थों को निगलने के लिए होता है।

8.5.4 सूत्रकणिका (माइटोकोंड्रिया)

सूत्रकणिका को जब तक विशेष रूप से अभिरंजित नहीं किया जाता तब तक सूक्ष्मदर्शी द्वारा इसे आसानी से नहीं देखा जा सकता है। प्रत्येक कोशिका में सूत्रकणिका की संख्या भिन्न होती है। यह उसकी कार्यिकी सक्रियता पर निर्भर करती है। ये आकृति व आकार में भिन्न होती है। यह तश्तरीनुमा बेलनाकार आकृति की होती है जो 1.0-4.1 माइक्रोमीटर लंबी व 0.2-1 माइक्रोमीटर (औसत 0.5 माइक्रोमीटर) व्यास की होती है। सूत्रकणिका एक दोहरी झिल्ली युक्त संरचना होती है, जिसकी बाहरी झिल्ली व भीतरी झिल्ली इसकी अवकाशिका को दो स्पष्ट जलीय कक्षों - बाह्य कक्ष व भीतरी कक्ष में विभाजित करती है। भीतरी कक्ष जो घने व समांगी पदार्थ से भरा होता है। **आधात्री** (मैट्रिक्स) कहते हैं। बाह्यकला सूत्रकणिका की बाह्य सतत सीमा बनाती है। इसकी अंतझिल्ली कई आधात्री की तरफ अंतरवलन बनाती है जिसे क्रिस्टी (एक वचन-क्रिस्टो) कहते हैं (चित्र 8.7)। क्रिस्टी इसके क्षेत्रफल को बढ़ाते हैं। इसकी दोनों झिल्लयों में इनसे संबंधित विशेष एंजाइम मिलते हैं, जो सूत्रकणिका के कार्य से संबंधित हैं। सूत्रकणिका का वायवीय श्वसन से संबंध होता हैं। इनमें कोशिकीय ऊर्जा एटीपी के रूप में उत्पादित होती हैं। इस कारण से सूत्रकणिका को कोशिका का शक्ति गृह कहते हैं। सूत्रकणिका के आधात्री में एकल वृत्ताकार डीएनए अणु व कुछ आरएनए राइबोसोम्स (70s) तथा प्रोटीन संश्लेषण के लिए आवश्यक घटक मिलते हैं। सूत्रकणिका विखंडन द्वारा विभाजित होती है।

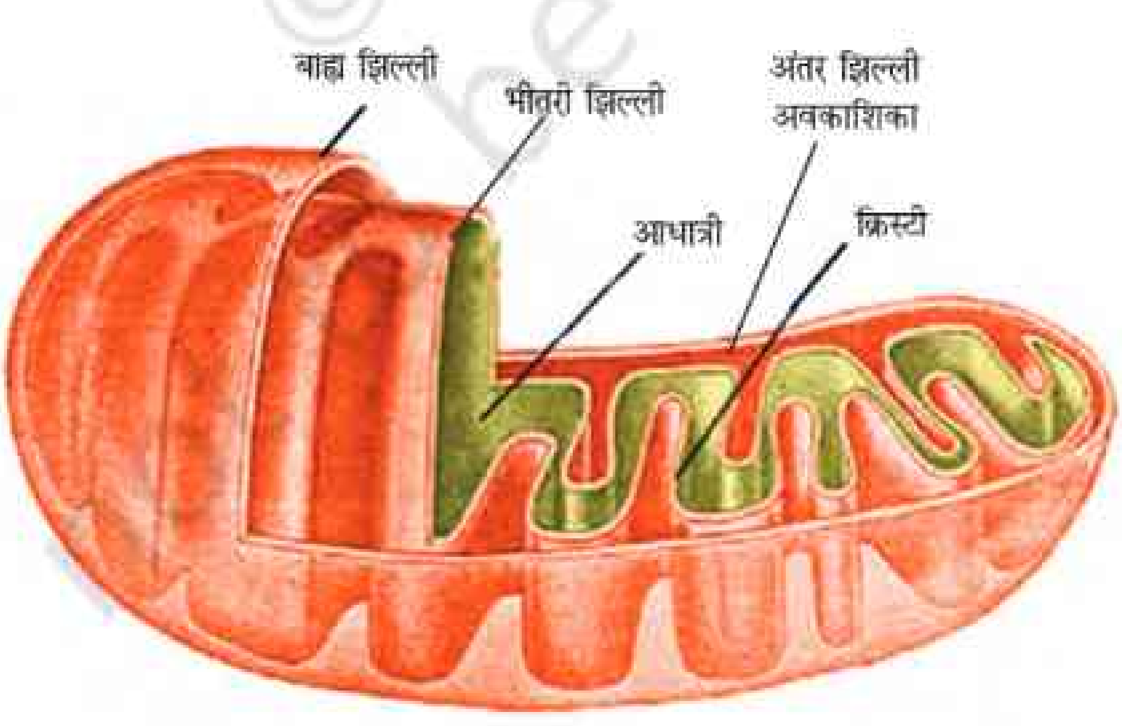

चित्र 8.7 सूत्रकणिका की संरचना (अनुदैर्ध्य काट)

8.5.5 लवक (प्लास्टिड)

लवक सभी पादप कोशिकाओं एवं कुछ प्रोटोजोआ जैसे यूग्लिना में मिलते हैं। ये आकार में बड़े होने के कारण सूक्ष्मदर्शी से आसानी से दिखाई पड़ते हैं। इसमें विशिष्ट प्रकार के वर्णक मिलने के कारण पौधे भिन्न-भिन्न रंग के दिखाई पड़ते हैं। विभिन्न प्रकार के वर्णकों के आधार पर लवक कई तरह के होते हैं जैसे-**हरित लवक**, **वर्णीलवक** व **अवर्णीलवक**।

हरित लवकों में **पर्णहरित** वर्णक व केरोटिनॉइड वर्णक मिलते हैं जो प्रकाश-संश्लेषण के लिए आवश्यक प्रकाशीय ऊर्जा को संचित रखने का कार्य करते हैं। वर्णीलवकों में वसा विलेय **केरोटिनॉइड** वर्णक जैसे- केरोटीन, जैंथोफिल व अन्य दूसरे मिलते हैं। इनके कारण पादपों में पीले, नारंगी व लाल रंग दिखाई पड़ते हैं। अवर्णी लवक विभिन्न आकृति एवं आकार के रंगहीन लवक होते हैं जिनमें खाद्य पदार्थ संचित रहते हैं: **मंडलवक** में मंड के रूप में कार्बोहाइड्रेट संचित होता है; जैसे- आलू; **तेल लवक** में तेल व वसा तथा **प्रोटीन लवक** में प्रोटीन का भंडारण होता है।

हरे पौधों के अधिकतर हरितलवक पत्ती की पर्णमध्योतक कोशिकाओं में पाए जाते हैं। हरित लवक लेंस के आकार के अंडाकार, गोलाकार, चक्रिक व फीते के आकार के अंगक होते हैं जो विभिन्न लंबाई (5-10 माइक्रोमीटर) व चौड़ाई (2-4 माइक्रोमीटर) के होते हैं। इनकी संख्या भिन्न हो सकती है जैसे प्रत्येक कोशिका में एक *(क्लेमाइडोमोनास-हरितशैवाल)* से 20 से 40 प्रति कोशिका पर्णमध्योतक कोशिका हो सकती है।

सूत्रकणिका की तरह हरित लवक द्विझिल्लिकायुक्त होते हैं। उपरोक्त दो में से इसकी भीतरी लवक झिल्ली अपेक्षाकृत कम पारगम्य होती है। हरितलवक के अंत:झिल्ली से घिरे हुए भीतर के स्थान को पीठिका (स्ट्रोमा) कहते हैं। पीठिका में चपटे, झिल्लीयुक्त थैली जैसी संरचना संगठित होती है जिसे **थाइलेकोइड** कहते हैं (चित्र 8.8)। थाइलेकोइड सिक्कों के चट्टों की भाँति ढेर के रूप में मिलते हैं जिसे ग्रेना (एकवचन-ग्रेनम) या अंतरग्रेना थाइलेकोइड कहते हैं। इसके अलावा कई चपटी झिल्लीनुमा नलिकाएं जो ग्रेना के विभिन्न थाइलेकोइड को जोड़ती है उसे पीठिका पट्टलिकाएं कहते हैं। थाइलेकोइड की झिल्ली एक रिक्त स्थान को घेरे होती है। इसे अवकाशिका कहते हैं। हरितलवक की पीठिका में बहुत एंजाइम मिलते हैं जो कार्बोहाइड्रेट व प्रोटीन संश्लेषण के लिए आवश्यक है। इनमें छोटा, द्विलड़ी, वृत्ताकार डीएनए अणु व राइबोसोम मिलते हैं। हरित लवक थाइलेकोइड में उपस्थित होते हैं। हरित लवक में पाए जाने वाला राइबोसोम (70s) कोशिकाद्रव्यी राइबोसोम (80s) से छोटा होता है।

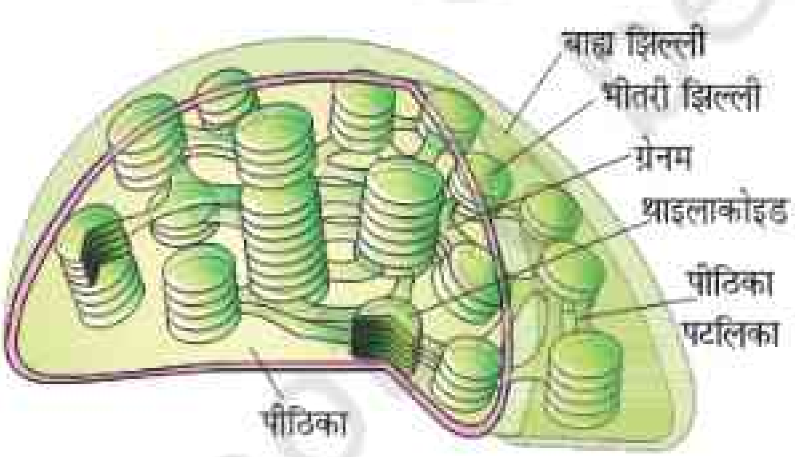

चित्र 8.8: हरित लवक का अनुभागीय दृश्य

8.5.6 राइबोसोम

जार्ज पैलेड (1953) ने इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी द्वारा सघन कणिकामय संरचना राइबोसोम को सर्वप्रथम देखा था। ये राइबोन्यूक्लिक अम्ल व प्रोटीन के बने और किसी भी झिल्ली से घिरे नहीं रहते।

यूकैरियोटिक राइबोसोम 80S व प्रोकैरियोटिक राइबोसोम 70S प्रकार के होते हैं। प्रत्येक राइबोसोम में उपइकाइयाँ बड़ी व छोटी उपइकाई होती है। यहाँ पर 'S' (स्वेडवर्ग इकाई) अवसादन गुणांक को प्रदर्शित करता है। यह अपरोक्ष रूप में आकार व घनत्व को व्यक्त करता है। दोनों 70S व 80S राइबोसोम दो उपइकाइयों से बना होता है।

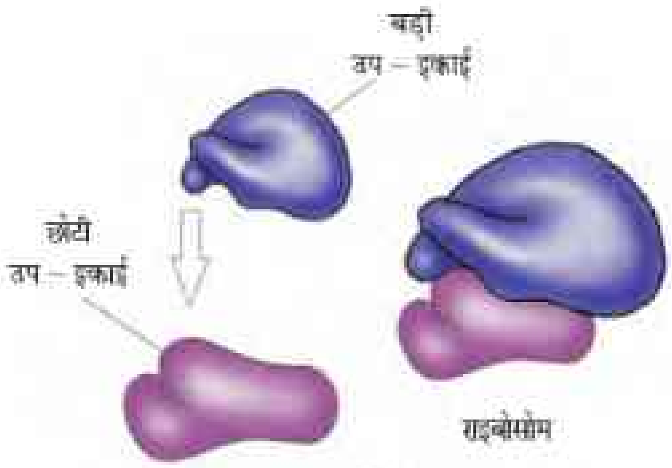

चित्र 8.9: राइबोसोम की संरचना

8.5.7 साइटोपंजर (साइटोस्केलेटन)

प्रोटीनयुक्त विस्तृत जालिकावत तंतु जो कोशिकाद्रव्य में मिलता है उसे **साइटोपंजर** कहते हैं। कोशिका में मिलने वाला साइटोपंजर के विभिन्न कार्य जैसे- यांत्रिक सहायता, गति व कोशिका के आकार को बनाए रखने में उपयोगी है।

8.5.8 पक्ष्माभ व कशाभिका (सीलिया तथा फ्लैजिला)

पक्ष्माभिकाएं (एकवचन-पक्ष्माभ) व कशाभिकाएं (एक वचन-कशाभिका) रोम सदृश कोशिका झिल्ली पर मिलने वाली अपवृद्धि है। पक्ष्माभ एक छोटी संरचना चप्पू की तरह कार्य करती है, जो कोशिका को या उसके चारों तरफ मिलने वाले द्रव्य की गति में सहायक है। कशाभिका अपेक्षाकृत लंबे व कोशिका के गति में सहायक है। प्रोकैरियोटिक जीवाणु में पाई जाने वाली कशाभिका संरचनात्मक रूप में यूकैरियोटिक कशाभिका से भिन्न होती है।

इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी अध्ययन से पता चलता है कि पक्ष्माभ व कशाभिका जीवद्रव्यझिल्ली से ढके होते हैं। इनके कोर को **अक्षसूत्र** कहते हैं, जो कई सूक्ष्म नलिकाओं का बना होता है जो लंबे अक्ष के समानांतर स्थित होते हैं। अक्षसूत्र के केंद्र में एक जोड़ा सूक्ष्म नलिका मिलती है और नौ द्विक अरीय परिधि की ओर व्यवस्थित सूक्ष्मनलिकाएं होती हैं। अक्षसूत्र की सूक्ष्मनलिकाओं की इस व्यवस्था को 9+2 प्रणाली कहते हैं (चित्र 8.10)। केंद्रीय नलिका सेतु द्वारा जुड़े हुए एवं केंद्रीय आवरण द्वारा ढके होते हैं, जो परिधीय द्विक के प्रत्येक नलिका को अरीय दंड द्वारा जोड़ते हैं। इस प्रकार नौ अरीय तान (छड़) बनती

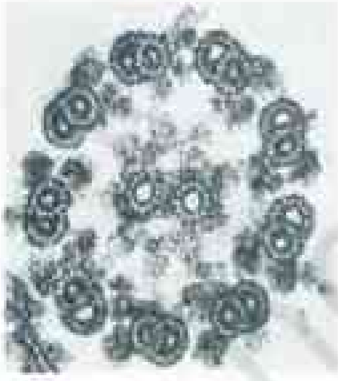
(अ)

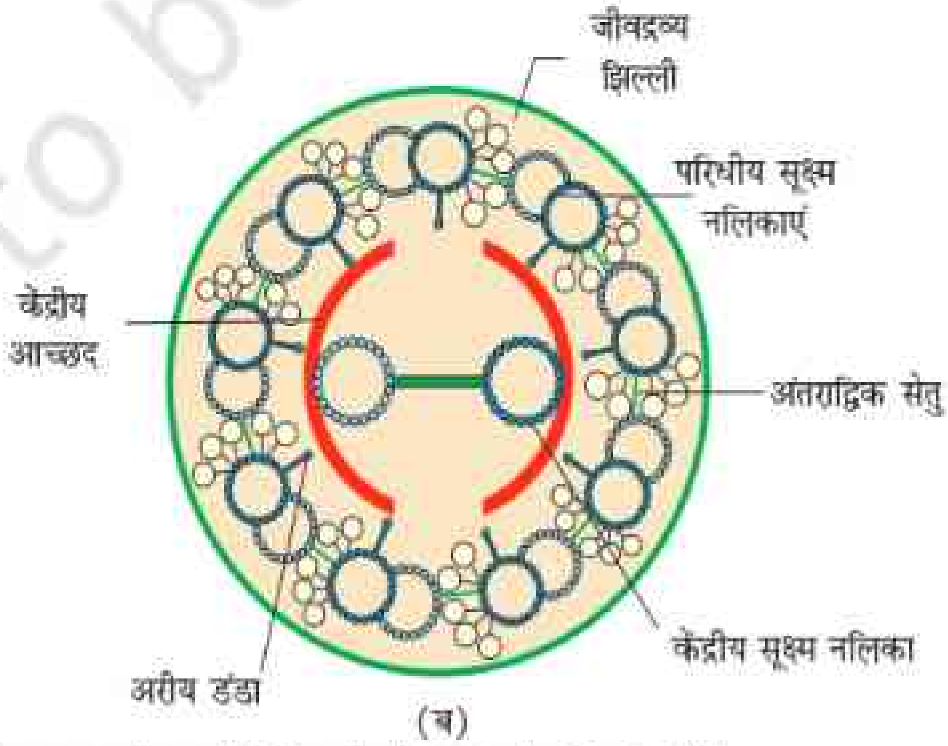

(ब)

चित्र 8.10 पक्ष्माभ/कशाभिका का अनुभाग जो विभिन्न भागों (अ) इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मलेखी (ब) आंतरिक संरचना का चित्रात्मक प्रदर्शन करता है

हैं। परिधीय द्विक सेतु द्वारा आपस में जुड़े होते हैं। दोनों पक्ष्माभ व कशाभिका तारक केंद्र सदृश संरचना से बाहर निकलते हैं जिसे आधारीकाय कहते हैं।

8.5.9 तारककाय व तारककेंद्र (सैन्ट्रोसोम तथा सैन्ट्रीयोल)

तारककाय वह अंगक है जो दो बेलनाकार संरचना से मिलकर बना होता है, जिसे तारककेंद्र कहते हैं। यह अक्रिस्टलीय परिकेंद्रीय द्रव्य से घिरा होता है। दोनों तारककेंद्र तारककाय में एक दूसरे के लंबवत् स्थित होते हैं, जिसमें प्रत्येक की संरचना बैलगाड़ी के पहिए जैसी होती है। तारककेंद्र सख्या में नौ समान दूरी पर स्थित परिधीय ट्यूब्यूलिन सूत्रों से बने होते हैं। प्रत्येक परिधीय सूत्रक एक त्रिक होते हैं। पास के त्रिक आपस में जुड़े होते हैं। तारककेंद्र का अग्र भीतरी भाग प्रोटीन का बना होता है जिसे **धुरी** कहते हैं, यह परिधीय त्रिक के नलिका से प्रोटीन से बने अरीय **दंड** से जुड़े होते हैं। तारककेंद्र पक्ष्माभ व कशाभिका का आधारीकाय बनाता है और तर्कुतंतु जंतु कोशिका विभाजन के उपरांत तर्कु उपकरण बनाता है।

8.5.10 केंद्रक (न्यूक्लिअस)

कोशिकीय अंगक केंद्रक की खोज सर्वप्रथम रार्बट ब्राउन ने 1831 से पूर्व की थी। बाद में फ्लेमिंग ने केंद्रक में मिलने वाले पदार्थ जो क्षारीय रंग से रंजित हो जाता है उसे **क्रोमोटीन** का नाम दिया।

अंतरकाल अवस्था केंद्रक (कोशिका केंद्रक जिसका विभाजन नहीं हो रहा हो) अत्याधिक फैली हुई व विस्तृत केंद्रकीय प्रोटीन तंतु की बनी होती है जिसे क्रोमोटीन कहते हैं, केंद्रकीय आधात्री में एक या अधिक गोलाकार संरचनाएं मिलती है जिसे **केंद्रिक** कहते हैं (चित्र 8.11)। इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि केंद्रक आवरण दो समानांतर झिल्लियों से बना होता है, जिनके बीच 10 से 50 नैनोमीटर का रिक्त स्थान पाया जाता है **जिसे परिकेंद्रकी** अवकाश कहते हैं। यह आवरण केंद्रक में मिलने वाले द्रव्य व कोशिकाद्रव्य के बीच अवरोध का काम करता है। बाह्य झिल्ली सामान्यतया अंतर्द्रव्यी जलिका से सतत रूप से जुड़ी रहती है व इस पर राइबोसोम भी जुड़े रहते हैं। निश्चित स्थानों पर केंद्रक आवरण छिद्र बनने के कारण विच्छिन्न हो जाता है। यह छिद्र केंद्रक आवरण की दोनों झिल्लियों के संगलन से बनता है। इन छिद्रों से होकर आरएनए व प्रोटीन अणु केंद्रक में कोशिकाद्रव्य व कोशिकाद्रव्य से केंद्रक की ओर आते-जाते रहते हैं। साधारणतया एक कोशिका में एक ही केंद्रक मिलता है; लेकिन ऐसा देखा गया है कि इनकी संख्या कभी-कभी परिवर्तित होती रहती है। क्या आप कुछ जीवों का नाम बता सकते हैं *जिनकी कोशिका में एक से अधिक केंद्रक मिलते हों?* कुछ परिपक्व कोशिकाएं केंद्रक रहित होती हैं जैसे-स्तनधारी जीवों की रक्ताणु व संवहनी पौधों में चालनी नलिका कोशिका। *क्या तुम मानते हो कि ये कोशिकाएं जीवित हैं?*

चित्र 8.11 केंद्रक की संरचना

केंद्रकीय आधात्री या **केंद्रकद्रव्य** में केंद्रिक व क्रोमेटिन मिलता है। गोलाकार केंद्रिक केंद्रकद्रव्य में

पाया जाता है। केंद्रिका झिल्ली रहित वह संरचना है जिसका द्रव्य केंद्रक से सतत संपर्क में रहता है। यह सक्रिय राइबोसोमस आरएनए संश्लेषण हेतु स्थल होते हैं। जो कोशिकाएं अधिक सक्रिय रूप से प्रोटीन संश्लेषण करती है, उनमें बड़े व अनेक केंद्रिक मिलते हैं।

आप याद करें कि अंतरावस्था केंद्रक में ढीली-ढाली अस्पष्ट न्यूक्लियो प्रोटीन तंतुओं की जालिका मिलती है जिसे क्रोमोटीन कहते हैं। अवस्थाओं व विभाजन के समय केंद्रक के स्थान पर **गुणसूत्र** संरचना दिखाई पड़ती है। क्रोमोटीन में डीएनए तथा कुछ क्षारीय प्रोटीन मिलता है जिसे **हिस्टोन** कहते हैं, इसके अतिरिक्त उनमें इतर हिस्टोन व आरएनए भी मिलता है। मनुष्य की एक कोशिका में लगभग दो मीटर लंबा डीएनए सूत्र 46 गुणसूत्रों (23 जोड़ों) में बिखरा होता है। आप गुणसूत्र में डीएनए का संवेष्टन (पेकेजिंग) कक्षा 12 वीं में विस्तृत रूप में अध्ययन करेंगे।

गुणसूत्र सिर्फ विभाजक कोशिकाओं में दिखाई देते हैं। प्रत्येक गुणसूत्र में एक प्राथमिक संकीर्णन मिलता है जिसे **गुणसूत्रबिंदु** (सेन्ट्रोमियर) भी कहते हैं। इस पर बिंब आकार की संरचना मिलती है जिसे **काइनेटोकोर** कहते हैं (चित्र 8.12)। तारककाय, गुणसूत्र के दोनों अर्द्धगुण सूत्रों के एक बिंदु पर पकड़ कर रखना है। गुणसूत्रबिंदु की स्थिति के आधार पर गुणसूत्रों को चार प्रकारों में विभाजित किया जा सकता है (चित्र 8.13)। **मध्यकेंद्री** (मेट्रासैन्ट्रिक) गुणसूत्र में गुणसूत्रबिंदु गुणसूत्रों के बीचों-बीच स्थित होता है, जिससे गुणसूत्र की दोनों भुजाएं बराबर लंबाई की होती है। **उपमध्यकेंद्री** (सब -मेटासैन्ट्रिक) गुणसूत्र में गुणसूत्रबिंदु गुणसूत्र के मध्य से हटकर होता है जिसके परिणामस्वरूप एक भुजा छोटी व एक भुजा बड़ी होती है। **अग्रबिंदु** (ऐक्रो-सैन्ट्रिक) गुणसूत्र में गुणसूत्रबिंदु इसके बिल्कुल किनारे पर मिलता है। जिससे एक भुजा अत्यंत छोटी व एक भुजा बहुत बड़ी होती है, जबकि **अंतकेंद्री** (टेलोसेंट्रिक) गुणसूत्र में गुणसूत्रबिंदु गुणसूत्र के शीर्ष पर स्थित होता है।

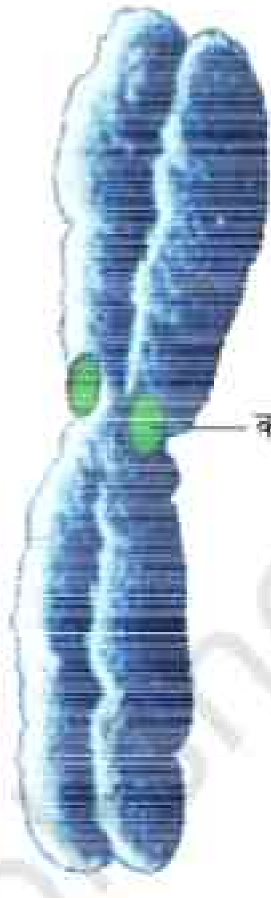

चित्र 8.12 काइनेटोकोर सहित गुणसूत्र

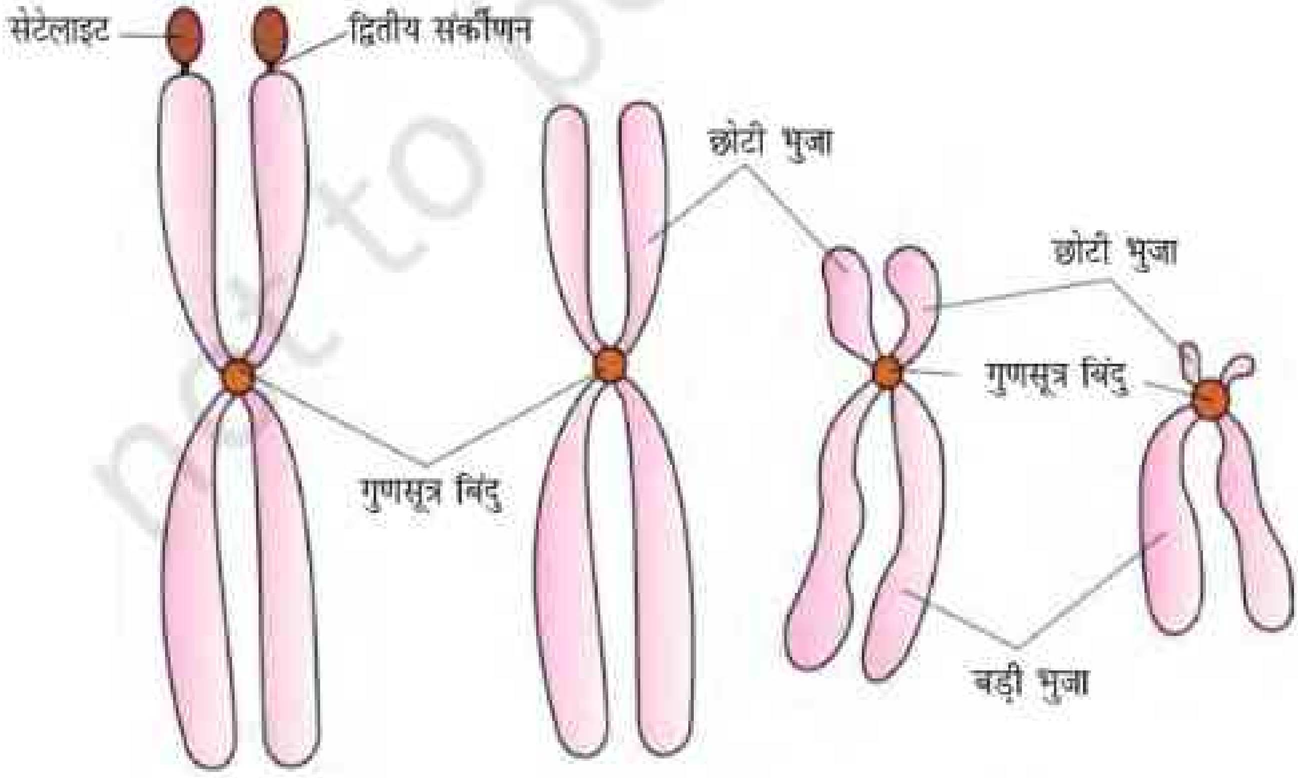

चित्र 8.13 गुणसूत्र बिंदु की स्थिति के आधार पर गुणसूत्रों के प्रकार

8.5.11 सूक्ष्मकाय (माइक्रोबॉडी)

बहुत सारी झिल्ली आवरित सूक्ष्म थैलियाँ जिसमें विभिन्न प्रकार के एंजाइम मिलते हैं, ये पौधों व जंतु कोशिकाओं में पाई जाती हैं।

सारांश

सभी जीव, कोशिका या कोशिका समूह से बने होते हैं। कोशिकाएं आकार व आकृति तथा क्रियाएं/कार्य की दृष्टि से भिन्न होती हैं। झिल्लीयुक्त केंद्रक व अन्य अंगकों की उपस्थिति या अनुपस्थिति के आधार पर कोशिका या जीव को प्रोकैरियोटिक या यूकैरियोटिक नाम से जानते हैं।

एक प्रारूपी यूकैरियोटिक कोशिका, केंद्रक व कोशिकाद्रव्य से बना होता है। पादप कोशिकाओं में कोशिका झिल्ली के बाहर कोशिका भित्ति पाई जाती है। जीवद्रव्यकला चयनित पारगम्य होती है और बहुत सारे अणुओं के परिवहन में भाग लेती है। अंत:झिल्लिकातंत्र के अंतर्गत अंतर्द्रव्यी जालिका, गॉल्जीकाय, लयनकाय व रसधानी होती है। सभी कोशिकीय अंगक विभिन्न एवं विशिष्ट प्रकार के कार्य करते हैं। पादप कोशिका में हरितलवक प्रकाश संश्लेषण के लिए आवश्यक प्रकाशीय उर्जा को संचित रखने का कार्य करते हैं। तारककाय व तारककेंद्र पक्ष्माभ व कशाभिका का आधारीयकाय बनाता है जो गति में सहायक है। जंतु कोशिकाओं में तारककेंद्र कोशिका विभाजन के दौरान तर्कु उपकरण बनाते हैं। केंद्रक में केंद्रिक व क्रोमोटीन का तंत्र मिलता है। यह अंगकों के कार्य को ही नियंत्रित नहीं करता, बल्कि आनुवंशिकी में प्रमुख भूमिका अदा करता है। अत: कोशिका जीवन की संरचनात्मक व क्रियात्मक इकाई होती है।

अंतर्द्रव्यी जालिका नलिकाओं व कुंडों से बनी होती है। ये दो प्रकार की होती हैं, खुरदरी व चिकनी। अंतर्द्रव्यी जालिका पदार्थों के अभिगमन, प्रोटीन-संश्लेषण, लाइपोप्रोटीन संश्लेषण तथा ग्लाइकोजन के संश्लेषण में सहायक होते हैं। गॉल्जीकाय झिल्लियुक्त अंगक है जो चपटे थैलीनुमा संरचना से बने होते हैं। इनमें कोशिकाओं का स्रवण संविष्ट होता है जिनमें सभी प्रकार के वृहद अणुओं के पाचन हेतु एंजाइम मिलते हैं। राइबोसोम प्रोटीन-संश्लेषण में भाग लेते हैं। ये कोशिकाद्रव्य में स्वतंत्र रूप में या अंतर्द्रव्यी जालिका से संबद्ध होते हैं। सूत्रकणिका ऑक्सीकारी फॉस्फोरिलीकरण तथा एडिनोसीनट्राईफास्फेट के निर्माण में सहायक होता है। ये द्विक झिल्ली क्रिस्टी में अंतरवलित होती है। लवक वर्णकयुक्त अंगक हैं जो केवल पादप कोशिकाओं में मिलते हैं। ये द्विक झिल्लीयुक्त रचनाएं हैं। लवक के ग्रेना में प्रकाशीय अभिक्रिया तथा पीठिका में अप्रकाशीय अभिक्रिया संपन्न होती है। हरे रंगीन लवक वर्णकी वर्णक होते हैं जिनमें केरोटीन तथा जैंथोफिल जैसे वर्णक मिलते हैं। पक्ष्माभ तथा कशाभिका कोशिका के गति में सहायक हैं। कशाभिका पक्ष्माभ से लंबे होते हैं। कशाभिका तरंगी गति से चलती है, जबकि पक्ष्माभ डोलनोदन द्वारा गति करता है। केंद्रक द्विक झिल्ली युक्त केंद्रक झिल्ली से घिरा होता है जिसमें केंद्रक छिद्र पाए जाते हैं। भीतरी झिल्ली केंद्रक द्रव्य व क्रोमोटीन पदार्थ को घेरे रहता है। प्राणी कोशिका में तारककेंद्र युग्मित होता है जो एक दूसरे के लंबवत स्थित होते हैं।

अभ्यास

1. इनमें कौन सा सही नहीं है?
   (अ) कोशिका की खोज रार्बट ब्राउन ने की थी।
   (ब) श्लाइडेन व श्वान ने कोशिका सिद्धांत प्रतिपादित किया था।
   (स) वर्चोव के अनुसार कोशिका पूर्वस्थित कोशिका से बनती है।
   (द) एक कोशिकीय जीव अपने जीवन के कार्य एक कोशिका के भीतर करते हैं।
2. नई कोशिका का निर्माण होता है।
   (अ) जीवाणु किण्वन से।
   (ब) पुरानी कोशिकाओं के पुनरुत्पादन से।
   (स) पूर्व स्थित कोशिकाओं से।
   (द) अजैविक पदार्थों से।
3. निम्न के जोड़ा बनाइए :

(अ) क्रिस्टी	(i) पीठिका में चपटे कलामय थैली
(ब) कुंडिका	(ii) सूत्रकणिका में अंतर्वलन
(स) थाइलेकोइड	(iii) गॉल्जी उपकरण में बिंब आकार की थैली

4. इनमें से कौन सा सही है :
   (अ) सभी जीव कोशिकाओं में केंद्रक मिलता है।
   (ब) दोनों जंतु व पादप कोशिकाओं में स्पष्ट कोशिका भित्ति होती है।
   (स) प्रोकैरियोटिक की झिल्ली में आवरित अंगक नहीं मिलते हैं।
   (द) कोशिका का निर्माण अजैविक पदार्थों से नए सिरे से होता है।
5. प्रोकैरियोटिक कोशिका में क्या मीसोसोम होता है? इसके कार्य का वर्णन करें।
6. कैसे उदासीन विलेय जीवद्रव्यझिल्ली से होकर गति करते हैं? क्या ध्रुवीय अणु उसी प्रकार से इससे होकर गति करते हैं? यदि नहीं तो इनका जीवद्रव्यझिल्ली से होकर परिवहन कैसे होता है?
7. दो कोशिकीय अंगकों का नाम बताइए जो द्विकला से घिरे होते हैं। इन दो अंगकों की क्या विशेषताएं है? इनका कार्य व रेखांकित चित्र बनाइए?
8. प्रोकैरियोटिक कोशिका की क्या विशेषताएं हैं?
9. बहुकोशिकीय जीवों में श्रम विभाजन की व्याख्या कीजिए।
10. कोशिका जीवन की मूल इकाई है, इसे संक्षिप्त में वर्णन करें।
11. केंद्रक छिद्र क्या है? इनके कार्य को बताइए।
12. लयनकाय व रसधानी दोनों अंत:झिल्लीमय संरचना है फिर भी कार्य की दृष्टि से ये अलग होते हैं। इस पर टिप्पणी लिखें?
13. रेखांकित चित्र की सहायता से निम्न की संरचना का वर्णन करें- (i) केंद्रक (ii) तारककाय ।
14. गुणसूत्रबिंदु क्या है? कैसे गुणसूत्रबिंदु की स्थिति के आधार पर गुणसूत्र का वर्गीकरण किस रूप में होता है। अपने उत्तर को देने हेतु विभिन्न प्रकार के गुणसूत्रों पर गुणसूत्रबिंदु की स्थिति को दर्शाने हेतु चित्र बनाइए।

अध्याय 9

जैव अणु

9.1 रासायनिक संघटन का विश्लेषण कैसे करें?
9.2 प्राथमिक एवं द्वितीयक उपापचयज
9.3 वृहत् जैव अणु
9.4 प्रोटीन
9.5 पॉलीसैकेराइड
9.6 न्यूक्लीक अम्ल
9.7 प्रोटीन की संरचना
9.8 एंजाइम

इस जीवमंडल में विविध प्रकार के जीव मिलते हैं। मस्तिष्क में यह प्रश्न उठता है कि क्या सभी जीव रासायनिक संघटन की दृष्टि से एक ही प्रकार के तत्वों एवं यौगिकों से मिलकर बने होते हैं? आप रसायन विज्ञान में सीख चुके होगें कि तत्वों का विश्लेषण कैसे करते हैं। यदि पादप व प्राणी ऊतकों एवं सूक्ष्मजीवी लेई में तत्वों का परीक्षण करें तो हमें कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन व अन्य तत्वों की एक सूची प्राप्त होती है। जिनकी मात्रा जीव ऊतकों की प्रति इकाई मात्रा में भिन्न-भिन्न होती है। यदि उपरोक्त परीक्षण निर्जीव पदार्थ जैसे भू-पर्पटी के एक टुकड़े का करें, तब भी हमें तत्वों की उपरोक्त सूची प्राप्त होती है। लेकिन उपरोक्त दोनों सूचियों में क्या अंतर है? सुनिश्चित तौर पर उनमें कोई अंतर नहीं मिलता है। सभी तत्व जो भू-पर्पटी के नमूने में मिलते हैं, वे सभी जीव ऊतकों के नमूने में भी मिलते हैं। फिर भी सूक्ष्म परीक्षण से पता चलता है कि कार्बन व हाइड्रोजन की मात्रा अन्य तत्वों की अपेक्षा किसी भी जीव में भू-पर्पटी से सामान्यतया ज्यादा होती है। (तालिका 9.1)

9.1 रासायनिक संघटन का विश्लेषण कैसे करें ?

इसी तरह से हम पूछ सकते हैं कि जीवों में कार्बनिक यौगिक किस रूप में मिलते हैं? उपरोक्त उत्तर पाने के लिए कोई व्यक्ति क्या करेगा? इसका उत्तर पाने के लिए हमें रासायनिक विश्लेषण करना होगा। हम किसी भी जीव ऊतक (जैसे-सब्जी या यकृत का टुकड़ा आदि) को लेकर खरल व मूसल की सहायता से ट्राइक्लोरोएसिटिक अम्ल के साथ पीसते हैं, जिसके बाद एक गाढ़ा कर्दम (slurry) प्राप्त होता है, पुनः इसे महीन कपड़े में रखकर कसकर निचोड़ने (छानने) के बाद हमें दो अंश प्राप्त होते हैं। एक अंश जो अम्ल में घुला होता है उसे निस्यंद कहते हैं व दूसरा अंश अम्ल में अविलेय है जिसे

धारित कहते हैं। वैज्ञानिकों ने अम्ल घुलनशील भाग में हजारों कार्बनिक यौगिकों को प्राप्त किया। तुम्हें उच्च कक्षाओं में बताया जाएगा कि जीव ऊतकों के नमूनों का विश्लेषण व इनमें मिलने वाले, विशेषकर कार्बनिक यौगिकों की पहचान कैसे की जाती है? किसी निचोड़ में मिलने वाले विशेष यौगिक को उसमें मिलने वाले अन्य यौगिकों से अलग करने के लिए विभिन्न पृथक्करण विधि अपनाते हैं, जब तक कि वह अलग नहीं हो जाता। दूसरे शब्दों में एक वियुक्त एक शुद्ध यौगिक होता है। विश्लेषणात्मक तकनीक का प्रयोग कर किसी भी यौगिक के आण्विकसूत्र व संभावित संरचना के बारे में जानकारी प्राप्त कर सकते हैं। जीव ऊतकों में मिलने वाले सभी कार्बनिक यौगिकों को 'जैव अणु' कहते हैं। लेकिन जीवों में भी अकार्बनिक तत्व व यौगिक मिलते हैं। हम यह कैसे जान पाते हैं? एक थोड़ा भिन्न किंतु भंजक प्रयोग करना पड़ेगा। जीव ऊतकों (पर्ण व यकृत) की थोड़ी मात्रा को तोलकर (यह नम भार कहलाता है) शुष्क कर लें, जिससे संपूर्ण जल वाष्पित हो जाता है। बचे हुए पदार्थ से शुष्क भार प्राप्त होता है। यदि ऊतकों को पूर्ण रूप से जलाया जाए तो सभी कार्बनिक यौगिक ऑक्सीकृत होकर गैसीय रूप (CO_2 व जल वाष्प) में अलग हो जाते हैं। बचे हुए पदार्थ को 'भस्म' कहते हैं। इस भस्म में अकार्बनिक तत्व (जैसे कैल्सियम, मैग्नीसियम आदि) मिलते हैं। अकार्बनिक यौगिक जैसे सल्फेट, फॉस्फेट आदि अम्ल घुलनशील अंश में मिलते हैं। इस कारण से तत्वीय विश्लेषण से किसी जीव ऊतक के तत्वीय संगठन की हाइड्रोजन, ऑक्सीजन, क्लोरीन, कार्बन आदि के रूप में जानकारी मिलती (सारणी 9.1) है। यौगिकों के परीक्षण से जीव ऊतकों में उपस्थित कार्बनिक व अकार्बनिक (तालिका 9.2) यौगिकों के बारे में जानकारी मिलती है। रसायन विज्ञान के दृष्टिकोण से क्रियात्मक समूह जैसे ऐल्डीहाइड, कीटोन एरोमेटिक (Aromatic) यौगिकों आदि की पहचान की जा सकती है किंतु जीव विज्ञान की दृष्टि से इन्हें अमीनो अम्ल, न्यूक्लियोटाइड क्षार, वसा अम्ल इत्यादि में वर्गीकृत करते हैं।

तालिका 9.1 जीव व निर्जीव पदार्थों में पाए जाने वाले तत्वों की तुलना

तत्व	% भार	
	भू-पर्पटी	मनुष्य शरीर
हाइड्रोजन (H)	0.14	0.5
कार्बन (C)	0.03	18.5
ऑक्सीजन (O)	46.6	65.0
नाइट्रोजन (N)	बहुत थोड़ा	3.3
सल्फर (S)	0.03	0.3
सोडियम (Na)	2.8	0.2
कैल्सियम (Ca)	3.6	1.5
मैगनीशियम (Mg)	2.1	0.1
सिलिकॉन (Si)	27.7	नगण्य

* सी.एन. राव द्वारा लिखित 'अंडरस्टैंडिंग केमेस्ट्री' से उद्धरित, विश्वविद्यालय प्रकाशन, हैदराबाद

तालिका 9.2 जीव ऊतकों में पाए जाने वाले अकार्बनिक अवयवों की सूची

घटक	सूत्र
सोडियम	Na^+
पोटैसियम	K^+
कैल्सियम	Ca^{++}
मैगनीसियम	Mg^{++}
जल	H_2O
यौगिक	$NaCl$, $CaCO_3$, PO_4^{3-} , SO_4^{2-}

अमीनो अम्ल कार्बनिक यौगिक होते हैं जिनमें इसके एक ही कार्बन (α-कार्बन) पर एक अमीनो समूह व एक अम्लीय समूह प्रतिस्थापित होते हैं। इस कारण इन्हें (α) एल्फा अमीनो अम्ल कहते हैं। ये प्रतिस्थापित मेथेन हैं। चार प्रतिस्थाई समूह चार संयोजकता स्थल से जुड़े रहते हैं। ये समूह हाइड्रोजन, कार्बोक्सिल समूह, अमीनो समूह तथा भिन्न परिवर्तनशील समूह जिसे R समूह, से व्यक्त करते हैं, पाए जाते हैं। R समूह की प्रकृति के आधार पर अमीनो अम्ल अनेक प्रकार के होते हैं फिर भी प्रोटीन में

उपलब्धता के आधार पर ये 21 प्रकार के होते हैं। प्रोटीन के अमीनो अम्लों में R समूह, हाइड्रोजन (अमीनो अम्ल-ग्लाइसीन), मेथिल समूह (ऐलेनीन), हाइड्रोक्सीमेथिल (सीरिन) आदि हो सकते हैं। 21 में से 3 को चित्र 9.1 में दर्शाया गया है।

अमीनो अम्लों के भौतिक व रासायनिक गुण मुख्यतया अमीनो, कार्बोक्सिल व R क्रियात्मक समूह पर निर्भर है। अमीनो व कार्बोक्सिल समूहों की संख्या के आधार पर अम्लीय (उदाहरण ग्लुटामिक अम्ल), क्षारीय (उदाहरण लाइसिन) और उदासीन (उदाहरण वेलीन) अमीनो अम्ल होते हैं। इसी तरह से एरोमेटिक अमीनो अम्ल (टायरोसीन, फेनिलऐलेनीन, ट्रिप्टोफान) होते हैं। अमीनो अम्लों का एक विशेष गुण यह है कि अमीनो ($-NH_2$) व कार्बोक्सिल ($-COOH$) समूह आयनिकरण प्रकृति के होते हैं, अत: विभिन्न pH वाले विलयनों में अमीनो अम्लों की संरचना परिवर्तित होती रहती है।

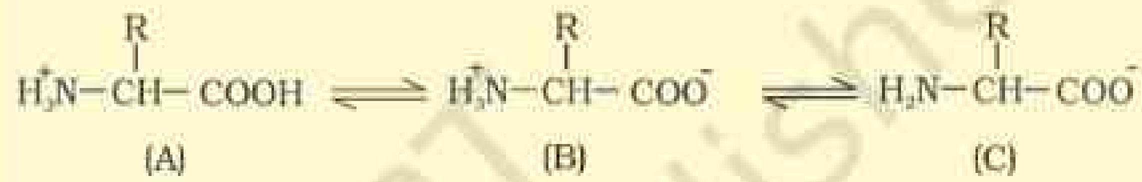

B को ज्विटर आयनिक प्रारूप कहते हैं।

साधारणतया लिपिड पानी में अघुलनशील होते हैं। ये साधारण वसा अम्ल हो सकते हैं। वसा अम्ल में एक कार्बोक्सिल समूह होता है, जो एक R समूह से जुड़ा होता है। R समूह मेथिल ($-CH_3$), अथवा ऐथिल $-C_2H_5$ या उच्च संख्या वाले $-CH_2$ समूह (1 कार्बन से 19 कार्बन)। उदाहणार्थ - पाल्मिटिक अम्ल में कार्बोक्सिल कार्बन के सहित 16 कार्बन मिलते हैं। ऐरेकिडोनिक अम्ल में कार्बोक्सिल कार्बन सहित 20 कार्बन परमाणु होते हैं। वसा अम्ल संतृप्त (बिना द्विक आबंध) या असंतृप्त (एक या एक से अधिक c=c द्विआबंध) प्रकार के हो सकते हैं। दूसरा साधारण लिपिड ग्लिसरॉल है जो ट्राइहाइड्रिक्ससी प्रोपेन होता है। बहुत सारे लिपिड्स में ग्लिसरॉल व वसा अम्ल दोनों मिलते हैं। यहाँ पर वसा अम्ल ग्लिसरॉल से एस्टरीकृत होता है तब वे मोनोग्लिसरॉइड, डाइग्लिसरॉइड तथा ट्राई ग्लिसरॉइड हो सकते हैं। गलन बिंदु के आधार पर वसा या तेल (oils) कहलाते हैं। तेलों का गलनांक अपेक्षाकृत कम होता है (जैसे जिंजेली तेल)। अत: सर्दियों में तेल के रूप में होते हैं। क्या आप बाजार में उपलब्ध वसा की पहचान कर सकते हैं? कुछ लिपिड्स में फॉस्फोरस व एक फॉस्फोरिलीकृत कार्बनिक यौगिक मिलते हैं। ये फॉस्फोलिपिड्स हैं, जो कोशिका झिल्ली में मिलते हैं जैसे लेसिथिन। कुछ ऊतक विशेष तौर तंत्रिका ऊतक में अधिक जटिल संरचना के लिपिड पाए जाते हैं।

जीवों में बहुत सारे कार्बनिक यौगिक विषमचक्रीय वलय युक्त भी होते हैं। इनमें से कुछ नाइट्रोजन क्षार-ऐडेनीन, ग्वानीन, साइटोसीन, यूरेसिल व थायमीन हैं। ये शर्करा से जुड़कर न्यूक्लिओसाइड बनाते हैं। यदि इनसे फॉस्फेट समूह भी शर्करा से इस्टरीकृत रूप में हो तो इन्हें न्यूक्लियोटाइड कहते हैं। ऐडेनोसिन, ग्वानोसिन, थायमिडिन, यूरिडिन व

© NCERT not to be republished

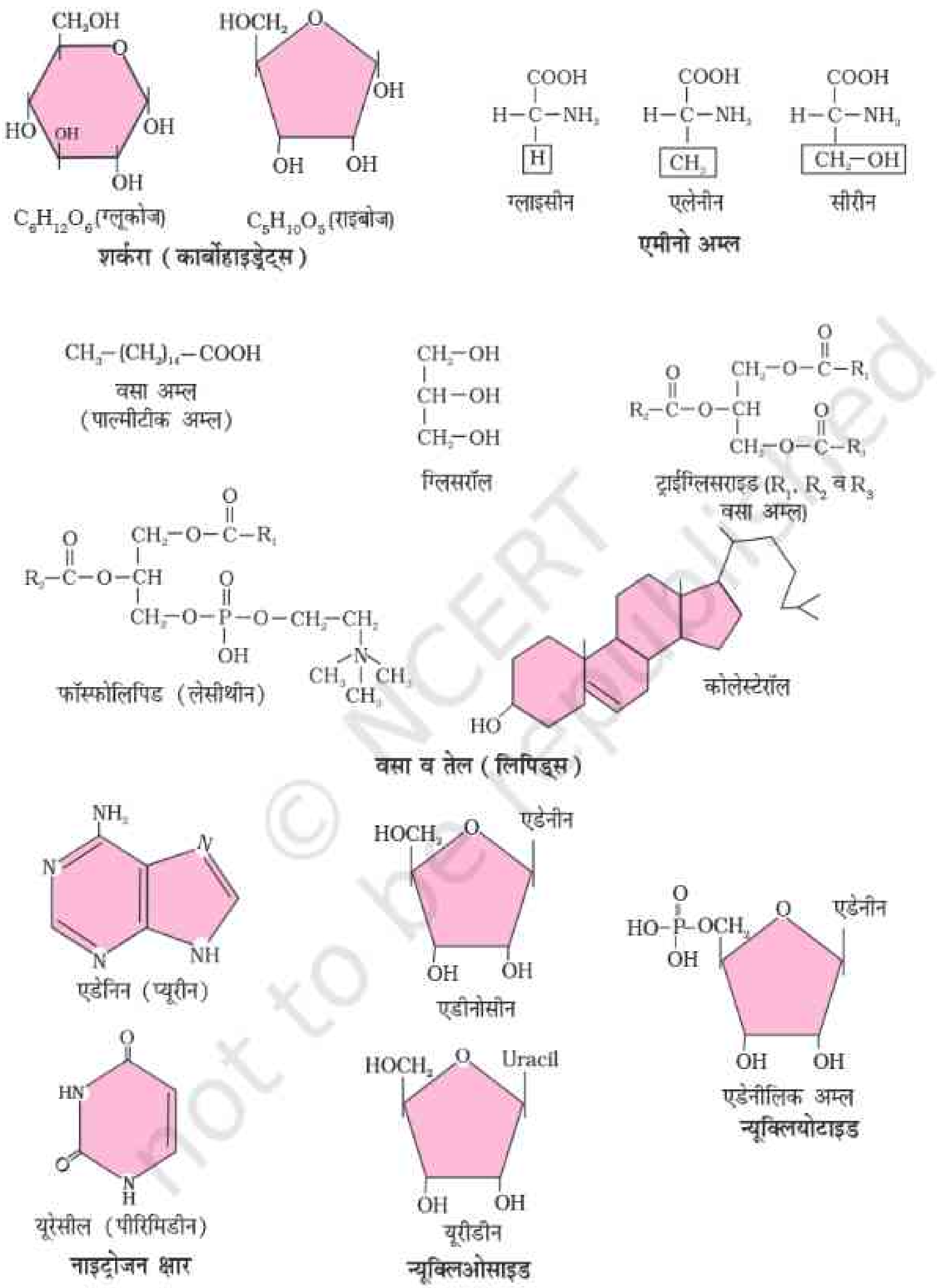

चित्र 9.1 जीव ऊतकों में पाए जाने वाले कम अणुभार के कार्बनिक यौगिकों का चित्रात्मक प्रदर्शन

साइटिडिन न्यूक्लियोसाइड हैं। ऐडेनिलिक अम्ल, थायमेडिलिक अम्ल, ग्वानिलिक अम्ल, यूरिडिलिक अम्ल व सिटिडिलिक अम्ल न्यूक्लियोटाइड्स हैं। न्यूक्लीक अम्ल जैसे डीएनए (DNA) व आरएनए आनुवंशिक पदार्थ के रूप में कार्य करते हैं।

9.2 प्राथमिक व द्वितियक उपापचयज

रसायन विज्ञान की एक महत्वपूर्ण शाखा में जीवों के हजारों बड़े-छोटे यौगिकों का विलगन (पृथक्करण) किया जाता है। उनकी संरचना निर्धारित की जाती है और संभव हो तो उन्हें संश्लेषित किया जाता है। यदि कोई जैव अणुओं की एक तालिका बनाए तो उनमें हजारों कार्बनिक यौगिक जैसे अमीनो अम्ल, शर्करा इत्यादि पाए जाएंगे। कुछ कारणों से जिन्हें खंड 9.10 में दिया गया है, को हम उपापचयज कहते हैं। उपरोक्त सभी श्रेणी के इन यौगिकों की उपस्थिति को जिन्हें (चित्र 9.1) में दर्शाया गया है। कोई व्यक्ति प्राणि ऊतकों में ज्ञात कर सकता है। इन्हें प्राथमिक उपापचयज कहते हैं। जब कोई पादप, कवक व सूक्ष्म जीवी कोशिकाओं का विश्लेषण करें तो उसे इन प्राथमिक उपापचयजों के अतिरिक्त हजारों यौगिक जैसे- एल्केलायड्, फ्लेवेनोयड्स, रबर, वाष्पशील तेल, प्रतिजैविक, रंगीन वर्णक, इत्र, गोंद, मसाले मिलते हैं। इन्हें **द्वितीयक उपापचयज** कहते हैं (तालिका 9.3)। प्राथमिक उपापचयज ज्ञात कार्य करते हैं व सामान्य कार्यिकी प्रक्रिया में इनकी भूमिका भी ज्ञात है, किंतु हम इस समय सभी द्वितीयक उपापचयजों की (जिन प्राणियों में ये पाए जाते हैं, में उनकी) भूमिका या कार्य नहीं जानते। जबकि इनमें से बहुत (जैसे- रबर, औषधि, मसाले, इत्र व वर्णक) मनुष्य के कल्याण में उपयोगी हैं। कुछ द्वितीयक उपापचयजों का पारिस्थितिक महत्व है। आप बाद के अध्यायों व वर्षों में इनके बारे में विस्तृत रूप से अध्ययन करेंगे।

तालिका 9.3 कुछ द्वितीयक उपापचयज

वर्णक	कैरोटीनाएड्स, एंथोसाइनिन्स, आदि
एल्केलायड्	मार्फीन, कोडीन, आदि
टेरपेनाइड्स	मोनोटरपींस, डाइटरपींस आदि
आवश्यक तेल	नींबूघास तेल, आदि
टॉक्सीन	एब्रिन, रिसीन
लेक्टिन्स	कोनकेनेवेलीन ए
ड्रग्स	वीनब्लेस्टीन, करकुमीन आदि
बहुलक पदार्थ	रबर, गोंद, सेलुलोज

9.3 वृहत् जैव अणु

अम्ल घुलनशील भाग में पाए जाने वाले सभी यौगिकों की एक सामान्य विशेषता है कि इनका अणुभार 18 से लगभग 800 डाल्टॉन के आस-पास होता है।

अम्ल अविलेय अंश में केवल चार प्रकार के कार्बनिक यौगिक जैसे प्रोटीन, न्यूक्लीक अम्ल, पॉलीसैकेराइड्स व लिपिड्स मिलते हैं। लिपिड्स के अतिरिक्त इस श्रेणी के यौगिकों का अणु भार दस हजार डाल्टॉन या इसके ऊपर होता है। इस कारण से जैव अणु अर्थात् जीवों में मिलने वाले रासायनिक यौगिक दो प्रकार के होते हैं। एक वे हैं जिनका अणुभार एक हजार डाल्टॉन से कम होता है; उन्हें सामान्यतया सूक्ष्मअणु या जैव अणु कहते हैं; जबकि जो अम्ल अविलेय अंश में पाए जाते हैं; उन्हें वृहत् अणु या **वृहत् जैव अणु** कहते हैं।

लिपिड्स के अतिरिक्त अविलेय अंशों में पाए जाने वाले अणु बहुलक पदार्थ होते हैं। लिपिड्स जिनके अणुभार 800 से अधिक नहीं होते, वे अम्ल अविलेय अंश या वृहत् आण्विक अंश की श्रेणी में क्यों आते हैं? वास्तव में लिपिड्स कम अणुभार के यौगिक होते हैं, वे ऐसे ही नहीं मिलते, बल्कि कोशिका झिल्ली और दूसरी झिल्लियों में पाए जाते हैं। जब हम ऊतकों को पीसते हैं तब कोशकीय संरचना विघटित हो जाती है। कोशिकाझिल्ली व अन्य दूसरी झिल्लियाँ टुकड़ों में विखंडित हो जाती हैं, तथा पुटिका बनाती हैं जो जल में घुलनशील नहीं हैं। इस कारण से इन झिल्लियों के पुटिका के रूप में टुकड़े अम्ल अविलेय भाग के साथ पृथक् हो जाते हैं, जो वृहत् आण्विक अंश का भाग होते हैं। सही अर्थ में लिपिड्स वृहत् अणु नहीं है। अम्ल विलेय अंश वास्तव में कोशिका द्रव्य संगठन का भाग है। कोशिका द्रव्य व अंगकों के वृहत् अणु अम्ल अविलेय अंश होते हैं। ये दोनों आपस में मिलकर जीव ऊतकों या जीवों का संगठन बनाते हैं।

संक्षेप में, यदि जीव ऊतकों में पाए जाने वाले रासायनिक संगठन को बाहुल्यता की दृष्टि से श्रेणीबद्ध किया जाए तो हम पाते हैं कि जीवों में पानी सबसे सर्वाधिक बाहुल्यता से मिलने वाला रसायन है। (तालिका 9.4)

तालिका 9.4 कोशिकाओं का औसत संगठन

अवयव	कुल कोशिकीय भार का प्रतिशत
जल	70-90
प्रोटीन	10-15
कार्बोहाइड्रेट	3
लिपिड	2
न्युक्लीक अम्ल	5-7
आयन	1

9.4 प्रोटीन

प्रोटीन पॉलीपेप्टाइड होते हैं। ये अमीनो अम्ल की रेखीय शृंखलाएं होती हैं, जो पेप्टाइड बंधों से जुड़ी होती हैं; जैसा कि चित्र 9.2 में दर्शाया गया है।

प्रत्येक प्रोटीन अमीनो अम्ल का बहुलक है। अमीनो अम्ल 20 प्रकार के होने से (जैसे-एलेनीन, सिस्टीन, प्रोलीन, ट्रीप्टोफान, लाइसीन आदि) होते हैं। प्रोटीन समबहुलक नहीं, बल्कि विषम बहुलक होते हैं। एक समबहुलक एक एकलक की कई बार आवर्ती के कारण बनता है। अमीनो अम्ल के बारे में यह जानकारी अति महत्वपूर्ण है जैसा कि बाद में पोषण अध्याय में आप पढ़ेंगे कि कुछ अमीनो अम्ल स्वास्थ्य के लिए अति आवश्यक होते हैं, जिनकी आपूर्ति खाद्य पदार्थों के द्वारा होती है। इस तरह आहार की प्रोटीन इन आवश्यक अमीनो अम्ल की स्रोत होती हैं। इस प्रकार से अमीनो अम्ल अनिवार्य या अनानिवार्य हो सकते हैं। अनानिवार्य वे होते हैं जो हमारे शरीर में बनते हैं। जबकि हम अनिवार्य अमीनो अम्लों की आपूर्ति अपने खाद्य पदार्थ से करते हैं। प्रोटीन जीवों में बहुत सारे कार्य करते हैं, इनमें कुछ

तालिका 9.5 कुछ प्रोटीन व इनके कार्य

प्रोटीन	कार्य
कोलेजन	अंतरकोशिकीय भरण पदार्थ
ट्रिपसिन	एंजाइम
इंसुलिन	हार्मोन
प्रतिजीव	संक्रमितकर्ता से लड़ना
ग्राही	संवेदी ग्रहण (सूंघना, स्वाद, हार्मोन आदि)
जी.एल.यू.टी-4	ग्लूकोज का कोशिका में परिवहन

पोषकों के कोशिका झिल्ली से होकर अभिगमन, करने तथा कुछ संक्रामक जीवों से बचाने में सहायक होती हैं और कुछ एंजाइम के रूप में होती हैं (तालिका 9.5)।

9.5 पॉलीसैकेराइड

अम्ल अविलेय भाग में दूसरे श्रेणी के वृहत् अणुओं की तरह पॉलीसैकेराइड्स (कार्बोहाइड्रेड्स) भी पाए जाते हैं। ये पॉलीसैकेराइड्स शर्करा की लंबी शृंखला होती है। यह शृंखला सूत्र की तरह (कपास के रेशे) विभिन्न प्रकार एकल सैकेराइड्स से मिलकर बने होते हैं। उदाहरणार्थ, सेलुलोज एक बहुलक पॉलीसैकेराइड होता है जो एक प्रकार के मोनोसैकेराइड जैसे ग्लूकोज का बना होता है। सेलुलोज एक सम बहुलक है। इसका एक परिवर्तित रूप स्टार्च (मंड) सेलुलोज से भिन्न होता है, लेकिन यह पादप ऊतकों में ऊर्जा भंडार के रूप में मिलता है। प्राणियों में एक अन्य परिवर्तित रूप होता है जिसे ग्लाइकोजन कहते हैं। इनूलिन फ्रुक्टोज का बहुलक है। एक पॉलीसैकेराइड शृंखला (जैसे ग्लाइकोजन) का दाहिना सिरा अपचायक व बाया सिरा अनअपचायक कहलाता है। यह शाखायुक्त होती है, जो व्यंगचित्र जैसी दिखाई देती है (चित्र 9.2)।

मंड में द्वितीयक कुंडलीदार संरचना मिलती है। वास्तव में मंड में आयोडीन अणु इसके कुंडलीय भाग से जुड़े होते हैं। आयोडीन अणु मंड से जुड़कर नीला रंग देता है। सेलुलोज में उपरोक्त जटिल कुंडलियाँ नहीं मिलने के कारण आयोडीन इसमें प्रवेश नहीं कर पाता है।

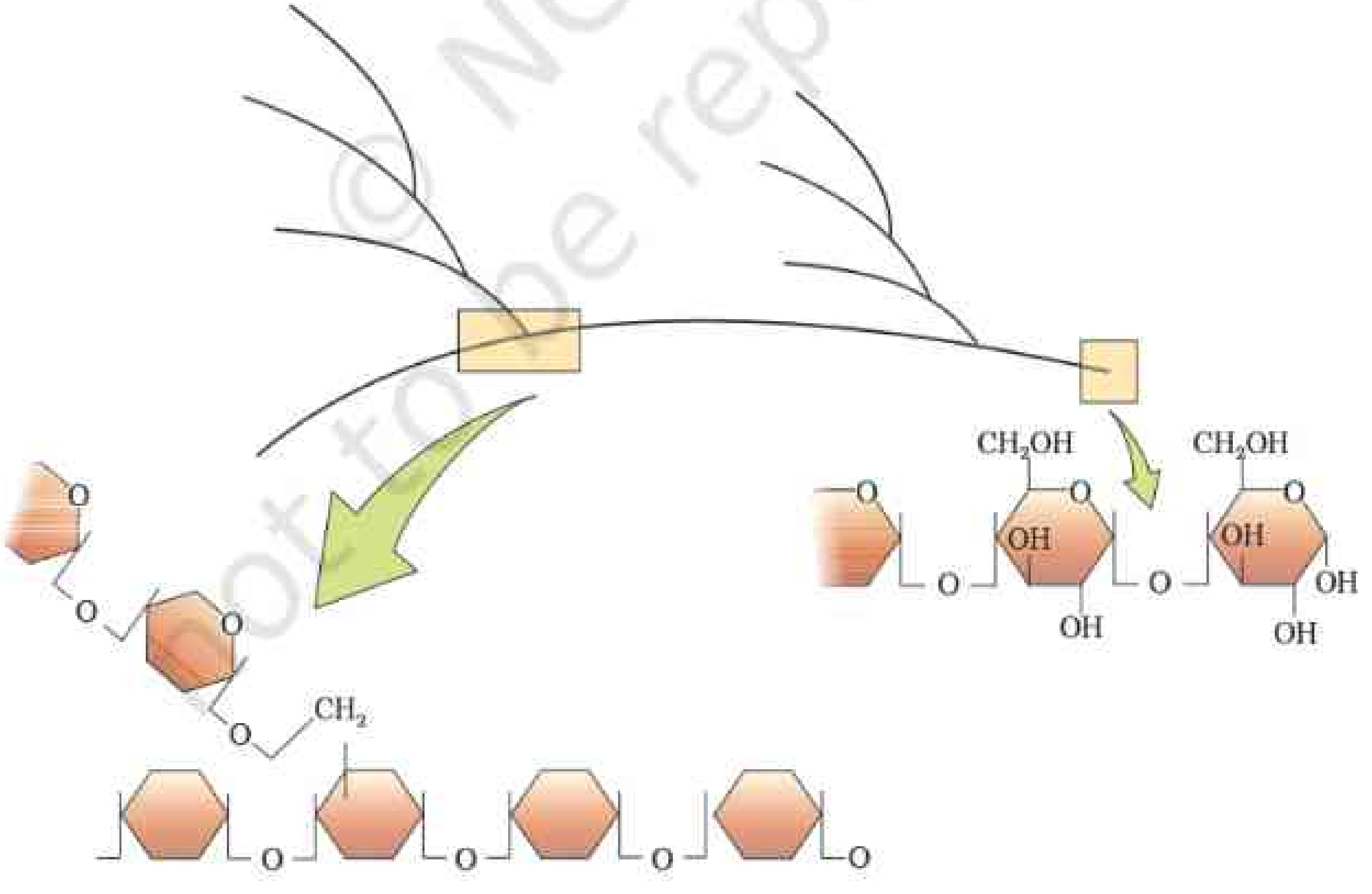

चित्र 9.2 ग्लाइकोजन के अंश का चित्रात्मक प्रदर्शन

पादप कोशिका भित्ति सेलुलोज की बनी होती है। कागज पौधों की लुगदी से बना होता है जो सेलुलोज होता है। रूई के धागे सेलुलोज के बने होते हैं। प्रकृति में बहुत सारे जटिल पॉलीसैकेराइड्स मिलते हैं। ये अमीनो शर्करा व रासायनिक रूप से परिवर्तित शर्करा (जैसे - ग्लूकोसमीन, एनएसीटाइल ग्लूकोसएमीन आदि) से मिलकर बने होते हैं। जैसे आर्थोपोडा के बाह्यकंकाल जटिल सैकेराइड्स काइटीन से बने होते हैं। ये जटिल पॉलीसैकेराइड्स अधिकतर समबहुलक होते हैं।

9.6 न्यूक्लीक अम्ल

दूसरे प्रकार का एक वृहत् अणु जो किसी भी जीव ऊतक के अम्ल अविलेय अंश में मिलता है, उसे न्यूक्लीक अम्ल कहते हैं। यह पॉलीयूक्लीयोटाइडस होते हैं। यह पॉलीसैकेराइड्स व पॉली पेप्टाइड्स के साथ समाविष्ट होकर किसी भी जीव ऊतक या कोशिका का वास्तविक वृहत्आण्विक अंश बनाता है। न्यूक्लीक अम्ल न्यूक्लीयोटाइड से मिलकर बने होते हैं। एक न्यूक्लीयोटाइड तीन भिन्न रासायनिक घटकों से मिलकर बना होता है। पहला विषम चक्रीय यौगिक, दूसरा मोनोसैकेराइड व तीसरा फॉस्फोरिक अम्ल या फॉस्फेट होता है।

यदि चित्र 9.1 को ध्यान दें तो पाएंगे कि न्यूक्लीक अम्ल में विषमचक्रीय यौगिक नाइट्रोजन क्षार जैसे- ऐडेनीन, ग्वानीन, यूरेसील, साइटोसीन व थाईमीन होते हैं। ऐडेनीन व ग्वानीन प्रतिस्थापित प्यूरीन है तथा अन्य तीन प्रतिस्थापित पीरीमिडीन हैं। विषमचक्रीय वलय को क्रमशः प्यूरीन व पीरीमिडिन कहते हैं। पॉलीन्यूक्लीयोटाइड में मिलने वाली शर्करा या तो राइबोज (मोनोसैकेराइड पेंटोज) या डीऑक्सीराइबोज होती है। जिस न्यूक्लीक अम्ल में डीऑक्सीराइबोज मिलता है, उसे डीऑक्सीराइबोन्यूक्लीक अम्ल (डीएनए) व जिसमें राइबोज मिलता है, उसे राइबोन्यूक्लीक अम्ल (आरएनए) कहते हैं।

9.7 प्रोटीन की संरचना

जैसा की पहले बताया गया है कि प्रोटीन विषमबहुलक होते हैं जो अमीनो अम्ल की लड़ियों से बने होते हैं। अणुओं की संरचना का अर्थ विभिन्न संदर्भों में भिन्न-भिन्न होता है। अकार्बनिक रसायन में संरचना का संबंध आण्विकसूत्र से होता है (जैसे $NaCl$, $MgCl_2$ आदि)। कार्बनिक रसायनविज्ञनी जब अणुओं की संरचना (जैसे-बेंजीन, नैफ्थलीन आदि) को व्यक्त करते हैं तो वे हमेशा उसके द्विआयामी दृश्य को व्यक्त करते हैं। भौतिक वैज्ञानी आण्विक संरचना के त्रिआयामी दृश्य को; जबकि जीव विज्ञानी प्रोटीन की संरचना चार तरह से व्यक्त करते हैं। प्रोटीन में अमीनो अम्ल के क्रम व इसके स्थान के बारे में जैसे कि पहला, दूसरा व इसी प्रकार अन्य कौन सा अमीनो अम्ल होगा, की जानकारी को प्रोटीन की **प्राथमिक संरचना** कहते हैं (चित्र 9.3 अ)। कल्पना करें कि प्रोटीन एक रेखा है तो इसके बाएं सिरे पर प्रथम व दाएं सिरे पर अंतिम अमीनो अम्ल मिलता है। प्रथम अमीनो अम्ल को नाइट्रोजनसिरा अमीनो अम्ल कहते हैं, जबकि अंतिम अमीनो अम्ल को कार्बनसिरा (C-सिरा) अमीनो अम्ल कहते हैं।

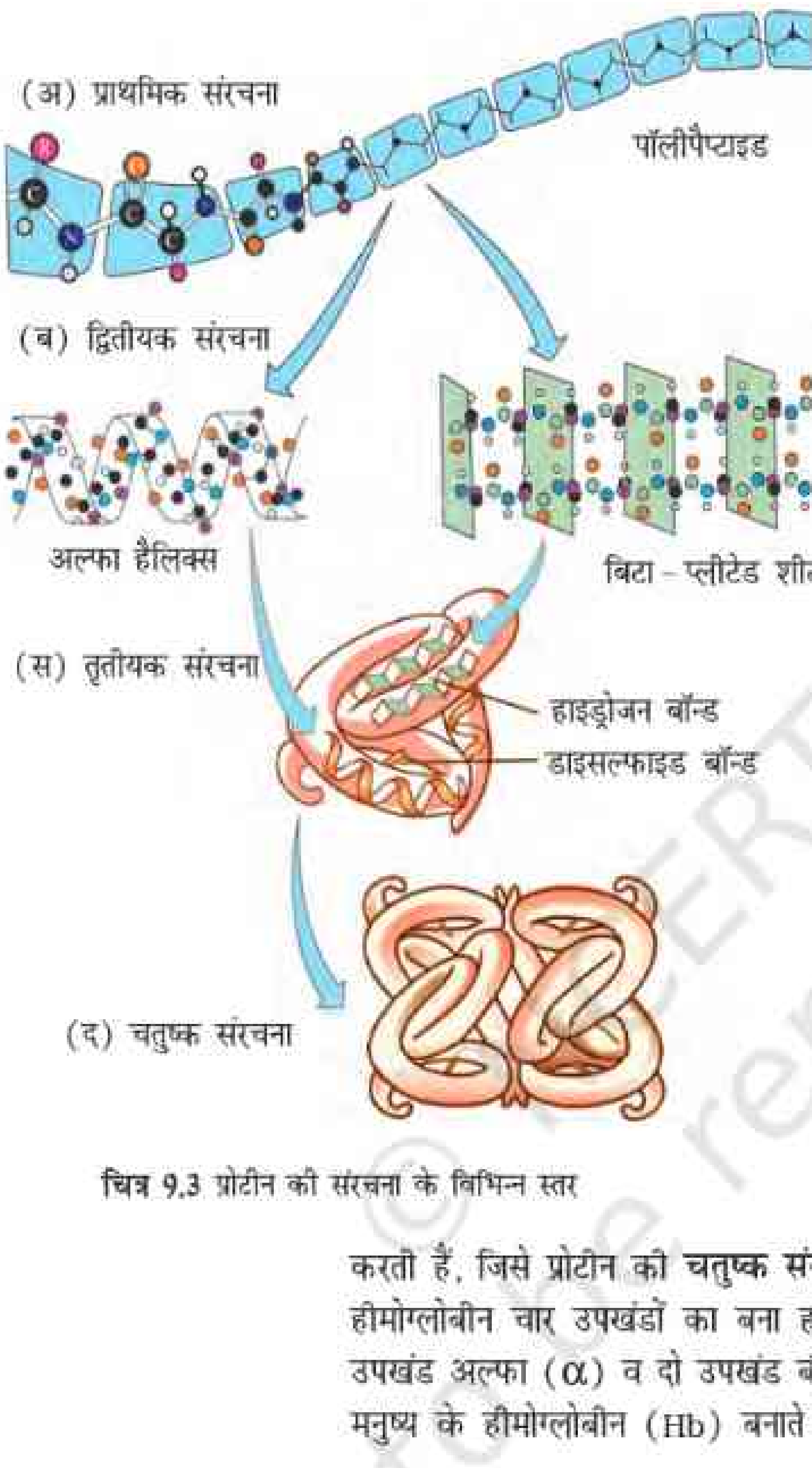

चित्र 9.3 प्रोटीन की संरचना के विभिन्न स्तर

प्रोटीन लड़ी हमेशा फैली हुई दृढ़ छड़ी जैसी रचना नहीं होती है। यह लड़ी कुंडली की तरह मुड़ी होती है (घूमती हुई सीढ़ी की तरह)। वास्तव में प्रोटीन लड़ी कुछ का अंश कुंडली के रूप में व्यवस्थित होता है। प्रोटीन में केवल दक्षिणावर्ती कुंडलियाँ मिलती हैं। अन्य जगहों पर प्रोटीन की लड़ी दूसरे रूप में मुड़ी हुई होती है, इन्हें **द्वितीयक संरचना** (चित्र 9.3 ब) कहते हैं। इसके अतिरिक्त प्रोटीन की लंबी कड़ी अपने ऊपर ही ऊन के एक खोखले गोले के समान मुड़ी हुई होती है जिसे प्रोटीन की **तृतीयक संरचना** कहते हैं (चित्र 9.3 स)। यह प्रोटीन के त्रिआयामी रूप को प्रदर्शित करता है। तृतीयक संरचना प्रोटीन के जैविक क्रियाकलापों के लिए नितांत आवश्यक है।

कुछ प्रोटीन एक से अधिक पॉलीपेप्टाइड्स या उपइकाइयों के समूह होते हैं, जिस ढंग से प्रत्येक पॉलीपेप्टाइड्स या उपइकाई एक दूसरे के सापेक्ष व्यवस्थित होती हैं (उदाहरण, गोले की सीधी लड़ी, गोले एक दूसरे के ऊपर व्यवस्थित होकर घनाभ या पट्टिका की संरचना आदि)। वे प्रोटीन के स्थापत्य को प्रदर्शित करती हैं, जिसे प्रोटीन की **चतुष्क संरचना** (चित्र 9.3 द) कहते हैं। वयस्क मनुष्य का हीमोग्लोबीन चार उपखंडों का बना होता है। इनमें दो एक दूसरे के समान होते हैं। दो उपखंड अल्फा (α) व दो उपखंड बीटा (β) प्रकार के होते हैं, जो आपस में मिलकर मनुष्य के हीमोग्लोबीन (Hb) बनाते हैं।

9.8 एंजाइम

लगभग सभी एंजाइम प्रोटीन होते हैं। कुछ न्यूक्लीक अम्ल एंजाइम की तरह व्यवहार करते हैं, इन्हें राइबोजाइम्स कहते हैं। किसी भी एंजाइम को रेखीय चित्र द्वारा चित्रित कर सकते हैं। एक एंजाइम में भी प्रोटीन की तरह प्राथमिक संरचना मिलती है जो एमीनो अम्ल की शृंखला से बना होता है। प्रोटीन की तरह एंजाइम में भी द्वितीयक व तृतीयक संरचना मिलती है। जब आप तृतीयक संरचना (चित्र 9.3 स) को देखेंगे तो ध्यान देंगे कि प्रोटीन शृंखला का प्रमुख भाग अपने ऊपर स्वयं कुंडलित होता है और शृंखला स्वयं आड़ी-तिरछी स्थित होती है। इससे बहुत सी दरार या थैलियाँ बन जाती हैं। इस प्रकार की थैली को सक्रिय स्थल कहते हैं। एंजाइम का सक्रिय स्थल वे दरार या थैली हैं, जिनमें क्रियाधार आकर व्यवस्थित

होते हैं। इस प्रकार एंजाइम सक्रिय स्थल द्वारा अभिक्रियाओं को तेज गति से उत्प्रेरित करता है। एंजाइम उत्प्रेरक अकार्बनिक उत्प्रेरक से कई प्रकार से भिन्न होते हैं; लेकिन इनमें एक बहुत बड़े अंतर को जानना आवश्यक है। अकार्बनिक उत्प्रेरक उच्च तापक्रम व दाब पर कुशलता से काम करते हैं। एंजाइम अणु उच्च तापक्रम (40^0 से. से ऊपर) पर क्षतिग्रस्त हो जाते हैं। साधारणतया अति उच्च तापक्रम (जैसे गर्म स्रोतों या गंधक के झरनों में) पाए जाने वाले जीवों से प्राप्त एंजाइम स्थाई होते हैं और उनकी उत्प्रेरक शक्ति उच्च तापक्रम (80^0 से 90^0 से. तक) पर भी बनी रहती है। उपरोक्त एंजाइम जो उष्मा स्नेही जीवों से पृथक् किए गए हैं, उष्मास्थाई होते हैं। यह उनकी विशेषता है।

9.8.1 रासायनिक अभिक्रियाएं

एंजाइम्स क्या होते हैं? इससे पहले यह समझ लेना आवश्यक है कि रासायनिक अभिक्रिया क्या होती है। रासायनिक यौगिकों में दो तरह के परिवर्तन होते हैं। पहला भौतिक परिवर्तन जिसमें बिना बंध के टूटे हुए यौगिक के आकार में परिवर्तन होता है। अन्य भौतिक प्रक्रिया में द्रव्य की अवस्था में परिवर्तन होता है, जैसे बर्फ का पिघलकर पानी में परिवर्तित होना या पानी का वाष्प में बदलना। ये भौतिक प्रक्रियाएं हैं। रूपांतरण के समय बंधों का टूटना व नये बंधों का निर्माण होना ही रासायनिक अभिक्रिया होती है। उदाहरण –बेरियम हाइड्राक्साइड गंधक के अम्ल से क्रिया कर बेरियम सल्फेट व पानी बनाता है।

$$Ba(OH)_2 + H_2SO_4 \rightarrow BaSO_4 + 2H_2O$$

यह एक अकार्बनिक रासायनिक अभिक्रिया है। ठीक इसी प्रकार (टार्च का जल अपघटन द्वारा ग्लूकोज में बदलना एक कार्बनिक रसायनिक अभिक्रिया है। भौतिक या रासायनिक अभिक्रिया की दर का सीधा संबंध इकाई समय में बनने वाले उत्पाद से होता है। इसे इस प्रकार प्रदर्शित कर सकते हैं:

$$\text{दर} = \frac{\delta P}{\delta t}$$

यदि दिशा निर्धारित हो तो इस दर को वेग भी कहते हैं। भौतिक व रासायनिक प्रक्रियाओं की दर अन्य कारकों के साथ-साथ तापक्रम द्वारा प्रभावित होती है। एक सर्वमान्य नियम के अनुसार प्रत्येक 10^0 सेंटिग्रेड तापक्रम के बढ़ने या घटने पर अभिक्रिया की दर क्रमशः द्विगुणित या आधी हो जाती है। उत्प्रेरित अभिक्रियाएं, अनुत्प्रेरित अभिक्रियाओं की अपेक्षा उच्च दर से संपन्न होती हैं। जब किसी एंजाइम द्वारा उत्प्रेरित अभिक्रिया की दर बिना उत्प्रेरण के संपन्न होने वाली अभिक्रिया से बहुत अधिक होती है। उदाहरणार्थ:

$$\underset{\text{कार्बनडाइऑक्साइड}}{CO_2} + \underset{\text{जल}}{H_2O} \xrightleftharpoons{\text{कार्बोनिक एनहाइड्रेज}} \underset{\text{कार्बोनिक अम्ल}}{H_2CO_3}$$

यह अभिक्रिया बहुत मंद गति से होती है जिसमें एक घंटे में कार्बोनिक अम्ल के 200 अणुओं का निर्माण होता है, लेकिन उपरोक्त अभिक्रिया कोशिका द्रव्य में उपस्थित एंजाइम कार्बोनिक एनहाइड्रेज की उपस्थिति में तीव्रगति से संपन्न होती है, जिसके कार्बोनिक अम्ल के 600000 अणु प्रति सेकेंड बनते हैं। एंजाइम ने इस क्रिया की दर को 10 लाख गुना बढ़ा दिया। एंजाइम की यह शक्ति वास्तव में अविश्वसनीय लगती है।

हजारों प्रकार के एंजाइम होते हैं जो विशेष प्रकार की रासायनिक व उपापचयी अभिक्रियाओं को उत्प्रेरित करते हैं। बहुचरणीय रासायनिक अभिक्रियाओं में जहाँ प्रत्येक चरण एक ही जटिल एंजाइम या विभिन्न प्रकार के एंजाइम से उत्प्रेरित होती है, तो इन्हें उपापचयी पथ कहते हैं। जैसे उदाहरण-

ग्लूकोज $\rightarrow$ 2 पाइरूविक अम्ल

$$C_6H_{12}O_6 + O_2 \rightarrow 2C_3H_4O_3 + 2H_2O$$

ग्लूकोज से पाइरूविक अम्ल का निर्माण एक रासायनिक पथ द्वारा होता है, जिसमें दस विभिन्न प्रकार के एंजाइम उपापचयी अभिक्रिया को उत्प्रेरित करते हैं। आप अध्याय 12 में उपरोक्त अभिक्रियाओं के बारे में अध्ययन करेंगे। इस अवस्था में आपको जान लेना चाहिए कि एक ही उपापचयी पथ एक या दो अतिरिक्त अभिक्रियाओं के द्वारा विभिन्न प्रकार के उपापचयी उत्पाद बनाते हैं। हमारी कंकाली पेशियों में अनॉक्सी स्थिति में लैक्टिक अम्ल का निर्माण होता है जबकि सामान्य ऑक्सी स्थिति में पाइरूविक अम्ल का निर्माण होता है। खमीर में किण्वन के दौरान उपरोक्त पथ द्वारा इथेनाल (एल्कोहल) का निर्माण होता है। विभिन्न दिशाओं में विभिन्न प्रकार के उत्पाद का निर्माण संभव है।

9.8.2 एंजाइम द्वारा उच्च दर से रासायनिक रूपांतरण कैसे होता है?

इसे समझने के लिए एंजाइम के बारे में थोड़ा विस्तृत अध्ययन करना पड़ेगा। सक्रिय स्थल के बारे में हम पहले ही पढ़ चुके हैं। रासायनिक या उपापचयी रूपांतरण एक अभिक्रिया होती है। जो रसायन (Chemical) उत्पाद में रूपांतरित होता है, उसे क्रियाधार (Substrate) कहते हैं। एंजाइम जो एक सक्रिय स्थल सहित एक त्रिविम संरचना की प्रोटीन है, जो एक क्रियाधार को उत्पाद में बदलता है। सांकेतिक रूप में इसे निम्न ढंग से चित्रित कर सकते हैं।

क्रियाधार S $\rightarrow$ उत्पाद P

क्रियाधार (S) एंजाइम के सक्रिय स्थल जो दरार या पुटिका के रूप में होता है, से जुड़ जाता है। क्रियाधार सक्रिय स्थल की ओर जाते हैं। इस प्रकार आवश्यक एंजाइम-क्रियाधार सम्मिश्र (ES) का अविकल्पीय निर्माण होता है। ई (E) एंजाइम को प्रदर्शित करता है। इस समूह का निर्माण एक अल्पकालिक घटना है। क्रियाधार एंजाइम के सक्रिय स्थल से जुड़ने की अवस्था में क्रियाधार की नई संरचना का निर्माण होता है जिसे संक्रमण अवस्था-संरचना कहते हैं। इसके बाद शीघ्र ही प्रत्याशित बंध के टूटने या बनने के उपरांत सक्रिय स्थल से उत्पाद अवमुक्त होता है। दूसरे शब्दों में क्रियाधार की संरचना

उत्पाद की संरचना में रूपांतरित हो जाती है। रूपांतरण का यह पथ तथा कथित संक्रमण अवस्था के द्वारा होता है। स्थाई क्रियाधार व उत्पाद के बीच में बहुत सारी 'रूपांतरित संरचनात्मक अवस्था' हो सकती है। इस कथन का आशय है कि बनने वाली सभी मध्यवर्ती संरचनात्मक अवस्था अस्थाई होती है। स्थाइत्व का संबंध अणु की ऊर्जा अवस्था या संरचना से जुड़ा होता है। यदि इसे चित्रात्मक लेखाचित्र के रूप में प्रदर्शित किया जाए तो यह चित्र 9.4 के अनुरूप होगा।

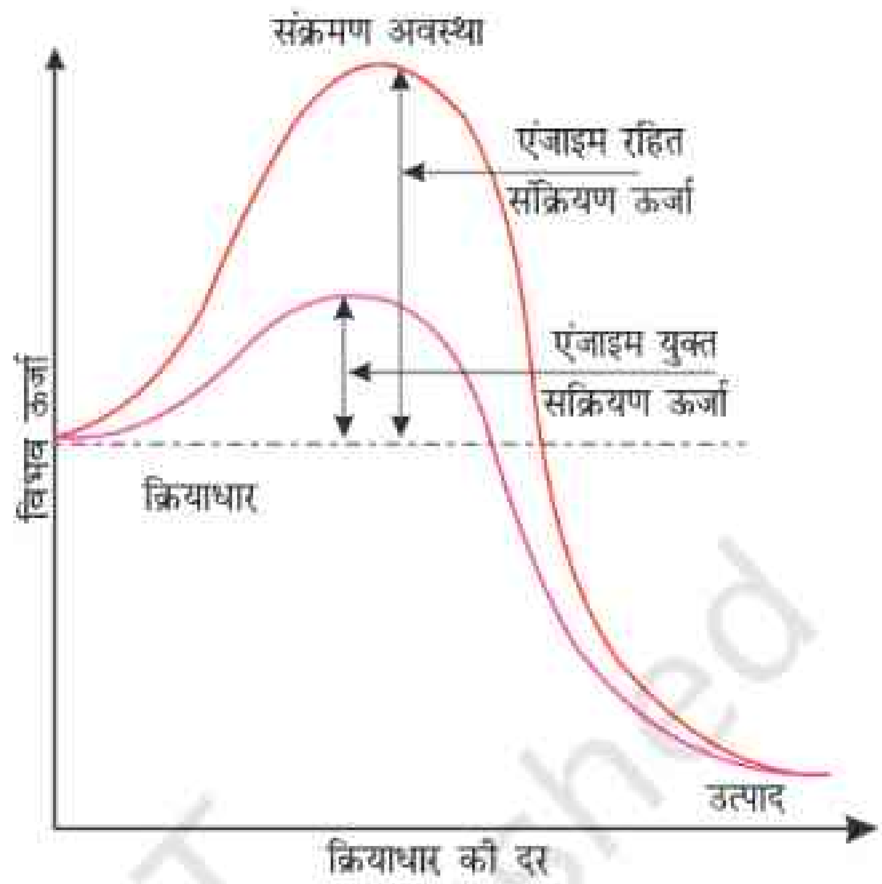

चित्र 9.4: सक्रिमण ऊर्जा की संकल्पना

y- अक्ष अंतर्निहित ऊर्जा अंश को व्यक्त करता है। x- अक्ष संरचनात्मक रूपांतरण की या वह अवस्था जिसका निर्माण मध्यवर्ती संरचना द्वारा होता है, की प्रगति को व्यक्त करता है। दो चीजें ध्यान देने योग्य है। क्रियाधार (S) व उत्पाद (p) के बीच ऊर्जा स्तर में अंतर। यदि उत्पाद क्रियाधार से नीचे स्तर का है तो अभिक्रिया बाह्य उष्मीय होती है। इस अवस्था में उत्पाद निर्माण हेतु ऊर्जा आपूर्ति (गर्म करने से) की आवश्यकता नहीं होती है। फिर भी चाहे यह बाह्यउष्मीय या स्वत: प्रवर्तित अभिक्रिया या अंत:उष्मीय या ऊर्जा आवश्यक अभिक्रिया हो क्रियाधार को उच्च ऊर्जा अवस्था या संक्रमण अवस्था से गुजरना होता है। क्रियाधार व संक्रमण अवस्था के बीच औसत ऊर्जा के अंतर को 'सक्रियण ऊर्जा' (Activation energy) कहते हैं।

एंजाइम ऊर्जा अवरोध को घटाकर क्रियाधार से उत्पाद के आसान रूपांतरण में सहयोग करता है।

9.8.3 एंजाइम क्रिया की प्रकृति

प्रत्येक एंजाइम (E) के अणु में क्रियाधार-बंधन-स्थल (Substrate binding site) मिलता है जो क्रियाधार (s) से बंध कर सक्रिय एंजाइम-क्रियाधार सम्मिश्र (ES) का निर्माण करता है। यह सम्मिश्र अल्पावधि का होता है, जो उत्पाद (P) एंव अपरिवर्तित एंजाइम में विघटित हो जाता है इसके पूर्व मध्यावस्था के रूप में एंजाइम उत्पाद (EP) जटिल का निर्माण होता है।

एंजाइम-क्रियाधार जटिल (ES) का निर्माण उत्प्रेरण के लिए आवश्यक होता है।

एंजाइम + क्रियाधार $\rightleftharpoons$ एंजाइम क्रियाधार जटिल → एंजाइम उत्पाद जटिल → एंजाइम +उत्पाद

एंजाइम क्रिया के उत्प्रेरक चक्र को निम्न चरणों में व्यक्त किया जा सकता है-

1. सर्वप्रथम क्रियाधार सक्रिय स्थल में व्यवस्थित होकर एंजाइम के सक्रिय स्थल से बँध जाता है।
2. बँधने वाला क्रियाधार एंजाइम के आकार में इस प्रकार से बदलाव लाता है कि क्रियाधार एंजाइम से मजबूती से बँध जाता है।

© NCERT not to be republished

3. एंजाइम का सक्रिय स्थल अब क्रियाधार के काफी समीप होता है जिसके परिणामस्वरूप क्रियाधार के रासायनिक बंध टूट जाते हैं और नए एंजाइम उत्पाद जटिल का निर्माण होता है।
4. एंजाइम नवनिर्मित उत्पाद को अवमुक्त करता है व एंजाइम स्वतंत्र होकर क्रियाधार के दूसरे अणु से बँधने के लिए तैयार हो जाता है। इस प्रकार पुनः उत्प्रेरक चक्र प्रारंभ हो जाता है।

9.8.4 एंजाइम क्रियाविधि को प्रभावित करने वाले कारक

जो कारक प्रोटीन की तृतीयक संरचना को परिवर्तित करते हैं, वे एंजाइम की सक्रियता को भी प्रभावित करते हैं; जैसे– तापक्रम, पी.एच. (pH)। क्रियाधार की सांद्रता में परिवर्तन या किसी विशिष्ट रसायन का एंजाइम से बंधन, उसकी प्रक्रिया को नियंत्रित करते हैं।

तापक्रम व पी एच (pH)

एंजाइम सामान्यतः तापक्रम व पी एच के लघु परिसर में कार्य करते हैं (चित्र 9.5)। प्रत्येक एंजाइम की अधिकतम क्रियाशीलता एक विशेष तापक्रम व पी एच पर ही होती है, जिसे क्रमशः ईष्टतम तापक्रम व पी एच कहते हैं। इस ईष्टतम मान के ऊपर या नीचे होने से क्रियाशीलता घट जाती है। निम्न तापक्रम एंजाइम को अस्थाई रूप से निष्क्रिय अवस्था में सुरक्षित रखता है, जबकि उच्च तापक्रम एंजाइम की क्रियाशीलता को समाप्त कर देता है; क्योंकि उच्च तापक्रम एंजाइम के प्रोटीन को विकृत कर देता है।

क्रियाधार की सांद्रता

क्रियाधार की सांद्रता (s) के बढ़ने के साथ-साथ पहले तो एंजाइम क्रिया की गति (v) बढ़ती है। अभिक्रिया अंततोगत्वा सर्वोच्च गति (Vmax) प्राप्त करने के बाद क्रियाधार की सांद्रता बढ़ने पर भी अग्रसर नहीं होती है। ऐसा इसलिए होता है कि एंजाइम के अणुओं की संख्या क्रियाधार के अणुओं से कहीं कम होती हैं और इन अणुओं से एंजाइम के संतृप्त होने के बाद एंजाइम का कोई भी अणु क्रियाधार के अतिरिक्त अणुओं से बंधन करने के लिए मुक्त नहीं बचता है, (चित्र 9.5)।

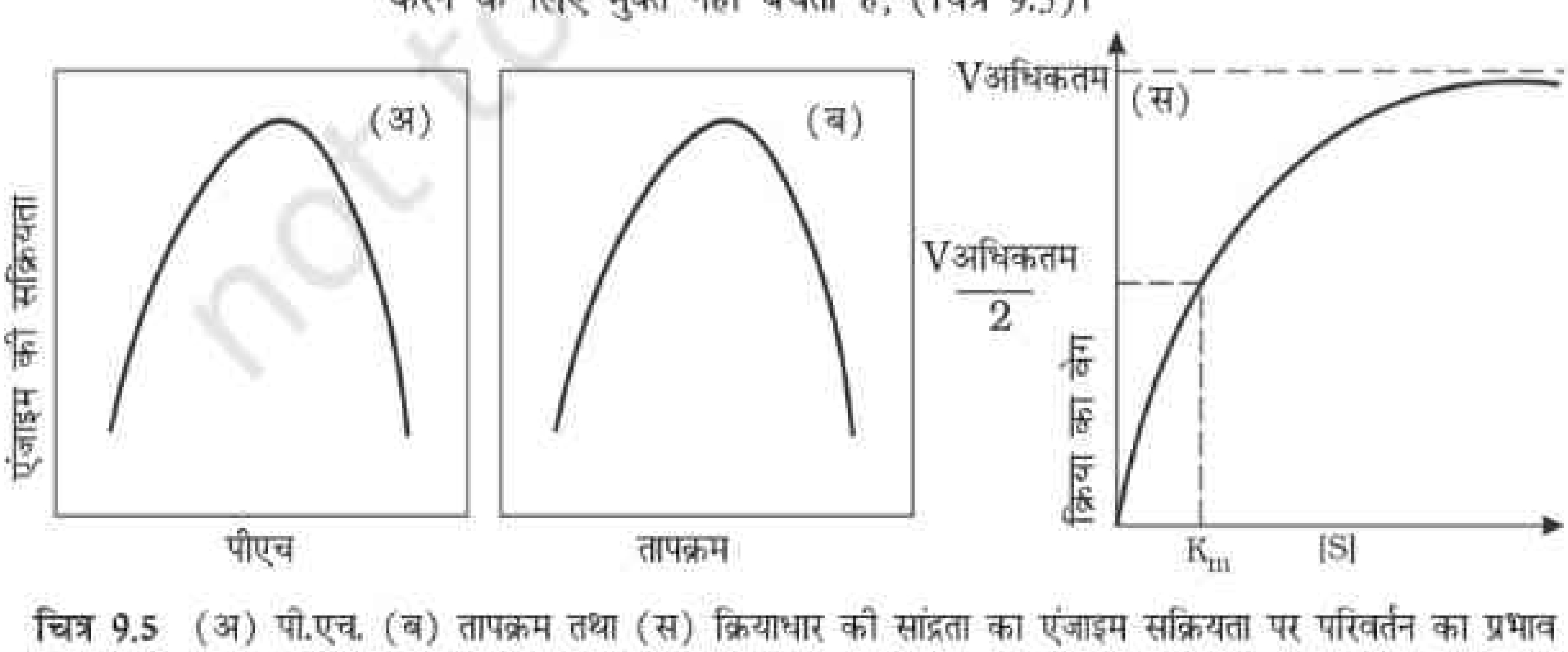

चित्र 9.5 (अ) पी.एच. (ब) तापक्रम तथा (स) क्रियाधार की सांद्रता का एंजाइम सक्रियता पर परिवर्तन का प्रभाव

किसी भी एंजाइम की क्रियाशीलता विशिष्ट रसायनों की उपस्थिति में संवेदनशील होती है जो एंजाइम से बँधते हैं। जब रसायन का एंजाइम से बँधने के उपरांत इसकी क्रियाशीलता बंद हो जाती है तो इस प्रक्रिया को **संदमन** (Inhibition) व उस रसायन को **संदमक** (Inhihitor) कहते हैं।

जब संदमक अपनी आणुविक संरचना में क्रियाधार से काफी समानता रखता है और एंजाइम की क्रियाशीलता को संदमित करता हो तो इसे **प्रतिस्पर्धात्मक संदमन** (Competitive Inhibitor)कहते हैं। संदमक की क्रियाधार से निकटतम संरचनात्मक समानता के फलस्वरूप यह क्रियाधार से एंजाइम के क्रियाधार-बंधक स्थल से बंधते हुए प्रतिस्पर्धा करता है। परिणामस्वरूप क्रियाधार, क्रियाधार बंधक स्थल से बंध नहीं पाता, जिसके फलस्वरूप एंजाइम क्रिया मंद पड़ जाती है। उदाहरण के लिए, सक्सीनिक डिहाइड्रोजिनेज का मेलोनेट द्वारा संदमन जो संरचना में क्रियाधार सक्सीनेट से निकट की समानता रखता है। ऐसे प्रतिस्पर्धी संदमकों का अक्सर उपयोग जीवाणु जन्म रोगजनकों (Bacterial Pathogens) के नियंत्रण हेतु किया जाता है।

9.8.5 एंजाइम का नामकरण व वर्गीकरण

हजारों एंजाइमों की खोज, विलगन व अध्ययन किया जा चुका है। एंजाइम द्वारा विभिन्न अभिक्रिया के उत्प्रेरण के आधार पर, इन्हें विभिन्न समूहों में वर्गीकृत किया गया है। एंजाइम को 6 वर्गों व प्रत्येक वर्ग को 4-13 उपवर्गों में विभाजित किया गया है। जिनका नामकरण चार अंकीय संख्या पर आधारित है।

ऑक्सीडोरिडक्टेजेज/डीहाइड्रोजीनेजेज

एंजाइम जो दो क्रियाधारकों S व के S^1 बीच ऑक्सीअपचयन को उत्प्रेरित करते हैं जैसे

S(उपचयित) +S^1 (ऑक्सीकृत) =S (ऑक्सीकृत) +S^1 (उपचयित)

ट्रांसफरेजेज : एंजाइम क्रियाधारकों के एक जोड़े S व S^1 के बीच एक समूह (हाइड्रोजन के अतिरिक्त) के स्थानातंरण को उत्प्रेरित करते हैं। जैसे-

$$S\text{-}G + S^1 \rightarrow S + S^1 G$$

हाइड्रोलेजेज : एंजाइम इस्टर, ईथर, पेप्टाइड, ग्लाइकोसाइडिक, कार्बन-कार्बन, कार्बन-हैलाइड या फॉस्फोरस-नाइट्रोजन बंधों का जल-अपघटन करते हैं।

लायेजेज : जल अपघटन के अतिरिक्त विधि द्वारा एंजाइम क्रियाधारकों से समूहों के अलग होने को उत्प्रेरित करते हैं, जिसके फलस्वरूप द्विबंधों का निर्माण होता है।

```
X  Y
|  |
C—C  → X-Y+  C=C
```

आइसोमरेजेज : वे सभी एंजाइम जो प्रकाशीय, ज्यामितिय व स्थितीय समावयवों के अंतर-रूपांतरण को उत्प्रेरित करते हैं।

लाइगेजेज : एंजाइम दो यौगिकों के आपस में जुड़ने को उत्प्रेरित करते हैं, जैसे एंजाइम जो कार्बन-ऑक्सीजन, कार्बन-सल्फर, कार्बन-नाइट्रोजन व फॉस्फोरस-ऑक्सीजन बंधों के निर्माण के लिए उत्प्रेरित करते हैं।

9.8.6 सहकारक (Co-factors)

एंजाइम एक या अनेक बहुपेप्टाइड शृंखलाओं से मिलकर बना होता है। फिर भी कुछ स्थितियों में इतर प्रोटीन अवयव, जिसे सह-कारक कहते हैं, एंजाइम से बंधकर उसे उत्प्रेरक सक्रिय बनाते हैं। इन उदाहरणों में एंजाइम के केवल प्रोटीन भाग को एपोएंजाइम कहते हैं। सह-कारक तीन प्रकार के होते है : प्रोस्थेटिक-समूह, सह-एंजाइम व धातु-आयन।

प्रोस्थेटिक-समूह कार्बनिक यौगिक होते हैं और यह अन्य सह-कारकों से इस रूप में भिन्न होते हैं कि ये एपोएंजाइम्स से दृढ़ता से बंधे होते हैं। उदाहरणस्वरूप एंजाइम परऑक्सीडेज व केटलेज जो हाइड्रोजन पराक्साइड को ऑक्सीजन व पानी में विखंडित करते हैं, हीम प्रोस्थेटिक समूह होता है जो एंजाइम के सक्रिय स्थल से जुड़ा होता है।

सह एंजाइम भी कार्बनिक यौगिक होते हैं और इनका संबंध एपोएंजाइम से अस्थाई होता है जो सामान्यतया उत्प्रेरण के दौरान बनता है। सह-एंजाइम विभिन्न एंजाइम उत्प्रेरित अभिक्रियाओं में सह-कारक के रूप में कार्य करते हैं। अनेक सह-एंजाइम का मुख्य रासायनिक अवयव विटामिन्स होते हैं जैसे- सहएंजाइम नीकोटीनेमाइड एडेनीन डाईन्यूक्लीयोटाइड (NAD) नीकोटीनेमाइड एडेनीन डाईन्यूक्लीयोटाइड फॉस्फेट (NADP) विटामिन नियासीन से जुड़े होते हैं।

धातु आयन; कई एंजाइम की क्रियाशीलता हेतु धातु-आयन की आवश्यकता होती है जो सक्रिय स्थल पर पार्श्व-शृंखला से समन्वयन बंध बनाते हैं व उसी समय एक या एक से अधिक समन्वयन बंध द्वारा क्रियाधारकों से जुड़े होते हैं। जैसे-प्रोटीयोलिटीक एंजाइम कार्बाक्सीपेप्टीडेज से जिंक एक सह-कारक के रूप में जुड़ा होता है।

एंजाइम से यदि सह-कारक को अलग कर दिया जाय तो इनकी उत्प्रेरक क्रियाशीलता समाप्त हो जाती है, इससे स्पष्ट है कि एंजाइम की उत्प्रेरक क्रियाशीलता हेतु ये निर्णायक भूमिका अदा करते हैं।

सारांश

जीवों में आश्चर्यजनक विभिन्नता मिलती है। इनकी रासायनिक संघटन व उपापचयी अभिक्रियाओं में असाधारण समानताएं मिलती हैं। जीव ऊतकों व निर्जीव द्रव्यों में पाए जाने वाले तत्वों के संघटन का यदि गुणात्मक परीक्षण किया जाए तो वे काफी समान होते हैं। फिर भी सूक्ष्म परीक्षण के बाद यह स्पष्ट है कि यदि जीव तंत्र व निर्जीव द्रव्यों की तुलना की जाए तो जीव तंत्र में कार्बन, हाइड्रोजन व ऑक्सीजन की अपेक्षाकृत अधिक बहुलता होती है। जीव में सर्वाधिक प्रचुर रसायन जल मिलता है। कम अणुभार (1000 डाल्टन से कम) वाले हजारों जैव अणु होते हैं। जीवों में एमीनो अम्ल, एकलसैकेराइडस, द्विक्शैकेराइडस शर्कराएं, वसा, अम्ल,

ग्लिसरॉल, न्यूक्लियोटाइड, न्यूक्लियोसाइडस व नाइट्रोजन क्षार जैसे कुछ कार्बनिक यौगिक मिलते हैं। इनमें 20 प्रकार के एमीनो अम्ल व 5 प्रकार के न्यूक्लीयोटाइडस मिलते हैं। वसा व तेल ग्लिसराइडस होते हैं, जिनमें वसा अम्ल, ग्लिसराल से इस्टरीकृत होता है। फॉस्फोलिपिडस में फॉस्फोरीकृत नाइट्रोजनीय यौगिक मिलते हैं।

जीव तंत्रों में केवल तीन प्रकार के वृहत्‌अणु जैसे- प्रोटीन, न्यूक्लीक अम्ल व बहुसैकेराइडस मिलते हैं। लिपिड्स का झिल्ली संबंधित होने के कारण वृहत्‌ आण्विक अंश में रहते हैं। जैव वृहत्‌ अणु बहुलक होते हैं। वे विभिन्न घटकों से बने होते हैं। न्यूक्लीक अम्ल (डी.एन.ए. व आर.एन.ए.) न्यूक्लिओटाइडस से मिलकर बने होते हैं। जैव वृहत्‌ अणुओं में संरचनाओं का पदानुक्रम जैसे- प्राथमिक, द्वितीयक, तृतीयक व चतुष्कीय संरचनाएं मिलती है। न्यूक्लीक अम्ल आनुवंशिक द्रव्य की कोशिकाभित्तियों के रूप में कार्य करता है। बहुसैकेराइडस पौधों, कवकों व संधिपादों के बाह्य कंकाल के घटक हैं। ये ऊर्जा के संचित रूप (जैसे-स्टार्च व ग्लाइकोजेन) में भी मिलते हैं। प्रोटीन विभिन्न कोशिकीय कार्यों में सहायता करते हैं। उनमें से कुछ एंजाइम्स, प्रतिरक्षी, ग्राही, हार्मोन्स, व दूसरे संरचनात्मक प्रोटीन होते हैं। प्राणी जगत में सर्वाधिक प्रचुरता में मिलने वाला प्रोटीन कोलेजेन व संपूर्ण जैवमंडल मे सर्वाधिक प्रचुरता में मिलने वाला प्रोटीन रूबीस्को (RUBISCO) है।

एंजाइम्स प्रोटीन होते हैं जो कोशिकाओं में जैव रासायनिक क्रियाओं की उत्प्रेरक शक्ति होते हैं। प्रोटीनमय एंजाइम्स क्रियाशीलता हेतु ईष्टतम तापक्रम व पी.एच. (ph) की आवश्यकता होती हैं। एंजाइम्स अभिक्रिया की दर को काफी तीव्र कर देते हैं। न्यूक्लीक अम्ल आनुवंशिक सूचनाओं के वाहक होते हैं, जो इसे पैतृक पीढ़ी से संतति में आगे बढ़ाते हैं।

अभ्यास

1. वृहत्‌ अणु क्या है? उदाहरण दीजिए?
2. प्रोटीन की तृतीयक संरचना से क्या तात्पर्य है?
3. 10 ऐसे रुचिकर सूक्ष्म जैव अणुओं का पता लगाइए जो कम अणुभार वाले होते हैं व इनकी संरचना बनाइए? ऐसे उद्योगों का पता लगाइए जो इन यौगिकों का निर्माण विलगन द्वारा करते हैं? इनको खरीदने वाले कौन है? मालूम कीजिए?
4. चिकित्सार्थ अभिकर्ता (therapeutic agents) के रूप में प्रयोग में आने वाले प्रोटीन का पता लगाइए व सूचीबद्ध कीजिए। प्रोटीन की अन्य उपयोगिताओं को बताइए (जैसे सौंद्रर्य-प्रसाधन आदि)।
5. ट्राइग्लिसराइड के संगठन का वर्णन कीजिए।
6. क्या आप व्यापारिक दृष्टि से उपलब्ध परमाणु मॉडल (बल व स्टिक नमूना) का प्रयोग करते हुए जैवअणुओं के उन प्रारूपों को बना सकते हैं?
7. ऐलेनीन अमीनो अम्ल की संरचना बताइए?
8. गोंद किससे बने होते हैं? क्या फेविकोल इससे भिन्न है?
9. प्रोटीन, वसा व तेल अमीनो अम्लों का विश्लेषणात्मक परीक्षण बताइए एवं किसी भी फल के रस, लार, पसीना तथा मूत्र में इनका परीक्षण करें?
10. पता लगाइए कि जैव मंडल में सभी पादपों द्वारा कितने सेल्यूलोज का निर्माण होता है। इसकी तुलना मनुष्यों द्वारा उत्पादित कागज से करें। मानव द्वारा प्रतिवर्ष पादप पदार्थों की कितनी खपत की जाती है? इसमें वनस्पतियों की कितनी हानि होती है?
11. एंजाइम के महत्वपूर्ण गुणों का वर्णन कीजिए?

Reprint 2025-26

11081CH10

अध्याय 10

कोशिका चक्र और कोशिका विभाजन

10.1 कोशिका चक्र

10.2 सूत्री विभाजन अवस्था (M प्रावस्था)

10.3 सूत्री कोशिका विभाजन का महत्व

10.4 अर्धसूत्री विभाजन

क्या आप जानते हैं कि सभी जीव चाहे सबसे बड़ा ही क्यों न हो, जीवन का प्रारंभ एक कोशिका से करता है ? आप आश्चर्यचकित हो सकते हैं कि कैसे एक कोशिका से इतने बड़े जीव का निर्माण होता है। वृद्धि व जनन सभी कोशिकाओं का ही नहीं? सभी सजीवों की विशेषता है। सभी कोशिकाएं दो भागों में विभाजित होकर जनन करती हैं, जिसमें प्रत्येक पैतृक कोशिका विभाजित होकर दो नई संतति कोशिकाओं का निर्माण करती है। ये नव निर्मित संतति कोशिकाएं स्वयं वृद्धि व विभाजन करती हैं। एक पैतृक कोशिका और इसकी संतति वृद्धि व विभाजन के बाद एक नई कोशिकीय जनसंख्या का निर्माण करती है। दूसरे शब्दों में, इस प्रकार की वृद्धि व विभाजन के कई चक्रों के बाद एक कोशिका से ऐसी संरचना का निर्माण होता है, जिसमें कई लाख कोशिकाएं होती हैं।

10.1 कोशिका चक्र

कोशिका विभाजन सभी जीवों के लिए एक अत्यंत महत्वपूर्ण प्रक्रिया है। एक कोशिका विभाजन के दौरान डीएनए प्रतिकृति व कोशिका वृद्धि होती है। ये सभी प्रक्रियाएं जैसे- कोशिका विभाजन, डीएनए प्रतिकृति और कोशिका वृद्धि एक दूसरे के साथ समायोजित होकर, इस प्रकार संपन्न होती हैं कि कोशिका विभाजन सही होता है व संतति कोशिकाओं में इनकी पैतृक कोशिकाओं वाला जीनोम होता है। घटनाओं का यह अनुक्रम जिसमें कोशिका अपने जीनोम का द्विगुणन व अन्य संघटकों का संश्लेषण और तत्पश्चात विभाजित होकर दो नई संतति कोशिकाओं का निर्माण करती हैं, इसे **कोशिका चक्र** कहते हैं। यद्यपि कोशिका वृद्धि (कोशिकाद्रव्यीय वृद्धि के संदर्भ में) एक सतत प्रक्रिया है, जिसमें डीएनए का संश्लेषण कोशिका चक्र की किसी एक विशिष्ट अवस्था में होता

© NCERT not to be republished

है। कोशिका विभाजन के दौरान, प्रतिकृति गुणसूत्र (डीएनए) जटिल घटना क्रम के द्वारा संतति केंद्रकों में वितरित हो जाते हैं। ये सारी घटनाएं आनुवंशिक नियंत्रण के अंतर्गत होती हैं।

10.1.1 कोशिका चक्र की प्रावस्थाएं

एक प्ररूपी (यूकेरियोटिक) चक्र का उदाहरण मनुष्य की कोशिका के संवर्द्धन में होता है, जो लगभग प्रत्येक चौबीस घंटे में विभाजित होती है (चित्र 10.1)। यद्यपि कोशिका चक्र की यह अवधि एक जीव से दूसरे जीव एवं कोशिका से दूसरी कोशिका प्रारूप के लिए बदल सकती है। उदाहरणार्थ– यीस्ट के कोशिका चक्र के पूर्ण होने में लगभग नब्बे मिनट लगते हैं।

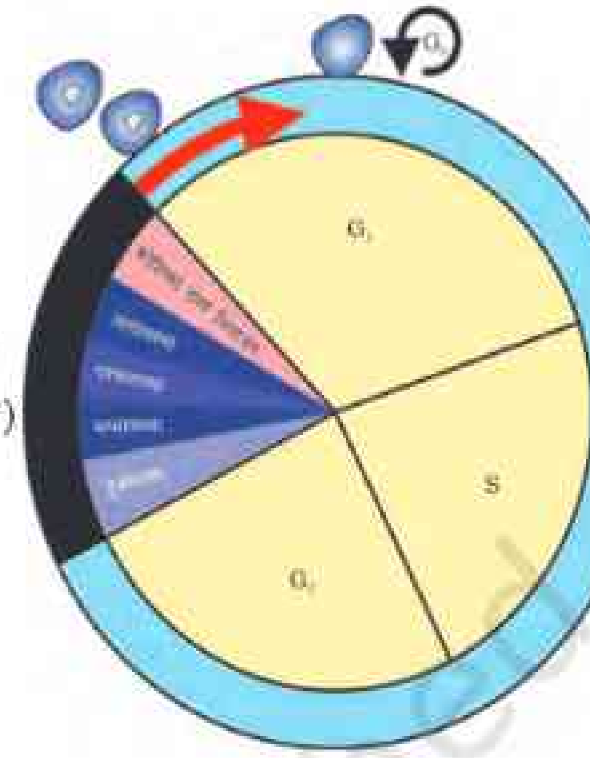

चित्र 10.1 कोशिका चक्र का चित्रात्मक दृश्य जो एक कोशिका को दो कोशिकाओं के बनाने को इंगित करता है।

कोशिका चक्र की दो मूल प्रावस्थाएं होती हैं:

1. **अंतरावस्था** (Interphase)
2. **एम प्रावस्था** (सूत्री विभाजन) (Mitosis Phase)

सूत्री विभाजन (एम अवस्था) उस अवस्था को व्यक्त करता है, जिसमें वास्तव में कोशिका विभाजन या समसूत्री विभाजन होता है और अंतरावस्था दो क्रमिक एम प्रावस्थाओं के बीच की प्रावस्था को व्यक्त करता है। यह ध्यान देने योग्य महत्व की बात है कि मनुष्य की कोशिका के औसतन अवधि चौबीस घंटे की कोशिका चक्र में कोशिका विभाजन सिर्फ लगभग एक घंटे में पूर्ण होता है, जिसमें कोशिका चक्र की कुल अवधि की 95 प्रतिशत से अधिक की अवधि अंतरावस्था में ही व्यतीत होती है।

एम प्रावस्था का आरंभ केंद्रक के विभाजन (**कैरियो काइनेसिस**) से होता है,जो कि संगत संतति गणसूत्र के पृथक्करण (सूत्री विभाजन) के समतुल्य होता है और इसका अंत कोशिकाद्रव्य विभाजन (**साइटोकाइनेसिस**) के साथ होता है। अंतरावस्था को विश्राम प्रावस्था भी कहते हैं। यह वह प्रावस्था है जिसमें कोशिका विभाजन के लिए तैयार होती है तथा इस दौरान क्रमबद्ध तरीके से कोशिका वृद्धि व डीएनए का प्रतिकृतिकरण दोनों होते हैं।

अंतरावस्था को तीन प्रावस्थाओं में विभाजित किया गया है :

- **पश्च सूत्री अंतरकाल प्रावस्था** (G_1 Phase)
- **संश्लेषण प्रावस्था** (S Phase)
- **पूर्व-सूत्री विभाजन अंतरालकाल प्रावस्था** (G_2 Phase)

पश्च सूत्री अंतरकाल प्रावस्था (जी$_1$फेस) समसूत्री विभाजन एवं डीएनए प्रतिकृतिकरण के बीच अंतराल को प्रदर्शित करता है। जी$_1$ प्रावस्था में कोशिका उपापचयी रूप से सक्रिय होती हैं एवं लगातार वृद्धि करती है, परंतु इसका डीएनए प्रतिकृति नहीं करता। एस फेस या **संश्लेषण प्रावस्था** के दौरान डीएनए का निर्माण एवं इसकी प्रतिकृति होती है। इस दौरान डीएनए की मात्रा दुगुनी हो जाती है। यदि डीएनए की प्रारंभिक मात्रा को 2 C से

पादप व प्राणी अपने जीवन काल कैसे वृद्धि करते हैं? क्या पौधों में सभी कोशिकाएं जीवन भर विभाजित होती रहती हैं? क्या आप सोचते हैं कि कुछ कोशिकाएं सभी पौधों एवं प्राणियों के जीवन में हमेशा विभाजित होती रहती हैं? क्या आप उच्चकोटि के पादप में उस ऊतक का नाम व स्थान बता सकते हैं, जिसकी कोशिकाएं जीवन भर विभाजित होती रहती हैं? शीर्षस्थ कोशिका में पाए जाने वाली कोशिका जीवन भर विभाजित होती रहती है, इसलिए उन्हें विभज्योतिकी ऊतक कहते हैं। क्या प्राणियों में भी ऐसा ही विभज्योतिकी ऊतक मिलता है?

आप प्याज की जड़ की शीर्ष पर पाई जाने वाली कोशिका में सूत्री विभाजन का अध्ययन कर चुके होंगे। इसकी प्रत्येक कोशिका में 16 गुणसूत्र होते हैं। क्या आप बता सकते हैं कि G_1 अवस्था, S एवं M प्रावस्था के बाद कोशिका में कितने गुणसूत्र होंगे? यदि कोशिका में M प्रावस्था के बाद डीएनए की मात्रा 2C है तो G_1, S तथा G_2 प्रावस्था के बाद, इसकी कितनी मात्रा होगी।

चिह्नित किया जाए तो यह बढ़कर 4 C हो जाती है, यद्यपि गणसूत्र की संख्या में कोई वृद्धि नहीं होती। यदि G_1 प्रावस्था में कोशिका द्विगुणित है या 2n गुणसूत्र है तो S प्रावस्था के बाद भी इसकी संख्या वही रहती है, जो G_1 अवस्था में थी अर्थात 2n होगी।

प्राणी कोशिका में S प्रावस्था के दौरान केंद्रक में डीएनए का जैसे ही प्रतिकृतिकरण प्रारंभ होता है वैसे ही तारककेंद्र का कोशिकाद्रव्य में प्रतिकृतिकरण होने लगता है। कोशिका वृद्धि के साथ सूत्री विभाजन हेतु G_2 प्रावस्था के दौरान प्रोटीन का निर्माण होता है।

प्रौढ़ प्राणियों में कुछ कोशिकाएं विभाजित नहीं होती (जैसे हृदय कोशिका) और अनेक दूसरी कोशिकाएं यदा-कदा विभाजित होती है; ऐसा तब ही होता है जब क्षतिग्रस्त या मृत कोशिकाओं को बदलने की आवश्यकता होती है। ये कोशिकाएं जो आगे विभाजित नहीं होती है G_1 अवस्था से निकलकर निष्क्रिय अवस्था में पहुँचती हैं, जिसे कोशिका चक्र की **शांत अवस्था** (G_0) कहते हैं। इस अवस्था की कोशिका उपापचयी रूप से सक्रिय होती है लेकिन यह विभाजित नहीं होती। इनका विभाजन जीव की आवश्यकतानुसार होता है।

प्राणियों में सूत्री विभाजन केवल द्विगुणित कायिक कोशिकाओं में ही दिखाई देता है। हालाँकि, इसमें कुछ अपवाद हैं जहाँ (हैप्लाइड) अगुणित कोशिकाएँ समसूत्री विभाजन द्वारा विभाजित होती हैं, उदाहरण के लिए, नर मधुमक्खियाँ। इसके विपरीत पादपों में सूत्री विभाजन अगुणित एवं द्विगुणित दोनों कोशिकाओं में दिखाई देता है। पादपों में पीढ़ी एकांतरण (अध्याय 3) के उदाहरणों को याद करते हुए पादप जातियों और अवस्थाओं की पहचान करें, जिनमें अगुणित कोशिकाओं में सूत्री विभाजन दिखाई पड़ता है।

10.2 सूत्री विभाजन अवस्था (M प्रावस्था)

यह कोशिका चक्र की सर्वाधिक नाटकीय अवस्था होती है, जिसमें कोशिका के सभी घटकों का वृहद् पुनर्गठन होता है। जनक व संतति कोशिका में गुणसूत्रों की संख्या बराबर होती है, इसलिए इसे **सम विभाजन** कहते हैं। सुविधा के लिए सूत्री विभाजन को केंद्रक विभाजन की चार अवस्थाओं में विभाजित किया गया है। केरियोकाइनेसिस यहाँ यह समझ लेना आवश्यक है कि कोशिका विभाजन एक प्रगतिशील प्रक्रिया है और इसकी विभिन्न अवस्थाओं के बीच स्पष्ट रूप से विभाजन करना मुश्किल है। केरियोकाइनेसिस को चार अवस्थाओं में विभाजित किया गया है :

- **पूर्वावस्था** (Prophase)
- **मध्यावस्था** (Metaphase)
- **पश्चावस्था** (Anaphase)
- **अंत्यावस्था** (Telophase)

10.2.1 पूर्वावस्था

अंतरावस्था की S व G_2 अवस्था के बाद पूर्वावस्था केरियोकाइनेसिस का पहला पड़ाव है। S व G_2 अवस्था में डीएनए के नए सूत्र बन तो जाते हैं, लेकिन आपस में गुँथे होने के कारण स्पष्ट नहीं होते। गुणसूत्रीय पदार्थ के संघनन का प्रारंभ ही पूर्वावस्था की पहचान

है। गुणसूत्रीय संघनन की प्रक्रिया के दौरान ही गुणसूत्रीय द्रव्य स्पष्ट होने लगते हैं (चित्र 10.2 अ)।

तारककाय व तारककेंद्र जिसका अतंरावस्था की S प्रावस्था के दौरान ही द्विगुणन हुआ था, अब कोशिका के विपरीत ध्रुवों की ओर चलना प्रारंभ कर देता है।

पूर्वावस्था के पूर्ण होने के दौरान जो महत्वपूर्ण घटनाएं होती हैं उनकी निम्न विशेषताएं हैं:

- गुणसूत्रीय द्रव्य संघनित होकर ठोस गुणसूत्र बन जाता है। गुणसूत्र दो अर्धगुणसूत्रों से बना होता है, जो आपस में सेंट्रोमियर से जुड़े रहते हैं।
- अंतरावस्था के समय जिस तारककाय का द्विगुण हुआ है वह कोशिका में विपरीत ध्रुव की ओर जाने लगता है। प्रत्येक तारककाय सूक्ष्म नलिकाओं को विकरित करता है, जिसे तारक (एस्टर) कहते हैं। ये तन्तु व तारक मिलकर समसूत्री विभाजन यंत्र बनाते हैं। पूर्वावस्था के अंत में यदि कोशिका को सूक्ष्मदर्शी से देखा जाता है तो इसमें गॉल्जीकाय, अंतर्द्रव्यी जालिका, केंद्रिका व केंद्रक आवरण दिखाई नहीं देता है।

चित्र 10.2 अ एवं ब सूत्री विभाजन की अवस्थाओं का चित्रात्मक दृश्य

10.2.2 मध्यावस्था

केंद्रक आवरण के पूर्णरूप से विघटित होने के साथ समसूत्री विभाजन की द्वितीय अवस्था प्रारंभ होती है, इसमें गुणसूत्र कोशिका के कोशिका द्रव्य में फैल जाते हैं। इस अवस्था तक गुणसूत्रों का संघनन पूर्ण हो जाता है और सूक्ष्मदर्शी से देखने पर ये स्पष्ट रूप से दिखाई देने लगते हैं। यही वह अवस्था है जब गुणसूत्रों की आकृति का अध्ययन बहुत ही सरल तरीके से किया जा सकता है।

मध्यावस्था गुणसूत्र दो संतति अर्धगुणसूत्रों से बना होता है जो आपस में गुणसूत्रबिंदु से जुड़े होते हैं (चित्र 10.2ब)। गुणसूत्रबिंदु के सतह पर एक छोटा बिंब आकार की संरचना मिलती है जिसे काइनेटोकोर कहते हैं। सूक्ष्म नलिकाओं से बने हुए तर्कुतंतु के जुड़ने का स्थान ये संरचनाएं (काइनेटोकोर) हैं, जो दूसरी ओर कोशिका के केंद्र में स्थित गुणसूत्र से जुड़े होते हैं। मध्यावस्था में सभी गुणसूत्र मध्यरेखा पर आकर स्थित रहते हैं। प्रत्येक गुणसूत्र का एक अर्धगुणसूत्र एक ध्रुव से तर्कुतंतु द्वारा अपने काइनेटोकोर के द्वारा जुड़ जाता है, वहीं इसका संतति अर्धगुणसूत्र तर्कुतंतु द्वारा अपने काइनेटोकोर से विपरीत ध्रुव से जुड़ा होता है (चित्र 10.2 ब)। मध्यावस्था में जिस तल पर गुणसूत्र पंक्तिबद्ध हो जाते हैं, उसे **मध्यावस्था पट्टिका** कहते हैं। इस अवस्था की मुख्य विशेषता निम्नवत है:

- तर्कुतंतु गुणसूत्र के काइनेटोकोर से जुड़े रहते हैं।
- गुणसूत्र मध्यरेखा की ओर जाकर मध्यावस्था पट्टिका पर पंक्तिबद्ध होकर ध्रुवों से तर्कुतंतु से जुड़ जाते हैं।

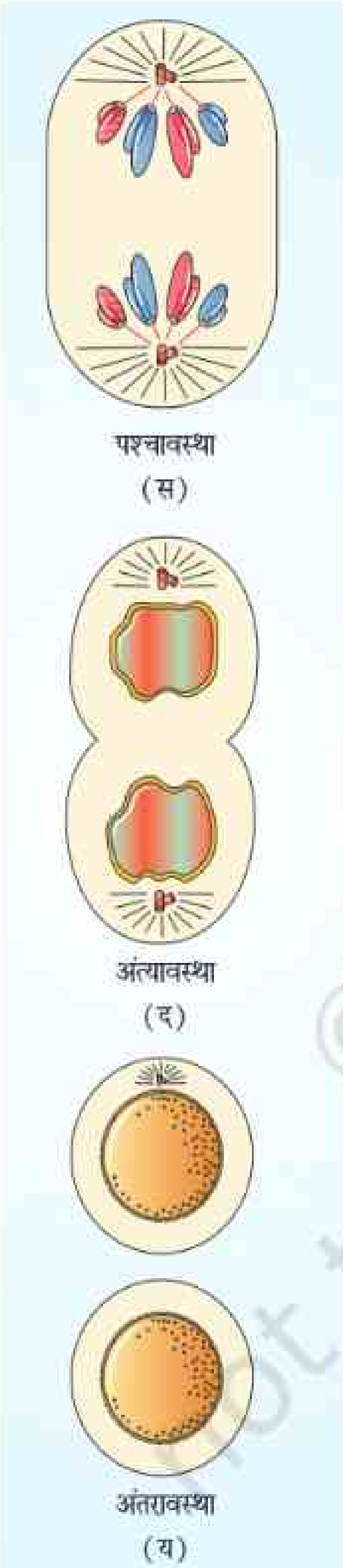

चित्र 10.2 सूत्री विभाजन की अवस्थाओं का चित्रात्मक दृश्य

10.2.3 पश्चावस्था

पश्चावस्था के प्रारंभ में मध्यावस्था पट्टिका पर आए प्रत्येक गुणसूत्र एक साथ अलग होने लगते हैं, इन्हें संतति अर्धगुणसूत्र कहते हैं जो कोशिका विभाजन के बाद बनने वाले नए संतति केंद्रक का गुणसूत्र बनेंगे, वे विपरीत ध्रुवों की ओर जाने लगते हैं। जब प्रत्येक गुणसूत्र मध्यांश पट्टिका से काफी दूर जाने लगता है तब प्रत्येक का गुणसूत्रबिंदु ध्रुवों की ओर होता है जो गुणसूत्रों को ध्रुवों की ओर जाने का नेतृत्व करते हैं, साथ ही गुणसूत्र की भुजाएं पीछे आती हैं (चित्र 10.2 स)। पश्चावस्था की निम्न विशेषताएं है :

- गुणसूत्रबिंदु विखंडित होते हैं और अर्धगुणसूत्र अलग होने लगते हैं।
- अर्धगुणसूत्र विपरीत ध्रुवों की ओर जाने लगते हैं।

10.2.4 अंत्यावस्था

सूत्री विभाजन की अंतिम अवस्था के प्रारंभ में अंत्यावस्था गुणसूत्र जो क्रमानुसार अपने ध्रुवों पर चले गए हैं; असंघनित होकर अपनी संपूर्णता को खो देते हैं। एकल गुणसूत्र दिखाई नहीं देता है व अर्धगुणसूत्र द्रव्य दोनों ध्रुवों की तरफ एक समूह के रूप में एकत्रित हो जाते हैं (चित्र 10.2 द)। इस अवस्था की मुख्य घटनाएं निम्नवत हैं:

- गुणसूत्र विपरीत ध्रुवों की ओर एकत्रित हो जाते हैं और इनकी पृथक पहचान समाप्त हो जाती है।
- गुणसूत्र समूह के चारों तरफ केंद्रक झिल्ली का निर्माण हो जाता है।
- केंद्रिका, गॉल्जीकाय व अंतर्द्रव्यी जालिका का पुनर्निर्माण हो जाता है।

10.2.5 कोशिकाद्रव्य विभाजन (Cytokinesis)

सूत्री विभाजन के दौरान द्विगुणित गुणसूत्रों का संतति केंद्रकों में संपृथकन होता है जिसे केंद्रक विभाजन (Karyokinesis) कहते हैं। कोशिका विभाजन संपन्न होने के अंत में कोशिका स्वयं एक अलग प्रक्रिया द्वारा दो संतति कोशिकाओं में विभाजित हो जाती है, इस प्रक्रिया को कोशिकाद्रव्य विभाजन कहते हैं (चित्र 10. 2 य)। प्राणी कोशिका का विभाजन जीवद्रव्यकला में एक खांच बनने से संपन्न होता है। खांचों के लगातार गहरा होने व अंत में केंद्र में आपस में मिलने से कोशिका का कोशिकाद्रव्य दो भागों में बँट जाता है। यद्यपि पादप कोशिकाएं जो अपेक्षाकृत अप्रसारणीय कोशिका भित्ति से घिरी होती हैं अत: इनमें कोशिकाद्रव्य विभाजन दूसरी भिन्न प्रक्रियाओं द्वारा संपन्न होता है। पादप कोशिकाओं में नई कोशिका भित्ति निर्माण कोशिका के केंद्र से शुरू होकर बाहर की ओर पूर्व स्थित पार्श्व कोशिका भित्ति से जुड़ जाता है। नई कोशिकाभित्ति निर्माण एक साधारण पूर्वगामी रचना से प्रारंभ होता है जिसे **कोशिका पट्टिका** कहते हैं, जो दो सन्निकट कोशिकाओं की भित्तियों के बीच मध्य पट्टिका को दर्शाती है। कोशिकाद्रव्य विभाजन के समय कोशिका अंगक जैसे सूत्रकणिका (माइटोकॉंड्रिया)

© NCERT not to be republished

व प्लैस्टिड लवक का दो संतति कोशिकाओं में वितरण हो जाता है। कुछ जीवों में केंद्रक विभाजन के साथ कोशिकाद्रव्य का विभाजन नहीं हो पाता है; इसके परिणामस्वरूप एक ही कोशिका में कई केंद्रक बन जाते हैं। ऐसी बहुकेंद्रकी कोशिका को **संकोशिका** कहते हैं (उदाहरणार्थ- नारियल का तरल भ्रूणपोश)।

10.3 सूत्री कोशिका विभाजन का महत्व

सूत्री विभाजन या मध्यवर्तीय विभाजन केवल द्विगुणित कोशिकाओं में होता है। यद्यपि कुछ निम्न श्रेणी के पादपों एवं सामाजिक कीटों में अगुणित कोशिकाएं भी सूत्री विभाजन द्वारा विभाजित होती हैं। सूत्री विभाजन का एक प्राणी के जीवन में क्या महत्व है, इसको समझना काफी आवश्यक है।

क्या आप कुछ ऐसे उदाहरण जानते हैं जहाँ आपने अगुणित व द्विगुणित कीटों के बारे में पढ़ा है। इस विभाजन से बनने वाली द्विगुणित संतति कोशिकाएं साधारणतया समान आनुवंशिक अवयव वाली होती है। बहुकोशिकीय जीवधारियों की वृद्धि सूत्री विभाजन के कारण होती है। कोशिका वृद्धि के परिणामस्वरूप केंद्रक व कोशिकाद्रव्य के बीच का अनुपात अव्यवस्थित हो जाता है। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि कोशिका विभाजित होकर केंद्रक कोशिकाद्रव्य अनुपात को बनाए रखे। सूत्री विभाजन का एक महत्वपूर्ण योगदान यह है कि इसके द्वारा कोशिका की मरम्मत होती है। अधिचर्म की उपरी सतह की कोशिकाएं, आहार नाल की भीतरी सतह की कोशिकाएं एवं रक्त कोशिकाएं निरंतर प्रतिस्थापित होती रहती है।

10.4 अर्धसूत्री विभाजन

लैंगिक प्रजनन द्वारा संतति के निर्माण में दो युग्मकों का संयोजन होता है, जिनमें अगुणित गुणसूत्रों का एक समूह होता है। युग्मक का निर्माण विशिष्ट द्विगुणित कोशिकाओं से होता है। यह विशिष्ट प्रकार का कोशिका विभाजन है, जिसके द्वारा बनने वाली अगुणित संतति कोशिकाओं में गुणसूत्रों की संख्या आधी हो जाती है। इस प्रकार के विभाजन को **अर्धसूत्री विभाजन** कहते हैं। लैंगिक जनन करने वाले जीवधारियों के जीवन चक्र में अर्धसूत्री विभाजन द्वारा अगुणित अवस्था उत्पन्न होती है एवं निषेचन द्वारा द्विगुणित अवस्था पुनःस्थापित होती है। पादपों एवं प्राणियों में युग्मकजनन के दौरान अर्धसूत्री विभाजन होता है, जिसके परिणामस्वरूप अगुणित युग्मक उत्पन्न होते हैं। अर्धसूत्री विभाजन की मुख्य विशेषताएं निम्नवत हैं:

- अर्धसूत्री विभाजन के दौरान केंद्रक व कोशिका विभाजन के दो अनुक्रमिक चक्र संपन्न होते हैं, जिसे **अर्धसूत्री I** व **अर्धसूत्री II** कहते हैं। इस विभाजन में डीएनए प्रतिकृति का सिर्फ एक चक्र पूर्ण होता है।
- S अवस्था में पैतृक गुणसूत्रों के प्रतिकृति के साथ समान संतति अर्धगुणसूत्र बनने के बाद अर्धसूत्री I अवस्था प्रारंभ होती है।
- अर्धसूत्री II विभाजन में समजात गुणसूत्रों का युगलन व पुनर्योजन होता है।

© NCERT not to be republished

- अर्धसूत्री II के अंत में चार अगुणित कोशिकाएं बनती हैं। अर्धसूत्री विभाजन को निम्न अवस्थाओं में वर्गीकृत किया गया है :

अर्धसूत्री I	अर्धसूत्री II
पूर्वावस्था I	पूर्णावस्था II
मध्यावस्था I	मध्यावस्था II
पश्चावस्था I	पश्चावस्था II
अंत्यावस्था I	अंत्यावस्था II

10.4.1 अर्धसूत्री विभाजन I

पूर्वावस्था I : अर्धसूत्री विभाजन I की पूर्वावस्था की तुलना समसूत्री विभाजन की पूर्वावस्था से की जाए तो, यह अधिक लंबी व जटिल होती है। गुणसूत्रों के व्यवहार के आधार पर इसे पाँच प्रावस्थाओं में उपविभाजित किया गया है जैसे–तनुपट्ट (लेप्टोटीन), युग्मपट्ट (जाइगोटीन), स्थूलपट्ट (पैकेटीन), द्विपट्ट (डिप्लोटीन) व पारगतिक्रम (डायकाइनेसिस)।

साधारण सूक्ष्मदर्शी द्वारा देखने पर **तनुपट्ट** (लिप्टोटीन) अवस्था के दौरान गुणसूत्र धीरे-धीरे स्पष्ट दिखाई देने लगते हैं। गुणसूत्र का संहनन (कॉम्पैक्शन) पूरी तनुपट्ट अवस्था के दौरान जारी रहता है। इसके उपरांत पूर्वावस्था I का द्वितीय चरण प्रारंभ होता है, जिसे **युग्मपट्ट** कहते हैं। इस अवस्था के दौरान गुणसूत्रों का आपस में युग्मन प्रारंभ हो जाता है और इस प्रकार की संबद्धता को सूत्रयुग्मन कहते हैं।

युग्मपट्ट (जाइगोटीन) : इस प्रकार के गुणसूत्रों के युग्मों को समजात गुणसूत्र कहते हैं। इस अवस्था का इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मलेखी यह दर्शाता है कि गुणसूत्र सूत्रयुग्मन के साथ एक जटिल संरचना का निर्माण होता है, जिसे सिनेप्टोनिमल सम्मिश्र कहते हैं। जिस सम्मिश्र का निर्माण एक जोड़ी सूत्रयुग्मित समजात गुणसूत्रों द्वारा होता है, उसे **युगली** (bivalent) अथवा **चतुष्क** (tetrad) कहते हैं। यद्यपि ये अगली अवस्था में अधिक स्पष्ट दिखाई पड़ते हैं। पूर्वावस्था I की उपर्युक्त दोनों अवस्थाएं **स्थूलपट्ट** (Pachytene) अवस्था से अपेक्षाकृत कम अवधि की होती हैं। इस अवस्था के दौरान प्रत्येक युगली गुणसूत्र के चार अर्ध गुणसूत्र चतुष्क के रूप में अधिक स्पष्ट दिखाई देने लगते हैं।

इस अवस्था में पुनर्योजन ग्रंथिकाएं दिखाई देने लगती हैं जहाँ पर समजात गुणसूत्रों के असंतति अर्धगुणसूत्रों के बीच विनिमय (क्रासिंग ओवर) होता है। विनिमय दो समजात गुणसूत्रों के बीच आनुवंशिक पदार्थों के आदान-प्रदान के कारण होता है। विनिमय एंजाइम द्वारा नियंत्रित प्रक्रिया है व जो एंजाइम इस प्रक्रिया में भाग लेता है, उसे रिकाम्बीनेज कहते हैं। दो गुणसूत्रों में आनुवंशिक पदार्थों का पुनर्योजन जीन विनिमय द्वारा अग्रसर होता है। समजात गुणसूत्रों के बीच पुनर्योजन स्थूलपट्ट अवस्था के अंत तक पूर्ण हो जाता है, जिसके परिणामस्वरूप विनिमय स्थल पर गुणसूत्र जुड़े हुए दिखाई पड़ते हैं।

द्विपट्ट (डिप्लोटीन) के प्रारंभ में सिनेप्टोनीमल सम्मिश्र का विघटन हो जाता है और युगली के समजात गुणसूत्र विनिमय बिंदु के अतिरिक्त एक दूसरे से अलग होने लगते

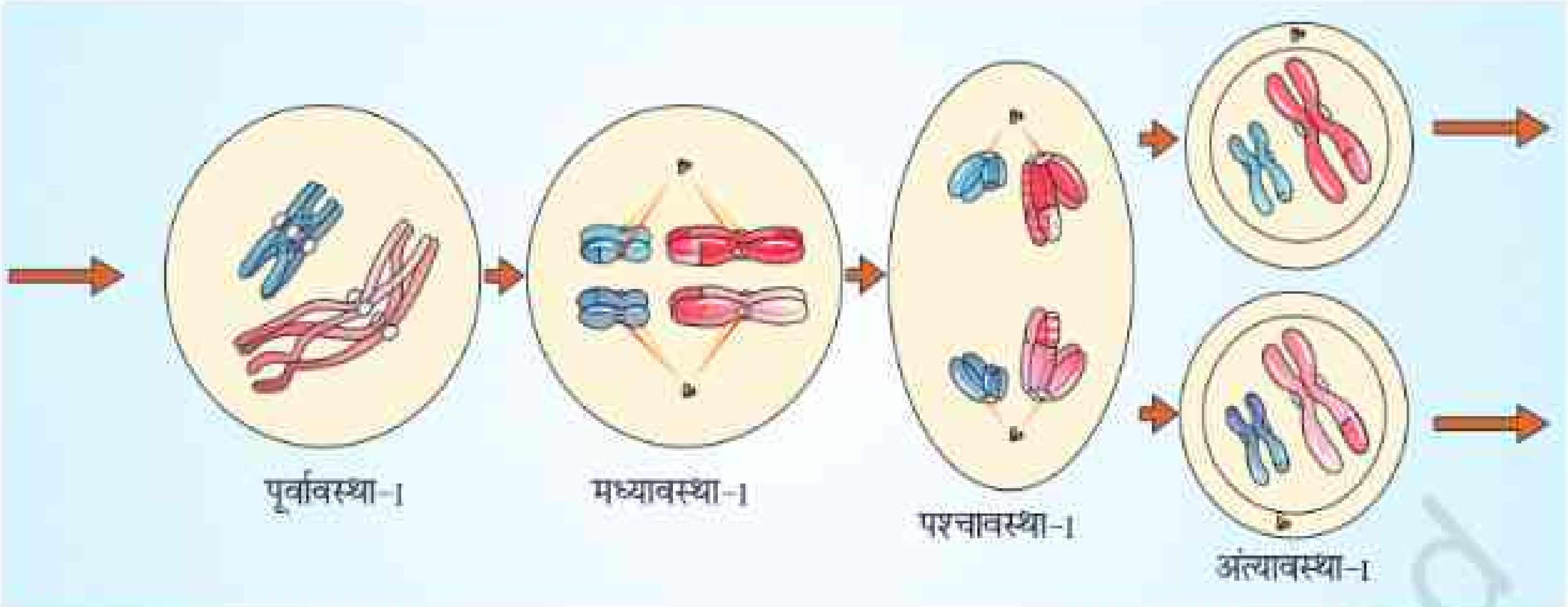

चित्र 10.3 अर्द्धसूत्रण की अवस्थाएं

हैं। विनिमय बिंदु पर X आकार की संरचना को **काएज्मेटा** कहते हैं। कुछ कशेरुकी प्राणियों के अडंकों में द्विपट्ट महीनों या वर्षों बाद समाप्त होती हैं।

अर्धसूत्री पूर्वावस्था I की अंतिम अवस्था **पारगतिक्रम (डायाकाइनेसिस)** कहलाती है। जिसमें काएज्मेटा का उपांतीभवन हो जाता है, जिसमें काएज्मेटा का अंत होने लगता है। इस अवस्था में गुणसूत्र पूर्णतया संघनित हो जाते हैं व तर्कुतंतु एकत्रित होकर समजात गुणसूत्रों को अलग करने में सहयोग प्रदान करते हैं। पारगतिक्रम के अंत तक केंद्रिका अदृश्य हो जाती है और केंद्रक-आवरण झिल्ली भी विघटित हो जाता है। पारगतिक्रम मध्यावस्था की ओर पारगमन को निरूपित करता है।

मध्यावस्था I : युगली गुणसूत्र मध्यरेखा पट्टिका पर व्यवस्थित हो जाते हैं (चित्र 10.3)। विपरीत ध्रुवों के तर्कुतंतु की सूक्ष्मनलिकाएं समजात गुणसूत्रों के जोड़ों के काइनेटोकोर से चिपक जाती हैं।

पश्चावस्था I : समजात गुणसूत्र पृथक् हो जाते हैं, जबकि संतति अर्धगुणसूत्र गुणसूत्रबिंदु से जुड़े रहते हैं (चित्र 10.3)।

अंत्यावस्था I : इस अवस्था में केंद्रक आवरण व केंद्रिक पुन: स्पष्ट होने लगते हैं, कोशिकाद्रव्य विभाजन शुरू हो जाता है और कोशिका की इस अवस्था को कोशिका द्विक कहते हैं (चित्र 10.3)। यद्यपि बहुत से मामलों में गुणसूत्र का कुछ छितराव हो जाता है जबकि अंतरावस्था केंद्रक में पूर्णतया फैली अवस्था में नहीं मिलते हैं। दो अर्धसूत्री विभाजन के बीच की अवस्था को अंतरालावस्था (इंटरकाइनेसिस) कहते हैं और यह सामान्यतया कम समय के लिए होती है। इसमें डी.एन.ए. का द्विगुणन नहीं होता है उसके बाद पूर्वावस्था II आती है जो पूर्वावस्था I से काफी सरल होती है।

10.4.2 अर्धसूत्री विभाजन II

पूर्वावस्था II : अर्धसूत्री विभाजन II गुणसूत्र के पूर्ण लंबा होने के पहले व कोशिकाद्रव्य विभाजन के तत्काल बाद प्रारंभ होता है। अर्धसूत्री विभाजन I के विपरीत अर्धसूत्री विभाजन II सामान्य सूत्री विभाजन के समान होता है। पूर्वावस्था II के अंत तक केंद्रक

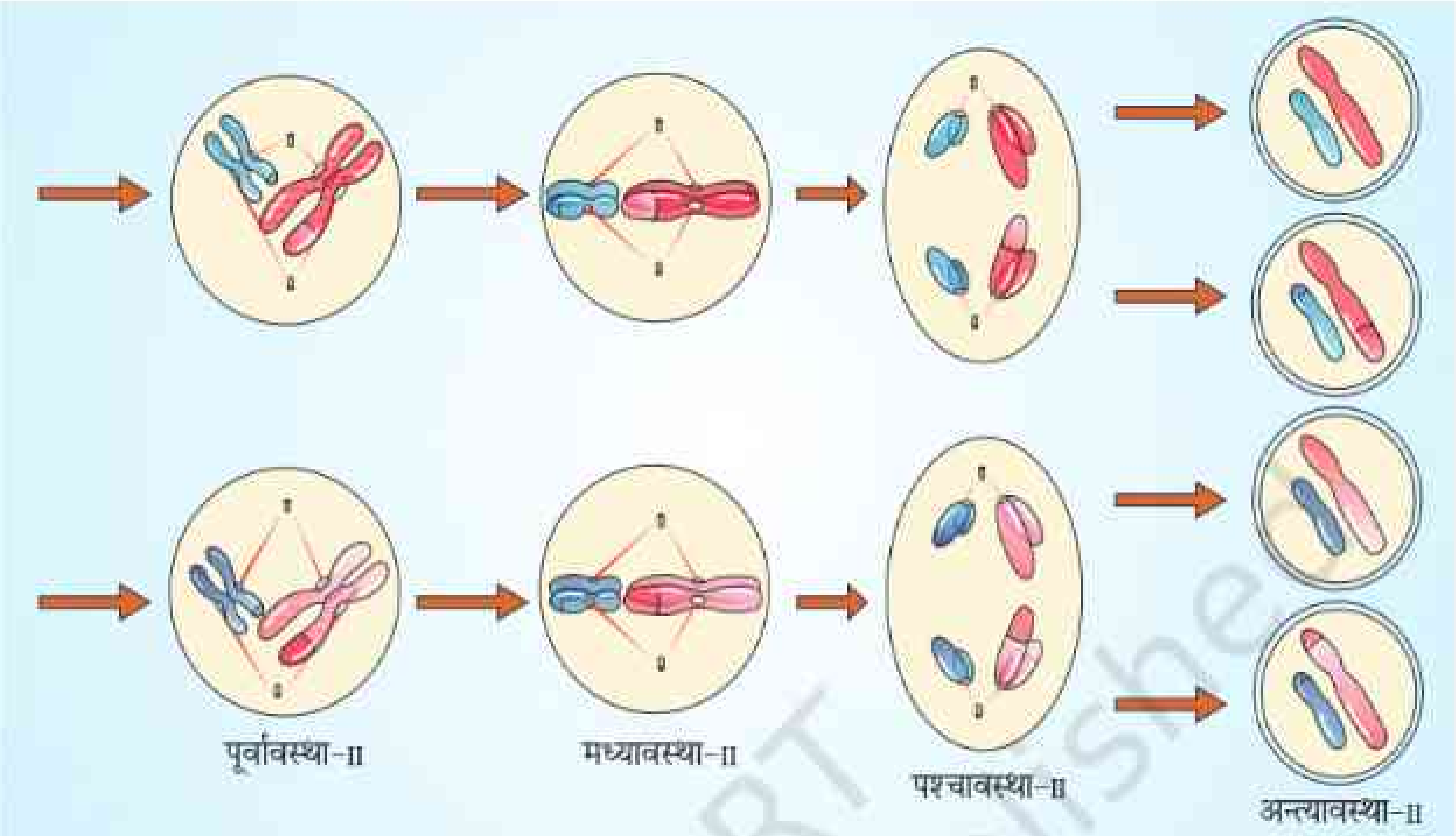

चित्र 10.4 अर्द्धसूत्रण की अवस्थाएं

आवरण अदृश्य हो जाता है (चित्र 10.4)। गुणूसत्र पुन: संहनित हो जाते हैं।

मध्यावस्था II : इस अवस्था में गुणसूत्र मध्यांश पर पंक्तिबद्ध हो जाते हैं और विपरीत ध्रुवों की तर्कुतंतु की सूक्ष्मनलिकाएं, इनके संतति अर्धगुणसूत्र के काइनेटोकोर से चिपक जाती हैं (चित्र 10.4)।

पश्चावस्था II : इस अवस्था में गुणसूत्रबिंदु अलग हो जाते हैं और इनसे जुड़े संतति अर्धगुणसूत्र काइनेटोकोर से जुड़ी हुयी सूक्ष्म नलिकाओं के छोटा होने से कोशिका के विपरीत ध्रुवों की ओर चले जाते हैं (चित्र 10.4)।

अंत्यावस्था II : यह अवस्था अर्धसूत्री विभाजन की अंतिम अवस्था है, जिसमें गुणसूत्रों के दो समूह पुन: केंद्रक आवरण द्वारा घिर जाते हैं। कोशिकाद्रव्य विभाजन के उपरांत चार अगुणित संतति कोशिकाओं का कोशिका चतुष्टय बन जाता है (चित्र 10.4)।

अर्धसूत्री विभाजन एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा लैंगिक जनन करने वाले जीवों की प्रत्येक जाति में विशिष्ट गुणसूत्रों की संख्या पीढ़ी दर पीढ़ी संरक्षित रहती है। यद्यपि विरोधाभासी प्रक्रिया के परिणाम स्वरूप गुणसूत्रों की संख्या आधी हो जाती है। इसके द्वारा जीवधारियों की जनसंख्या में एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक आनुवंशिक विभिन्नताएं बढ़ती जाती है। विकास प्रक्रिया के लिए विभिन्नताएं अत्यंत महत्वपूर्ण हैं।

सारांश

कोशिका सिद्धांत के अनुसार एक कोशिका का निर्माण पूर्ववर्ती कोशिका से होता है। इस प्रक्रिया को कोशिका विभाजन कहते हैं। लैंगिक जनन करने वाले किसी भी जीवधारी का जीवन चक्र एक कोशिकीय युग्मनज (जाइगोट) से प्रारंभ होता है। कोशिका विभाजन जीवधारी के वयस्क बनने के बाद भी रुकता नहीं है; बल्कि यह उसके जीवन भर चलता रहता है। उन अवस्थाओं को जिनके अंतर्गत कोशिका एक विभाजन से दूसरे विभाजन की ओर गुजरती है, उसे कोशिका चक्र कहते हैं। कोशिका चक्र में दो प्रावस्थाएं होती हैं (1) अंतरावस्था- कोशिका विभाजन की तैयारी की प्रावस्था तथा (2) सूत्री विभाजन- कोशिका विभाजन का वास्तविक समय। अंतरावस्था को पुन: G_1, S व G_2 प्रावस्थाओं में विभाजित किया गया है। G_1 प्रावस्था में कोशिका सामान्य उपापचयी क्रिया संपन्न करते हुए वृद्धि करती है। इस अवस्था में अधिकांश अंगकों का द्विगुणन होता है। S प्रावस्था में डीएनए प्रतिकृति व गुणसूत्र द्विगुणन होता है। G_2 प्रावस्था में कोशिकाद्रव्य की वृद्धि होती है। सूत्री विभाजन को चार अवस्थाओं में विभाजित किया गया है जैसे पूर्वावस्था, मध्यावस्था, पश्चावस्था व अंत्यावस्था। पूर्वावस्था में गुणसूत्र संघनित होने लगते हैं। साथ ही तारककेंद्र विपरीत ध्रुवों की ओर चले जाते हैं। केंद्रक आवरण व केंद्रिक विलोपित हो जाते हैं व तर्कुतंतु दिखना प्रारंभ हो जाते हैं। मध्यावस्था में गुणसूत्र मध्य पट्टिका पर पंक्तिबद्ध हो जाते हैं। पश्चावस्था के दौरान गुणसूत्रबिंदु विभाजित हो जाते हैं और अर्धगुणसूत्र विपरीत ध्रुवों की ओर चलना प्रारंभ कर देते हैं। अर्धगुणसूत्रों के ध्रुवों पर पहुँचने के बाद गुणसूत्रों का लंबा होना प्रारंभ हो जाता है, व केंद्रिक तथा केंद्रक आवरण पुन: स्पष्ट होने लगते हैं। यह अवस्था अंत्यावस्था कहलाती है। केंद्रक विभाजन के बाद कोशिकाद्रव्य का विभाजन होता है, इसे कोशिकाद्रव्य विभाजन कहते हैं। अत: सूत्रीविभाजन को समविभाजन भी कहते हैं, जिसके द्वारा संतति कोशिका में पितृकोशिकाओं के समान गुणसूत्रों की संख्या बरकरार रहती है।

सूत्री विभाजन के विपरीत अर्धसूत्री विभाजन उन द्विगुणित कोशिकाओं में होता है, जो युग्मक निर्माण के लिए निर्धारित होती हैं। इस विभाजन को अर्धसूत्री विभाजन भी कहते हैं। इस विभाजन के बाद बनने वाले युग्मकों में गुणसूत्रों की संख्या आधी हो जाती है। लैंगिक जनन में युग्मकों के संगलन से पैतृक कोशिका में पाए जाने वाले गुणसूत्रों की संख्या की वापसी हो जाती है। अर्धसूत्री विभाजन को दो अवस्थाओं में विभाजित किया गया है। अर्धसूत्री विभाजन I व अर्धसूत्री विभाजन II, प्रथम अर्धसूत्री विभाजन में समजात गुणसूत्र जोड़े युगली बनाते हैं तथा इनमें विनिमय होता है। अर्धसूत्री विभाजन I की पूर्वावस्था लंबी होती है व पाँच उपअवस्थाओं में विभाजित की गई है। ये अवस्थाएं है- तनुपट्ट (लेप्टोटीन), युग्मपट्ट (जाइगोटीन), स्थूलपट्ट (पैकीटीन), द्विपट्ट (डिप्लोटीन) व पारगतिक्रम (डाया काइनेसिस)। मध्यावस्था- I के समय युगली मध्यावस्था पट्टिका पर व्यवस्थित हो जाते हैं। इसके पश्चात पश्चावस्था I में समजात गुणसूत्र अपने दोनों अर्धगुणसूत्रों के साथ विपरीत ध्रुवों की ओर चले जाते हैं। प्रत्येक ध्रुव जनक कोशिका की तुलना में आधे गुणसूत्र प्राप्त करता है। अंत्यावस्था I के समय केंद्रक आवरण व केंद्रिक पुन: दिखाई देने लगते हैं। अर्धसूत्री विभाजन II सूत्री विभाजन के समान होता है। पश्चावस्था II के समय संतति अर्धगुणसूत्र आपस में अलग हो जाते हैं। इस प्रकार अर्धसूत्री विभाजन के पश्चात चार अगुणित कोशिकाएं बनती है।

अभ्यास

1. स्तनधारियों की कोशिकाओं की औसत कोशिका चक्र अवधि कितनी होती है?
2. जीवद्रव्य विभाजन व केंद्रक विभाजन में क्या अंतर है?
3. अंतरावस्था में होने वाली घटनाओं का वर्णन कीजिए।
4. कोशिका चक्र का Go (प्रशांत प्रावस्था) क्या है?
5. सूत्री विभाजन को सम विभाजन क्यों कहते हैं?
6. कोशिका चक्र की उस अवस्था का नाम बताएं, जिसमें निम्न घटनाएं संपन्न होती हैं-
   (i) गुणसूत्र तर्कु मध्यरेखा की तरफ गति करते हैं।
   (ii) गुणसूत्रबिंदु का टूटना व अर्धगुणसूत्र का पृथक् होना।
   (iii) समजात गुणसूत्रों का आपस में युग्मन होना।
   (iv) समजात गुणसूत्रों के बीच विनिमय का होना।
7. निम्न के बारे में वर्णन करें।
   (i) सूत्रयुग्मन (ii) युगली (iii) काएज्मेटा
8. पादप व प्राणी कोशिकाओं के कोशिकाद्रव्य विभाजन में क्या अंतर है?
9. अर्धसूत्री विभाजन के बाद बनने वाली चार संतति कोशिकाएं कहाँ आकार में समान व कहाँ भिन्न आकार की होती हैं?
10. सूत्री विभाजन की पश्चावस्था अर्धसूत्री विभाजन की पश्चावस्था I में क्या अंतर है?
11. सूत्री व अर्धसूत्री विभाजन में प्रमुख अंतरों को सूचीबद्ध करें?
12. अर्धसूची विभाजन का क्या महत्व है?
13. अपने शिक्षक के साथ निम्न के बारे में चर्चा करें-
    (i) अगुणित कीटों व निम्न श्रेणी के पादपों में कोशिका विभाजन कहाँ संपन्न होता है?
    (ii) उच्च श्रेणी पादपों की कुछ अगुणित कोशिकाओं में कोशिका विभाजन कहाँ नहीं होता है?
14. क्या S प्रावस्था में बिना डीएनए प्रतिकृति के सूत्री विभाजन हो सकता है?
15. क्या बिना कोशिका विभाजन के डीएनए प्रतिकृति हो सकती है?
16. कोशिका विभाजन की प्रत्येक अवस्थाओं के दौरान होने वाली घटनाओं का विश्लेषण करें और ध्यान दें कि निम्न लिखित दो प्राचलों में कैसे परिवर्तन होता है?
    (i) प्रत्येक कोशिका की गुणसूत्र संख्या (N)
    (ii) प्रत्येक कोशिक में डीएनए की मात्रा (C)

not to be republished © NCERT

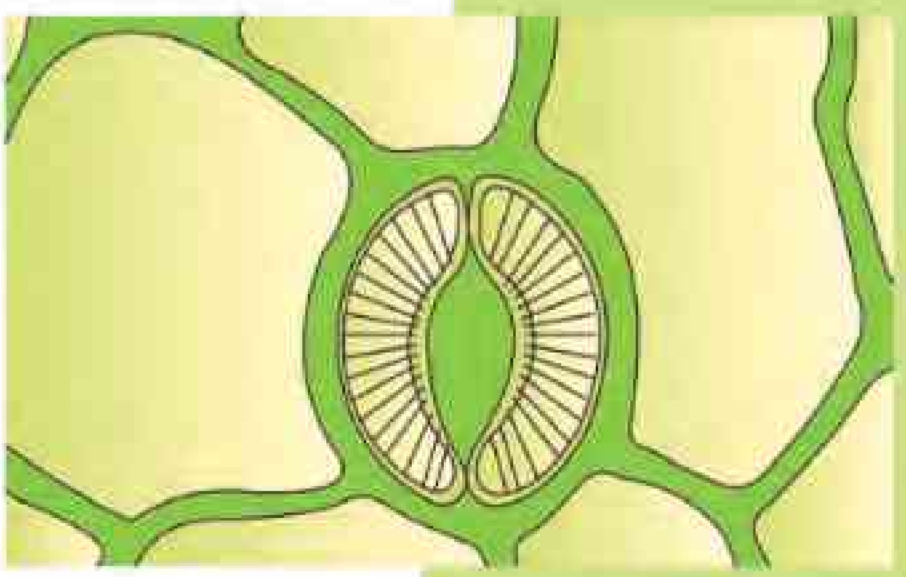

इकाई चार

पादप कार्यकीय (शरीर क्रियात्मकता)

अध्याय 11
उच्च पादपों में प्रकाश-संश्लेषण

अध्याय 12
पादप में श्वसन

अध्याय 13
पादप वृद्धि एवं परिवर्धन

एक समय के पश्चात जैव संरचना का वर्णन एवं जीवित जैविकों की विभिन्नता (विवरण) का अंत दो अलग रूप में हुआ जो जीव विज्ञान में स्पष्ट रूप से परस्पर विरोधी परिप्रेक्ष्य के थे। यह दो परिप्रेक्ष्य शुरूआती दौर पर जीवन स्वरूप एवं प्रतिभास के संगठन के दो स्तरों पर आधारित था। इसमें एक को जैव स्वरूप संगठन के स्तर पर वर्णित किया गया जबकि दूसरे को संगठन के कोशिकीय एवं अणु स्तर में वर्णित किया गया। परिणामस्वरूप पहला परिस्थिति-विज्ञान तथा इससे संबंधित विज्ञान के अंतर्गत था जबकि दूसरा शरीर विज्ञान एवं जैव-रसायन शास्त्र के रूप में स्थापित हुआ। पुष्पी पादपों में शरीर वैज्ञानिक प्रक्रमों का वर्णन एक उदाहरण के तौर पर है, जिसे इस खंड के अध्यायों में दिया गया है। पादपों में खनिज पोषण, प्रकाश-संश्लेषण, परिवहन, श्वसन तथा पादप वृद्धि एवं परिवर्धन को अंततः आण्विक भाषा में ही कोशिकीय कार्यविधि और यहाँ तक कि जैविक स्तर को संदर्भित किया गया है। जहाँ भी औचित्यपूर्ण पाया गया है, वहाँ पर पर्यावरण के संदर्भ में शरीर वैज्ञानिक प्रक्रम के संबंधों की भी चर्चा की गई है।

not to be republished © NCERT

मेलविन कैलविन

मेलविन कैलविन का जन्म अप्रैल 1911 में मिनसोटा (यू.एस.ए.) में हुआ था और आपने मिनसोटा विश्वविद्यालय से रसायन शास्त्र में पी.एच.डी. की उपाधि प्राप्त की। आपने बर्कले की केलीफोर्निया यूनीवर्सिटी के रसायन शास्त्र के प्रोफेसर के पद पर सेवाएं प्रदान की।

द्वितीय विश्व युद्ध के ठीक बाद, जब पूरा विश्व हिरोशिमा-नागासाकी की विस्फोटक घटना से रेडियोधर्मिता के दुष्प्रभाव को देखकर दुःख से स्तब्ध था, तब मेलविन और उनके सहकर्मी ने रेडियोधर्मिता के लाभदायक उपयोगों को प्रकट किया। आपने जे.ए. बाशाम के साथ मिलकर C_{14} के साथ कार्बनडाइऑक्साइड के लेबलप्रविध द्वारा कच्ची सामग्री जैसे कार्बनडाइऑक्साइड जल एवं खनिजो जैसे तत्वों से तथा शर्करा रचना से ग्रीन प्लांट्स (हरित पादपों) में प्रतिक्रिया का अध्ययन किया था। मेलविन ने प्रस्तावित किया कि पौधे प्रकाश ऊर्जा को रासायनिक ऊर्जा में बदल देते हैं, जिसके लिए एक वर्णक अणुओं के संगठित ऐरे (समूह) तथा अन्य तत्वों में एक इलेक्ट्रॉन को स्थानांतरित करते हैं। प्रकाश-संश्लेषण में कार्बन के स्वांगीकरण के पाथवे के प्रतिचित्रण करने पर आपको 1961 में नोबल पुरस्कार प्राप्त हुआ।

मेलविन के द्वारा स्थापित किए गए प्रकाश-संश्लेषण के सिद्धांत, आज भी, ऊर्जा एवं पदार्थो के लिए पुनः स्थापन योग्य संसाधनों के अध्ययन तथा सौर-ऊर्जा अनुसंधान में आधारभूत अध्ययनों के लिए भी उपयोग किये जाते हैं।

अध्याय 11

उच्च पादपों में प्रकाश-संश्लेषण

11.1 हम क्या जानते हैं?
11.2 प्रारंभिक प्रयोग
11.3 प्रकाश-संश्लेषण कहाँ संपन्न होता है?
11.4 प्रकाश-संश्लेषण में कितने वर्णक भाग लेते हैं?
11.5 प्रकाश अभिक्रिया क्या है?
11.6 इलेक्ट्रॉन परिवहन
11.7 एटीपी तथा एनएडीपीएच कहाँ प्रयोग होते हैं?
11.8 पथ
11.9 प्रकाश श्वसन
11.10 प्रकाश-संश्लेषण को प्रभावित करने वाले कारक

सभी प्राणी, यहाँ तक कि मानव भी आहार के लिए पौधों पर निर्भर हैं। क्या आपने कभी सोचा है कि पौधे अपना आहार कहाँ से प्राप्त करते हैं? वास्तव में, हरे पौधे अपना आहार संश्लेषित करते हैं तथा अन्य सभी जीव अपनी आवश्यकता के लिए उन पर निर्भर रहते हैं। हरे पौधे अपने लिए आवश्यक भोजन का निर्माण अथवा संश्लेषण 'प्रकाश-संश्लेषण' द्वारा करते हैं। अतः वे स्वपोषी कहलाते हैं। आप पहले ही पढ़ चुके हैं कि स्वपोषी संश्लेषण केवल पौधों में ही पाया जाता है तथा अन्य सभी जीव जो अपने भोजन के लिए पौधों पर निर्भर करते हैं, विषमपोषी कहलाते हैं। यह एक ऐसी भौतिक-रासायनिक प्रक्रिया है, जसमें कार्बनिक यौगिकों को संश्लेषित करने के लिए प्रकाश-ऊर्जा का उपयोग करते हैं। अंतः कुल मिलाकर पृथ्वी पर रहने वाले सारे जीव ऊर्जा के लिए सूर्य के प्रकाश पर निर्भर करते हैं। पौधों द्वारा प्रकाश-संश्लेषण में उपयोग की गई सूर्य-ऊर्जा पृथ्वी पर जीवन का आधार है। प्रकाश-संश्लेषण के महत्वपूर्ण होने के दो कारण हैं: यह पृथ्वी पर समस्त खाद्य पदार्थों का प्राथमिक स्रोत है तथा यह वायुमंडल में ऑक्सीजन छोड़ता है। *क्या आपने कभी सोचा है कि यदि साँस लेने के लिए ऑक्सीजन न हो, तो क्या होगा?* इस अध्याय में प्रकाश-संश्लेषी (मशीनरी) तथा विभिन्न प्रतिक्रियाओं के विषय में बताया जाएगा जो प्रकाश-ऊर्जा को रासायनिक ऊर्जा में रूपांतरित करती है।

11.1 हम क्या जानते हैं?

आइए, पहले यह पता करें कि हम प्रकाश-संश्लेषण के विषय में क्या जानते हैं। पिछली कक्षाओं में आपने कुछ सरल प्रयोग किए होंगे। जिनसे पता लगा होगा कि क्लोरोफिल (पत्तियों का हरा वर्णक), प्रकाश तथा कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) प्रकाश-संश्लेषण के लिए आवश्यक है।

आपने शायद शबलित (वेरीगेट) पत्तियों अथवा उस पत्ती में जिसे आंशिक रूप से काले कागज से ढक दिया हो और प्रकाश में रखा हो, जिससे स्टार्च (मंड) बनाने का

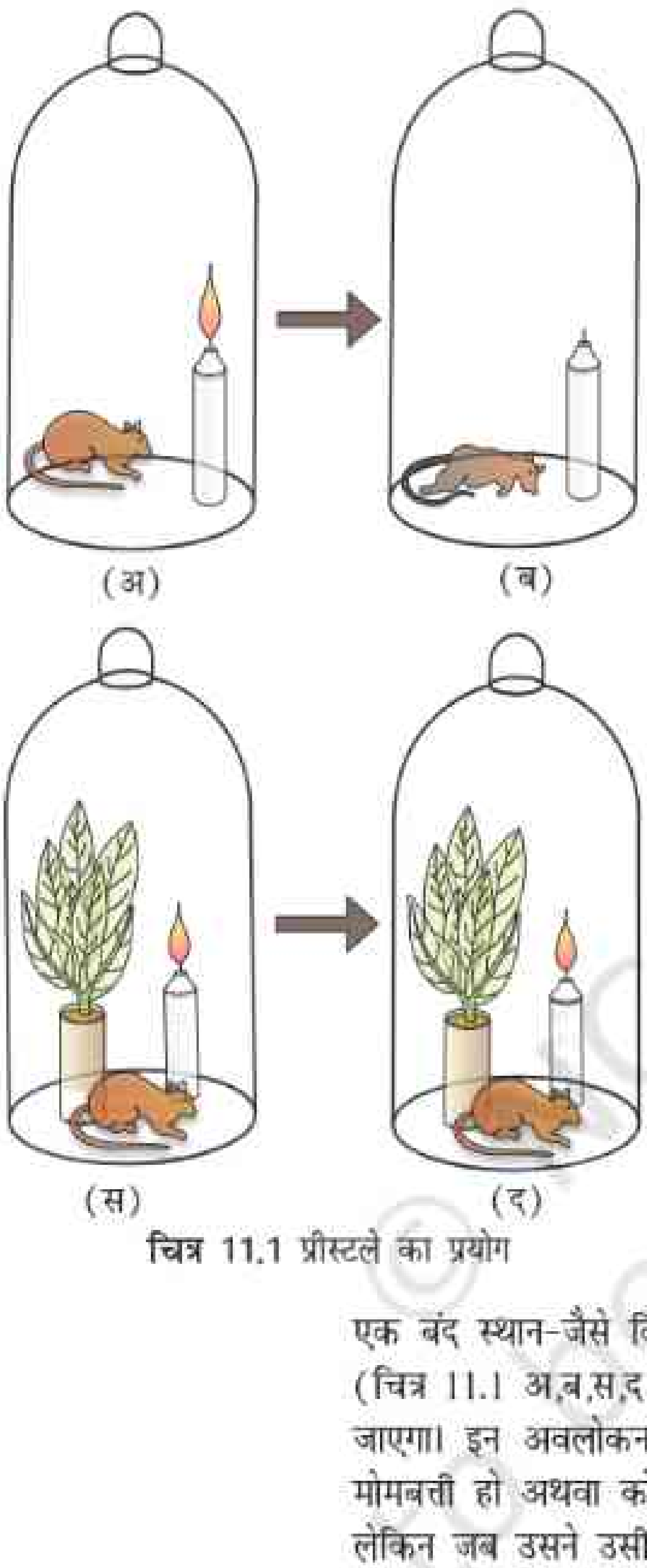

चित्र 11.1 प्रीस्टले का प्रयोग

प्रयोग को किया होगा। स्टार्च के लिए इन पत्तियों के परीक्षण से यह बात प्रकट होती है कि प्रकाश-संश्लेषण क्रिया सूर्य के प्रकाश में पेड़ के केवल हरे भाग में संपन्न होती है।

आपने एक अन्य प्रयोग आधी पत्ती से किया होगा जिसमें एक पत्ती का आंशिक भाग परखनली के अंदर रखा होगा और इसमें KOH से भीगी हुई रूई भी रखी होगी (KOH CO_2 को अवशोषित करता है) जबकि शेष भाग को प्रकाश में रहने दिया होगा। इसके बाद इस उपकरण को कुछ समय के लिए धूप में रखा जाता है। कुछ समय के बाद आप स्टार्च के लिए पत्ती का परीक्षण करते हो। इस परीक्षण से आपको पता लगा कि पत्ती का जो भाग परखनली में था, उसने स्टार्च की पुष्टि नहीं की और जो भाग प्रकाश में था, उसने स्टार्च की पुष्टि की। इस प्रयोग से यह सिद्ध होता है कि प्रकाश-संश्लेषण के लिए कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) आवश्यक है। *क्या आप इसका वर्णन कर सकते हो कि ऐसा निष्कर्ष किस प्रकार निकाला जा सकता है?*

11.2 प्रारंभिक प्रयोग

उन साधारण प्रयोगों के विषय में जानना काफी रुचिकर होगा जिनसे प्रकाशसंश्लेषण की प्रक्रिया क्रमिक विकसित हुई है।

जोसेफ प्रीस्टले (1733-1804) ने 1770 में बहुत से प्रयोग किए जिनसे पता लगा कि हरे पौधों की वृद्धि में हवा की एक अनिवार्य भूमिका है। आप को याद होगा कि प्रीस्टले ने 1774 में ऑक्सीजन की खोज की थी। प्रीस्टले ने देखा कि एक बंद स्थान-जैसे कि एक बेलजार में जलने वाली मोमबत्ती जल्दी ही बुझ जाती है (चित्र 11.1 अ,ब,स,द)। इसी प्रकार किसी चूहे का सीमित स्थान में जल्दी ही दम घुट जाएगा। इन अवलोकनों के आधार पर उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि चाहे जलती मोमबत्ती हो अथवा कोई प्राणी जो वायु से साँस लेते हैं, वे हवा को क्षति पहुँचाते हैं। लेकिन जब उसने उसी बेल जार में एक पुदीने का पौधा रखा तो उसने पाया कि चूहा जीवित रहा और मोमबत्ती भी सतत जलती रही। इस आधार पर प्रीस्टले ने निम्न परिकल्पना की: ''पौधे उस वायु की क्षतिपूर्ति करते हैं, जिन्हें साँस लेने वाले प्राणी और जलती हुई मोमबत्ती कम कर देती है।''

क्या आप कल्पना कर सकते हैं कि प्रीस्टले ने प्रयोग करने के लिए एक मोमबत्ती एवं पौधे का उपयोग कैसे किया होगा? याद रखें कि उसे मोमबत्ती को कुछ दिनों बाद पुन: जलाने की आवश्यकता होगी ताकि यह पता कर सके कि कुछ दिनों बाद वह जलेगी अथवा नहीं। *सेटअप को बिना बाधित किए आप मोमबत्ती को जलाने के लिए कितनी विधियों के बारे में सोच सकते हो?*

जॉन इंजेनहाउज (1730-1799) ने प्रीस्टले द्वारा निर्मित जैसे सेटअप का उपयोग किया जिसमें उसने उसे एक बार अंधेरे में और फिर एक बार सूर्य की रोशनी में रखा।

इससे यह पता लगा कि पौधों की इस प्रक्रिया में सूर्य का प्रकाश अनिवार्य है। यह जलती हुई मोमबत्ती या सांस लेने वाले प्राणियों द्वारा खराब हुई वायु को शुद्ध बनाता है। इंजेनहाउज ने अपने एक परिष्कृत प्रयोग में एक जलीय पौधे के साथ यह दिखाया कि तेज धूप में पौधे के हरे भाग के आस-पास छोटे-छोटे बुलबुले बन गए थे, जबकि अंधेरे में रखे गए पौधे के आस-पास बुलबुले नहीं बने थे। बाद में उसने इन बुलबुलों की पहचान ऑक्सीजन के रूप में की थी। अतः उसने यह दिखा दिया कि पौधे का केवल हरा भाग ही ऑक्सीजन को छोड़ सकता है।

1854 से पहले तक इसकी जानकारी नहीं थी, किंतु जूलियस वोन सैचस् ने यह प्रमाण दिया कि जब पौधा वृद्धि करता है तब ग्लूकोज (शर्करा) बनती है। ग्लूकोज प्रायः स्टार्च के रूप में संचित होता है। उसके बाद के अध्ययनों से यह पता लगा कि पौधे का हरा पदार्थ-जिसे क्लोरोफिल कहते हैं। पौधों की कोशिकाओं में स्थित विशिष्ट भाग (जिसे क्लोरोप्लास्क कहते हैं) में होता है। उसने बताया कि पौधों के हरे भाग में ग्लूकोज बनाता है और ग्लूकोज प्रायः स्टार्च के रूप में संचित होता है।

अब आप टी.डब्ल्यू. एंजिलमैन (1843-1909) द्वारा किए गए रोचक प्रयोग पर ध्यान दें। उसने प्रिज्म की सहायता से प्रकाश को स्पेक्ट्रमी घटकों में अलग किया और और फिर एक हरे शैवाल *क्लैडोफोरा* को जिसे ऑक्सी बैक्टीरिया के निलंबन में रखा गया था, को प्रदीप्त किया गया। बैक्टीरिया का उपयोग ऑक्सीजन निकलने का केंद्र पता लगाने के लिए था। उसने पाया कि बैक्टीरिया प्रमुखतः लाल एवं नीले प्रकाश क्षेत्रों में एकत्र हो गए थे। इस तरह से प्रकाश-संश्लेषण का पहला सक्रिय स्पेक्ट्रम (एक्शन स्पेक्ट्रम) वर्णित किया गया। यह मोटे तौर पर क्लोरोफिल *'a'* एवं *'b'* के अवशोषण स्पेक्ट्रा से मेल खाता है (11.4 खंड में इसका वर्णन किया गया है)।

उन्नीसवीं सदी के मध्य तक पादप प्रकाश-संश्लेषण की सभी मुख्य विशिष्टताओं के बारे में पता चल चुका था। जैसे कि, पौधे CO_2 तथा पानी से प्रकाश ऊर्जा का उपयोग कर कार्बोहाइड्रेट्स बनाते हैं। ऑक्सीजन उत्पन्न करने वाले जीवों में प्रकाश-संश्लेषण की कुल प्रतिक्रिया को आनुभविक समीकरण द्वारा प्रस्तुत किया गया।

$$CO_2 + H_2O \xrightarrow{\text{प्रकाश}} [CH_2O] + O_2$$

जहाँ पर (CH_2O) एक कार्बोहाइड्रेट (जैसे ग्लूकोज- एक छह (6) कार्बन शुगर) का प्रतिनिधित्व करता है।

एक सूक्ष्मजीव विज्ञानी कोर्नेलियस वैन नील (1897-1985) के प्रयोग ने प्रकाश-संश्लेषण को समझने में मील के पत्थर का काम किया। उसका अध्ययन बैंगनी (पर्पल) एवं हरे बैक्टीरिया पर आधारित था। उन्होंने बताया कि प्रकाश-संश्लेषण एक प्रकाश आधारित प्रतिक्रिया है जिसमें ऑक्सीकरणीय यौगिक से प्राप्त हाइड्रोजन कार्बनडाइऑक्साइड को अपचयित करके कार्बोहाइड्रेट बनाते हैं। इसे निम्नलिखित रूप से व्यक्त किया जा सकता है:

$$2H_2A + CO_2 \xrightarrow{\text{प्रकाश}} 2A + CH_2O + H_2O$$

हरे पौधों में H_2O हाइड्रोजन दाता है और ऑक्सीकृत होकर O_2 देता है। कुछ जीव प्रकाश-संश्लेषण के दौरान O_2 मुक्त नहीं करते हैं जब H_2S बैंगनी एवं हरे बैक्टीरिया

© NCERT not to be republished

के लिए हाइड्रोजन दाता होता है तो 'ऑक्सीकरण' उत्पाद जीवों के अनुसार सल्फर अथवा सल्फेट होता है न कि ऑक्सीजन। इससे उन्होंने निष्कर्ष निकाला कि हरे पौधों द्वारा निकाली गई ऑक्सीजन H_2O से आती है, न कि कार्बनडाइऑक्साइड से। बाद में यह बात रेडियो आइसोटोपिक तकनीक के उपयोग से सही प्रमाणित हुई। इसलिए कुल प्रकाश-संश्लेषण को प्रस्तुत करने वाला सही समीकरण निम्न है:

$$6\,CO_2 + 12\ H_2O \xrightarrow{\text{प्रकाश}} C_6H_{12}O_6 + 6H_2O + 6O_2$$

यहाँ पर $C_6H_{12}O_6$ ग्लूकोज का प्रतिनिधित्व करता है। जल से निकलने वाली O_2 को रेडियो आइसोटोपिक तकनीक से सिद्ध किया जा चुका है। यह एक एकल क्रिया नहीं है, बल्कि बहुचरणी प्रक्रम का वर्णन है जिसे प्रकाश-संश्लेषण कहते हैं। क्या आप यह वर्णन करेंगे कि उपरोक्त समीकरण में जल के 12 अणुओं का क्रियाधार के रूप में क्यों प्रयोग किया गया है?

11.3 प्रकाश-संश्लेषण कहाँ संपन्न होता है?

अध्याय 8 में पढ़ने के बाद निश्चित ही आपका उत्तर होगा: हरी पत्तियों में अथवा आप कह सकते हैं क्लोरोप्लास्ट में, निश्चित ही आपका उत्तर सही है। प्रकाश-संश्लेषण क्रिया हरी पत्तियों में तो संपादित होती ही है लेकिन यह पौधों के अन्य सभी हरे भागों में भी होती है। *क्या आप पौधे के कुछ अन्य भागों के नाम बता सकते हैं, जहाँ प्रकाश-संश्लेषण संपादित हो सकता है?*

आपने पिछली इकाई में पढ़ा होगा कि पत्तियों में मेसोफिल कोशिकाएं होती हैं। जिनमें अत्यधिक मात्रा में क्लोरोप्लास्ट होते हैं। सामान्यत: क्लोरोप्लास्ट मेसोफिल कोशिकाओं की भित्ति के साथ पंक्तिबद्ध होता है जिससे कि वे ईष्टतम मात्रा में आपतित प्रकाश प्राप्त कर सकें। *आपके विचार से हरित लवक कब अपने सपाट पटल भित्ति के समानांतर*

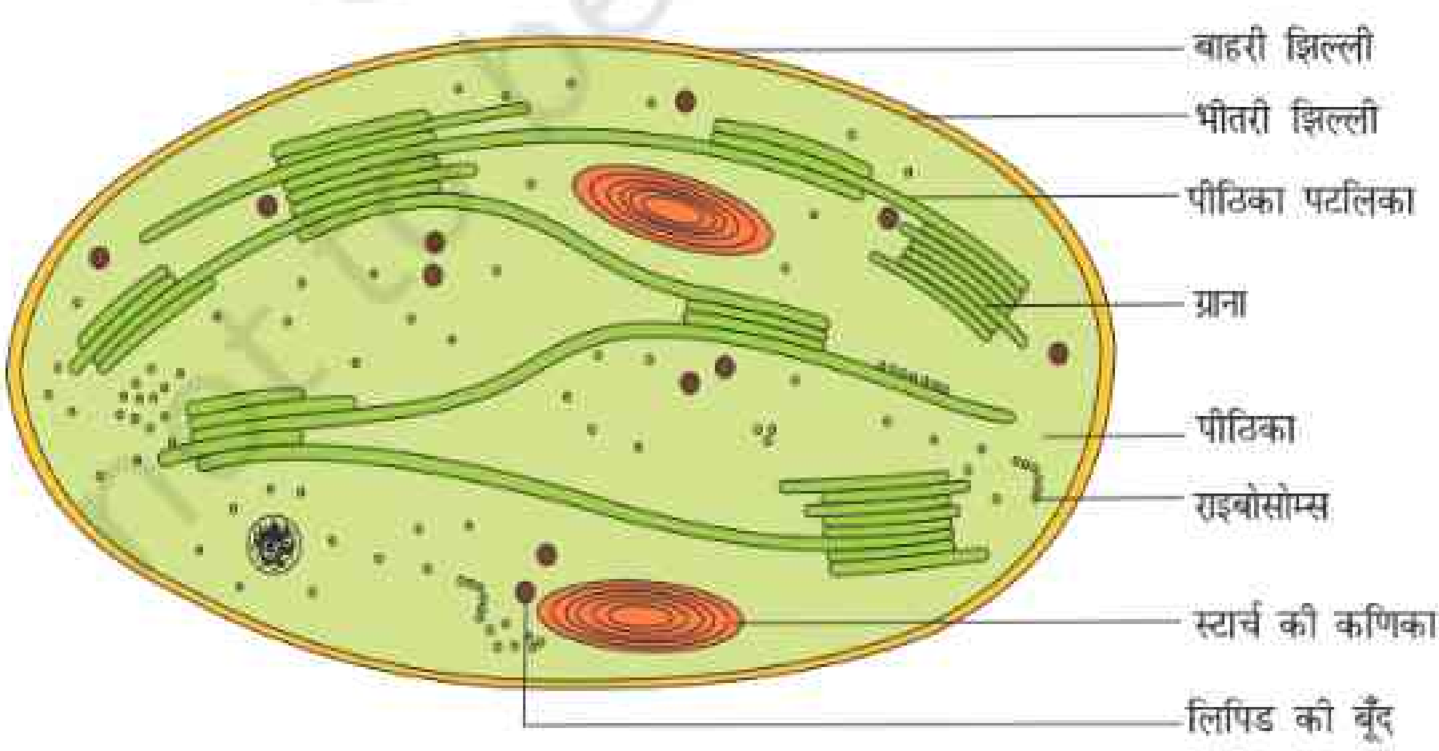

चित्र 11.2 इलेक्ट्रॉन सूक्ष्मदर्शी के द्वारा दिखाया गया हरित लवक की काट का आरेख प्रस्तुतीकरण

पंक्तिबद्ध होते हैं? वे आपतित सूर्य के प्रकाश से कब लंबित होते होंगे?

आपने अध्याय 8 में क्लोरोप्लास्ट की संरचना के बारे में पढ़ा है। क्लोरोप्लास्ट में एक झिल्ली तंत्र होता है जिसमें ग्रैना, स्ट्रोमा लैमेले और स्ट्रोमा तरल होता है (चित्र 11.2)। क्लोरोप्लास्ट में सुस्पष्ट श्रम विभाजन होता है। झिल्ली तंत्र प्रकाश-ऊर्जा को ग्रहण करता है और एटीपी एवं एनएडीपीएच का संश्लेषण करता है। स्ट्रोमा में एंजाइमैटिक प्रतिक्रिया होती है जो शर्करा का संश्लेषण करता है जो बाद में स्टार्च में परिवर्तित हो जाता है। पहली वाली प्रतिक्रिया को **प्रकाश अभिक्रिया** (प्रकाश रासायनिक अभिक्रिया) कहा जाता है, चूँकि यह पूर्णत: प्रकाश पर आधारित है। दूसरी प्रतिक्रिया प्रकाश अभिक्रिया के उत्पाद पर निर्भर होती है अर्थात् एटीपी तथा एनएडीपीएच, जो सैद्धांतिक रूप में अंधेरे में संपन्न होती हैं अत: इसे **अप्रकाशी अभिक्रिया** (कार्बन अभिक्रिया) कहते हैं। (इसके विषय का विस्तृत अध्ययन बाद में इसी अध्याय में किया जाएगा)

11.4 प्रकाश-संश्लेषण में कितने प्रकार के वर्णक भाग लेते हैं?

जब आप किसी पौधे को देख रहे होते हैं तो क्या कभी आश्चर्य हुआ है कि उसी पौधे में पत्तियों के हरे रंग में सूक्ष्म अंतर क्यों और कैसे है? हम इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए किसी भी हरे पादप के पर्णवर्णकों को पेपर क्रोमेटोग्राफी (कागज वर्णलेखिकी) द्वारा अलग कर सकते हैं। क्रोमेटोग्राफी से पता लगता है कि पत्तियों में स्थित वर्णक के कारण जो हरापन दिखाई देता है, वह किसी एक वर्णक के कारण नहीं, बल्कि चार वर्णकों: **क्लोरोफिल ए** (क्रोमेटोग्राफी में चमकीला अथवा नीला हरा), **क्लोरोफिल बी** (पीला हरा), **जैन्थोफिल** (पीला) तथा **कारटीनोएड** (पीले से नारंगी पीले) के कारण होता है। आइए, अब देखें कि प्रकाश-संश्लेषण में विभिन्न वर्णकों की क्या भूमिका है।

वर्णक वे पदार्थ हैं जिनमें प्रकाश की विशिष्ट तरंगदैर्घ्यों को अवशोषित करने की क्षमता होती है। *क्या आप अनुमान लगा सकते हैं कि विश्व में कौन सा पादप वर्णक सर्वाधिक है?* आइए, अब क्लोरोफिल ए वर्णक को ग्राफ में विभिन्न तरंगदैर्ध्यता में प्रकाश अवशोषण का अध्ययन

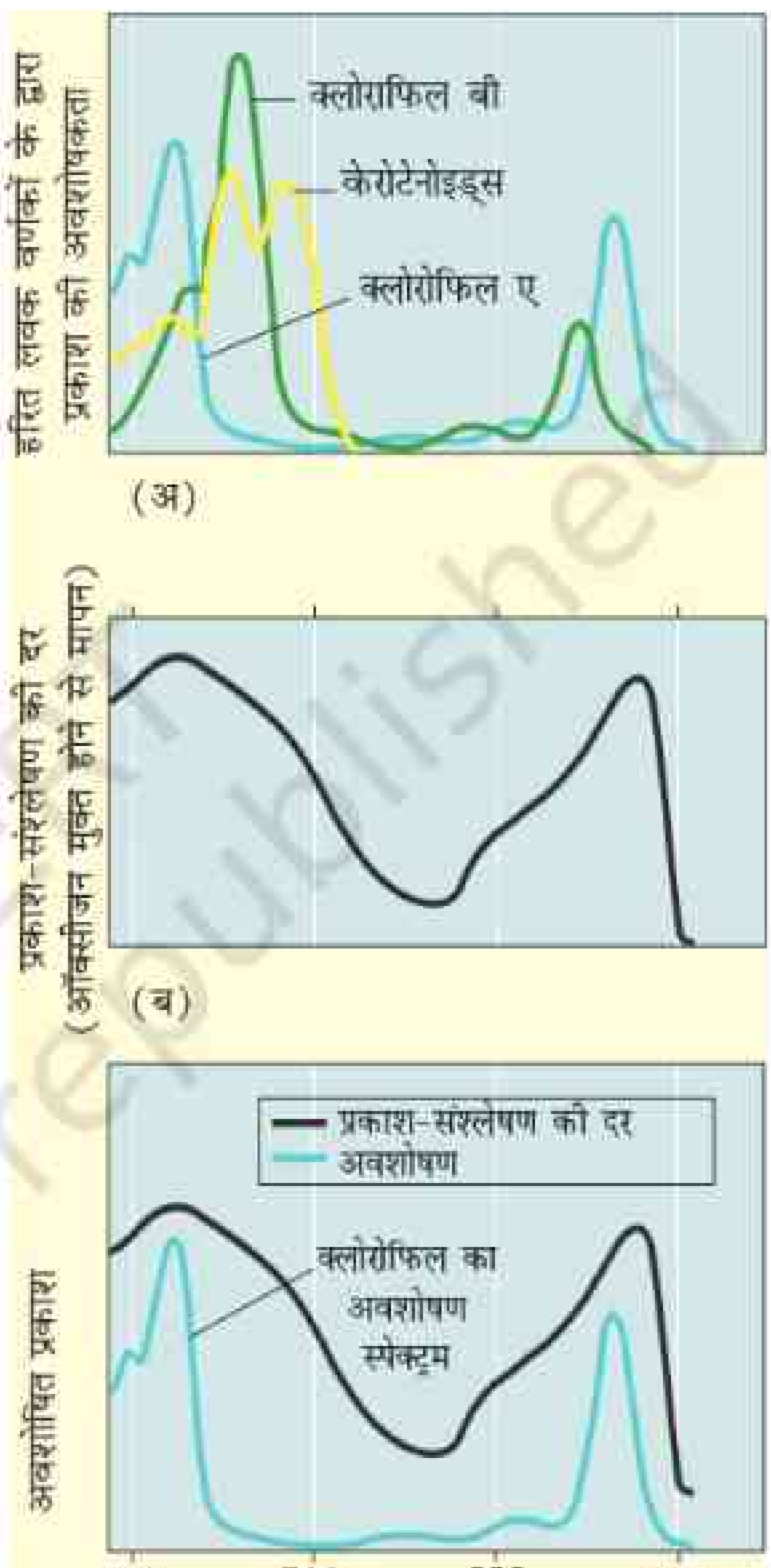

चित्र 11.3.अ क्लोरोफिल *ए,बी* तथा केरोटेनोइड्स का अवशोषित वर्णक्रम प्रदर्शित करता हुआ ग्राफ

चित्र 11.3.ब प्रकाश-संश्लेषण क्रियात्मक वर्णक्रम प्रदर्शित करता हुआ ग्राफ

चित्र 11.3.स क्लोरोफिल ए के अवशोषित वर्णक्रम पर प्रकाश-संश्लेषण के क्रियात्मक वर्णक्रम का अध्यारोपित दृश्य का ग्राफ

© NCERT not to be republished

करें (चित्र 11.3. अ)। आप स्पष्टत: प्रकाश के दृश्य स्पेक्ट्रम की तरंगदैर्ध्यता एवं विबग्योर (vibgyor) से परिचित हैं।

चित्र 11.3 अ को देखकर क्या आप बता सकते हैं कि किस तरंगदैर्ध्य पर क्लोरोफिल 'ए' अधिकतम अवशोषण करेगा? क्या यह किसी अन्य तरंगदैर्ध्यता पर कोई अन्य अवशोषण चोटी दिखाते हैं? यदि हाँ तो वे कौन हैं?

अब आप चित्र 11.3 (ब) को देखें जिसमें उन तरंगदैर्ध्यों को दिखाया गया है, जहाँ पर पादप में अधिकतम प्रकाश-संश्लेषण होता है। क्या आप देख रहे हैं कि तरंगदैर्ध्य क्लोरोफिल 'ए' अर्थात् नीला तथा लाल क्षेत्र में अवशोषण करता है, उस क्षेत्र में प्रकाश-संश्लेषण की दर भी अधिकतम है। अत: हम कह सकते हैं कि क्लोरोफिल 'ए' प्रकाश-संश्लेषण के लिए एक प्रमुख वर्णक है *लेकिन चित्र 11.3(स) देखने पर क्या आप कह सकते हैं कि क्लोरोफिल 'ए' के अवशोषण स्पेक्ट्रम तथा प्रकाश-संश्लेषण के क्रियात्मक स्पेक्ट्रम के बीच पूर्णत: परस्पर व्यापन है?*

ये ग्राफ, एक साथ यह बता रहे हैं कि अधिकतम प्रकाश-संश्लेषण स्पेक्ट्रम के नीले एवं लाल क्षेत्र में संपन्न होती है, और कुछ प्रकाश-संश्लेषण स्पेक्ट्रम की अन्य तरंगदैर्ध्यों पर भी संपन्न होती है। आइए, देखें कि यह कैसे होता है। यद्यपि क्लोरोफिल 'ए' प्रकाश को अवशोषित करने का मुख्य वर्णक है, फिर भी अन्य थाइलेकोइड में वर्णक जैसे क्लोरोफिल *बी*, जैन्थोफिल तथा केरोटिन, जिन्हें सहायक वर्णक कहते हैं, वे प्रकाश को अवशोषित करते हैं तथा अवशोषित ऊर्जा को क्लोरोफिल ए में स्थानांतरित कर देते हैं। वास्तव में ये वर्णक न केवल प्रकाश-संश्लेषण को प्रेरित करने वाली उपयोगी तरंगदैर्ध्य के क्षेत्र को बढ़ाते हैं बल्कि ये क्लोरोफिल 'ए' को फोटोऑक्सीडेसन से भी बचाते हैं।

11.5 प्रकाश अभिक्रिया क्या है?

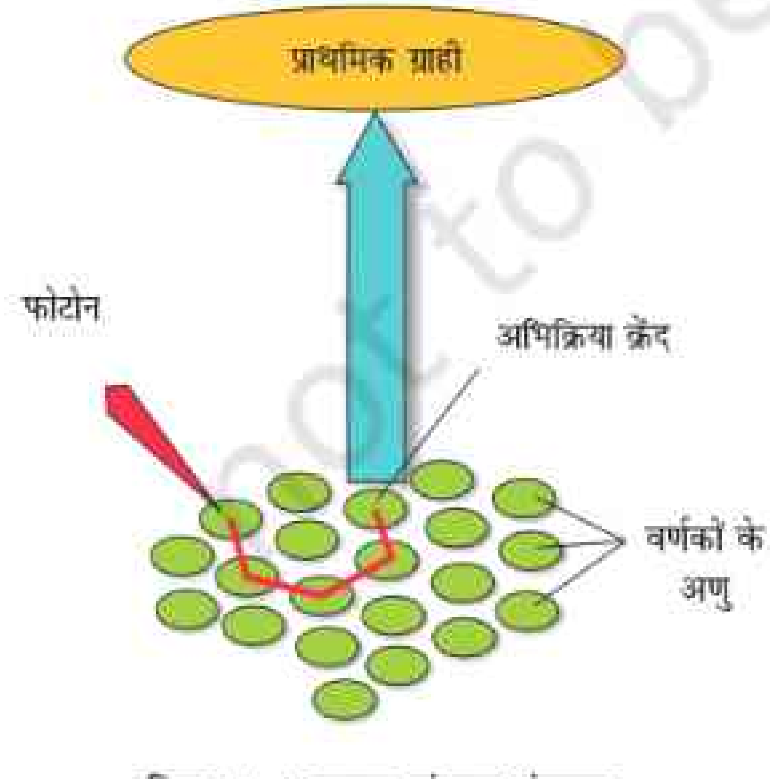

चित्र 11.4 प्रकाश संग्रहण तंतुजाल

प्रकाश अभिक्रिया अथवा 'प्रकाशरसायन' चरण में प्रकाश अवशोषण, जल विघटन, ऑक्सीजन निष्कर्षण तथा उच्च-ऊर्जा रसायन माध्यमिकों, जैसे एटीपी तथा एनएडीपीएच का निर्माण शामिल है। इस प्रक्रिया में अनेक प्रोटीन कॉम्पलेक्स सम्मिलित होते हैं। यहाँ वर्णक दो सुस्पष्ट प्रकाश रसायन **लाइट हार्वेस्टिंग कॉम्पलेक्स (एलएचसी)** जिन्हें **फोटोसिस्टम I (पीएस I)** तथा **फोटोसिस्टम II (पीएस II)** कहते हैं - में गठित होता है। इन्हें खोज के क्रम में ये नाम दिए गए हैं न कि प्रकाश अभिक्रिया के दौरान उनके काम करने के अनुक्रम में। एलएचसी प्रोटीन से आबद्ध हजारों वर्णक अणुओं से बने होते हैं। प्रत्येक फोटोसिस्टम में सभी वर्णक होते हैं, (सिवाय क्लोरोफिल 'ए' के एक अणु के) तथा एलएचसी का निर्माण करते हैं जिन्हें **ऐन्टेनी** कहते हैं (चित्र 11.4)। ये वर्णक विभिन्न तंरगदैर्ध्यों के प्रकाश को अवशोषित कर प्रकाश-संश्लेषण को अधिक दक्ष बनाते हैं। क्लोरोफिल

'ए' का एक अकेला अणु **अभिक्रिया केंद्र** बनाना है। दोनों फोटोसिस्टम में प्रतिक्रिया केंद्र पृथक् होते हैं। पीएस I में अभिक्रिया केंद्र क्लोरोफिल 'ए' का अवशोषण शीर्ष 700 एनएम (nm) पर होता है अत: इसे **पी 700** कहते हैं। पीएस II में अवशोषण शीर्ष 680 एनएम (nm) पर होता है अत: इसे **पी 680** कहते हैं।

11.6 इलेक्ट्रॉन परिवहन

फोटोसिस्टम II में अभिक्रिया केंद्र में मौजूद क्लोरोफिल 'ए' 680 एनएम वाले लाल प्रकाश को अवशोषित करता है, जिससे इलेक्ट्रॉन उत्तेजित होकर परमाणु नाभिक से दूर चला जाता है। इसे इलेक्ट्रॉन को एक इलेक्ट्रॉन ग्राही ले लेता है और इन्हें **इलेक्ट्रॉन्स ट्रांसपोर्ट सिस्टम** जिसमें साइटोक्रोम होते हैं, पहुँचा दिया जाता है (चित्र 11.5)। इलेक्ट्रॉन की यह गतिविधि अधोगामी है जो अपचयोपचय विभव मापन (रिडैक्स पोटेंशियल स्केल) के रूप में है। जब इलेक्ट्रॉन्स परिवहन शृंखला से इलेक्ट्रॉन्स गुजरते हैं तब उनका उपयोग नहीं होता बल्कि उन्हें फोटोसिस्टम पीएस I के वर्णकों को दे दिया जाता है। इसके साथ ही साथ, पीएस I का अभिक्रिया केंद्र के इलेक्ट्रॉन भी लाल प्रकाश की 700 एनएम तरंगदैर्ध्य को अवशोषित कर उत्तेजित होता है और यह अन्य ग्राही अणु में जिसका अपचयोपचय (रिडौक्स) विभव अधिक हो, स्थानांतरित होता है। ये इलेक्ट्रॉन्स पुन: अधोगामी गति करते हैं, परंतु इस बार वे ऊर्जा से प्रचुर एनएडीपी$^+$ अणु की ओर जाते हैं। ये इलेक्ट्रॉन्स एनएडीपी$^+$ को अपचयित कर एनएडीपीएच + H^+ को बनाते हैं। इलेक्ट्रॉन के स्थानांतरण की यह सारी योजना पीएस II से शुरू होकर शिखरोपरिग्राही की ओर, इलेक्ट्रॉन परिवहन शृंखला से होते हुए पीएस I तक, इलेक्ट्रॉन की उत्तेजना, अन्य ग्राही में स्थानांतरण और अंत: में अधोगामी होकर एनएडीपी$^+$ को अपचयित कर एनएडीपीएच + H^+ के बनने तक होती हैं। यह सारी योजना Z के आकार की होती है, इसलिए इसे **Z स्कीम** कहते हैं (चित्र 11.5)। यह आकृति तब बनती है जब सभी वाहक क्रमानुसार एक अपचयोपचय विभव माप पर हों।

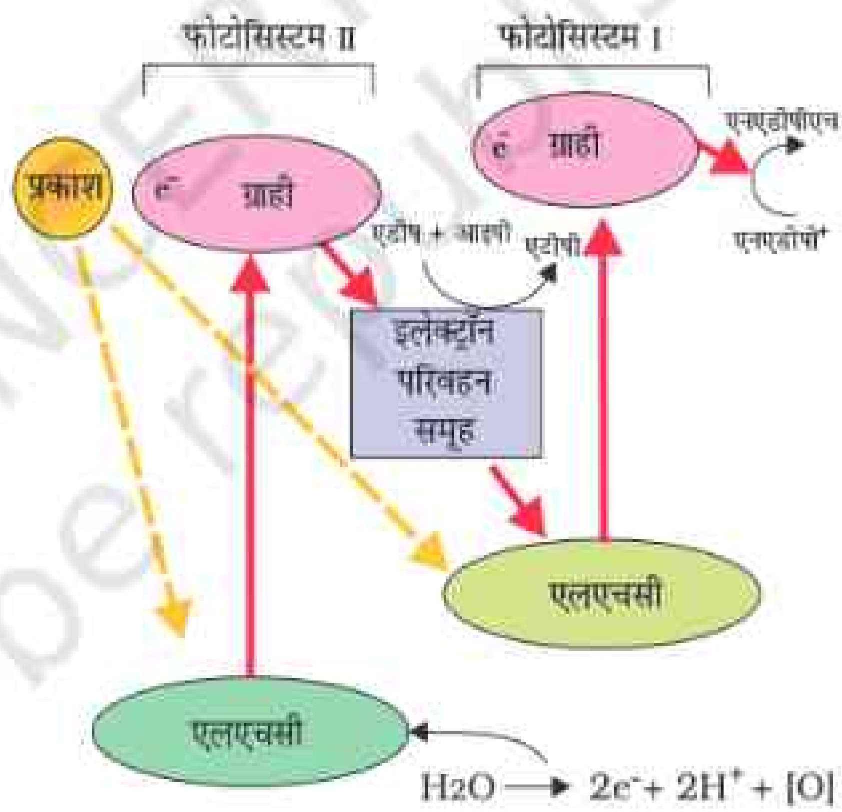

चित्र 11.5 प्रकाश अभिक्रिया की Z- स्कीम

11.6.1 जल का विघटन

अब आप पूछेंगे कि *पीएस II कैसे इलेक्ट्रॉन की आपूर्ति निरंतर करता है?* वे इलेक्ट्रॉन जो फोटोसिस्टम II में निकलते हैं, उनकी जगह निश्चित ही दूसरों को लेनी चाहिए। जल विघटन का संबंध पीएस II से है। जल H^+, [O] तथा इलेक्ट्रॉन में विघटित होता है। इससे ऑक्सीजन उत्पन्न होती है, जो प्रकाश-संश्लेषण का एक शुद्ध उत्पाद है। फोटोसिस्टम I से निकलने वाले इलेक्ट्रॉन, फोटोसिस्टम II से उपलब्ध कराए जाते हैं।

© NCERT not to be republished

$$2H_2O \longrightarrow 4H^+ + O_2 + 4e^-$$

हमें यह अच्छी प्रकार जान लेना चाहिए कि जल विघटन पीएस II से संबंधित है जो थाइलेकोइड की झिल्ली की भीतरी ओर होता है। *तब इस दौरान बनने वाले प्रोटोन्स एवं O_2 कहां मुक्त होते हैं- अवकाशिका (ल्युमेन)में अथवा झिल्लिका के बाहर की ओर?*

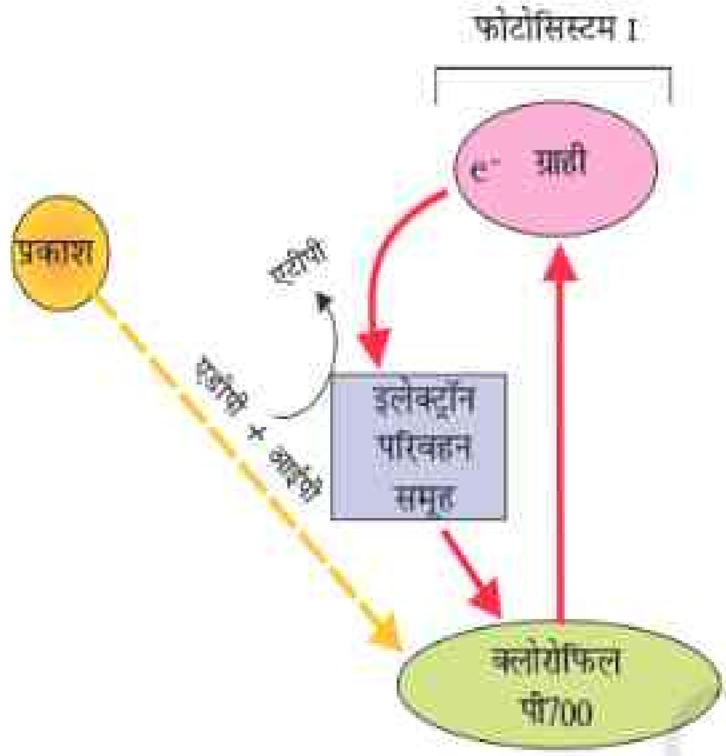

चित्र 11.6 चक्रीय फोटो-फोस्फोरीलेशन

11.6.2 चक्रीय एवं अचक्रीय फोटो-फोस्फोरीलेशन

जीवों में ऑक्सीकरणीय पदार्थों से ऊर्जा निकालने तथा उसे बंध -ऊर्जा के रूप में संचय करने की क्षमता होती है। विशेष पदार्थ जैसे एटीपी, इस ऊर्जा को अपने रासायनिक बंध में संजोये रखती हैं। कोशिकाओं द्वारा (माइटोकॉन्ड्रिया तथा क्लोरोप्लास्ट में) एटीपी के संश्लेषण की प्रक्रिया को फोस्फोरीलेशन कहते हैं। फोटो-फोस्फोरीलेशन वह प्रक्रिया है जिसमें प्रकाश की उपस्थिति में एडीपी तथा अकार्बनिक फोस्फेट से एटीपी का संश्लेषण होता है। जब दो फोटोसिस्टम क्रमिक कार्य करते हैं जिसमें पीएस II पहले और पीएस I दूसरे क्रम में कार्य करें तो इस प्रक्रिया को अचक्रीय फोटो-फॉस्फोरीलेशन कहते हैं। ये दोनों फोटोसिस्टम एक इलेक्ट्रॉन परिवहन शृंखला से जुड़े होते हैं जैसे कि पहले Z स्कीम में देख चुके हैं। एटीपी तथा एनएडीपीएच + H+ दोनों ही इस प्रकार के इलेक्ट्रॉन प्रवाह द्वारा संश्लेषित होते हैं (चित्र 11.5)।

जब केवल पीएस I क्रियाशील होता है, तब इलेक्ट्रॉन फोटोसिस्टम में ही घूमता रहता है और फोस्फोरीलेशन इलेक्ट्रॉन चक्रीय प्रवाह के कारण होता है (चित्र 11.6)। यह प्रवाह संभवत: स्ट्रोमा लैमिली में होती है। ग्राना की झिल्ली अथवा लैमिला में पीएस I एवं पीएस II, दोनों ही होते हैं, जबकि स्ट्रोमा लैमिली झिल्लियों में पीएस II एवं एनएडीपी रिडक्टेस एंजाइम नहीं होते हैं। उत्तेजित इलेक्ट्रॉन एनएडीपी+ में पारित नहीं होता, बल्कि वापस पीएस I कॉम्पलेक्स में इलेक्ट्रॉन प्रवाह शृंखला द्वारा चक्रित होता रहता है (चित्र 11.6)। अत: चक्रीय प्रवाह में केवल एटीपी का संश्लेषण होता है न कि एनएडीपीएच + एच+ का। चक्रीय फोटो-फॉस्फोरीलेशन तभी होता है जब उत्तेजना के लिए प्रकाश का तरंगदैर्ध्य 680nm से अधिक हो।

11.6.3 रसोपरासरणी परिकल्पना (केमिओस्मोटिक हाइपोथेसिस)

आइए, अब हम यह समझने का प्रयत्न करें कि क्लोरोप्लास्ट में एटीपी कैसे संश्लेषित होता है? इस प्रक्रम का वर्णन रसोपरासरणी परिकल्पना द्वारा कर सकते हैं। श्वसन की भाँति ही प्रकाश-संश्लेषण में भी, एटीपी का संश्लेषण एक झिल्लिका के आर-पार प्रोटोन प्रवणता के कारण होता है। यहाँ पर ये झिल्लिकाएं थाइलेकोइड की होती हैं। यहाँ पर एक अंतर यह है कि प्रोटोन झिल्लिका के अंदर की ओर अर्थात् अवकोशिका (ल्यूमेन) में संचित होता है। श्वसन में प्रोटोन माइटोकॉन्ड्रिया की अंतरा झिल्ली अवकोशिका में संचित होती है, जब इलेक्ट्रॉन इटीएस (अध्याय 12) से गुजरते हैं।

आइए, यह समझें कि किन कारणों से प्रोटोन प्रवणता झिल्लिका के आर-पार होती है? हमें पुनः उन प्रक्रियाओं पर ध्यान देना होगा जो इलेक्ट्रॉन के सक्रियता और उनके परिवहन के समय संपन्न होता है, ताकि उन चरणों को सुनिश्चित किया जा सके जिनके कारण प्रोटोन प्रवणता का विकास होता (चित्र 11.7) है।

(अ) चूँकि जल के अणु का विघटन झिल्लिका के अंदर की तरफ होता है अतः जल के विघटन से उत्पन्न हाइड्रोजन आयन अथवा प्रोटोन थाइलाकोइड अवकाशिका (ल्यूमेन) में संचित होते हैं।

(ब) जैसे ही इलेक्ट्रॉन्स फोटोसिस्टम के माध्यम से गति करते हैं, प्रोटोन झिल्लिका के पार चला जाता है। ऐसा इसलिए होता है, क्योंकि इलेक्ट्रॉन का प्राथमिक ग्राही, जो कि झिल्लिका के बाहर की ओर स्थित होता है, यह अपने इलेक्ट्रॉन को एक इलेक्ट्रॉन वाहक को स्थानांतरित नहीं करता, बल्कि एक हाइड्रोजन वाहक को करता है। अतः इलेक्ट्रॉन प्रवाह के समय यह अणु स्ट्रोमा से एक प्रोटोन को ले लेता है, जब यह अणु अपने इलेक्ट्रॉन को झिल्ली के भीतरी ओर स्थित इलेक्ट्रॉन वाहक को देता है, तब प्रोटोन के अंदर ओर अथवा झिल्ली की अवकाशिका की ओर मुक्त होता है।

(स) एनएडीपी रिडक्टेस एंजाइम झिल्ली के स्ट्रोमा की ओर होता है। पीएस I के इलेक्ट्रॉन ग्राही से आने वाले इलेक्ट्रॉन्स के साथ-साथ प्रोटोन एनएडीपी$^+$ को एनएडीपी एच + एच$^+$ में अपचयित करने के लिए आवश्यक होता है। ये प्रोटोन स्ट्रोमा पीठिका से ही आते हैं।

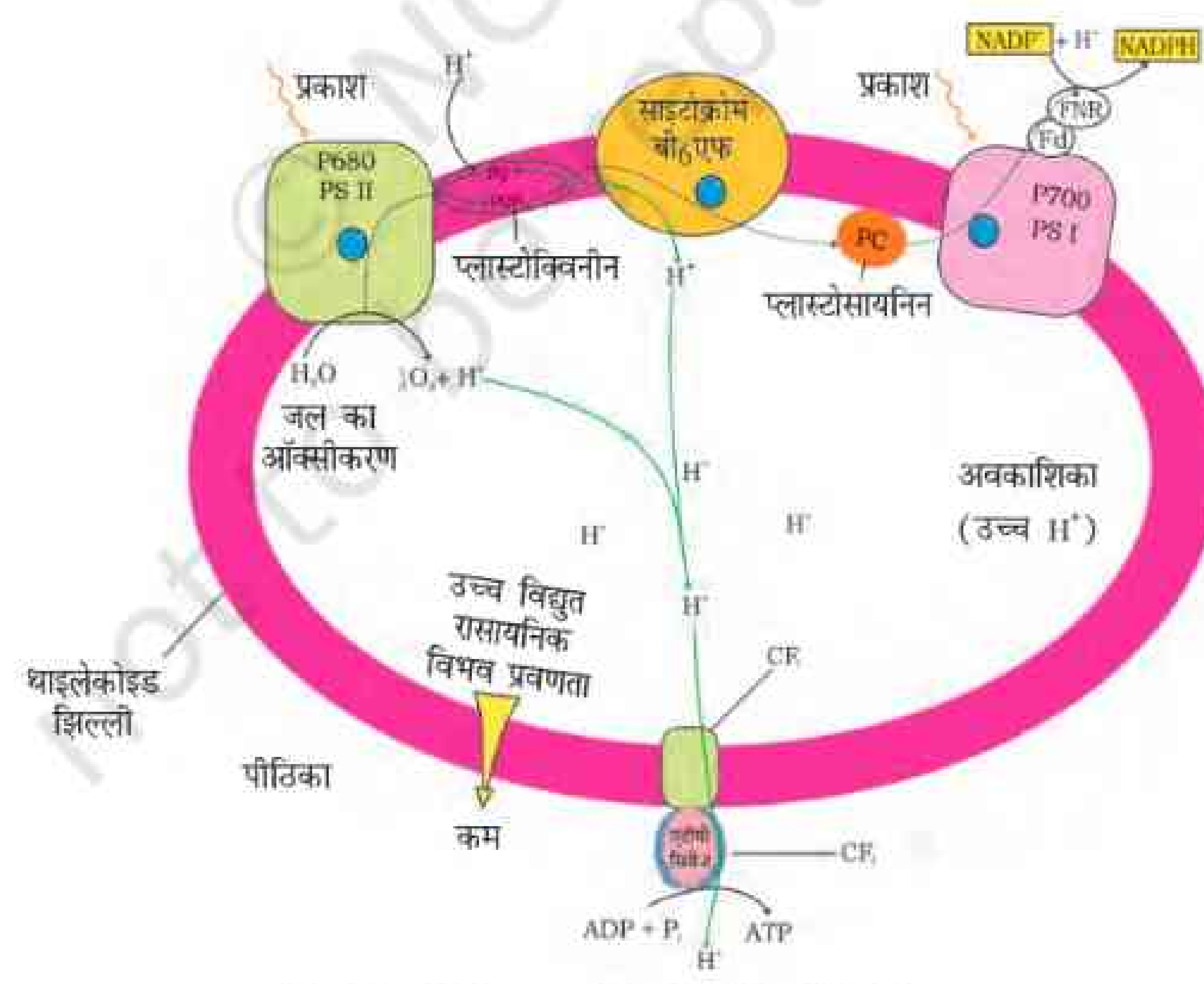

चित्र 11.7 रसोपरासरण के द्वारा एटीपी का निर्माण

© NCERT not to be republished

अत: क्लोरोप्लास्ट में स्थित स्ट्रोमा में प्रोटोन की संख्या घटती है, जबकि ल्यूमेन (अवकाशिका) में प्रोटोन का संचयन होता है। इस प्रकार यह थाइलाकोइड झिल्ली के आर-पार एक प्रोटोन प्रवणता उत्पन्न होती है और साथ ही साथ ल्यूमेन में पी एच (pH) भी कम हो जाता है।

हमारे लिए प्रोटोन प्रवणता इतना महत्वपूर्ण क्यों है? प्रोटोन प्रवणता इसलिए महत्वपूर्ण है; चूँकि प्रवणता टूटने पर एटीपी का संश्लेषण होता है और ऊर्जा मुक्त होती है। यह प्रवणता इसलिए भंग होती है; क्योंकि प्रोटोन झिल्लिका में मौजूद एटीपी सिन्थेज के पारगमन वाहिका (CF_0) के माध्यम से स्ट्रोमा में गतिशील होता है। आपने अध्याय 12 में एटीपी तथा एटीपी सिन्थेज एंजाइम के बारे में पढ़ा है। आपको याद होगा कि एटीपी सिन्थेज एंजाइम में दो भाग होते हैं: इसमें एक एफ शून्य(F_0) कहलाता है, जो झिल्लिका में अत: स्थापित होता है तथा एक पारगमन झिल्लिका चैनल की रचना करता है जो कि झिल्लिका के आर-पार प्रोटोन के विसरण को आगे बढ़ाता है। इसका दूसरा भाग एफ वन (F_1) कहलाता है और थाइलेकोइड की बाहरी सतह जो स्ट्रोमा की ओर होती है पर उद्धर्व के रूप में होता है प्रवणता का भंजन पर्याप्त ऊर्जा प्रदान करता है, जिसके कारण एटीपी सिन्थेज के कण एफ वन (F_1) में संरूपण परिवर्तन आता है। जिससे कि एंजाइम ऊर्जा से प्रचूर एटीपी का संश्लेषण कर सकें।

रसोपरासरण (केमिओस्मोसिस) के लिए एक झिल्लिका, एक प्रोटोन पंप, एक प्रोटोन प्रवणता तथा एटीपी सिन्थेज की आवश्यकता होती है। प्रोटोन को एक झिल्लिका के आर-पार पंप करने के लिए ऊर्जा का उपयोग होता है, ताकि थाइलेकोइड ल्यूमेन में एक प्रवणता अथवा प्रोटोन की उच्च सांद्रता पैदा हो सके। एटीपी सिन्थेज के पास एक चैनल अथवा नलिका होता है, जो झिल्लिका के आर-पार प्रोटोन को विसरण का अवसर देता है। यह एटीपी सिन्थेज एंजाइम को सक्रिय करने के लिए पर्याप्त ऊर्जा छोड़ता है जो एटीपी संश्लेषण को उत्प्रेरित करता है।

इलेक्ट्रॉन की गतिशीलता से उत्पादित एनएडीपीएच के साथ एटीपी भी स्ट्रोमा (पीठिका) में संपन्न होने वाले जैव संश्लेषण में तुरंत उपयोग कर लिए जाएंगे, जो CO_2 के स्थिरण एवं शर्करा के संश्लेषण के लिए आवश्यक है।

11.7 एटीपी तथा एनएडीपीएच कहाँ उपयोग होते हैं?

हमने पढ़ा है कि प्रकाश अभिक्रिया के उत्पाद एटीपी, एनएडीपीएच तथा O_2 हैं। इनमें से O_2 क्लोराप्लास्ट के बाहर विसरित होती है; जबकि एटीपी तथा एनएडीपीएच का उपयोग आहार अथवा शर्करा को संश्लेषित करने वाली प्रक्रिया में होता है। यह प्रकाश-संश्लेषण का **जैव संश्लेषण चरण** होता है। यह प्रक्रिया परोक्ष रूप से प्रकाश पर निर्भर नहीं होती; बल्कि यह प्रकाश के प्रक्रियाओं के उत्पादों अर्थात् एटीपी तथा एनएडीपीएच के अतिरिक्त CO_2 तथा H_2O (जल) पर निर्भर होती है। आप शायद यह आश्चर्य कर सकते हैं कि इसकी सत्यता की जाँच कैसे की जा सकती है? यह बहुत ही सरल है। प्रकाश उपलब्ध न होने के तुरंत बाद कुछ समय तक के लिए जैव संश्लेषण प्रक्रिया जारी रहती है और इसके बाद बंद हो जाती है। यदि इसके बाद पुन: प्रकाश उपलब्ध होता है तो संश्लेषण पुन: आरंभ हो जाता है।

अतः जैव संश्लेषण चरण को ***अप्रकाशी अभिक्रिया*** *(डार्क रिएक्शन) कहना क्या एक मिथ्या है? अपने साथियों के बीच इसकी चर्चा करें।*

आइए अब देखें कि जैव संश्लेषण चरण में एटीपी तथा एनएडीपीएच का उपयोग कैसे होता है? हम पहले देख चुके हैं कि H_2O के साथ CO_2 के मिलने से $(CH_2O)_n$ अथवा शर्करा उत्पादित होती है। यह वैज्ञानिकों की रुचि थी कि उन्होंने यह खोजा कि यह प्रतिक्रिया कैसे संपन्न होती है अथवा यह जाना कि CO_2 के प्रतिक्रिया में आने से अथवा यौगिकीकृत होने से कौन सा पहला उत्पाद बनता है। द्वितीय विश्व युद्ध के ठीक बाद, लाभदायी उपयोग हेतु रेडियो आइसोटोपिक का उपयोग किया गया। इस उपयोग में मेलविन केल्विन का कार्य सराहनीय था। उन्होंने शैवाल में रेडियो एक्टिव 14_C का उपयोग प्रकाश-संश्लेषण अध्ययन में किया, जिससे पता लगा कि CO_2यौगिकीकरण (फिक्सेशन) पहला उत्पाद एक 3 कार्बन वाला कार्बनिक अम्ल था। इसके साथ ही उसने संपूर्ण जैव संश्लेषण पथ की खोज की अतः इसे **केल्विन चक्र** कहते हैं। इस पहले उत्पाद का नाम 3-**फोस्फोग्लिसेरिक** अम्ल अथवा संक्षेप में **पीजीए** है। *इसमें कितने कार्बन परमाणु होते हैं?*

वैज्ञानिकों ने जानने का यह भी प्रयत्न किया कि क्या सभी पौधे CO_2यौगिकीकरण (स्थिरीकरण) के बाद पहला उत्पाद पीजीए ही बनाते हैं अथवा फिर अन्य पौधों में कोई अन्य उत्पाद हैं। बहुत सारे पौधों में व्यापक शोध किए गए, जहाँ पर CO_2 के यौगिकीकरण का पहला स्थायी उत्पाद पुनः एक कार्बनिक अम्ल था, जिसमें कार्बन के चार परमाणु थे। यह अम्ल **ओक्सैलोएसिटिक अम्ल** अथवा ओएए था। तब से प्रकाश-संश्लेषण के दौरान CO_2के स्वांगीकरण (एसिमिलेशन) को दो मुख्य विधियों से बताया गया। जिन पौधों में, CO_2यौगिकीकरण का पहला उत्पाद C_3 अम्ल (PGA) था उसे **C_3पथ** और जिनका पहला उत्पाद C_4 अम्ल (ओएए) था, उसे **C_4 पथ** कहते हैं। इन दोनों समूह के पौधों में कुछ अन्य अभिलक्षण भी होते हैं, जिनकी चर्चा हम बाद में करेंगे।

11.7.1 CO_2 के प्राथमिकग्राही

आइए, अब हम अपने आप से एक प्रश्न पूछें, जिसे कि उन वैज्ञानिकों द्वारा पूछा गया था जो अप्रकाशी अभिक्रिया को समझने के लिए संघर्ष कर रहे थे। *उस अणु में कितने कार्बन परमाणु हैं जो CO_2 को ग्राह्य करने के बाद तीन कार्बन यौगिक (अर्थात् पीजीए) बनाते हैं?*

अध्ययनों से पता लगा कि ग्राही अणु एक पाँच कार्बन वाला कीटोज शुगर (शर्करा) था, यह रिब्यूलोज 1-5 बिसफोस्फेट (RuBP) था। *क्या आपमें से किसी ने इस संभावना के बारे में सोचा था?* परेशान मत होइए; वैज्ञानिकों को भी इसे जानने में बहुत समय लगा और किसी निष्कर्ष पर पहुँचने से पहले बहुत सारे प्रयोग किए गए थे। उन्हें यह भी यकीन था कि, चूँकि पहला उत्पाद C_3अम्ल था, अतः प्राथमिकग्राही 2 कार्बन कंपाउंड (यौगिक) होगा। उन्होंने पहले 2 कार्बन कम्पाउंड को पहचानने के लिए कई वर्ष तक प्रयत्न किए। अंततः उन्होंने पाँच कार्बन वाले RuBP की खोज करने में सफलता प्राप्त की।

11.7.2 केल्विन चक्र

केल्विन तथा उसके सहकर्मियों ने संपूर्ण पथ का पता लगाया और बताया कि यह पथ एक चक्रीय क्रम में संचालित होता है; जिसमें RuBP पुन: उत्पादित होता है। आइए, अब यह देखें कि केल्विन पथ कैसे संचालित होता है और शर्करा कहाँ पर संश्लेषित होती है। आइए, शुरू में ही हम स्पष्ट रूप से समझ लें कि केल्विन चक्र उन सभी पौधों में होता है जो प्रकाश-संश्लेषण करते हैं। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता कि उनमें चाहे पथ C_3 अथवा C_4 (अथवा कोई अन्य) हो (चित्र 11.8)।

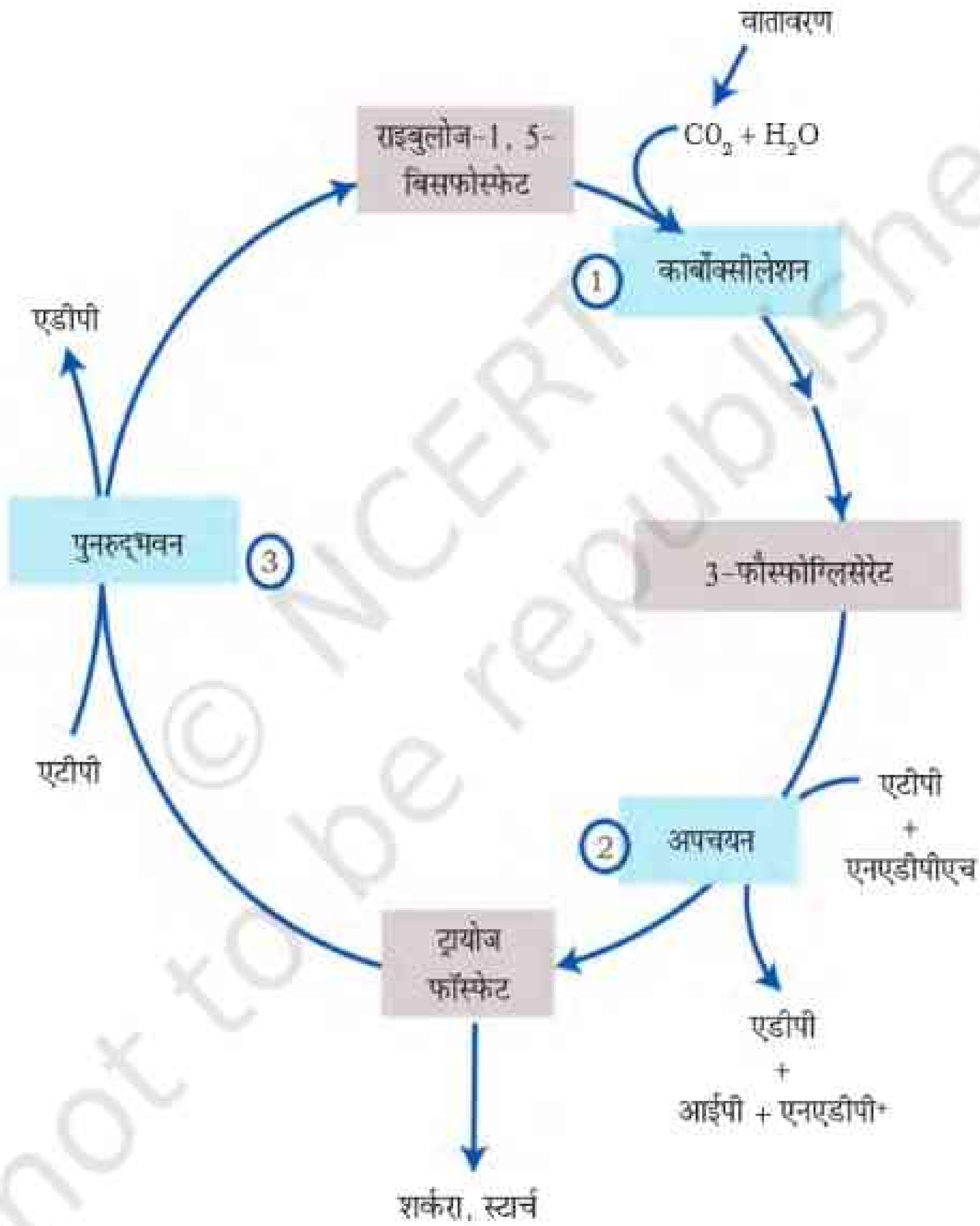

चित्र 11.8 केल्विन चक्र तीन भागों में बांटा जा सकता है। (1)कार्बोक्सिलेशन जिसमें CO_2 राइबुलोज-1, 5 विसफांस्फेट से योग करता है (2) अवकरण, जिसमें कार्बोहाइड्रेट का निर्माण प्रकाश रासायनिक ग्राही तथा एनएडीपीएच की मदद से होता है तथा (3) पुनरुद्भवन जिसमें CO_2 ग्राही राइबुलोज-1, 5 बिसफोस्फेट का फिर से निर्माण होता है तथा चक्र चलता रहता है।

केल्विन चक्र को आसानी से समझने के लिए इसको तीन चरणों - कार्बोक्सिलीकरण (कार्बोक्सीलेशन), रिडक्शन तथा रिजनरेशन में वर्णन करते हैं।

1. **कार्बोक्सिलीकरण**- CO_2 के यौगिकीकरण से एक स्थिर कार्बनिक मध्यस्थ बनता है। केल्विन चक्र में कार्बोक्सिलीकरण एक अत्यधिक निर्णायक चरण है जहाँ RuBP के कार्बोक्सिलीकरण के लिए CO_2 का उपयोग किया जाता है। यह प्रतिक्रिया एंजाइम RuBP कार्बोक्सिलेस के द्वारा उत्प्रेरित होती है, जिसके परिणामस्वरूप 3-P GA के दो अणु बनते हैं। चूँकि इस एंजाइम में एक ऑक्सीजिनेशन (ऑक्सीकरण) क्षमता भी होती है, अत: यह ज्यादा उचित होगा कि हम इस एंजाइम को RuBP कार्बोक्सीलेस-ऑक्सीजिनेस अथवा **रुबिस्को** कहें।
2. **रिडक्शन (अपचयन)** यह प्रतिक्रियाओं की एक शृंखला है जिसमें ग्लूकोज बनता है। इस चरण में प्रत्येक CO_2 अणु के स्थिरण हेतु एटीपी के 2 अणुओं का उपयोग फॉस्फोरिलेशन के लिए तथा एनएडीपीएच के दो अणुओं का उपयोग अपचयन हेतु होता है। **पथ** से ग्लूकोज के एक अणु को बनाने के लिए CO_2 के 6 अणुओं के यौगिकीकरण तथा चक्करों की आवश्यकता होती है।
3. **रिजेनरेशन (पुनरुद्भवन)** यदि चक्र को बिना बाधा के जारी रहना है तो CO_2 ग्राही अणु RuBP का पुनरुद्भवन बहुत ही आवश्यक होता है। पुनरुद्भवन के चरण में RuBP गठन हेतु फॉस्फोरीलेशन के लिए एक एटीपी की आवश्यकता होती है।

इसलिए, केल्विन चक्र में CO_2 के प्रत्येक अणु को प्रवेश के लिए एटीपी के 3 अणु तथा एनएडीपीएच के 2 अणुओं की आवश्यकता होती है। अप्रकाश अभिक्रिया में उपयोग होने वाले एटीपी और एनएडीपीएच की संख्याओं में यह अंतर ही चक्रीय फॉस्फोरीलेशन को संपन्न कराने का कारण है।

ग्लूकोस के एक अणु की रचना के लिए इस चक्र के 6 चक्करों की आवश्यकता होती है। *यह पता करें कि केल्विन पथ के माध्यम से ग्लूकोस के एक अणु की रचना के लिए कितने एटीपी तथा एनएडीपीएच के अणुओं की आवश्यकता होती है।* आपको यह बात शायद समझने में मदद करेगी कि केल्विन चक्र में क्या अंदर जाता है और क्या बाहर निकलता है।

अंदर	बाहर
6 CO_2	एक ग्लूकोज
18 एटीपी	18 एडीपी
12 एनएडीपीएच	12 एनएडीपी

11.8 पथ C_4

C_4 पथ जैसा कि पहले बताया गया है कि पौधे जो शुष्क उष्णकटिबंधी क्षेत्र में पाए जाते हैं उनमें C_4 पथ होता है। इन पौधों में CO_2 को यौगिकीकरण का पहला उत्पाद यद्यपि C_4 औक्जेलोएसिटिक अम्ल होता है फिर भी इनके मुख्य जैव संश्लेषण पथ में C_3 पथ

© NCERT not to be republished

अथवा केल्विन चक्र ही होता है। तब फिर से C_3 पौधों से किस प्रकार में भिन्न हैं? यह एक प्रश्न है जिसे आप पूछ सकते हैं।

C_4 पौधे विशिष्ट हैं: इनकी पत्तियों में एक विशेष प्रकार की शारीरिकी होती है। ये उच्च ताप को सह सकते हैं। ये उच्च प्रकाश तीव्रता के प्रति अनुक्रिया करते हैं। उनमें प्रकाश श्वसन प्रक्रिया नहीं होती और उनमें जैव भार अधिक उत्पन्न होता है। आइए, इन्हें एक-एक करके समझें।

आओ, C_3 तथा C_4 पत्तियों की खड़ी काट का अध्ययन करें। *क्या आपने इन दोनों में कोई अंतर देखा है? क्या दोनों में एक ही प्रकार के पर्णमध्योतक हैं? क्या इनके संवहनी पूलाच्छद के आस-पास एक ही प्रकार की कोशिकाएं हैं?*

C_4 पथ पौधों की संवहन बंडल के चारों ओर स्थित बृहद् **कोशिकाएं पूलाच्छद** (बंडल शीथ) कोशिकाएं कहलाती हैं और पत्तियाँ जिनमें ऐसी शारीर होती है, उन्हें **क्रांज़ शारीर** वाली पत्तियाँ कहते हैं। यहाँ, क्रांज़ का अर्थ है छल्ला अथवा घेरा, चूँकि कोशिकाओं की व्यवस्था एक छल्ले के रूप में होती है। संवहन बंडल के आस-पास पूलाच्छद कोशिकाओं की **अनेकों परतें** होती हैं, इनमें बहुत अधिक संख्या में क्लोरोप्लास्ट होते हैं, इसकी मोटी भित्तियाँ गैस से अप्रवेश्य होती हैं और इनमें अंतरकोशीय स्थान नहीं होता। आप C_4 पौधों जैसे मक्का अथवा ज्वार की पत्तियों का एक भाग काटो, ताकि क्रांज़ शारीर एवं पर्णमध्योतक देख सकें।

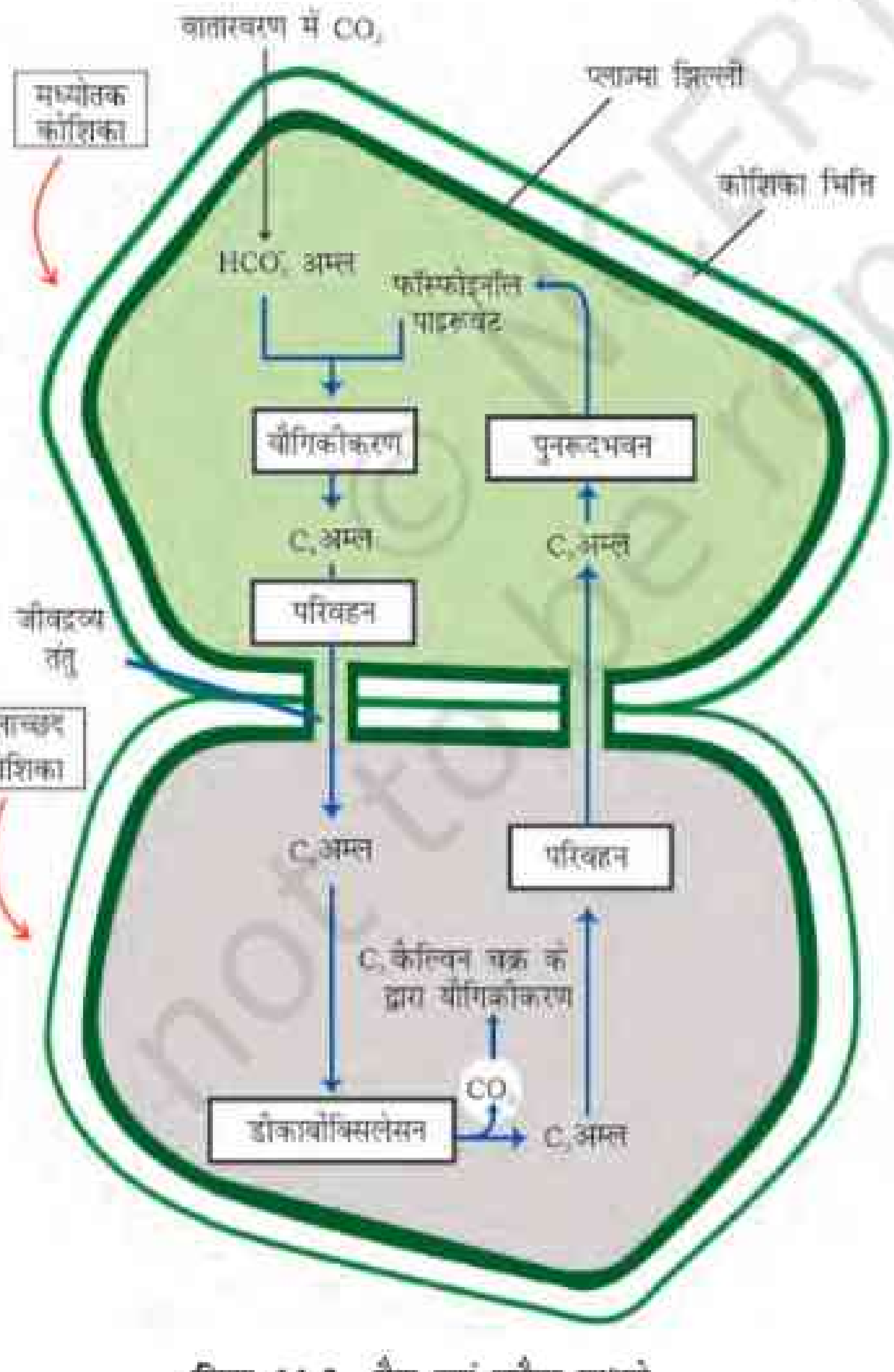

चित्र 11.9 हैच एवं स्लैक पाथवे

अपने आस-पास के विभिन्न स्पेशीज के पेड़ों की पत्तियाँ एकत्र करें और उनकी पत्तियों की खड़ी काट लें। सूक्ष्मदर्शी से इसके संवहन बंडल पूल के आस-पास पूलाच्छद को देखें। पूलाच्छद की उपस्थिति C_4 पौधों को पहचानने में आपकी सहायता करेगा।

अब चित्र 11.9 में दिखाए गए पथ का अध्ययन करें। इस पथ को हैच एवं स्लैल पथ कहते हैं। यह भी एक चक्रीय प्रक्रिया है। आइए, हम चरणों को समझते हुए पथ का अध्ययन करें।

CO_2 का प्राथमिक ग्राही एक 3 कार्बन अणु **फोस्फोइनोल पाइरुवेट** (PEP) है और वह पर्णमध्योतक कोशिका में स्थित होता है। इस यौगिकीकरण को **पेप कार्बोक्सीलेस** अथवा पेप केस (PEP) नामक एंजाइम संपन्न करता है। पर्णमध्योतक कोशिकाओं में रुबिस्को एंजाइम नहीं होता है। C_4 अम्ल ओएए पर्णमध्योतक कोशिका में निर्मित होता है।

इसके बाद ये पर्णमध्योतक कोशिका में अन्य 4-कार्बन वाले अम्ल जैसे मैलिक अम्ल और एस्पार्टिक अम्ल बनते हैं, जोकि पूलाच्छद कोशिका में चले जाते हैं। पूलाच्छद कोशिका में यह C_4 अम्ल विघटित हो जाता है जिससे CO_2 तथा एक 3-कार्बन अणु मुक्त होते हैं।

3-कार्बन अणु पुन: पर्णमध्योतक में वापस आ जाता है, जहाँ यह पुन: पेप में बदला जाता है और इस तरह से यह चक्र पूरा होता है।

पूलाच्छद कोशिका से निकली CO_2 केल्विन पथ अथवा C_3 में प्रवेश करती है केल्विन एक ऐसा पथ जो सभी पौधों में समान रूप से होता है। पूलाच्छद कोशिका रुबिस्को से भरपूर होती है, परंतु पेप केस से रहित होती है। अत: मौलिक पथ केल्विन पथ जिसके परिणामस्वरूप शर्करा बनती है, वह C_3 एवं C_4 पौधों में सामान्य रूप से होता है।

क्या आपने ध्यान दिया है कि केल्विन पथ सभी C_3 पौधों की पर्णमध्योतक कोशिकाओं में पाया जाता है? C_4 पौधों में पर्णमध्योतक कोशिकाओं में यह संपन्न नहीं होता है, किंतु पूलाच्छद कोशिकाओं में केवल कारगर होता है।

11.9 प्रकाश श्वसन (फोटोरेस्पिरेशन)

आइए, हम एक और प्रक्रिया- प्रकाश श्वसन को जानने का प्रयत्न करते हैं, जो C_3 एवं C_4 पौधों में महत्वपूर्ण अंतर करती है। **प्रकाश श्वसन** समझने के लिए, हमें केल्विन पथ के प्रथम चरण अर्थात् CO_2 स्थिरीकरण के पहले चरण के विषय में कुछ अधिक जानकारी करनी होगी। यह वह अभिक्रिया है जहाँ RuBP कार्बन डाईऑक्साइड से संयोजित कर 3 पीजीए के 2 अणुओं का गठन करता है और एक एंजाइम रिबूलोज विसफोस्फेट कार्बोक्सीलेस ऑक्सीजिनेस (RuBisCO) के द्वारा उत्प्रेरित होता है।

$$\text{RuBP} + CO_2 \xrightarrow{\text{रुबिस्को}} 2\text{x}3\text{PGA}$$

रुबिस्को नामक एंजाइम विश्व में सबसे ज्यादा प्रचुर है (आपको आश्चर्य होता है क्यों?) और इसका यह गुण है कि इसकी सक्रिय जगह CO_2 एवं O_2 दोनों से बंधित हो सकता है। इसलिए इसे रुबिस्को कहते हैं। *क्या आप सोच सकते हैं कि यह कैसे संभव है?* जब CO_2 व O_2 का अनुपात लगभग समान होता है रुबिस्को में O_2 की अपेक्षा CO_2 के लिए अधिक बंधुता है। कल्पना कीजिए कि यदि ऐसा नहीं होता तो क्या होता! यह आबंधता प्रतियोगितात्मक है। O_2 अथवा CO_2 इनमें से कौन आबंध होगा, यह उनकी सापेक्ष सांद्रता पर निर्भर करता है।

C_3 पौधों में कुछ O_2 रुबिस्को से बंधित होती है अत: CO_2 का यौगिकीकरण कम हो जाता है। यहाँ पर आरयुबीपी 3-PGA के अणुओं में पतिवर्तित होने की बजाय ऑक्सीजन से संयोजित होकर चक्र में एक फास्फोग्लिसरेट अणु तथा फॉस्फोग्लाइकोलेट का एक अणु बनाते हैं जिसे प्रकाश श्वसन कहते हैं। प्रकाश श्वसन पथ में शर्करा और एटीपी का संश्लेषण नहीं होता; बल्कि इसमें एटीपी के उपयोग के साथ CO_2 भी निकलती है। प्रकाश श्वसन पथ में एटीपी अथवा एनएडीपीएच का संश्लेषण नहीं होता। प्रकाश श्वसन के जैविक कार्य के बारे में अभी तक पता नहीं है।

तालिका 11.1 C_3 एवं C_4 पौधों के बीच अंतर करने के लिए इस तालिका के कालम 2 और 3 को भरो।

विशिष्टताएं	C_3 पौधे	C_4 पौधे	इनमें से चुनिए
वह कोशिका प्रकार जिसमें केल्विन चक्र संपन्न होता है			पर्णमध्योतक/पूलाच्छद/दोनों
वह कोशिका प्रकार जिसमें प्रारंभिक कार्बोक्सिलेशन प्रतिक्रिया घटित होती है।			पर्णमध्योतक/पूलाच्छद/दोनों
एक पत्ती में कितने प्रकार की कोशिकाएं होती है जो CO_2 का यौगिकीकरण करती है।			एक: पर्णमध्योतक, दो: पूलाच्छद एवं पर्णमध्योतक तीन: पूलाच्छद, पैलिसेड (खंभ), स्पंजी पर्णमध्योतक
CO_2 का प्राथमिक ग्राही कौन सा है?			आरयुबीपी/पीईपी/पीजीए
प्राथमिक CO_2 ग्राही में कितनी संख्या में कार्बन होते हैं?			5/4/3
CO_2 स्थिरीकरण का प्राथमिक उत्पाद कौन सा है?			पीजीए/ओएए/आरयुबीपी
CO_2 स्थिरीकरण के प्राथमिक उत्पाद में कितने कार्बन हैं?			3/4/5
क्या पौधे में रुबिस्को (RuBisCO) होता है?			हाँ/नहीं/सदैव नहीं
क्या पौधे में पेपकेस (PEPCase) होता है?			हाँ/नहीं/सदैव नहीं
पौधे में किन कोशिकाओं में रुबिस्को (Rubisco) होता है?			पर्णमध्योतक/पूलाच्छद कोई नहीं
उच्च प्रकाश स्थिति में CO_2 के यौगिकीकरण की दर			निम्न/उच्च/मध्यम
क्या निम्न प्रकाश तीव्रता में प्रकाश श्वसन होता है?			उच्च/नगण्य/कभी-कभी
क्या उच्च प्रकाश तीव्रता में प्रकाश श्वसन होता है?			उच्च/नगण्य/कभी-कभी
क्या निम्न CO_2 सांद्रता में प्रकाश श्वसन होगा?			उच्च/नगण्य/कभी-कभी
क्या उच्च CO_2 सांद्रता में प्रकाश श्वसन होगा?			उच्च/नगण्य/कभी-कभी
अनुकूलतम तापमान			30-40^{0}C /20-25^{0}C 40^{0}C से ऊपर
उदाहरण			विभिन्न पौधों की पत्तियों के खडे सेक्सन काटें तथा सूक्ष्मदर्शी के नीचे रखकर क्रांज़ शारीर देखें तथा उन्हें उपयुक्त खाने (कॉलम) में भरें।

© NCERT not to be republished

C4 पौधे में प्रकाश श्वसन नहीं होता है। इसका कारण यह है कि इनमें एक ऐसी प्रणाली होती है जो एंजाइम स्थल पर CO_2 की सांद्रता बढ़ा देती है। ऐसा तब होता है जब पर्णमध्योतक का C_4 अम्ल पूलाच्छद में टूटकर CO_2 को मुक्त करता है, जिसके परिणामस्वरूप CO_2 की अंतरकोशिकीय सांद्रता बढ़ जाती है। इससे यह सुनिश्चित हो जाता है कि रुबिस्को कार्बोक्सीलेस के रूप में कार्य करता है, जिससे इसकी ऑक्सीजिनेस के रूप में कार्य करने की क्षमता कम हो जाती है।

अब, आप जानते है कि C_4 पौधों में प्रकाश श्वसन नहीं होता। अब संभवत: आप समझ गए होंगे कि इन पौधों में उत्पादकता एवं उत्पादन क्यों अच्छा होता है। इसके अतिरिक्त ये पौधे उच्च ताप को भी सहन कर सकते हैं।

उपर्युक्त परिचर्चा के आधार पर क्या आप उन पौधों की तुलना कर सकते हो जिसमें C_3 तथा C_4 पथ होता है। आप दी गई तालिका का उपयोग कर आवश्यक सूचनाओं को भरें।

11.10 प्रकाश-संश्लेषण को प्रभावित करने वाले कारक

प्रकाश-संश्लेषण को प्रभावित करने वाले कारकों के विषय में जानना आवश्यक है। प्रकाश-संश्लेषण की दर पौधों एवं फसली पादपों के उत्पादन जानने में अत्यंत ही महत्वपूर्ण है। प्रकाश-संश्लेषण कई कारकों से प्रभावित होता है जो बाह्य तथा आंतरिक दोनों ही हो सकते हैं। पादप कारकों में संख्या, आकृति, आयु तथा पत्तियों का विन्यास, पर्णमध्योतक कोशिकाएं तथा क्लोराप्लास्ट आंतरिक CO_2 की सांद्रता और क्लोराफिल की मात्रा आदि है। पादप अथवा आंतरिक कारक पौधे की वृद्धि तथा आनुवंशिक पूर्वानुकूलता पर निर्भर करते हैं।

बाह्य कारक हैं सूर्य का प्रकाश, ताप, CO_2 की सांद्रता तथा जल। पादप की प्रकाश-संश्लेषण प्रक्रिया में ये सभी कारक एक समय में साथ-साथ ही प्रभाव डालते हैं। यद्यपि, बहुत सारे कारक परस्पर क्रिया करते हैं तथा साथ-साथ प्रकाश-संश्लेषण अथवा CO_2 के यौगिकीकरण को प्रभावित करते हैं, फिर भी प्राय: इनमें से कोई भी एक कारक इस की दर को प्रभावित अथवा सीमित करने का मुख्य कारण बन जाता है। अत: किसी भी समय पर उपानुकूलतम स्तर पर उपलब्ध कारक द्वारा प्रकाश-संश्लेषण की दर का निर्धारण होगा।

जब अनेक कारक किसी (जैव) रासायनिक प्रक्रिया को प्रभावित करते हैं तो ब्लैकमैन का (1905) **लॉ ऑफ लिमिटिंग फैक्टर्स** प्रभाव में आता है। *इसके अनुसार: यदि कोई रासायनिक प्रक्रिया एक से अधिक कारकों द्वारा प्रभावित होती है तो इसकी दर का निर्धारण उस समीपस्थ कारक द्वारा होगा जो कि न्यूनतम मान (मूल्य) वाला हो। अगर उस कारक की मात्रा बदल दी जाए तो कारक प्रक्रिया को सीधे प्रभावित करता है।*

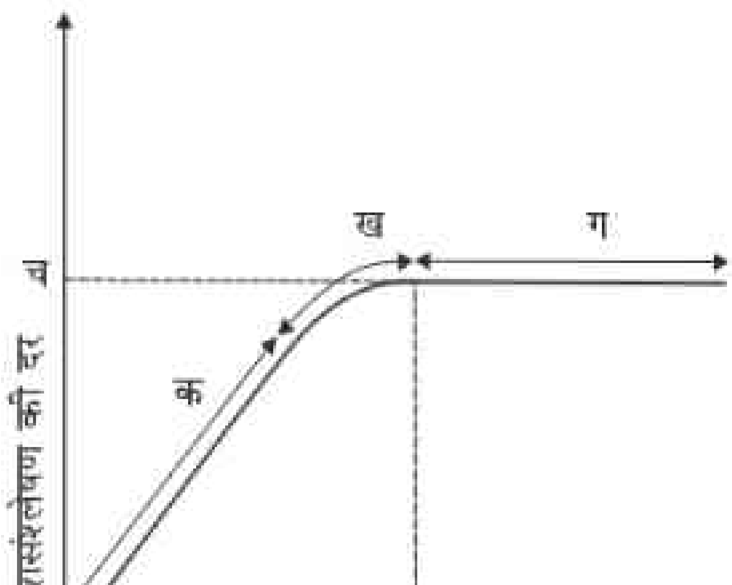

चित्र 11.10 प्रकाश की तीव्रता का प्रकाशसंश्लेषण के दर पर प्रभाव का ग्राफ

उदाहरण के लिए एक हरी पत्ती, अधिकतम अनुकूल प्रकाश तथा CO_2 की उपस्थिति के बावजूद, यदि ताप बहुत कम हो तो प्रकाश-संश्लेषण नहीं करेगी। इस पत्ती में प्रकाश-संश्लेषण तभी शुरु होगा, यदि उसे ईष्टतम ताप प्रदान किया जाए।

11.10.1 प्रकाश

जब हम प्रकाश को प्रकाश-संश्लेषण को प्रभावित करने वाले कारक के रूप में लेते हैं तो हमें प्रकाश की गुणवत्ता, प्रकाश की तीव्रता तथा दीप्तिकाल के बीच अंतर करने की आवश्यकता है। यहाँ कम प्रकाश तीव्रता पर आपतित प्रकाश तथा CO_2 के यौगिकीरण की दर के बीच एक रैखीय संबंध है। उच्च प्रकाश तीव्रता होने पर, इस दर में कोई वृद्धि नहीं होती है, अन्य कारक सीमित हो जाते हैं (चित्र 11.10)। इसमें ध्यान देने वाली रोचक बात यह है कि प्रकाश संतृप्ति पूर्ण प्रकाश के 10 प्रतिशत पर होती है। छाया अथवा सघन जंगलों में उगने वाले पौधों को छोड़कर प्रकाश शायद ही प्रकृति में सीमाकारी कारक हो। एक सीमा के बाद आपतित प्रकाश क्लोरोफिल के विघटन का कारण होती है, जिससे प्रकाश-संश्लेषण की दर कम हो जाती है।

11.10.2 कार्बन डाइऑक्साइड की सांद्रता

प्रकाशसंश्लेषण में कार्बन डाइऑक्साइड एक प्रमुख सीमाकारी कारक है। वायुमंडल में CO_2 की सांद्रता बहुत ही कम है (0.03 और 0.04 प्रतिशत के बीच)। CO_2 की सांद्रता में 0.05 प्रतिशत तक वृद्धि के कारण CO_2 की यौगिकीकरण दर में वृद्धि हो सकती है, लेकिन इससे अधिक की मात्रा लंबे समय तक के लिए क्षतिकारक बन सकता है।
C_3 एवं C_4 पौधे CO_2 की सांद्रता में भिन्न अनुक्रिया करते हैं। निम्न प्रकाश स्थितियों में दोनों में से कोई भी समूह उच्च CO_2 सांद्रता के प्रति अनुक्रिया नहीं करते हैं। उच्च प्रकाश तीव्रता में C_3 तथा C_4 दोनों ही तरह के पादपों में प्रकाश-संश्लेषण की बढ़ी दर अधिक हो जाती है। यहाँ पर यह ध्यान देना महत्त्वपूर्ण है कि C_4 पौधे लगभग 360 μL^{-1} पर संतृप्त हो जाते हैं जबकि C_3 बढ़ी हुई CO_2 सांद्रता पर अनुक्रिया करता है तथा संतृप्तन केवल 450 μL^{-1} के बाद ही दिखाती है। अतः उपलब्ध CO_2 का स्तर C_3 पादपों के लिए सीमाकारी है।

सच यह है कि C_3 पौधे उच्चतर CO_2 सांद्रता में अनुक्रिया करते हैं और इससे प्रकाश-संश्लेषण की दर में वृद्धि होती है, जिसके फलस्वरूप उत्पादन अधिक होता है और सिद्धांत का उपयोग ग्रीन हाउस फसलों, जैसे टमाटर एवं बेल मिर्च में किया गया है। इन्हें कार्बन-डाइऑक्साइड से भरपूर वातावरण में बढ़ने का अवसर दिया जाता है ताकि उच्च पैदावार प्राप्त हो।

11.10.3 ताप

अप्रकाशी अभिक्रिया एंजाइम पर निर्भर करती है, इसलिए ताप द्वारा नियंत्रित होती है। यद्यपि प्रकाश अभिक्रिया भी ताप संवेदी होती है, लेकिन उस पर ताप का काफी कम प्रभाव होता है। C_4 पौधे उच्च ताप पर अनुक्रिया करते हैं तथा उनमें प्रकाश-संश्लेषण की दर भी ऊँची होती है, जबकि C_3 पौधे के लिए ईष्टतम ताप कम होता है।

विभिन्न पौधों के प्रकाश-संश्लेषण लिए इष्टतम ताप उनके अनुकूलित आवास पर निर्भर करता है। उष्णकटिबंधी पौधों के लिए ईष्टतम ताप उच्च होता है। समशीतोष्ण जलवायु में उगने वाले पौधों के लिए एक अपेक्षाकृत कम ताप की आवश्यकता होती है।

11.10.4 जल

यद्यपि प्रकाश अभिक्रिया में जल एक महत्वपूर्ण प्रतिक्रिया अभिकारक है, तथापि, कारक के रूप में जल का प्रभाव पूरे पादप पर पड़ता है, न कि सीधे प्रकाश-संश्लेषण पर। जल तनाव रंध्र को बंद कर देता है अत: CO_2 की उपलब्धता घट जाती है। इसके साथ ही, जल तनाव से पत्तियाँ मुरझा जाती हैं, जिससे पत्ती का क्षेत्रफल कम हो जाता है और इसके साथ ही साथ उपापचयी क्रियाएं भी कम हो जाती हैं।

सारांश

पौधे अपने भोजन को प्रकाश-संश्लेषण द्वारा स्वयं तैयार करते हैं। इस प्रक्रिया के दौरान वायुमंडल में उपलब्ध कार्बनडाइऑक्साइड पत्तियों के रंध्रों द्वारा ली जाती है और कार्बोहाइड्रेट्स- मुख्यत: ग्लूकोज (शर्करा) एवं स्टार्च बनाने में उपयोग की जाती है। प्रकाश-संश्लेषण की क्रिया पौधों के हरे भागों, मुख्यत: पत्तियों में संपन्न होती है। पत्तियों के अंतर्गत पर्णमध्योतक कोशिकाओं में भारी मात्रा में क्लोरोप्लास्ट होता है जोकि CO_2 के यौगिकीकरण (फिक्सेशन) के लिए उत्तरदायी होता है। क्लोरोप्लास्ट के अंतर्गत, प्रकाश अभिक्रिया के लिए झिल्लिकाएं वह स्थल होती हैं, जबकि केमोसिंथेटिक पथ स्ट्रोमा में स्थित होता है। प्रकाश-संश्लेषण में दो चरण होते हैं: प्रकाश अभिक्रिया तथा कार्बन फिक्सिंग रिएक्शन (कार्बन यौगिकीकरण अभिक्रिया)। प्रकाश अभिक्रिया में प्रकाश ऊर्जा एंटेना में मौजूद वर्णकों द्वारा अवशोषित किए जाते हैं तथा अभिक्रिया केंद्र में मौजूद क्लोरोफिल ए के अणुओं को भेज दिए जाते हैं। यहाँ पर दो फोटोसिस्टम (प्रकाश प्रणाली) पीएस I तथा पीएस II होते हैं। पीएस I के अभिक्रिया केंद्र में क्लोरोफिल ए पी 700 के अणु जो प्रकाश तरंगदैर्ध्य 700 एनएम को अवशोषित करते हैं, जबकि पीएस II में एक पी 680 अभिक्रिया केंद्र होता है जो लाल प्रकाश को 680 एनएम पर अवशोषित करता है। प्रकाश अवशोषण के बाद इलेक्ट्रॉन उत्तेजित होते हैं और PS II तथा PS I से स्थानांतरित होते हुए अंत में एनएडीपी (NADP) में पहुँच एनएडीपीएच (NADPH) की रचना करते हैं। इस प्रक्रिया के दौरान एक प्रोटोन प्रवणता थाइलेकोइड की झिल्लिका के आर-पार पैदा की जाती है। एटीपी एंजाइम के हिस्से F_0 से प्रोटोन की गति के कारण प्रवणता भंग हो जाती है तथा एटीपी के संश्लेषण हेतु पर्याप्त ऊर्जा मुक्त की जाती है। पानी के अणु का विघटन PS II के साथ जुड़ा होता है, परिणामत: O_2, और प्रोटोन की रिहाई होती है और PS II में इलेक्ट्रॉन का स्थानांतरण होता है।

कार्बन यौगिकीकरण में, एंजाइम रुबिस्को द्वारा CO_2 एक 5 कार्बन यौगिक RuBP से जोड़ा जाता है तथा 3 कार्बन पीजीए के 2 अणु में बदलता है। इसके बाद केल्विन चक्र द्वारा यह शर्करा में परिवर्तित होता है और RuBP पुनरुद्भवित होता है। इस प्रक्रिया के दौरान प्रकाश अभिक्रिया द्वारा संश्लेषित एटीपी एवं एनएडीपी एच इस्तेमाल होता है। इसके साथ ही C_3 पौधों में रुबिस्को एक निरर्थक ऑक्सीजिनेशन प्रतिक्रिया: प्रकाश श्वसन को उत्प्रेरित करता है।

कुछ उष्णकटिबंधीय पौधे विशेष प्रकार का प्रकाश-संश्लेषण करते हैं जिसे C_4 कहते हैं। इन पौधों के पर्णमध्योतक में संपन्न होने वाले CO_2 यौगिकीकरण के उत्पाद एक 4 कार्बन यौगिक हैं। पूलाच्छद कोशिका में केल्विन पथ चलाया जाता है, जिससे कार्बोहाइड्रेट्स का संश्लेषण होता है।

अभ्यास

1. एक पौधे को बाहर से देखकर क्या आप बता सकते हैं कि वह C_3 है अथवा C_4? कैसे और क्यों?
2. एक पौधे की आंतरिक संरचना को देखकर क्या आप बता सकते हैं कि वह C_3 है अथवा C_4? वर्णन करें?
3. हालांकि C_4 पौधे में बहुत कम कोशिकाएं जैव-संश्लेषण - केल्विन पथ को वहन करते हैं, फिर भी वे उच्च उत्पादकता वाले होते हैं। क्या इस पर चर्चा कर सकते हो कि ऐसा क्यों हैं?
4. रुबिस्को (RuBisCO) एक एंजाइम है जो कार्बोक्सिलेस और ऑक्सीजिनेस के रूप में काम करता है। आप ऐसा क्यों मानते हैं कि C_4 पौधों में, रुबिस्को अधिक मात्रा में कार्बोक्सिलेशन करता है?
5. मान लीजिए, यहाँ पर क्लोरोफिल बी की उच्च सांद्रता युक्त, मगर क्लोरोफिल ए की कमी वाले पेड़ थे। क्या ये प्रकाश-संश्लेषण करते होंगे? तब पौधों में क्लोरोफिल *बी* क्यों होता हैं? और फिर दूसरे गौण वर्णकों की क्या जरूरत है?
6. यदि पत्ती को अंधेरे में रख दिया गया हो तो उसका रंग क्रमशः पीला एवं हरा पीला हो जाता है? कौन से वर्णक आपकी सोच में अधिक स्थायी हैं?
7. एक ही पौधे की पत्ती का छाया वाला (उल्टा) भाग देखें और उसके चमक वाले (सीधे) भाग से तुलना करें अथवा गमले में लगे धूप में रखे हुए तथा छाया में रखे हुए पौधों के बीच तुलना करें। कौन सा गहरे हरे रंग का होता है, और क्यों?
8. प्रकाश-संश्लेषण की दर पर प्रकाश का प्रभाव पड़ता है (चित्र 13.10)। ग्राफ के आधार पर निम्नलिखित प्रश्नों के उत्तर दें:
   (अ) वक्र के किस बिंदु अथवा बिंदुओं पर (क, ख, अथवा ग) प्रकाश एक नियामक कारक है?
   (ब) क बिंदु पर नियामक कारक कौन से हैं?
   (स) वक्र में ग और घ क्या निरूपित करता है?
9. निम्नांकित में तुलना करें-
   (अ) C_3 एवं C_4 पथ
   (ब) चक्रीय एवं अचक्रीय फोटोफॉस्फोरिलेसन
   (स) C_3 एवं C_4 पादपों की पत्ती की शारीरिकी

not to be republished © NCERT

अध्याय 12

पादप में श्वसन

12.1 क्या पादप साँस लेते हैं?

12.2 ग्लाइकोलिसिस

12.3 किण्वन

12.4 ऑक्सी श्वसन

12.5 श्वसनीय संतुलन चार्ट

12.6 ऐंफीबोलिक पाथ क्रम

12.7 साँस गुणांक

हम सभी जीवित रहने के लिए साँस लेते हैं, लेकिन जीवन के लिए साँस लेना इतना आवश्यक क्यों है? जब हम साँस लेते हैं, तब क्या होता है। क्या सभी जीवधारी, चाहे पादप हों या सूक्ष्म जीव साँस लेते हैं? यदि ऐसा है तो कैसे?

सभी जीवधारियों को अपने दैनिक जीवन में अवशोषण, परिवहन, गति, प्रजनन जैसे कार्य करने हेतु और यहाँ तक की साँस लेने हेतु भी ऊर्जा की आवश्यकता होती है। यह सभी ऊर्जा कहाँ से आती है? हम जानते हैं कि ऊर्जा के लिए हम भोजन करते हैं, लेकिन ये ऊर्जा भोजन से कैसे प्राप्त होती है? यह ऊर्जा कैसे उपयोग में आती है? क्या सभी प्रकार के खाद्य पदार्थों से समान प्रकार की ऊर्जा मिलती है? क्या पादप भोजन करते हैं? पादप यह ऊर्जा कहाँ से प्राप्त करते हैं? और सूक्ष्मजीव इस ऊर्जा की आवश्यकता के लिए क्या भोजन करते हैं?

उपरोक्त किए गए अनेक प्रश्नों से आपको आश्चर्य हो रहा होगा कि इनमें बहुत अधिक सामंजस्य नहीं है। लेकिन वास्तव में साँस लेने की प्रक्रिया व खाद्य पदार्थ से मुक्त होने वाली ऊर्जा की प्रक्रिया में बहुत अधिक संबद्धता होती है। हम यह समझने का प्रयास करें कि यह कैसे होता है?

जीवन विधि के लिए आवश्यक सभी ऊर्जा कुछ वृहत् अणुओं के ऑक्सीकरण से प्राप्त होती है, जिसे खाद्य पदार्थ कहते हैं। केवल हरे पादप व नीले हरित जीवाणु अपना भोजन स्वयं संश्लेषित कर सकते हैं। ये प्रकाश-संश्लेषण विधि, द्वारा प्रकाशीय ऊर्जा को रसायनिक ऊर्जा में परिवर्तित कर कार्बोहाइड्रेट-ग्लूकोज, सुक्रोज व स्टार्च के रूप में संचित करते हैं। हमें यह याद रखना चाहिए कि हरे पादपों में भी सभी कोशिकाओं, ऊतकों, अंगों में प्रकाश-संश्लेषण नहीं होता है, केवल वे कोशिकाएं, जिनमें क्लोरोप्लास्ट होता है, वे ही

© NCERT not to be republished

प्रकाश-संश्लेषण करती हैं। चूंकि हरे पादपों में सभी अंग, ऊतक व कोशिकाएं हरी नहीं होती हैं, इसलिए इनमें ऑक्सीकरण के लिए खाद्य पदार्थ की आवश्यकता होती है। इसलिए खाद्य पदार्थ का अहरित भागों में परिवहन होता है। प्राणी परपोषित होते हैं, इसलिए वे अपना भोजन पादपों से परोक्ष (शाकाहारी), या अपरोक्ष (माँसाहारी) रूप में प्राप्त करते हैं। मृतजीवी जैसे कवक, मृत या सड़े गले पदार्थों पर निर्भर रहते हैं। यह जान लेना अति महत्त्वपूर्ण है कि जीवन में साँस हेतु आवश्यक सभी खाद्य पदार्थ प्रकाश-संश्लेषण द्वारा प्राप्त होते हैं। इस अध्याय में **कोशिकीय साँस** अथवा कोशिका में खाद्य पदार्थों के टूटने से निकलने वाली ऊर्जा की क्रियाविधि तथा एटीपी के संश्लेषण को समझाया गया है।

निसंदेह, प्रकाश-संश्लेषण क्लोरोप्लास्ट में संपन्न होता है (यूकैरियोट में), जबकि ऊर्जा प्राप्त करने के लिए कॉम्पलेक्स अणुओं का विघटन से कोशिका द्रव्य तथा माइटोकोंड्रिया में होता है (वह भी केवल यूकैरियोट में) जबकि कोशिकाओं में कॉम्पलेक्स अणुओं के C-C (कार्बन-कार्बन) आबंध के, ऑक्सीकरण होने पर पर्याप्त मात्रा में ऊर्जा का मुक्त होना **साँस** कहलाता है। इस प्रक्रिया में जिस यौगिक का ऑक्सीकरण होता है उसे **श्वसनी क्रियाधार** कहते हैं। प्राय: कार्बोहाइड्रेट के ऑक्सीकरण से ऊर्जा मुक्त होती है, किंतु कुछ पादपों में विशेष परिस्थितियों में प्रोटीन,वसा तथा यहाँ तक कि कार्बनिक अम्ल भी श्वसनी क्रियाधार के रूप में प्रयोग में आ सकते हैं। कोशिका के अंदर ऑक्सीकरण के दौरान श्वसनी क्रियाधार में स्थित संपूर्ण ऊर्जा कोशिका में एक साथ मुक्त नहीं होती है। यह एंजाइम द्वारा नियंत्रित चरणबद्ध धीमी अभिक्रियाओं के रूप में मुक्त होती है, जो रासायनिक ऊर्जा एटीपी के रूप मे एकत्रित हो जाती है। यहाँ यह समझ लेना आवश्यक है कि साँस में ऑक्सीकरण द्वारा निकलने वाली ऊर्जा सीधे उपयोग में नहीं आती (या संभवतया नहीं भी हो सकती) किंतु यह एटीपी के संश्लेषण के उपयोग में आती है तथा इस ऊर्जा की जब भी (तथा जहाँ भी) आवश्यकता होती है, ये टूट जाती हैं इस कारण से एटीपी कोशिका के लिए ऊर्जा मुद्रा का कार्य करती है। एटीपी में संचित उर्जा, जीवधारियों की विभिन्न ऊर्जा आवश्यक प्रक्रियाओं में उपयोग में आती है। साँस के दौरान निर्मित कार्बनिक पदार्थ कोशिका में दूसरे अणुओं के संश्लेषण के लिए पूर्वगामी के रूप काम आते हैं।

12.1 क्या पादप साँस लेते हैं?

इस प्रश्न का कोई परोक्ष उत्तर नहीं है। हाँ पादपों में साँस हेतु ऑक्सीजन (O_2)की आवश्यकता होती है और वे कार्बन-डाइऑक्साइड (CO_2)को मुक्त करते हैं। इस कारण से पादपों में ऐसी व्यवस्था है, जिससे ऑक्सीजन(O_2)की उपलब्धता सुनिश्चित होती है। पादपों में प्राणियों की तरह गैसीय आदान-प्रदान हेतु विशिष्ट अंग नहीं होते, बल्कि उनमें इस उद्देश्य हेतु रंध्र व वातरंध्र मिलते हैं। पौधे बिना श्वसन अंग के कैसे श्वसन करते हैं, इसके कई कारण हो सकते हैं। प्रथम कारण यह है कि पादपों का प्रत्येक भाग अपनी गैसीय आदान-प्रदान की आवश्यकता का ध्यान रखता है। पादपों के एक भाग से दूसरे भाग में गैसों का परिवहन बहुत कम होता है। दूसरा कारण यह है कि पादपों में गैसों के

आदान-प्रदान की बहुत अधिक मांग नहीं होती। पादप के विभिन्न भागों में मूल, तना व पत्ती में श्वसन, जंतुओं की अपेक्षा बहुत ही धीमी दर से होता है। केवल प्रकाश-संश्लेषण के दौरान गैसों का अत्यधिक आदान-प्रदान होता है तथा प्रत्येक पत्ती, पूर्णतया इस प्रकार से अनुकूलित होती है कि इस अवधि के दौरान अपनी आवश्यकता का ध्यान रखती है। जब कोशिका श्वसन करती है। ऑक्सीजन की उपलब्धता की कोई समस्या नहीं होती है, क्योंकि कोशिका में प्रकाश-संश्लेषण के दौरान ऑक्सीजन निकलती है। तृतीय कारण यह है कि बड़े, स्थूल पादपों में गैसें अधिक दूरी तक विसरित नहीं होती हैं। पादपों में प्रत्येक सजीव कोशिका पादपों की सतह के बिल्कुल पास स्थित होती है। यह 'पत्ती के लिए सत्य कथन' है। आप यह पूछ सकते हैं कि मोटे, काष्ठीय तनों और मूल के लिए क्या होता है? तना में सजीव कोशिकाएं छाल व छाल के नीचे पतली सतह के रूप में व्यवस्थित रहती हैं। इनमें भी छिद्र होते हैं, जिन्हें वातरंध्र कहते हैं। भीतर की कोशिकाएं मृत होती हैं तथा यांत्रिक सहायता प्रदान करती हैं। अत: पादपों की अधिकांश कोशिकाओं की सतह हवा के संपर्क में होती है। यह पैरेंकाइमा कोशिकाओं के द्वारा इस कार्य को आगे बढ़ाते हैं जो कि वायु रिक्तकाओं के आपस में जुड़े हुए जालरूपी रचना के कारण संभव होता है।

ग्लूकोज के नियंत्रित संपूर्ण आक्सीकरण दहन से अंतिम उत्पाद के रूप में कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2), तथा जल (H_2O) के साथ ऊर्जा निकलती है जिसका सर्वाधिक भाग ऊष्मा के रूप में निकल जाता है। यदि यह ऊर्जा कोशिका के लिए आवश्यक है तो इसका उपयोग कोशिका में दूसरे अणुओं के संश्लेषण में होना चाहिए।

$$C_6H_{12}O_6 + 6O_2 \longrightarrow 6\,CO_2 + 6H_2O + \text{ऊर्जा}$$

पादप कोशिकाएं इस तरह से भोजन बनाती हैं कि ग्लूकोज अणु के अपचय से निकलने वाली संपूर्ण ऊर्जा मुक्त उष्मा के रूप में न निकल पाए। मुख्य बात यह है कि ग्लूकोज का ऑक्सीकरण एक चरण में न होकर छोटे-छोटे अनेक चरणों में होता है, जिनमें कुछ चरण इतने बड़े होते हैं कि इनसे निकलने वाली पर्याप्त ऊर्जा एटीपी के संश्लेषण में उपयोग में आ जाती है। यह कैसे होता है, वास्तव में यही साँस का इतिहास है! साँस की क्रियाविधि के दौरान ऑक्सीजन का उपयोग होता है तथा कार्बनडाइऑक्साइड, जल तथा ऊर्जा उत्पाद के रूप में निकलती है। दहन अभिक्रिया के लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। परंतु कुछ कोशिकाएं ऑक्सीजन की उपस्थिति और अनुपस्थिति में भी जीवित रहती हैं। *क्या आप ऐसी परिस्थितियों के बारे (और जीवों) में सोच सकते हैं जहाँ ऑक्सीजन उपलब्ध नहीं होती है।* विश्वास करने के लिए पर्याप्त कारण है कि प्रथम कोशिका इस ग्रह पर ऐसे वातावरण में मिली थी, जहाँ ऑक्सीजन उपलब्ध नहीं थी। आज भी उपलब्ध सजीवों में हम जानते हैं कि कुछ अनाक्सी (ऑक्सीजन रहित) वातावरण हेतु अपने को अनुकूलित कर चुके हैं। इनमें से कुछ विकल्पीय अनाक्सी हैं जबकि कुछ के लिए अनॉक्सी स्थिति की आवश्यकता अविकल्पीय होती है। हर स्थिति में सभी जीवों में एंजाइम तंत्र होता है जो ग्लूकोज को बिना ऑक्सीजन की सहायता से आंशिक रूप से ऑक्सीकृत करता है। इस प्रकार ग्लूकोज का पाइरुविक अम्ल में विघटन **ग्लाइकोलिसिस** कहलाता है।

12.2 ग्लाइकोलिसिस

चित्र 12.1 ग्लाइकोलिसिस के चरण

ग्लाइकोलिसिस शब्द की उत्पत्ति ग्रीक शब्द ग्लाइकोस अर्थात् शर्करा एवं लाइसिस अर्थात् टूटना से हुआ है। ग्लाइकोलिसिस की प्रक्रिया गुस्ताव इंबेडेन, ओटो मेयर हॉफ तथा जे पारानास द्वारा दिया गया तथा इसे सामान्यतः इएमपी पाथ कहते हैं। अनाक्सी जीवों में साँस की केवल यही प्रक्रिया है। ग्लाइकोलिसिस कोशिका द्रव्य में संपन्न होता है और यह सभी सजीवों में मिलता है । इस प्रक्रिया में ग्लूकोज आंशिक ऑक्सीकरण द्वारा पाइरुविक अम्ल के दो अणुओं में बदल जाता है। पादपों में यह ग्लूकोज सुक्रोज से प्राप्त होता है जो कि प्रकाश संश्लेषित कार्बन अभिक्रियाओं का अंतिम उत्पाद है या संचयित कार्बोहाइड्रेट से प्राप्त होता है। सुक्रोस इंवर्टेस नामक एंजाइम की सहायता से ग्लूकोज तथा फ्रुक्टोज में परिवर्तित हो जाता है। ये दोनों मोनोसैकेराइड्स सरलता से ग्लाइकोलाइटिक चक्र में प्रवेश कर जाते हैं।

ग्लूकोज एवं फ्रुक्टोज, हेक्सोकाइनेज एंजाइम द्वारा फॉस्फरिकृत होकर ग्लूकोज-6 फॉस्फेट बनाते हैं। ग्लूकोज का फॉस्फरिकृत रूप समायवीकरण द्वारा फ्रुक्टोज-6 फॉस्फेट में परिवर्तित हो जाता है। ग्लूकोज एवं फ्रुक्टोज के उपापचय के बाद के क्रम एक समान होते हैं। ग्लाइकोलिसिस के विभिन्न चरण चित्र 12.1 में दर्शाए गए हैं। ग्लाइकोलिसस में दस शृंखलाबद्ध अभिक्रियाओं में विभिन्न एंजाइम द्वारा ग्लूकोज से पाइरुवेट का निर्माण होता है। ग्लाइकोलिसिस के विभिन्न चरणों के अध्ययन के दौरान उन चरणों पर ध्यान दें जिसमें एटीपी का उपयोग (एटीपी ऊर्जा) अथवा संश्लेषण (इस मामले में $NADH+H^+$) होता है।

एटीपी का उपयोग दो चरणों में होता है: पहले चरण में जब ग्लूकोज-6 फॉस्फेट में परिवर्तन होता है तथा दूसरे चरण में व दूसरे फ्रुक्टोज-6 फॉस्फेट का फ्रुक्टोज 1, 6, बिसफोस्फेट में परिवर्तन होता है।

फ्रुक्टोज 1, 6 बिसफोस्फेट टूटकर डाइहाइड्रोक्सीएसीटोन फॉस्फेट तथा 3-फॉस्फोग्लिासरिल्डिहाइड (पीजीएएल) बनाता है। जब 3-फॉस्फोग्लिसरल्डिहाइड (पीजीएएल) का 1, 3-बिस फॉस्फोग्लिसरेट (बीपीजीए) में परिवर्तन होता है तो NAD^+ से $NADH + H^+$ का निर्माण होता है। पीजीएएल से दो समान अपचयोपचय (रिडॉक्स) दो हाइड्रोजन अणु

पृथक होकर NAD के एक अणु की ओर स्थानांतरित होता है। पीजीएएल ऑक्सीकृत होकर अकार्बनिक फॉस्फेट से मिलकर बीपीजीए में परिवर्तित हो जाता है। डीपीजीए का 3- फॉस्फोग्लिसरीक अम्ल में परिवर्तन ऊर्जा उत्पादन करने वाली प्रक्रिया है। इस ऊर्जा का उपयोग एटीपी (ATP) निर्माण में होता है। पीईपी (P.E.P.) का पायरुविक अम्ल में परिवर्तन के दौरान भी एटीपी का निर्माण होता है। *क्या तुम यह गणना कर सकते हो कि एक अणु से कितने एटीपी के अणुओं का प्रत्यक्ष रूप से संश्लेषण होता है?*

पायरुविक अम्ल ग्लाइकोलिसिस का मुख्य उत्पाद है। पायरुवेट का उपापचयी भविष्य क्या है? यह कोशिकीय आवश्यकता पर निर्भर है। यहाँ तीन प्रमुख तरीके हैं- जिसमें विभिन्न कोशिकाएं ग्लाइकोलिसिस द्वारा उत्पन्न पायरुविक अम्ल का उपयोग करती हैं। ये लैक्टिक अम्ल किण्वन, एल्कोहलिक किण्वन और ऑक्सी साँस है। अधिकांश प्रोकैरियोट तथा एक कोशिका यूकैरियोट में किण्वन अनाक्सी परिस्थितियों में होता है। ग्लूकोज के पूर्ण ऑक्सीकरण के फलस्वरूप कार्बनडाइऑक्साइड तथा जल बनने हेतु जीवधारियों में क्रेब्स चक्र के द्वारा होता है, जिसे **ऑक्सी श्वसन** या साँस कहते हैं, जिसमें ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है।

12.3 किण्वन

किण्वन में यीस्ट द्वारा ग्लूकोज का अनॉक्सी परिस्थितियों में अपूर्ण ऑक्सीकरण होता है। जिसमें अभिक्रियाओं के विभिन्न चरणों द्वारा पायरुविक अम्ल, कार्बनडाइऑक्साइड तथा इथेनोल में परिवर्तित हो जाता है। एंजाइम पायरुविक अम्ल डिकार्बोक्सिलेज एवं एल्कोहल डिहाइड्रोजिनेस इस अभिक्रिया को उत्प्रेरित करता है। दूसरे जीव जैसे कुछ बैक्टीरिया पायरुविक अम्ल से लैक्टिक अम्ल का निर्माण करते हैं। ये चरण चित्र 12.2 में दर्शाए गए हैं। प्राणी की मांसपेशियों की कोशिकाओं में शारीरिक अभ्यास के दौरान जब कोशिकीय साँस के लिए अपर्याप्त ऑक्सीजन होती है तब पायरुविक अम्ल लैक्टिक डिहाइड्रोजिनेस द्वारा लैक्टिक अम्ल में अपचयित हो जाता है। अपचयीकारक $NADH + H^+$ होता है जो पुनः दोनों प्रक्रियाओं में NAD^+ में ऑक्सीकृत हो जाता है।

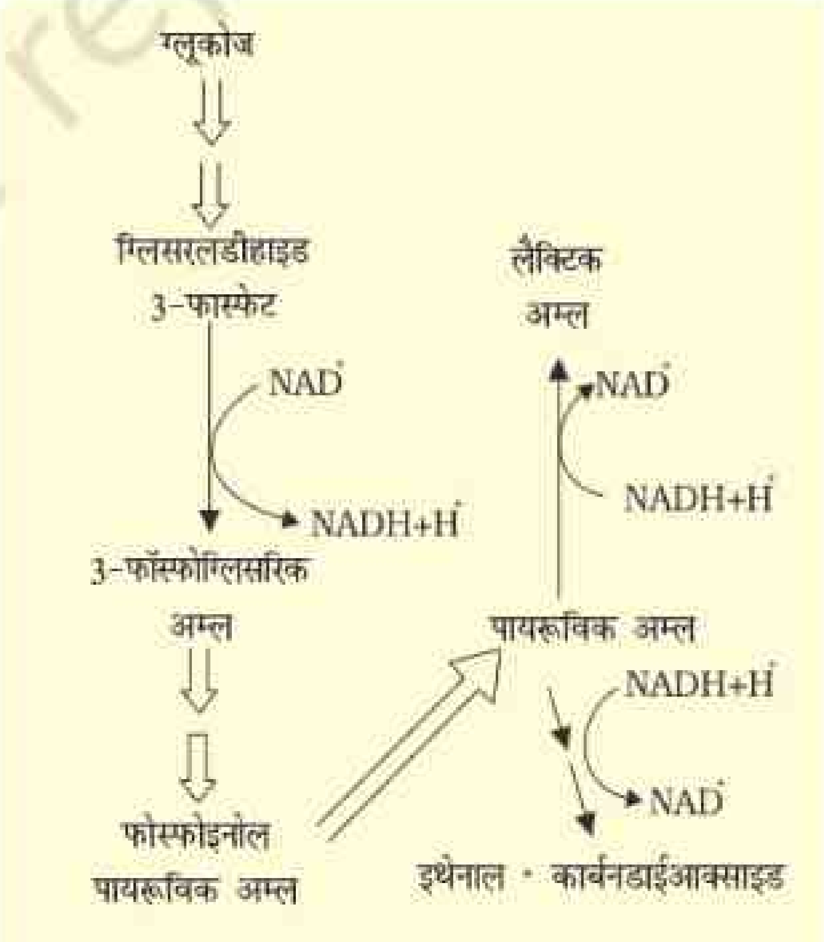

चित्र 12.2 अनॉक्सी श्वसन के प्रमुख पथ

दोनों लैक्टिक अम्ल तथा एल्कोहल किण्वन में पर्याप्त ऊर्जा मुक्त नहीं होती है। ग्लूकोज से 7 प्रतिशत से कम ऊर्जा मुक्त होती है और इसकी संपूर्ण ऊर्जा का उपयोग उच्च ऊर्जा बंध वाले एटीपी (ATP) के निर्माण में नहीं होता है। अम्ल व एल्कोहल बनने वाली उत्पाद की प्रक्रिया खतरनाक होती है। ग्लूकोज के एक अणु से किण्वन के बाद एल्कोहल या लैक्टिक अम्ल बनने के दौरान कितने शुद्ध एटीपी का संश्लेषण होता है। (अर्थात्

© NCERT not to be republished

ग्लाइकोलिसिस के दौरान उपयोग में आने वाले एटीपी (ATP) की संख्या घटाकर गणना करें कि कितने एटीपी (ATP) का संश्लेषण होता है)। जब एल्कोहल की मात्रा 13 प्रतिशत या अधिक होती है, तो यीस्ट के लिए यह विषाक्तता व मृत्यु का कारण बनती है। *प्राकृतिक किण्वत पेय में एल्कोहल की अधिकतम सांद्रता कितनी होगी? क्या आप सोच सकते हैं कि मादक पेय में एल्कोहल की मात्रा इसमें स्थित एल्कोहल की सांद्रता से अधिक कैसे प्राप्त की जा सकती है?*

वह क्या प्रक्रिया है जिसके द्वारा जीव में ग्लूकोज का पूर्ण ऑक्सीकरण होता है,और इस दौरान मुक्त ऊर्जा कोशिकीय उपापचय की आवश्यकता के अनुसार बहुत से एटीपी अणुओं का संश्लेषण करती है। यूकैरियोट में ये सभी चरण माइटोकोन्ड्रिया में संपन्न होते हैं। जिसके लिए ऑक्सीजन की आवश्यकता होती है। **ऑक्सी साँस** वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा रासायनिक पदार्थों का ऑक्सीजन की उपस्थिति में पूर्ण ऑक्सीकरण होता है तथा जिसके पश्चात् कार्बनडाइऑक्साइड, जल तथा ऊर्जा निकलती है। इस प्रकार का साँस सामान्यतया उच्च जीवों में मिलता है। हम इन प्रक्रियाओं को अगले खंड में पढ़ेंगे।

12.4 ऑक्सी श्वसन (साँस)

माइटोकोंड्रिया में होने वाले ऑक्सी श्वसन के दौरान ग्लाइकोलिसिस का अंतिम उत्पाद पायरुवेट कोशिका द्रव्य से माइटोकोंड्रिया में परिवहन किया जाता है। ऑक्सी श्वसन की मुख्य घटनाएं निम्नलिखित हैं–

- पायरुवेट का चरणबद्ध क्रम में पूर्ण ऑक्सीकरण के उपरांत सभी हाइड्रोजन परमाणु पृथक होते हैं जिससे 3 कार्बनडाइऑक्साइड के अणु भी मुक्त होते हैं।
- हाइड्रोजन परमाणुओं से पृथक् हुए इलेक्ट्रॉन ऑक्सीजन अणु की ओर जाते हैं। जिसके परिणामस्वरूप एटीपी का संश्लेषण होता है।

सबसे अधिक रोचक बात यह है कि इसकी पहली प्रक्रिया माइटोकोंड्रिया के आधात्री में संपन्न होती है जब कि द्वितीय प्रक्रिया माइटोकोंड्रिया की भीतरी झिल्ली पर संपन्न होती है। कोशिका द्रव्य में उपस्थित कार्बोहाइड्रेट के ग्लाइकोलिटिक अपचय द्वारा बनने वाले पायरुवेट माइटोकोंड्रिया की आधात्री में प्रवेश करता है जो ऑक्सीकृत कार्बोक्सिलिकरण की कॉम्पलेक्स सामूहिक क्रिया द्वारा पायरुवेट डिहाइड्रोजिनेस एंजाइम द्वारा उत्प्रेरित होता है। पायरुविक डिहाइड्रोजिनेस अभिक्रियाओं में कई सह एंजाइम भाग लेते हैं। जैसे NAD^+ तथा A सहएंजाइम।

$$\text{पायरुविक अम्ल} + CoA + NAD^+ \xrightarrow[\text{पाइरुवेट डिहाइड्रोजिनेज}]{Mg^{2+}} \text{ऐसीटाइल } CoA + CO_2 + NADH + H^+$$

इस प्रक्रिया के दौरान पायरुविक अम्ल के दो अणुओं के उपापचय से NADH के दो अणुओं का निर्माण होता है। (ग्लाकोलिसिस के दौरान ग्लूकोज के एक अणु से निर्मित होते हैं)

ऐसीटाइल CoA चक्रीय पथ, ट्राइकार्बोक्सिलिक अम्ल चक्र में प्रवेश करता है। जिसे साधारणतया वैज्ञानिक हैन्स क्रेब की खोज के कारण क्रेब्स चक्र कहते हैं।

12.4.1 ट्राइकार्बोक्सिलिक अम्ल चक्र (टीसीए)

TCA चक्र का प्रारंभ एसीटाइल समूह के ओक्सेलो ऐसिटिक अम्ल (OAA) तथा जल के साथ संघनन से होता है और सिट्रिक अम्ल का निर्माण होता है (चित्र 12.3) यह अभिक्रिया सिट्रेट सिंथेटेज एंजाइम द्वारा होती है तथा CoA का एक अणु मुक्त होता है। तब सिट्रेट, आइसोसिट्रेट में समायवित हो जाता है। यह डिकार्बोक्सिलिकरण के दो लगातार चरणों के रूप में होता है। इसके उपरांत एल्फाकीटो ग्लूटेरिक अम्ल, तत्पश्चात् सक्सीनाइल CoA का निर्माण होता है। सिट्रिक अम्ल के बचे हुए चरणों में सक्सीनाइल CoA, OAA (ओक्सेलोऐसीटिक अम्ल) में ऑक्सीकृत होकर चक्र को आगे बढ़ाने में सहायक होता है। सक्सीनाइल (CoA) से सक्सीनिक अम्ल के रूपांतरण के दौरान जीटीपी के एक अणु का निर्माण होता है। इसे क्रियाधार स्तरीय फॉस्फोरिलिकरण कहते हैं। इन युग्मित अभिक्रियाओं में जीटीपी, जीडीपी में रूपांतरित हो जाता है तथा एडीपी से एटीपी का निर्माण होता है। चक्र में तीन स्थान ऐसे होते हैं जिसमें NAD^-का $NADH + H^+$ में अपचयन होता है और एक स्थान पर FAD^-का $FADH_2$ में अपयचन होता है। टीसीए चक्र द्वारा एसिटिल CoA को एंजाइमस अम्ल के निरंतर ऑक्सीकरण हेतु ऑक्सेलोऐसीटेट अम्ल के पुनर्निमाण की आवश्यकता होती है, जो चक्र का प्रथम सदस्य है। इसके साथ-साथ NAD^+ तथा FAD^+ का NADH व $FADH_2$ से क्रमश: पुन:उत्पादन होता है। अत: साँस की इस अवस्था के समीकरण को संक्षेप में निम्नवत लिखा जा सकता है:

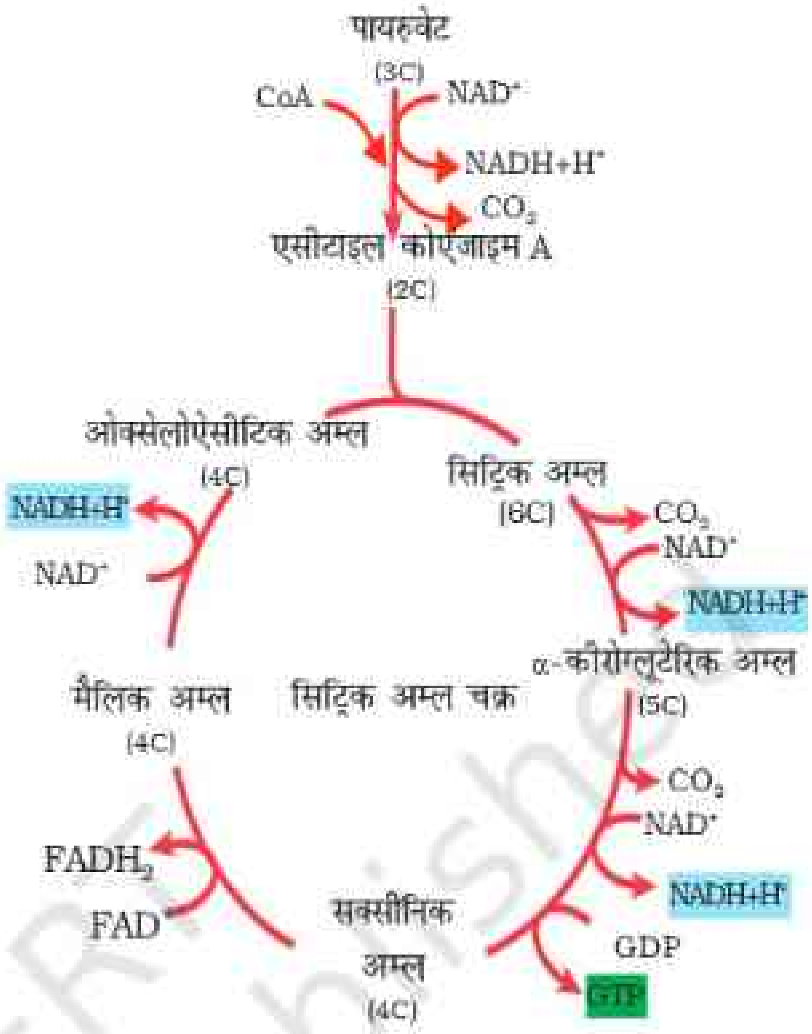

चित्र 12.3 सिट्रिक अम्ल चक्र

$$\text{पायरुविक अम्ल} + 4NAD^+ + FAD^+ + 2H_2O + ADP + Pi \xrightarrow{\text{माइट्रोकोंड्रियल आधात्री}} 3CO_2 + 4NADH + 4H^+ + FADH_2 + ATP$$

अब तक हम देख चुके हैं कि TCA चक्र में ग्लूकोज के विखंडन से कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) निकलती है, $NADH + H^+$ के आठ अणु, $FADH_2$ के दो अणु तथा दो एटीपी अणुओं का निर्माण होता है। आपको आश्चर्य हो रहा होगा कि अभी तक साँस की चर्चा के दौरान न ही कहीं पर ऑक्सीजन का तथा न ही कहीं पर एटीपी के बहुत सारे अणुओं के निर्माण की चर्चा हुई है। अब संश्लेषित $NADH + H^+$ तथा $FADH_2$ की क्या भूमिका होगी। हमें अब समझना होगा कि साँस में ऑक्सीजन की भूमिका तथा एटीपी का निर्माण कैसे होता है?

12.4.2 इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र अथवा ऑक्सीकरणी फॉस्फोरिलिकरण

साँस प्रक्रिया के अगले चरण में $NADH + H^+$ तथा $FADH_2$ में संचित ऊर्जा मुक्त व उपयोग में लाना है। यह तब संपादित होता है। जब उनका ऑक्सीकरण इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र द्वारा होता है तथा इलेक्ट्रॉन ऑक्सीजन पर चला जाता है तथा पानी का निर्माण होता

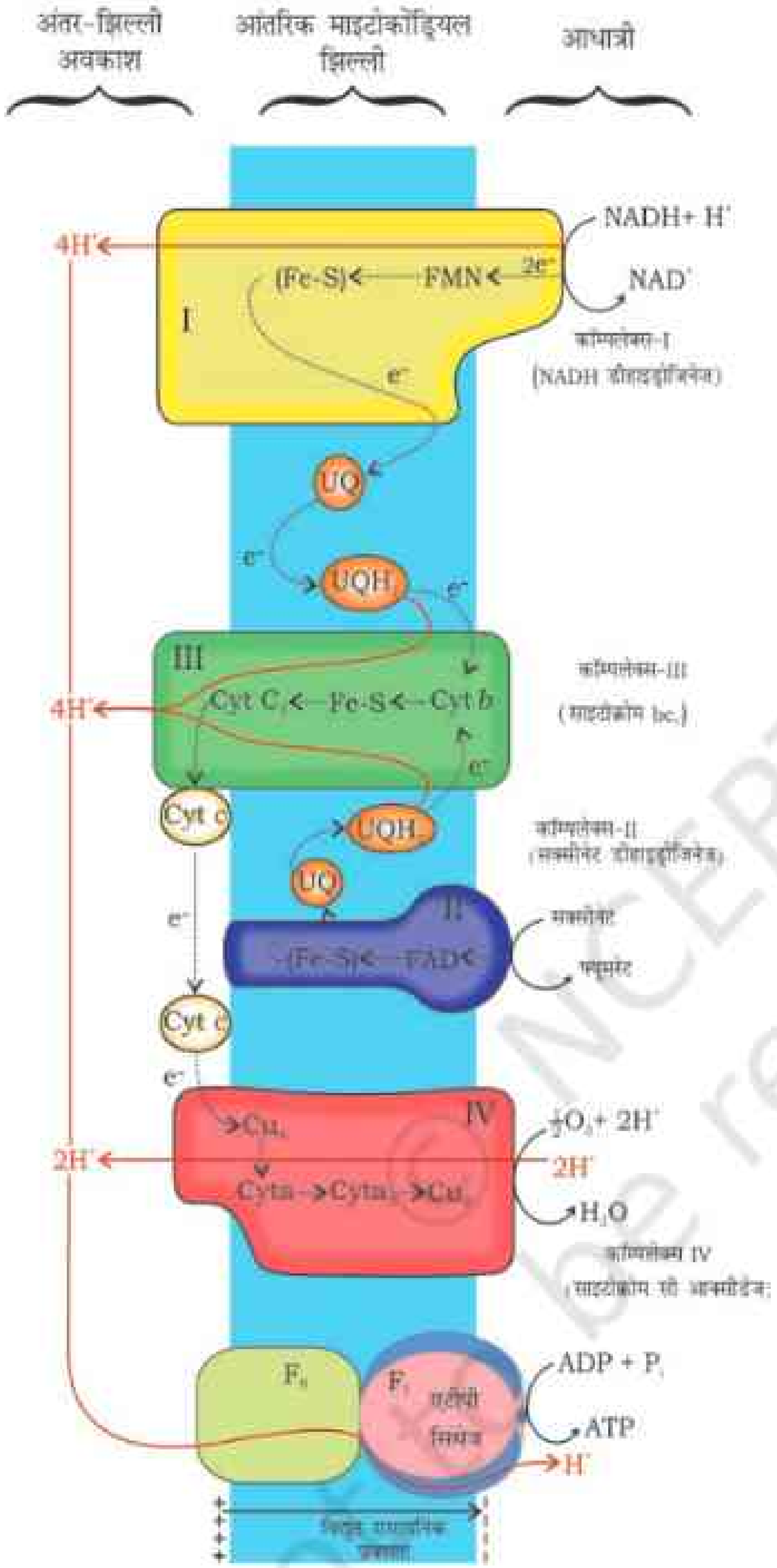

चित्र 12.4 इलेक्ट्रॉन तंत्र

है। उपापचयी पथ जिसके द्वारा इलेक्ट्रॉन एक वाहक से अन्य वाहक की ओर गुजरता है इसे **इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र (ETS)** कहते हैं, (चित्र 12.4) जो माइटोकॉड्रिया के भितरी झिल्ली पर संपन्न होता है। माइटोकॉड्रिया के आधात्री में टीसीए चक्र के दौरान NADH से बनने वाले इलेक्ट्रॉन, एंजाइम NADH डिहाइड्रोजिनेज द्वारा ऑक्सीकृत होता है (कॉम्पलेक्स-I), तत्पश्चात् इलेक्ट्रॉन भीतरी झिल्ली में उपस्थित यूबीक्वीनोन की ओर स्थानांतरित होता है। यूबीक्विनोन अपचयी समतुल्य $FADH_2$ द्वारा प्राप्त करता है (कॉम्पलेक्स-II) जो सिट्रिक अम्ल चक्र में सक्सीन के ऑक्सीकरण के दौरान उत्पन्न होते हैं। अपचयित यूबिक्विनोन (यूबिक्विनोल) इलेक्ट्रॉन को साइटोक्रोम bc_1 साइटोक्रोम C की ओर स्थानांतरित कर ऑक्सीकृत हो जाता है (कॉम्पलेक्स-III)। साइटोक्रोम C एक छोटा प्रोटीन है जो, भीतरी: झिल्ली की बाह्य सतह पर चिपका होता है जो इलेक्ट्रॉन को कॉम्पलेक्स-III तथा कॉम्पलेक्स-IV के बीच स्थानांतरण का कार्य गतिशील वाहक के रूप में करता है। कॉम्पलेक्स-IV साइटोक्रोम *C* ऑक्सीडेज कॉम्पलेक्स है, जिसमें साइटोक्रोम a, a_3 तथा दो तांबा केंद्र मिलते हैं।

जब इलेक्ट्रॉन, इलेक्ट्रॉन परिवहन शृंखला में एक वाहक से दूसरे वाहक तक कॉम्पलेक्स-I से कॉम्पलेक्स-IV द्वारा गुजरते हैं, तब वे एटीपी सिंथेज (कॉम्पलेक्स-V) से युग्मित होकर एडीपी व अकार्बनिक फॉस्फेट से एटीपी का निर्माण करते हैं। इस दौरान संश्लेषित होने वाली एटीपी अणुओं की संख्या इलेक्ट्रॉन दाता पर निर्भर है। NADH के एक अणु के ऑक्सीकरण से एटीपी के तीन अणुओं का निर्माण होता है जबकि $FADH_2$ का एक अणु से एटीपी का दो अणु बनता है जबकि साँस की ऑक्सी प्रक्रिया ऑक्सीजन की उपस्थिति में ही संपन्न होती है। प्रक्रिया के अंतिम चरण में ऑक्सीजन की भूमिका सीमित होती है। यद्यपि ऑक्सीजन की उपस्थिति अत्यावश्यक है; क्योंकि यह पूरे तंत्र से H_2 (हाइड्रोजन) को मुक्त कर पूरी प्रक्रिया को संचालित करती है। ऑक्सीजन अंतिम इलेक्ट्रॉन ग्राही के रूप में कार्य करता है। प्रकाश फॉस्फोरिलिकरण के विपरीत, जहाँ प्रोटीन प्रवणता के निर्माण में प्रकाश ऊर्जा का उपयोग फॉस्फोरिलिकरण के लिए होता है, साँस में इसी प्रकार की प्रक्रिया में ऑक्सीकरण अपचयन द्वारा ऊर्जा की पूर्ति होती है। फलस्वरूप इस कारण से हुई क्रियाविधि को ऑक्सीकारी-फॉस्फोरिलिकरण कहते हैं।

झिल्ली से जुड़े एटीपी संश्लेषण की क्रियाविधि के बारे में आप पहले ही पढ़ चुके हैं जिसे पिछले अध्याय में रसोपरासरण परिकल्पना (केमियोओस्मोटिक हाइपोथिसिस) के आधार पर बताया गया है। जैसा कि पहले वर्णित है कि इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र के दौरान मुक्त ऊर्जा का उपयोग एटीपी सिंथेज (कॉम्पलेक्स-V) की सहायता से एटीपी के संश्लेषण में होता है। यह कॉम्पलेक्स, दो प्रमुख घटकों F_0 व F_1 से बनते हैं (चित्र 12.5) F_1 शीर्ष परिधीय झिल्ली प्रोटीन कॉम्पलेक्स है, जहाँ पर अकार्बनिक फास्फेट तथा एडीपी से एटीपी का संश्लेषण होता है। वैद्युत रसायन प्रोटोन प्रवणता के फलस्वरूप $4H^+$ आयन अंतर झिल्ली अवकाश से F_0 में होकर आधात्री की ओर गति करता है जिससे एक एटीपी का संश्लेषण होता है।

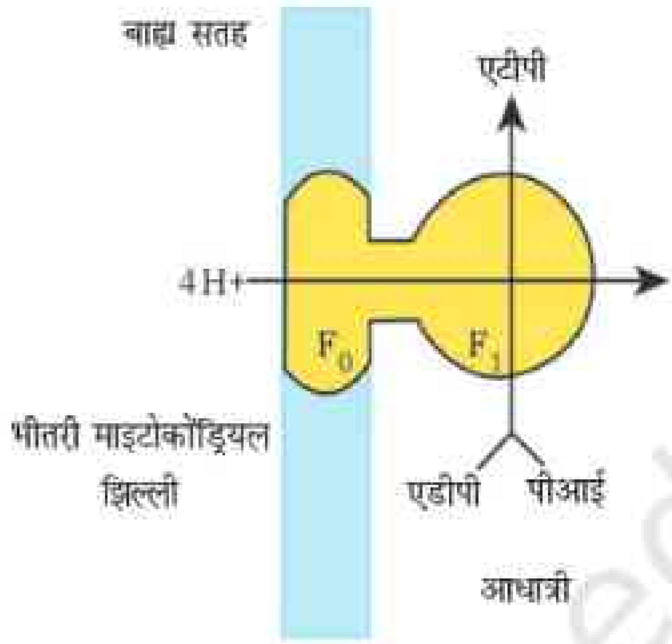

चित्र 12.5 माइटोकोंड्रिया में एटीपी संश्लेषण का चित्रात्मक प्रदर्शन

12.5 श्वसनीय संतुलन चार्ट

प्रत्येक ऑक्सीकृत ग्लूकोज अणु से बनने वाले प्राप्त शुद्ध एटीपी की गणना करना अब संभव है, किंतु वास्तविकता में यह एक सैद्धांतिक अभ्यास ही रह गया है। यह गणना कुछ निश्चित कल्पनाओं के आधार पर ही की जा सकती हैं।

- यह एक क्रमिक, सुव्यवस्थित, क्रियात्मक पाथ है जिसमें एक क्रियाधार से दूसरे क्रियाधार का निर्माण होता है जिसमें ग्लाइकोलिसिस से शुरू होकर टीसीए चक्र तथा पथ *(ETS)* एक के बाद एक आती है।
- ग्लाइकोलिसिस में संश्लेषित *NADH* माइटोकोंड्रिया में आता है, जहाँ उसका फॉस्फोरिलीकरण होता है।
- पथ का कोई भी मध्यवर्ती दूसरे यौगिक के निर्माण के उपयोग में नहीं आते हैं।
- श्वसन में केवल ग्लूकोज का ही उपयोग होता है– कोई दूसरा वैकल्पिक क्रियाधार पथ के किसी भी मध्यवर्ती चरण में प्रवेश नहीं करता है।

हालांकि इस प्रकार की कल्पना सजीव तंत्र में वास्तव में तर्कसंगत नहीं होती है; सभी पथ एक के बाद एक नहीं, बल्कि एक साथ कार्य करते हैं। पथ में क्रियाधार आवश्यकता अनुसार बाहर तथा अंदर आ जा सकते हैं; आवश्यकतानुसार एटीपी का उपयोग हो सकता है; एंजाइम की क्रिया की दर को अनेकों विधियों द्वारा नियंत्रित किया जाता है। फिर भी यह क्रिया करना उपयोगी है; क्योंकि सजीव तंत्र में ऊर्जा का निष्कर्षण एवं संग्रहण हेतु इसकी दक्षता सराहनीय है। अतः ऑक्सी श्वसन के दौरान ग्लूकोज के एक अणु से एटीपी के 38 अणुओं की शुद्ध प्राप्ति होती है।

अब हम किण्वन तथा ऑक्सी श्वसन की तुलना करें।

- किण्वन में ग्लूकोज का आंशिक विघटन होता है जबकि ऑक्सी श्वसन में पूर्ण विघटन होता है तथा कार्बनडाइऑक्साइड एवं जल बनते हैं।

- किण्वन में ग्लूकोज के एक अणु से पायरुविक अम्ल बनने के दौरान एटीपी के शुद्ध 2 अणुओं की प्राप्ति होती है, जबकि ऑक्सी श्वसन में बहुत अधिक एटीपी के अणु बनते हैं।
- किण्वन में NADH का NAD^+ में ऑक्सीकरण मंद गति से होता है, जबकि ऑक्सी श्वसन में यह अभिक्रिया तीव्र गति से होती है।

12.6 ऐंफीबोलिक पथ

साँस के लिए ग्लूकोज अनुकूल क्रियाधार है श्वसन में सभी कार्बोहाइड्रेट उपयोग में लाने से पहले ग्लूकोज में परिवर्तित होते हैं। जैसे कि पहले बताया जा चुका है कि दूसरे क्रियाधार भी साँस में प्रयोग किए जा सकते हैं। किंतु तब वे साँस के पहले चरण में उपयोग में नहीं आते हैं। चित्र 12.6 को देखिए कि विभिन्न क्रियाधार श्वसन पथ में कहाँ

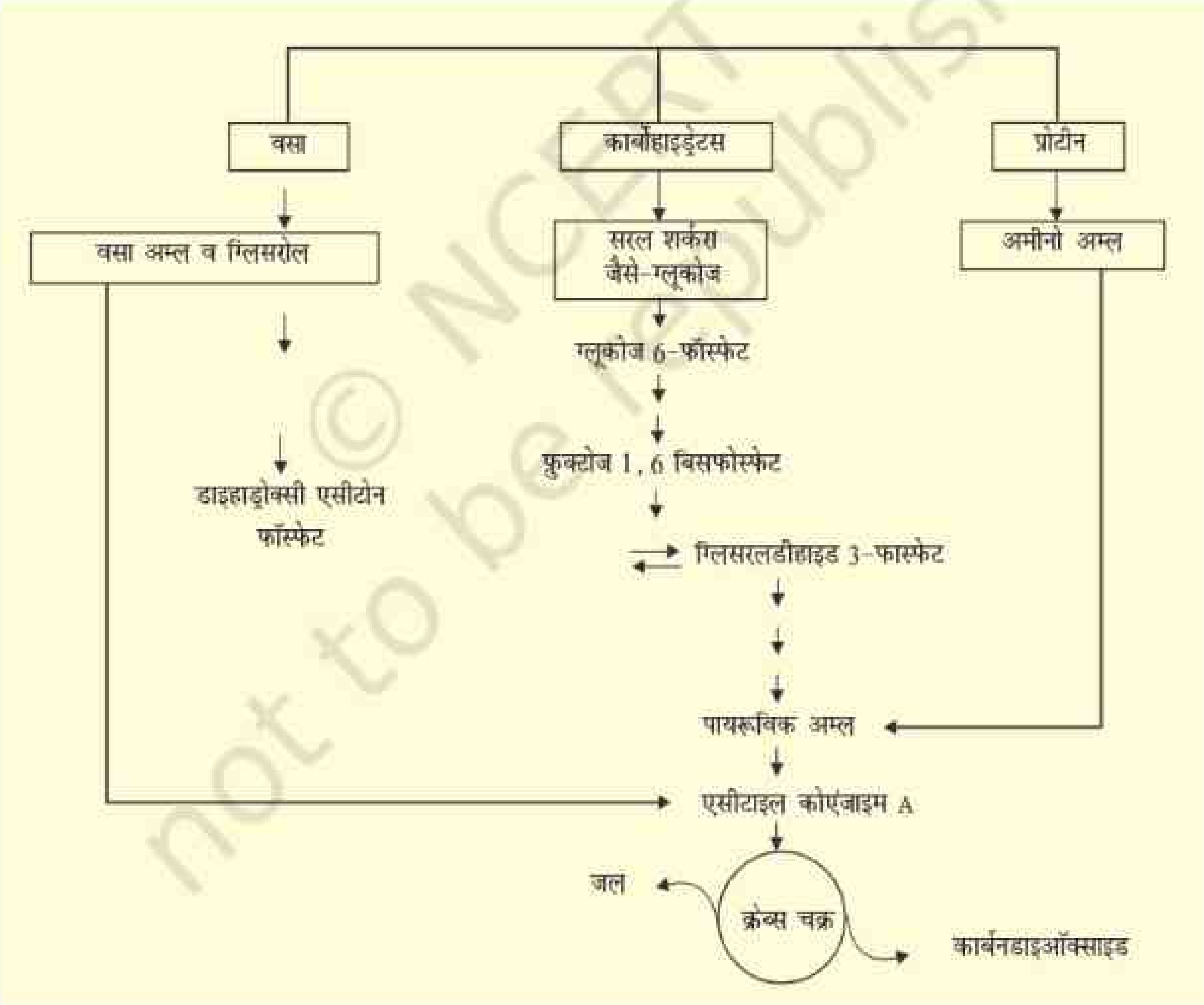

चित्र 12.6 श्वसन मध्यस्थता के दौरान विभिन्न कार्बनिक अणुओं का व जल में विखंडन को दर्शाने वाला उपापचय पाथक्रम के आपसी संबंध का प्रदर्शन

© NCERT not to be republished

उपयोग करते हैं। वसा सबसे पहले ग्लिसरेल तथा वसीय अम्ल में विघटित होता है। यदि वसीय अम्ल साँस के उपयोग में आता है तो वह पहले एसीटाइल सह-एंजाइम बनकर पथ में प्रवेश करता है। ग्लिसरेल पहले पीजीएएल (PGAL) में परिवर्तित होकर श्वसन पथ में प्रवेश करता है। प्रोटीन प्रोटिएज एंजाइम द्वारा विघटित होकर अमीनो अम्ल बनाता है। प्रत्येक अमीनो अम्ल (विऐमीनीकरण के बाद) अपनी संरचना के आधार पर क्रेब्स चक्र के अंदर विभिन्न चरणों में प्रवेश करता है।

चूंकि साँस के दौरान क्रियाधारक टूटते हैं, अत: साँस प्रक्रिया परंपरागत अपचयी प्रक्रिया है और श्वसन पथ श्वसनीय अपचयी पथ है। किंतु आप क्या इसे ठीक समझते हैं? ऊपर वर्णित है कि विभिन्न क्रियाधार ऊर्जा हेतु श्वसन पथ में कहाँ प्रवेश करते हैं। यह जानना महत्वपूर्ण है कि ये यौगिक उपरोक्त क्रियाधार बनाने के लिए श्वसनीय पथ से अलग होंगे। अत: पथ में प्रवेश करने से पहले वसा अम्ल जब क्रियाधार के रूप में उपयोग में आते हैं तो श्वसनीय पथ में उपयोग में आने से पूर्व एसीटाइल CoA में विखंडित हो जाता है। जब जीवधारी को वसा अम्ल का संश्लेषण करना होता है तो श्वसनी पथ एसीटाइल CoA अलग हो जाता है। इसलिए वसा अम्ल के संश्लेषण तथा विखंडन के दौरान श्वसनीय पथ का उपयोग होता है। इसी प्रकार से प्रोटीन के संश्लेषण व विखंडन के दौरान भी होता है। इस प्रकार विघटन की प्रक्रिया कम करता है। सजीवों में अपचय कहलाती है तथा संश्लेषण उपचय कहलाती है; चूँकि श्वसनी पथ में अपचय तथा उपचय दोनों ही होते हैं। इसलिए श्वसनी पथ को **ऐंफीबोलिक पथ** कहना उचित होगा न कि उपचय पथ; क्योंकि यह अपचयी व उपचयी दोनों में भाग लेती है।

12.7 साँस गुणांक

अब साँस के दूसरे पक्ष को देखते हैं। जैसा कि आप जानते हैं कि ऑक्सी श्वसन के दौरान ऑक्सीजन का उपयोग होता है और कार्बनडाइऑक्साइड निकलती है। साँस के दौरान मुक्त हुई कार्बनडाइऑक्साइड तथा उपयोग में लाई गई ऑक्सीजन का अनुपात को **साँस गुणांक** (R.Q.) या **श्वसनीय अनुपात** कहते हैं।

$$\text{साँस गुणांक} = \frac{\text{मुक्त हुई } CO_2 \text{ का आयतन}}{\text{उपयोग में लाई गई } O_2 \text{ का आयतन}}$$

साँस गुणांक, साँस के दौरान उपयोग में आने वाले श्वसनी क्रियाधार पर निर्भर करता है। जब कार्बोहाइड्रेड क्रियाधार के रूप में आकर पूर्ण ऑक्सीकृत हो जाते हैं तो साँस गुणांक 1 होगा; क्योंकि समान मात्रा में CO_2 व O_2 क्रमश: मुक्त होती हैं एवं उपयोग में लाई जाती हैं, जैसा कि समीकरण से स्पष्ट है:

$$C_6H_{12}O_6 + 6O_2 \longrightarrow 6CO_2 + 6H_2O + \text{ऊर्जा}$$

$$\text{साँस गुणांक (R.Q.)} = \frac{6\ CO_2}{6O_2} = 1.0$$

$$2(C_{51}H_{98}O_6) + 145\,O_2 \longrightarrow 102\,CO_2 + 98\,H_2O + \text{उर्जा}$$
ट्राइपामिटिन

$$\text{साँस गुणांक (R.Q.)} = \frac{102\,CO_2}{145\,O_2} = 0.7$$

जब वसा साँस में प्रयुक्त होती है तो साँस गुणांक 1.00 से कम होता है। वसा अम्ल ट्राइपामिटिन के रूप में उपयोग में आता है तब इसकी गणना निम्नवत होगी:

जब प्रोटीन श्वसनी क्रियाधार के रूप में प्रयुक्त होता है तब अनुपात 0.9 के लगभग होते है।

यहाँ, यह जानना अतिमहत्वपूर्ण है कि सजीवों में श्वसनीय क्रियाधार अक्सर एक से अधिक होते हैं; किंतु शुद्ध प्रोटीन व वसा श्वसनी क्रियाधारों के रूप में प्रयुक्त नहीं होते हैं।

सारांश

प्राणियों की तरह पादपों में श्वसन या गैसीय आदान प्रदान हेतु कोई विशिष्ट तंत्र नहीं होता है। रंध्र व वातरंध्र द्वारा विसरण से गैसों का आदान प्रदान होता है। पौधों में लगभग सभी सजीव कोशिकाएं वायु के संपर्क में होती हैं।

जटिल कार्बनिक अणुओं के ऑक्सीकरण द्वारा C-C आबंधों के टूटने के उपरांत जब कोशिका से ऊर्जा की अत्यधिक मात्रा निकलती है तो उसे कोशिकीय साँस कहते हैं। साँस के लिए ग्लूकोज सर्वाधिक उपयोगी क्रियाधार है। वसा एवं प्रोटीन के टूटने के बाद भी ऊर्जा निकलती है। कोशिकीय साँस की प्रारंभिक प्रक्रिया कोशिका द्रव्य में संपन्न होती है। प्रत्येक ग्लूकोज का अणु एंजाइम उत्प्रेरित शृंखलाओं की अभिक्रियाओं द्वारा पायरुविक अम्ल के 2 अणुओं में टूट जाता है, इस प्रक्रिया को ग्लाइकोलिसिस कहते हैं। पायरुवेट का भविष्य O_2 की उपलब्धता तथा जीव पर निर्भर करता है। अनॉक्सी परिस्थितियों में किण्वन द्वारा लैक्टिक अम्ल या एल्कोहल बनते हैं। किण्वन बहुत सारे प्रोकैरियोटिक, एक कोशिक यूकैरियोट व अंकुरित बीजों में अनॉक्सी परिस्थितियों में संपन्न होता है। यूकैरियोट जीवों में O_2 की उपस्थिति में ऑक्सी साँस होता है। पायरुविक अम्ल का माइटोकोंड्रिया में परिवहन के बाद एसीटाइल CoA में रूपांतरण होता है साथ ही CO_2 निकलती है। तत्पश्चात एसीटाइल CoA टीसीए पथ अथवा क्रेब्स चक्र में प्रवेश करता है जो माइटोकोंड्रिया के आधात्री में होता है। क्रेब्स चक्र में NADH + H^+ तथा $NADH_2$ बनते हैं। इन अणुओं व NADH + H^+ जो ग्लाइकोलिसिस के दौरान बनता है। इनकी ऊर्जा का उपयोग एटीपी के संश्लेषण में होता है। यह सूक्ष्मकणिका के अंत: झिल्ली पर स्थित वाहकों के तंत्र, जिसे इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र कहते हैं, के द्वारा संपन्न होती है जब इलेक्ट्रॉन इस तंत्र से होकर गति करता है, तो निकलने वाली पर्याप्त ऊर्जा एटीपी का संश्लेषण होता है, इसे ऑक्सीकारी फॉस्फोरिलीकरण कहते हैं, इस प्रक्रिया में अंतत: अंतिम इलेक्ट्रॉन ग्राही O_2 होता है, जो पानी में अपचयित हो जाता है।

श्वसनी पथ में उपचयी अथवा अपचयी दोनों भाग लेते हैं, इसलिए इसे ऐंफीबेलिक पथ कहते हैं। साँस गुणांक साँस के दौरान में आने वाले श्वसनी क्रियाधार पर निर्भर करता है।

not to be republished © NCERT

अभ्यास

1. इनमें अंतर करिए?
   (अ) साँस (श्वसन) और दहन
   (ब) ग्लाइकोलिसिस तथा क्रेब्स चक्र
   (स) ऑक्सी श्वसन तथा किण्वन
2. श्वसनीय क्रियाधार क्या है? सर्वाधिक साधारण क्रियाधार का नाम बताइए?
3. ग्लाइकोलिसिस को रेखा द्वारा बनाइए?
4. ऑक्सी श्वसन के मुख्य चरण कौन-कौन से हैं? यह कहाँ संपन्न होती है?
5. क्रेब्स चक्र का समग्र रेखा चित्र बनाइए?
6. इलेक्ट्रॉन परिवहन तंत्र का वर्णन कीजिए?
7. निम्न के मध्य अंतर कीजिए?
   (अ) ऑक्सी श्वसन तथा अनॉक्सी श्वसन
   (ब) ग्लाइकोलिसिस तथा किण्वन
   (स) ग्लाइकोलिसिस तथा सिट्रिक अम्ल चक्र
8. शुद्ध एटीपी के अणुओं की प्राप्ति की गणना के दौरान आप क्या कल्पनाएं करते हैं?
9. 'श्वसनीय पथ एक ऐंफीबोलिक पथ होता है', इसकी चर्चा करें।
10. साँस गुणांक को पारिभाषित कीजिए, वसा के लिए इसका क्या मान है?
11. ऑक्सीकारी फॉस्फोरिलीकरण क्या है?
12. साँस के प्रत्येक चरण में मुक्त होने वाली ऊर्जा का क्या महत्व है?

© NCERT not to be republished

अध्याय 13

पादप वृद्धि एवं परिवर्धन

13.1 वृद्धि

13.2 विभेदन, निर्विभेदन तथा पुनर्विभेदन

13.3 परिवर्धन

13.4 पादप वृद्धि नियामक

आपने पहले ही अध्याय 5 के अंतर्गत फूल वाले पौधे के संगठन के बारे में अध्ययन किया है। क्या आपने कभी सोचा है कि मूल, तना, पत्तियां, फूल तथा बीज जैसी संरचनाएं कहाँ और कैसे पैदा होती हैं और वह भी एक क्रमबद्ध तरीके से? अब आप बीज, पौध (नव अंकुरित पौधा), पादपक (छोटा पौधा) तथा परिपक्व पौधे जैसे शब्दों से परिचित हो गए हैं। आपने यह भी देखा है कि सभी पेड़ समय के अंतराल में ऊंचाई एवं गोलाई (चौड़ाई) में लगातार वृद्धि करते हैं। हालाँकि उसी वृक्ष की पत्तियां, फूल एवं फल आदि न केवल एक सीमित लंबाई-चौड़ाई के होते हैं, बल्कि समयानुकूल वृक्ष से निकलते एवं गिर जाते हैं। यही प्रक्रिया लगातार दोहराई जाती है। एक पौधे में फूल आने की प्रक्रिया कायिक वृद्धि के बाद क्यों होती है? सभी पौधों के अंग विभिन्न तरह के ऊतकों से बने होते हैं। क्या एक कोशिका/ऊतक/अंग की संरचना और उसके द्वारा संपन्न जाने वाली क्रियाकलाप के बीच कोई संबंध है? पौधे की सभी कोशिकाएं युग्मज की संतति या वंशज होती है। तब सवाल यह उठता है कि क्यों और कैसे उनमें भिन्न-भिन्न संरचनात्मक एवं क्रियात्मक विशेषताएं होती हैं? परिवर्धन दो प्रक्रियाओं का योग है: वृद्धि एवं विभेदन। शुरुआत में यह जानना अनिवार्य है कि एक परिपक्व वृक्ष का परिवर्धन एक युग्मक (एक निषेचित अंडा) से शुरू होकर एक सुनिश्चित एवं उच्च नियमित वंशानुक्रम की घटना है। इस प्रक्रिया के दौरान एक जटिल शरीर संरचना का गठन होता है जो जड़ों, पत्तियों, शाखाओं, फूलों, फलों एवं बीजों को उत्पादित करता है और अंततः वे मर जाते हैं। (चित्र 13.1) पौधों की वृद्धि के प्रक्रम का प्रथम चरण बीज का अंकुरण है। जब पर्यावरण में वृद्धि के लिए अनुकूल परिस्थितियाँ होती हैं तो बीज अंकुरित हो जाता है। इस प्रकार की अनुकूल परिस्थितियों के अभाव में बीज अंकुरित नहीं होता तथा निर्लंबित वृद्धि अथवा प्रसुप्त काल में चला जाता है। जब अनुकूल परिस्थितियाँ वापस आती हैं तब बीजों में उपापचय क्रियाएँ पुनर्वेशित हो जाती हैं तथा वृद्धि होने लगती है।

इस अध्याय में; आप कुछ उन कारकों के बारे में पढ़ेंगे जो कि इस परिवर्धन प्रक्रिया को संचालित एवं नियंत्रित करते हैं। ये कारक एक पौधे के लिए आंतरिक एवं बाहरी होते हैं।

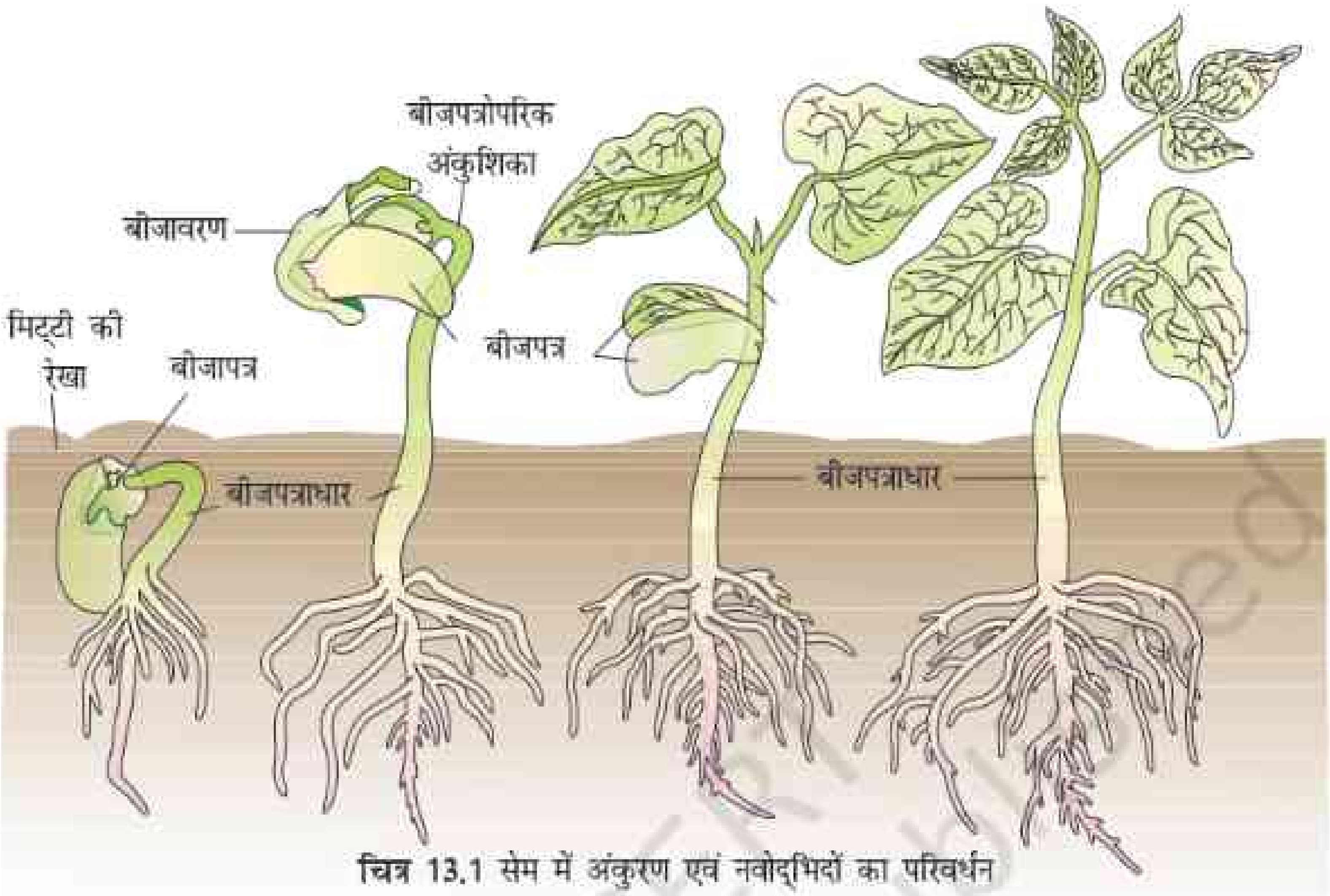

चित्र 13.1 सेम में अंकुरण एवं नवोद्भिदों का परिवर्धन

13.1 वृद्धि

एक जीवित वस्तु के लिए वृद्धि को सर्वाधिक आधारभूत एवं सुस्पष्ट विशिष्टता के रूप में जाना जाता है। वृद्धि क्या है? वृद्धि को एक अवयव या अंग या इसके किसी भाग या यहाँ तक कि एक कोशिका के आधार में अनिवर्त्य (अनपलट) स्थाई बढ़त के रूप में पारिभाषित किया जा सकता है। सामान्यत: वृद्धि उपापचयी प्रक्रियाओं (उपचय एवं अपचय दोनों से) से जुड़ा होता है जो ऊर्जा के व्यय पर आधारित होता है। इसलिए एक पत्ती का विस्तार वृद्धि है। आप एक लकड़ी के टुकड़े को पानी में डालने से हुए फैलाव या विस्तार का वर्णन कैसे करेंगे?

13.1.1 पादप वृद्धि प्राय: अपरिमित है

पादप वृद्धि अनूठे ढंग से होती है; क्योंकि पौधे जीवन भर असीमित वृद्धि की क्षमता को अर्जित किए होते हैं। इस क्षमता का कारण उनके शरीर में कुछ खास जगहों पर विभज्योतक (मेरिस्टेम) ऊतकों की उपस्थिति है। ऐसे विभज्योतकों की कोशिकाओं में विभाजन एवं स्वशाश्वतता (निरंतरता) की क्षमता होती है। हालाँकि यह उत्पाद जल्द ही विभाजन की क्षमता खो देते हैं और ऐसी कोशिकाएं जो विभाजन की क्षमता खो देती है, वे पादप शरीर की रचना करती हैं। इस प्रकार की वृद्धि जहाँ पर विभज्योतक की क्रियात्मकता से पौधे के शरीर में सदैव नई कोशिकाओं को जोड़ा जाता है, उसे वृद्धि का खुला स्वरूप कहा जाता है। क्या होगा जब विभज्योतक का विभाजन बंद हो जाए? क्या कभी ऐसा होता है?

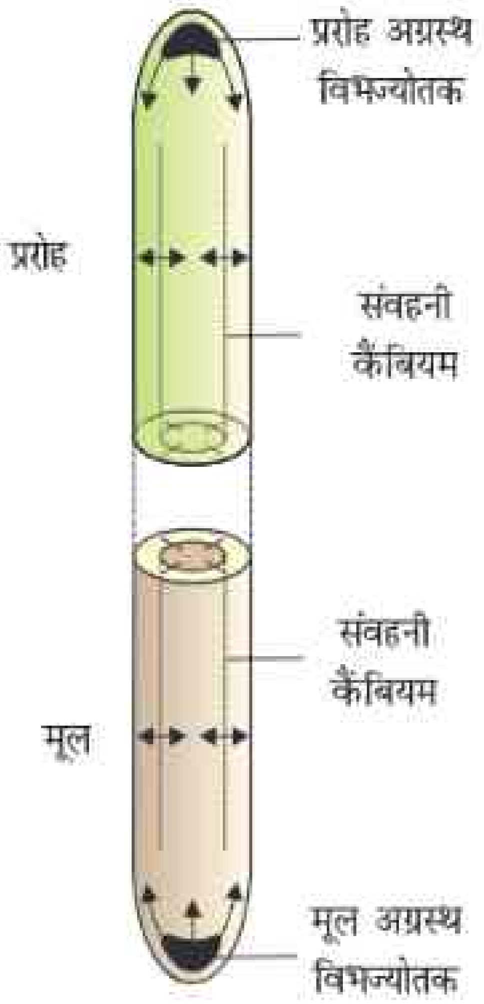

चित्र 13.2 मूल अग्रस्थ विभज्योतक, प्ररोह अग्रस्थ विभज्योतक तथा संवहनी कैंबियम का आरेख निरुपण। कोशिका और वृद्धि की दिशा को दिखाते हुए तीर।

आपने पिछली कक्षाओं में मूल शिखाग्र विभज्योतक तथा प्ररोह शिखाग्र विभज्योतक के स्तर पर विभज्योतक के बारे में पढ़ा है। ये पौधों की प्राथमिक वृद्धि के लिए जिम्मेदार होते हैं और मुख्यतया पौधे के अक्ष के समानांतर दीर्घीकरण में भागीदारी करते हैं। द्विबीज पत्ती तथा नग्नबीजी पौधों में पार्श्व विभज्योतक, संवहनी कैंबियम तथा कार्क कैंबियम जीवन में बाद में प्रकट होते हैं। ये विभज्योतक उन अंग की चौड़ाई को बढ़ाते हैं, जहाँ ये क्रियाशील होते हैं। इसे द्वितीयक वृद्धि के नाम से जाना जाता है (चित्र-13.2 देखें)।

13.1.2 वृद्धि माप योग्य है

कोशिकीय स्तर पर वृद्धि मुख्यत: जीवद्रव्य मात्रा में वृद्धि का परिणाम है। चूँकि जीवद्रव्य की वृद्धि को सीधे मापना कठिन है; अत: कुछ दूसरी मात्राओं को मापा जाता है जो कम या ज्यादा इसी के अनुपात में होता है। इसलिए, वृद्धि को विभिन्न मापदंडों द्वारा मापा जाता है। कुछेक मापदंड ये हैं: ताजी भार वृद्धि, शुष्क भार, लंबाई क्षेत्रफल, आयतन तथा कोशिकाओं की संख्या आदि। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि एक मक्के की मूल शिखाग्र विभज्योतक में प्रति घंटे 17, 500 या अधिक नई कोशकाएं पैदा हो सकती हैं, जबकि एक तरबूज में कोशिकाओं की आकार में वृद्धि 3, 50, 000 गुना तक हो सकती है। पहले वाले उदाहरण में वृद्धि को कोशिकाओं की संख्या में वृद्धि के रूप व्यक्त किया गया है, जबकि बाद वाले में वृद्धि को कोशिका के आकार में बढ़ोत्तरी के रूप में किया गया है। एक पराग नलिका की वृद्धि, लंबाई में बढ़त का एक अच्छा मापदंड है, जबकि पृष्ठाधार पत्ती की वृद्धि को उसके पृष्ठीय क्षेत्रफल की बढ़त के रूप में मापा जा सकता है।

13.1.3 वृद्धि के चरण

वृद्धि की अवधि को मुख्यत: तीन चरणों में बाँटा गया है; विभज्योतकीय, दीर्घीकरण एवं परिपक्वता (चित्र-13.3)। आओ, हम इसे मूलाग्र को देख कर समझें।

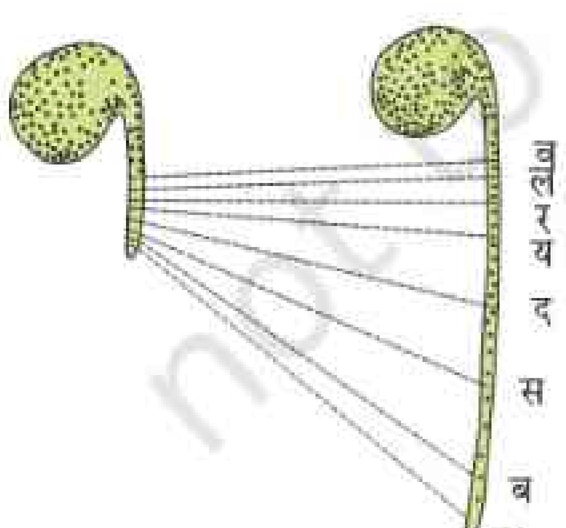

चित्र 13.3 दीर्घीकरण क्षेत्र का पहचान समानांतर रेखा तकनीक द्वारा। क्षेत्र अ, ब, स, द जो शीर्ष के पीछे हैं सबसे ज्यादा दीर्घीकृत हुए हैं।

विभज्योतकीय चरण में कोशिकाएं मूल शिखाग्र तथा प्ररोह शिखाग्र दोनों में लगातार विभाजित होती हैं। इन क्षेत्रों की कोशिकाएं जीवद्रव्य से भरपूर होती हैं और व्यापक संलक्ष्य केंद्रक को अधिकृत किए होती हैं। उनकी कोशिका भित्ति प्राथमिक, पतली तथा प्रचुर जीवद्रव्य तंतु संयोजन के साथ सेलुलाजिक होती है। विभज्योतक क्षेत्र के समीपस्थ (ठीक

अगला, नोक से दूर) कोशिका दीर्घीकरण के चरण का प्रतिनिधित्व करता है। इस चरण में कोशिकाओं का बड़ा हुआ रसधानी भवन, कोशिका विशालीकरण तथा नव कोशिका भित्ति निक्षेपण आदि विशिष्टताएं हैं। पुन: शिखाग्र से आगे अर्थात् दीर्घीकरण के अधिक समीपस्थ अक्ष का वह भाग स्थित होता है जो कि परिपक्वता के चरण में जा रहा होता है। इस परिक्षेत्र में स्थित होने वाली कोशिकाएं अपने अंतिम आकार को प्राप्त किए होती हैं तथा उनकी भित्ति की मोटाई एवं रसधानी चरम पर होता है। पिछली कक्षाओं में आपने अधिकतर जिन ऊतकों/कोशिकाओं के प्रकार का अध्ययन किया; वे इसी चरण का प्रतिनिधित्व करती है।

13.1.4 वृद्धि दर

समय की प्रति इकाई के दौरान बढ़ी हुई वृद्धि को वृद्धि दर कहा जाता है। अत: वृद्धि की दर को गणितीय ढंग से (चित्र 13.4) व्यक्त किया जा सकता है। एक जीव या उसके अंग कई तरीकों से अधिक कोशिकाएं पैदा कर सकता है।

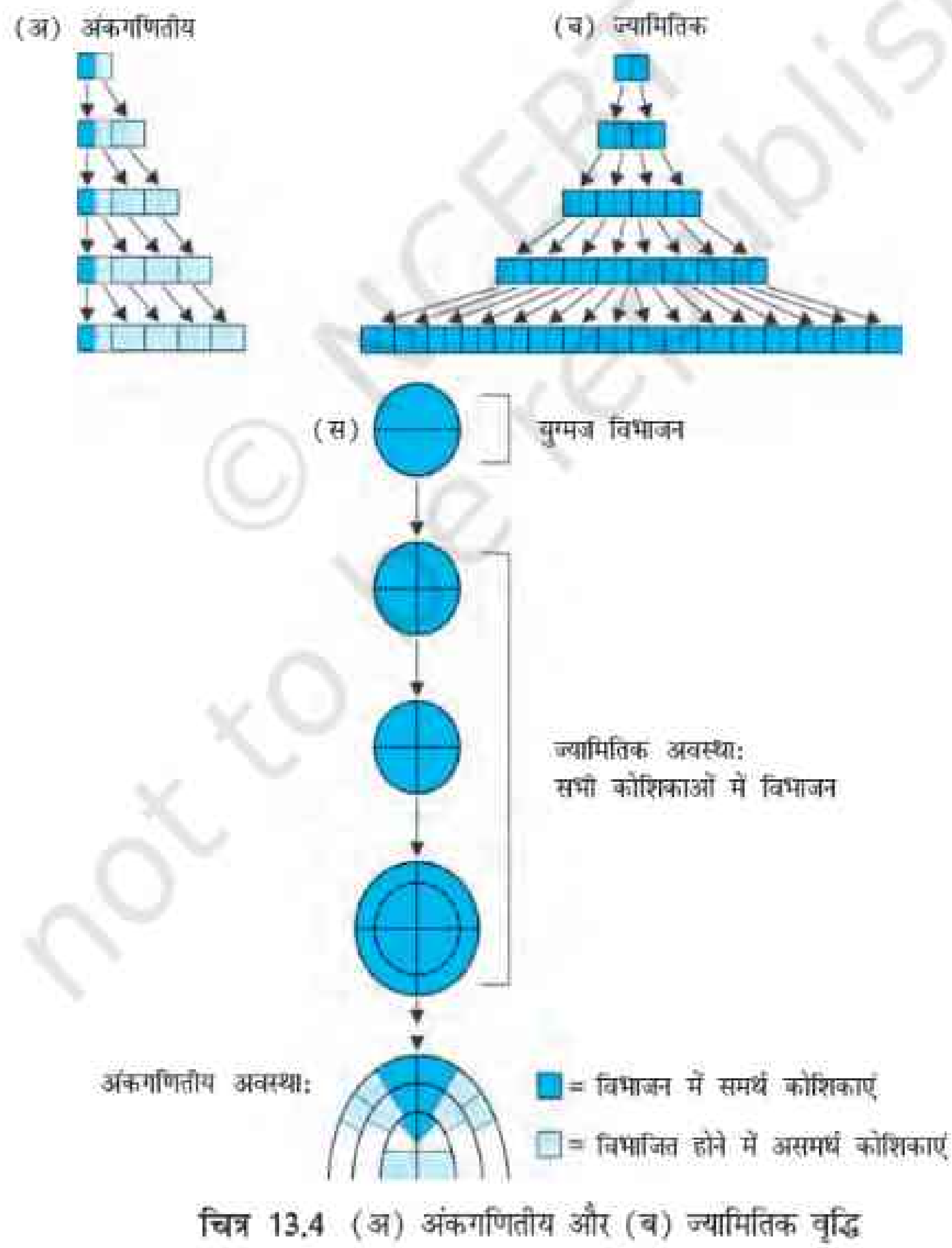

चित्र 13.4 (अ) अंकगणितीय और (ब) ज्यामितिक वृद्धि

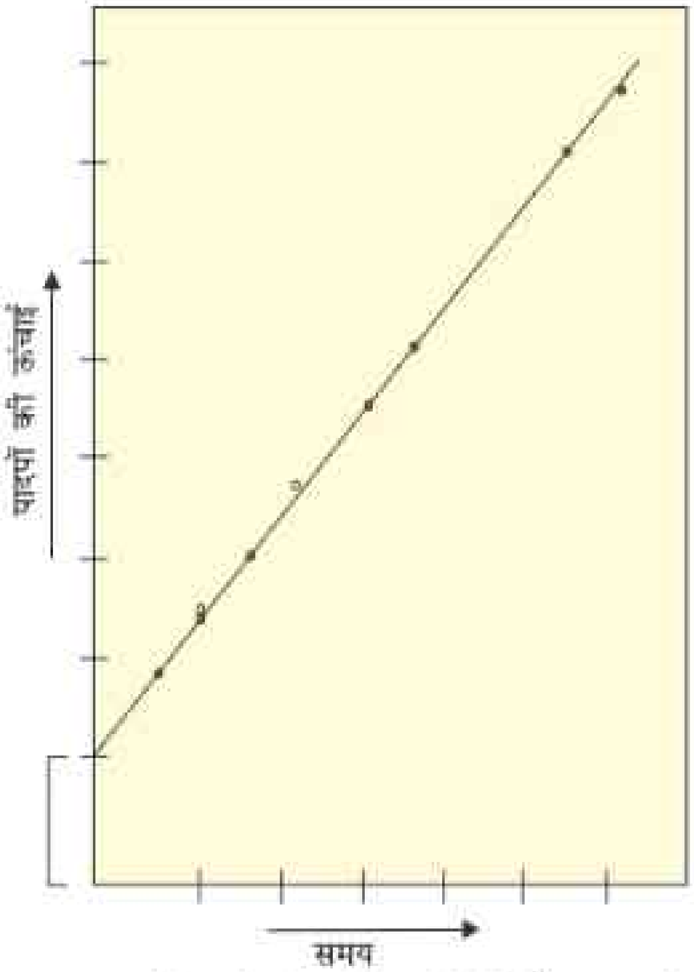

चित्र 13.5 नियत रेखीय वृद्धि, लंबाई और समय के विरूद्ध आलेख

वृद्धि दर अंकगणितीय या ज्यामितीय (रेखागणितीय) संवर्धन हो सकती है। अंकगणितीय वृद्धि में, समसूत्री विभाजन के बाद केवल एक पुत्री कोशिका लगातार विभाजित होती रहती है तो जब कि दूसरी विभेदित एवं परिपक्व होती रहती हैं। अंकगणितिय वृद्धि एक सरलतम अभिव्यक्ति है जिसे हम निश्चित दर पर दीर्घीकृत होते मूल में देख सकते हैं। (चित्र 13.5) को देखें जिसमें अंग की लंबाई समय के विरूद्ध अलिखित की गई है जिसके फलस्वरूप रेखीय वक्र पाया गया है। इसे हम गणितीय रूप में इस प्रकार चक्र कर सकते हैं–

$L_t = L_0 + rt$

L_t = टाइम टी के समय लंबाई

L_0 = टाइम शून्य के समय लंबाई

r = वृद्धि दर दीर्घीकरण प्रति इकाई समय

आइए, अब देखें, ज्यामितीय वृद्धि में क्या होती है। हालाँकि अधिकतर प्रणालियों में प्रारंभिक वृद्धि (लैगफेस) धीमी होती है और यह इसके बाद तीव्र गति से एक चरघातांकी दर (लॉग या चरघातांकी चरण) में बढ़ती है। यहाँ पर दोनों संतति कोशिकाएं एक समसूत्री कोशिका के विभाजन का अनुकरण करती है तथा विभाजित होने पर लगातार ऐसा करते रहने के काबिलियत बनाएं रखती हैं। हालाँकि, सीमित पोषण आपूर्ति के साथ वृद्धि धीमी पड़ती हुई स्थिर चरण की ओर बढ़ जाती है। यदि हम समय के प्रति वृद्धि के मापदंड को नियोजित करते हैं तो हम एक विशिष्ट सिगमोइड या एस-वक्र पाते हैं (चित्र 13.6)। एस वक्र सभी जीवित प्राणियों की विशिष्टता है जो स्वाभाविक पर्यावरण में बढ़ रहे होते हैं। यह सभी कोशिकाओं, ऊतकों एवं एक पौधों के विशेष अंगों के लिए आदर्श है। *क्या आप अन्य ऐसे ही अधिक उदाहरणों के बारे में सोच सकते हैं? मौसमी क्रियाकलाप प्रकट करने वाले एक वृक्ष से आप किस तरह के वक्र की अपेक्षा कर सकते हैं?* चरघातांकीय वृद्धि को इस प्रकार प्रकट किया जा सकता है:

$W_1 = W_0 e^{rt}$

W_1 = अंतिम आकार (भार, ऊंचाई, संख्या आदि)

W_0 = प्रथम आकार प्रारंभिक समय में

r = वृद्धि दर

t = समय में वृद्धि

e = स्वाभाविक लघुगाणिक का आधार

यहाँ r = एक सापेक्ष वृद्धि दर है, तथा साथ ही पौधे द्वारा नई पादप सामग्री को पैदा करने की क्षमता को मापने के लिए है,

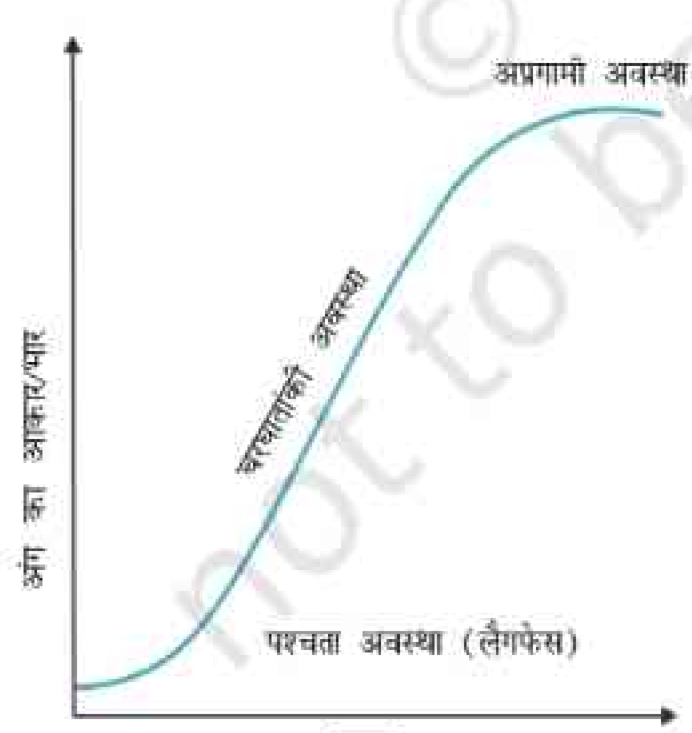

चित्र 13.6 एक आदर्श सिग्मायड वृद्धि वक्र, संवर्धित कोशिकाओं एवं उच्च पादपों और पादप अंगों के लिए प्रारुपिक

© NCERT not to be republished

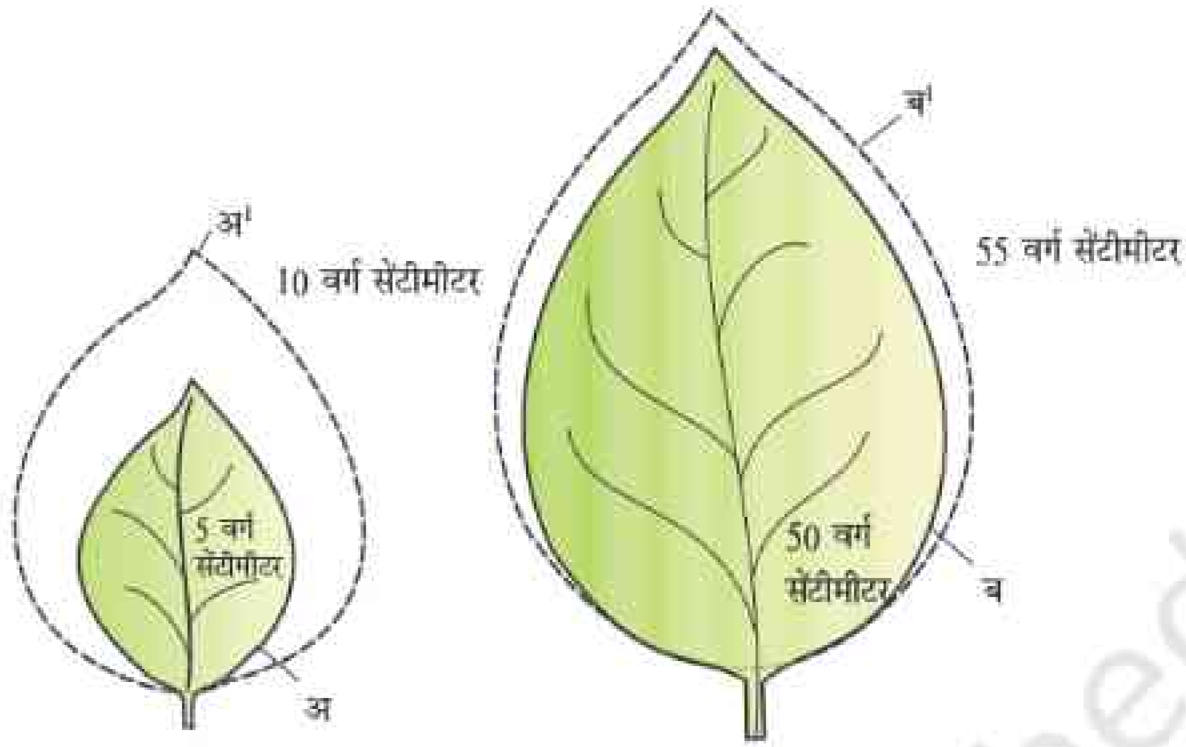

चित्र 13.7 निरपेक्ष और सापेक्ष वृद्धि दर (अ और ब पंक्तियों को देखें)। दोनों ने अपने क्षेत्रफल दिए हुए समय में अ 'अ' 'ब' ब पंक्तियां बनाने के लिए 5 से.मी.$^{-2}$ बढ़ा लिए हैं।

जिसे एक दक्षता सूचकांक के रूप में संदर्भित किया जाता है। अत: W_1 का अंतिम आकार, W_0 के प्रारंभिक आकार पर निर्भर करता है।

जीवित प्रणाली की वृद्धि के बीच मात्रात्मक तुलना भी दो तरीकों से की जा सकती है: (I) मापन और प्रति यूनिट टाइम की कुल वृद्धि की तुलना, जिसे परम वृद्धि दर कहते हैं। (II) दी गई प्रणाली की प्रति यूनिट समय पर वृद्धि को सामान्य आधार पर प्रकट करना, उदाहरणार्थ- प्रति यूनिट प्रारंभिक मापदंड या पैमाइश को सापेक्षिक वृद्धि दर कहते हैं। देखें चित्र 13.7 जहाँ दो पत्तियां 'अ' और 'ब' विभिन्न आकारों की दिखाई गई है लेकिन एक दिए गए समय में उनके संपूर्ण क्षेत्रफल में वृद्धि समान है। फिर भी उनमें से एक की सापेक्षिक वृद्धि दर ज्यादा है। यह कौन सी है और क्यों?

13.1.5 वृद्धि के लिए दशाएं

आप यह लिखने की कोशिश क्यों नहीं करते कि पौधों की वृद्धि के लिए जरूरी चीजें क्या हैं? इस सूची में जल, ऑक्सीजन तथा पोषक तत्व अवश्य होने चाहिए जो वृद्धि के लिए अनिवार्य हैं। पौधों की कोशिकाएं अपने आकार में बड़ी होकर वृद्धि करती है जिसके लिए जल की आवश्यकता होती है। इसलिए एक पादप की वृद्धि और उसका परिवर्धन उसमें पानी की स्थिति या उपलब्धता से जुड़ी है। वृद्धि के लिए आवश्यक एंजाइमों की क्रियाशीलता के लिए जल एक माध्यम उपलब्ध करता है तथा ऑक्सीजन उपाचयी ऊर्जा को मुक्त करने में मदद करती है। पौधों द्वारा पोषकों (स्थूल एवं सूक्ष्म आवश्यक तत्व) की आवश्यकता जीवद्रव्य के संश्लेषण तथा ऊर्जा के स्रोत्र के रूप में काम करने के लिए होती है।

इसके अतिरिक्त प्रत्येक पादप जीव के लिए इष्टतम ताप परिसर होता है, जो उसकी वृद्धि के लिए अत्यंत ही अनुकूल होता है। इस ताप के दायरे से किसी प्रकार का

विलगाव उसकी उत्तरजीविता के लिए हानिकारक हो सकता है। इसके साथ ही पर्यावरणीय संकेत जैसे कि प्रकाश एवं गुरुत्वाकर्षण भी वृद्धि की कुछ अवस्थाओं या चरणों को प्रभावित करता है।

13.2 विभेदन, निर्विभेदन तथा पुनर्विभेदन

मूल शिखाग्र विभज्योतक तथा प्ररोह शिखाग्र विभज्योतक से आने वाली कोशिकाएं और कैंबियम विभेदित होती हैं। तथा विशिष्ट क्रियाकलाप को संपन्न करने के लिए परिपक्व होती है। यह परिपक्वता की ओर अग्रसर होने वाली कार्यवाही **विभेदन** कहलाती है। वे अपनी कोशिकाभित्ति एवं जीवद्रव्य दोनों में ही या कुछ व्यापक संरचनात्मक बदलावों से गुजरती है। उदाहरणस्वरूप एक वाहिकीय तत्त्व के बनने में कोशिका अपने जीव द्रव्य को खो देती है और बाद में एक बहुत सुदृढ़ तन्यतापूर्ण लिग्नोसेल्युलोसिक (काष्ठ कोशिका सधानी) द्वितीय कोशिका भित्ति विकसित होती है, जो लंबी दूरी तक सर्वोच्च तनाव में भी जल को वहन करने के लिए उपर्युक्त होता है। आप पौधों के शरीर की विभिन्न रचनात्मक विशिष्टताओं एवं उसकी संबंधित क्रियाशीलता से संबंध स्थापित करने की कोशिश करें।

पौधे अन्य रोचक तथ्य दिखाते हैं। जीवित विभेदित कोशिकाएं कुछ खास परिस्थितियों में विभाजन की क्षमता पुनः प्राप्त कर सकती हैं। इस क्षमता को **निर्विभेदन** कहते हैं। उदाहरण के तौर पर अंतरापूलय वाहिकी कैंबियम, एवं कार्क कैंबियम। निर्विभेदित कोशिकाओं/ऊतकों के द्वारा उत्पादित कोशिका बाद में फिर से विभाजन की क्षमता खो देती है ताकि विशिष्ट कार्यों को संपादित किया जा सके अर्थात् **पुनर्विभेदित** हो जाती है। एक काष्ठीय द्विबीजपत्री पादप के कुछ ऊतकों की सूची बनाएं जो पुनर्विभेदन के उत्पाद हों। आप अर्बुद का कैसे वर्णन करेंगे? आप उस मृदूतक कोशिका को जिसे प्रयोगशाला के नियंत्रित क्षेत्र में पादप ऊतक संवर्धन के दौरान विभाजित कराया जा रहा हो, उसे क्या कहेंगे?

अनुभाग 13.1.1 को याद कीजिए; हमने बताया था कि पौधों में वृद्धि उन्मुक्त होती है अर्थात् यह परिमित या अपरिमित हो सकता है। अब, हम कह सकते हैं कि पादपों में विभेदन भी उन्मुक्त होता है; क्योंकि ठीक उसी विभज्योतक से पैदा हुए ऊतक/कोशिकाएं परिपक्व होने पर भिन्न संरचनाएं तैयार करती हैं। कोशिका/ऊतक की परिपक्वता के समय अंतिम संरचना कोशिका के आंतरिक स्थान पर भी निर्भर करता है। उदाहरण के लिए शिखाग्र विभज्योतक से दूरस्थ कोशिकाएं मूल गोप कोशिका के रूप में विभेदित होती हैं जबकि जिन्हें बाहरी वलय की ओर ढकेल दिया जाता है। बाह्य त्वचा के रूप में परिपक्व होती हैं। क्या आप उन्मुक्त विभेदन का कुछ और उदाहरण जोड़ना चाहेंगे जो कोशिकीय स्थिति तथा पादप अंगों में उनके स्थान के संबंधों को दर्शाता हो?

13.3 परिवर्धन

परिवर्धन वह शब्द है जिसके अंतर्गत एक जीव के जीवन चक्र में आने वाले वे सारे बदलाव शामिल हैं, जो बीजांकुरण एवं जरावस्था के बीच आते हैं। चित्र 13.8 में उच्च

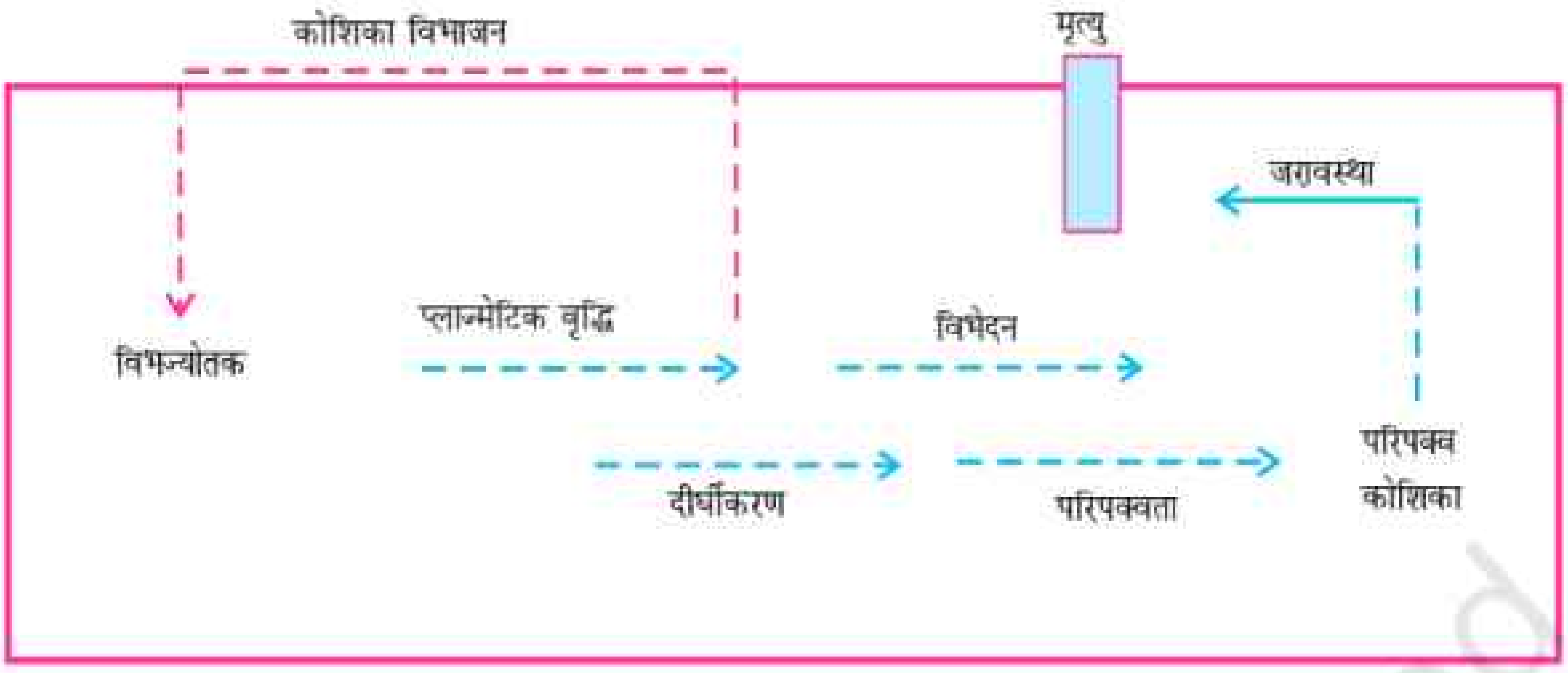

चित्र 13.8 एक पादप कोशिका के विकासात्मक प्रक्रम का अनुक्रम

पादप की कोशिकाओं में होने वाले परिवर्धन की क्रमिक प्रतिक्रियाओं को रेखा चित्र के द्वारा प्रस्तुत किया गया है। यह ऊतकों/अवयवों (अंगों) पर भी लागू होता है।

पौधे पर्यावरण के प्रभाव के कारण या जीवन के विभिन्न चरणों में भिन्न पथों का अनुसरण करते हैं, ताकि विभिन्न तरह की संरचनाओं का गठन कर सकें। इस क्षमता को **प्लास्टिसिटी** कहते हैं। उदाहरण के तौर पर कपास, धनिया एवं लार्कस्पर में विभिन्न आकार की पत्तियाँ इन पौधों में पत्तियों का आकार किशोरावस्था एवं परिपक्व अवस्था में भिन्न होते हैं। दूसरी तरफ बटरकप में पत्तियों का आकार वायवीय भागों में अलग होता है (चित्र 13.9)। विषमपर्णता का यह दृश्य प्लास्टिकता या सुघट्यता का एक उदाहरण है।

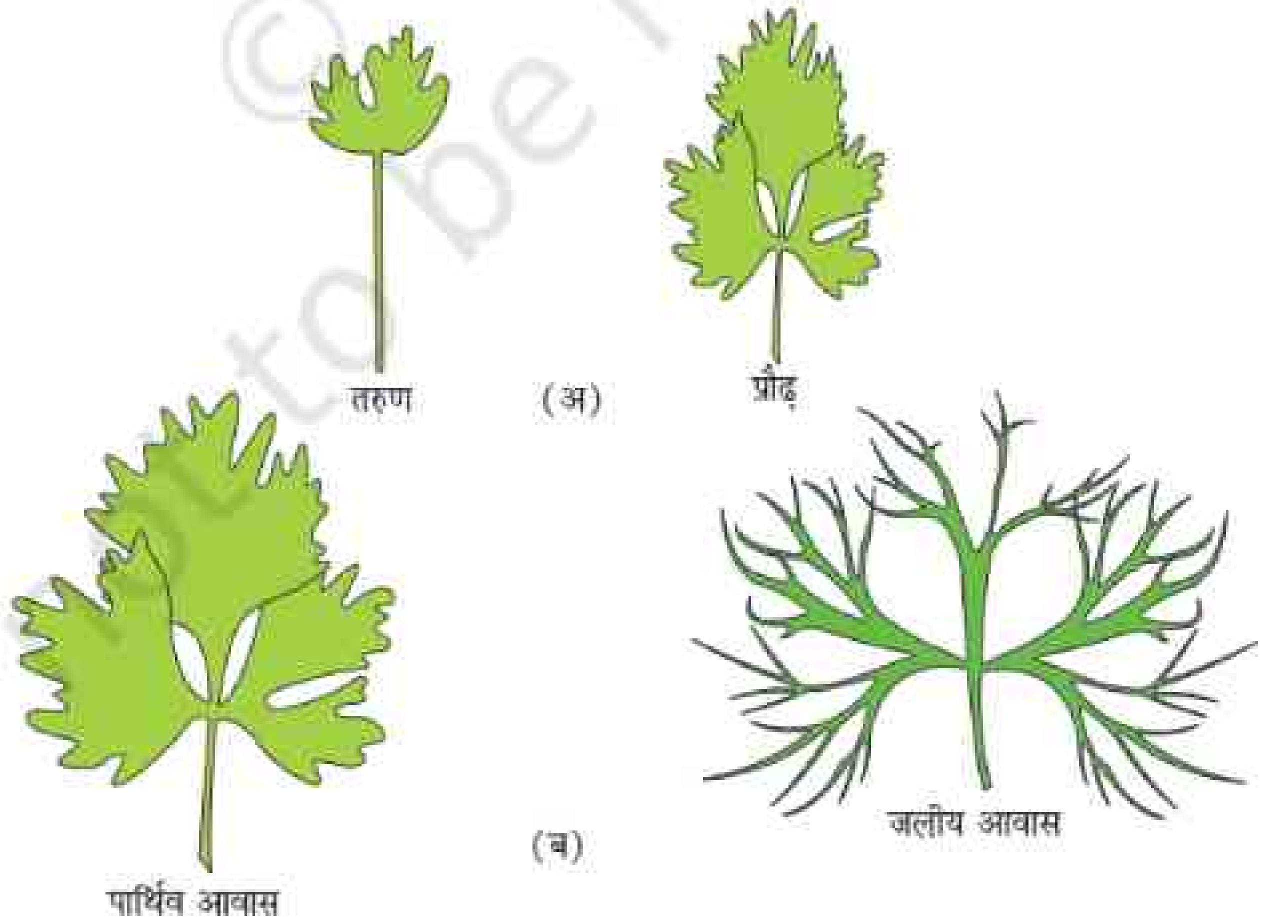

चित्र 13.9 लार्कस्पर (अ) एवं (ब) बटरकप में विषमपर्णी

अत: एक पौधे के जीवन में वृद्धि, विभेदन और परिवर्धन बहुत ही निकट संबंध रखने वाली घटनाएं हैं। व्यापक तौर पर परिवर्धन को वृद्धि एवं विभेदन के योग के रूप में माना जाता है। पौधों में परिवर्धन अर्थात् वृद्धि एवं विभेदन दोनों आंतरिक एवं बाह्य कारकों से नियंत्रित है। आंतरिक कारकों में अंतरकोशिकीय आनुवंशिक तथा अंतर कोशिकी कारक (जैसे की पादप वृद्धि नियामक रसायन) शामिल होते हैं, जबकि बाह्य कारकों के अंतगर्त प्रकाश, तापक्रम, जल, ऑक्सीजन तथा पोषक आदि शामिल होते हैं।

13.4 पादप वृद्धि नियामक

13.4.1 विशिष्टताएं

पादप वृद्धि नियामक विविध रासायनिक संघटनों वाले साधारण तथा लघु अणु होते हैं। ये इंडोल सम्मिश्रण (इंडोल-3 एसिटिक अम्ल, आई ए ए); ऐडनीन व्युत्पन्न फरफ्युराइल ऐमिनो प्युरीन काइनटिन) केराटिनायड तथा वसा अम्लों के व्युत्पन्नक (एसीसिक एसिड, ए बी ए), टर्पीन (जिबेरेलिक एसिड, जी ए) या गैसेस (एथीलिन C_2H_4) आदि हो सकते हैं। पादप वृद्धि नियामक को पाठय सामग्री में, पादप वृद्धि तत्व, पादप हार्मोन तथा फाइटोहार्मोन के नाम से वर्णित किया गया है।

पादप वृद्धि नियामक (पी जी आर) को व्यापक रूप से एक जीवित पौधे में उनकी कार्यशीलता के आधार पर दो समूहों में बाँटा जा सकता है। पीजीआर का एक समूह वृद्धि उन्नयन क्रियाकलापों में लगा होता है जैसे कि कोशिका विभाजन, कोशिका प्रसार, प्रतिमान संरचना, ट्रापिक (अनुवर्तनी) वृद्धि, पुष्पन, फलीकरण तथा बीज संरचना आदि। इन्हें पादप वृद्धि नियामक भी कहा जाता है जैसे कि ऑक्सिंस, जिब्बेरेलिंस तथा साइटोकिनिंस। उनके समूह के दूसरे पीजीआर तथा दवाब के प्रति पादपों की अनुक्रिया समूह के दूसरे पीजीआर में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इसके साथ ही वे विभिन्न वृद्धि बाधक कियाकलापों जैसे प्रसुप्ति एवं विलगन में भी शामिल होते हैं। एबसीसिक एसिड पीजीआर इसी समुह का सदस्य है। गैसीय पी जी आर, एथीलिन किसी भी समूह के साथ बैठ जाता है लेकिन व्यापक तौर पर यह एक वृद्धि बाधक क्रिया कलापों में आता है।

13.4.2 पादप वृद्धि नियामकों की खोज

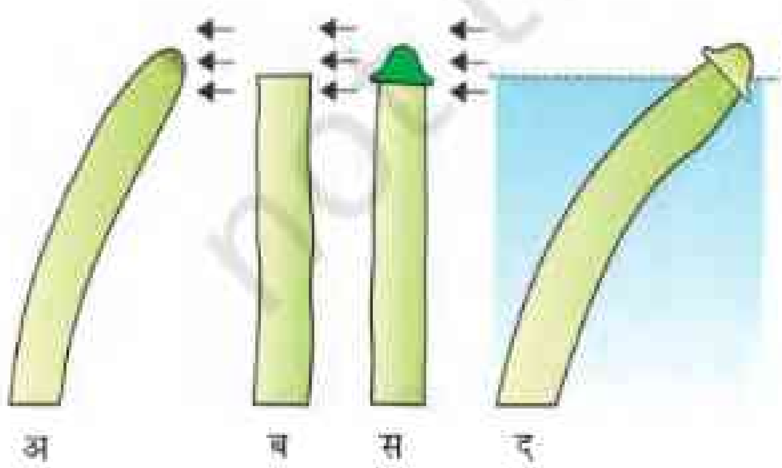

चित्र 13.10 प्रांकुर चोल का अग्रभाग पादप वृद्धि नियामक ऑक्सिन का उद्गम स्थल है

रोचक बात यह है कि पीजीआर के पाँच प्रमुख समूहों में प्रत्येक की खोज मात्र एक संयोग है। इसकी शुरूआत चार्ल्स डारविन और उनके पुत्र फ्रांसिस डारविन के अवलोकन से हुई जब उन्होंने देखा कि कनारी घास का प्रांकुर चोल (कोलियोपटाइल) एकपार्श्वी प्रदीपन के प्रति अनुक्रिया करता है और प्रकाश के उद्गम की तरफ वृद्धि (प्रकाशानुवर्तन) करता है। प्रयोगों की एक लंबी शृंखला के पश्चात, यह निष्कर्ष निकाला गया कि प्रांकुर चोल की नोक संचारणीय प्रवाह की जगह है जो संपूर्ण प्रांकुर चोल के मुड़ने का कारण है (चित्र 13.10)। ऑक्सिन

की खोज एफ डवल्यू वेंट (F.W. Went) के द्वारा जई के अंकुर के प्रांकुरचोल शिखर से की गई है।

'बैकेन' (फूलिश सीडलिंग) धान के पौध (नवोद्भिद्) की बीमारी है जो रोगजनक कवक जिबेरेला फूजीकोराइ के द्वारा होती है। ई. कुरोसोवा (जापानी वैज्ञानिक) ने रोगरहित धान को पौध में रोग लक्षण को बताया, जब उन्हें कवक के जीवाणुहीन निस्यंदों (फिल्ट्रेट) के साथ उपचारित किया। सक्रिय तत्व की पहचान बाद में जिब्बेरेलिक अम्ल के रूप में हुई।

एफ स्कूग (F. Skoog) तथा उनके सहकर्मियों ने देखा कि तंबाकू के तने के अंतरपर्व (इंट्रानोडल) खंड से (अविभेदित कोशिकाओं का समूह) तभी प्रचुरित हुआ जब ऑक्सिंस के अलावा मीडियम में, वाहिका ऊतकों के सत्व या यीस्ट सत्व या नारियल दूध या डीएनए पूरक रूप में दिया गया। मिलर एट आल (Miller et.al) (1955) ने साइटोकाइनेसिस को बढ़ावा देने वाले इस तत्व को पहचाना और इसका क्रिस्टलीकरण किया तथा काइनेटिन नाम दिया।

1960 के मध्य में तीन अलग-अलग वैज्ञानिकों ने स्वतंत्र रूप से तीन तरह के निरोधक का शुद्धिकरण एवं उसका रासायनिक स्वरूप प्रस्तुत किया। वे निरोधक बी, बिलगन II एवं डोरमिन है। बाद में ये तीनों रासायनिक रूप से समान पाए गए। इसका नामकरण एबसिसिक अम्ल के रूप में किया गया।

एच.एच. कज़िन्स (H.H. Cousins) (1910) ने यह सुनिश्चित किया कि पके हुए संतरों से निकला हुआ एक वाष्पशील तत्व पास में रखे बिना पके हुए केलों को शीघ्रता में पकाता है। बाद में यह वाष्पशील तत्व एथीलिन के नाम से जाना गया जो एक गैसीय पीजीआर है। आइए, अब हम इन पाँच तरह के पीजीआर के कायिकीय प्रभाव का अगले भाग में अध्ययन करते हैं।

13.4.3 पादप वृद्धि नियामकों का कायिकीय शरीरक्रियात्मक प्रभाव

13.4.3.1 ऑक्सिन

(ग्रीक शब्द *आक्सेन* : बढ़ना) सर्वप्रथम मनुष्य के मूत्र से निकाला गया। शब्द ऑक्सिन इनडोल-3 एसेटिक अम्ल (आई ए ए) तथा अन्य प्राकृतिक एवं कृत्रिम यौगिक, जिसमें वृद्धि करने की क्षमता हो, के लिए प्रयोग किया जाता है। ये प्रायः तने एवं मूल के बढ़ते हुए शिखर पर बनते हैं तथा वहाँ से क्रियाशीलता वाले भाग में जाता हैं। ऑक्सिन जैसे आईएए एवं इनडोल ब्यूटेरिक अम्ल पौधे से निकाला गया है। एनएए (नैफथेलिन एसेटिक अम्ल) तथा 2, 4 डी (2,4 डाईक्लोरो फिनोक्सी एसेटिक अम्ल) कृत्रिम ऑक्सिन हैं। ऑक्सिन के उपयोग का एक विस्तृत दायरा है और ये बागवानी एवं खेती में प्रयोग किए गए हैं। ये तनों की कटिंग (कलमों) में जड़ फूटने (रूटिंग) में सहायता करती है जो पादप प्रवर्धन में व्यापकता से इस्तेमाल होती है। ऑक्सिन पुष्पन को बढ़ा देती है; जैसे अनानास में। ये पौधों के पत्तों एवं फलों को शुरूआती अवस्था में गिरने से बचाते हैं तथा पुरानी एवं परिपक्व पत्तियों एवं फलों के विलगन को बढ़ावा देते हैं। उच्च पादपों में वृद्धि करती अग्रस्थ कलिका पार्श्व (कक्षस्थ) कलियों की वृद्धि को अवरोधित करते हैं। जिसे

© NCERT not to be republished

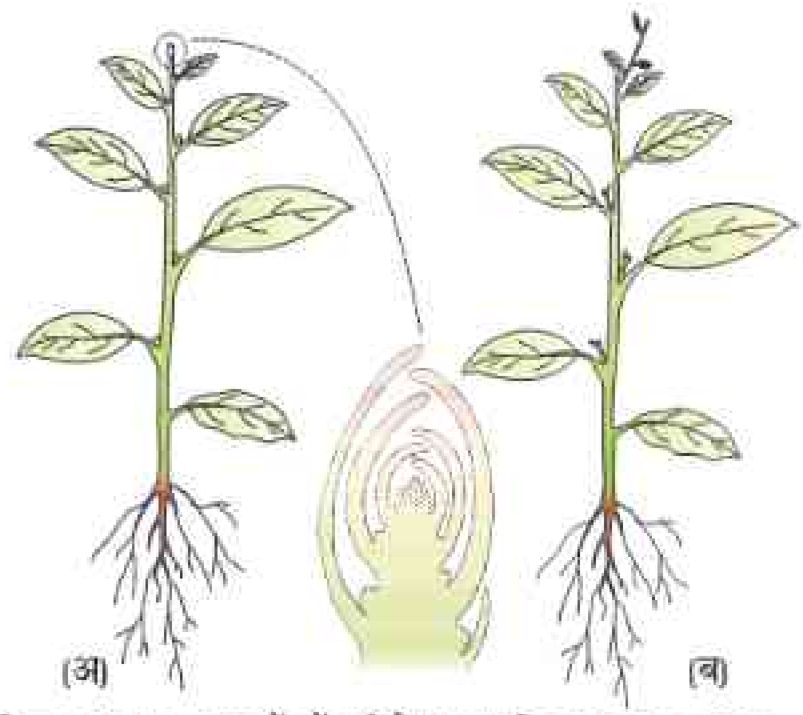

चित्र 13.11 पादपों में शीर्षस्थ प्रभाविता (अ) अग्रस्थ कलिका की उपस्थिति कक्षस्थ कलिका में वृद्धि को रोकती है (ब) अग्रस्थ कलिका का लंबवत काट, कक्षस्थ कलिका से छत्रक हटाने के बाद शाखाओं के रूप में वृद्धि

शिखाग्र प्रधान्यता (apical dominance) कहते हैं। प्ररोह सिरों को हटाने (शिरच्छेदन) से प्राय: पार्श्व कलियों की वृद्धि होती है (देखें चित्र 13.11)। यह बात व्यापक रूप से चाय रोपण एवं बाड़ बनाने (हेज मेकिंग) में लागू होती है। क्या आप बता सकते हैं, क्यों?

इसके साथ ही ऑक्सिन अनिषेकफलन को प्रेरित करता है जैसे कि टमाटर में। इन्हें व्यापक रूप से शाकनाशी के रूप में उपयोग किया जाता है। 2, 4-डी, व्यापक रूप से द्विबीजपत्ती खरपतवारों का नाश कर देता है; लेकिन एकबीजपत्ती परिपक्व पौधों को प्रभावित नहीं करता है। इसका उपयोग मालियों के द्वारा लॉन को तैयार करने में किया जाता है। इसके साथ ही ऑक्सिन जाइलम विभेदन को नियंत्रित करने तथा कोशिका के विभाजन में मदद करता है।

13.4.3.2 जिबरेलिन

जिबरेलिन एक अन्य प्रकार का प्रोत्साहक पी जी आर है। सौ से अधिक जिबरेलिन की सूचना विभिन्न जीवों से आ चुकी है जैसे कि कवकों और उच्च पादपों से। इन्हें जी $ए_1$ (GA_1)जी $ए_2$ (GA_2)जी $ए_3$ (GA_3)और इसी तरह से नामित किया गया है। हालांकि जी $ए_3$ वह जिबरेलिन है जिसकी सबसे पहले खोज की गई थी और अभी भी सभी से अधि क सघनता से अध्ययन किया जाने वाला स्वरूप है। सभी जी ए एस (GAs) अम्लीय होते हैं। ये पौधों में एक व्यापक दायरे की कायिकीय अनुक्रिया देते हैं। ये अक्ष की लंबाई बढ़ाने की क्षमता रखते हैं, अत: अंगूर के डंठल की लंबाई बढ़ाने में प्रयोग किये जाते हैं। जिबरेलिन सेव जैसे फलों को लंबा बनाते हैं ताकि वे उचित रूप ले सकें। ये जरावस्था को भी रोकते हैं, ताकि फल पेड़ पर अधिक समय तक लगे रह सकें और बाजार में मिल सकें। जी $ए_3$ (GA_3) को आसव (शराब) उद्योग में माल्टिंग की गति बढ़ाने के लिए उपयोग किया जाता है। गन्ने के तने में कार्बोहाइड्रेट्स चीनी या शर्करा के रूप में एकत्र रहता है। गन्ने की खेती में जिबरेलिन छिड़कने पर तनों की लंबाई बढ़ती है। इससे 20 टन प्रति एकड़ ज्यादा उपज बढ़ जाती है। जी ए छिड़कने पर किशोर शंकुवृक्षों में परिपक्वता तीव्र गति से होती है अत: बीज जल्दी ही तैयार हो जाता है। जिबरेलिन चुकंदर, पत्तागोभी एवं अन्य रोजेटी स्वभाव वाले पादपों में बोल्टिंग (पुष्पन से पहले अंत:पर्व का दीर्घीकरण) को बढ़ा देता है।

13.4.3.3 साइटोकाइनिन

साइटोकाइनिन अपना विशेष प्रभाव साइटोकिनेसिस (कोशिकाद्रव्य विभाजन) में डालता है और इसे काइनेटिन(एडेनिन का रूपांतरित रूप एक प्युरीन) के रूप में आटोक्लेबड् हेरिंग के शुक्राणु से खोजा गया था। काइनेटिन पौधों में प्राकृतिक रूप से नहीं पाया जाता है। साइटोकाइनिन जैसे पदार्थों की खोज के क्रम में मक्का की अष्ठि तथा नारियल दूध से जियाटीन अलग किया जा सका। जियाटिन के खोज के बाद अनेकों प्राकृतिक रूप से प्राप्त साइटोकाइनिन तथा कोशिका विभाजन प्रोत्साहक पहचाने गए। प्राकृतिक साइटोकाइनिन उन क्षेत्रों में संश्लेषित होता है, जहाँ तीव्र कोशिका विभाजन संपन्न होता है, उदाहरण के लिए मूल शिखाग्र, विकासशील प्ररोह कलिकाएं तथा तरुणफल आदि। यह नई पत्तियों में हरितलवक पार्श्व प्ररोह वृद्धि तथा आपस्थानिक प्ररोह संरचना में मदद करता है। साइटोकाइनिन शिखाग्र प्राधान्यता से छुटकारा दिलाता है। वे पोषकों के संचारण को बढ़ावा देते हैं जिससे पत्तियों की जरावस्था को देरी करने में मदद मिलती है।

13.4.3.4 एथीलिन

एथीलिन एक साधारण गैसीय पी जी आर है यह जरावस्था को प्राप्त होते ऊतकों तथा पकते हुए फलों के द्वारा भारी मात्रा में संश्लेषित की जाती है। एथीलिन पौधों की अनुप्रस्थ (क्षैतिज) वृद्धि, अक्षों में फुलाव एवं द्विबीजी निवेद्भिदों में अंकुश संरचना को प्रभावित करती है। एथीलिन जरावस्था एवं विलगन को मुख्यत: पत्तियों एवं फूलों में बढ़ाती है। यह फलों को पकाने में बहुत प्रभावी है। फलों के पकने के दौरान यह श्वसन की गति की वृद्धि करता है। श्वसन वृद्धि में गति की इस बढ़त को क्लाइमैक्टिक श्वसन कहते हैं।

एथीलिन बीज तथा कलिका प्रसुप्ति को तोड़ती है, मूंगफली के बीज में अंकुरण को शुरू करती है तथा आलू के कंदों को अंकुरित करती है। एथीलिन गहरे पानी के धान के पौधों में पर्णवृंत को तीव्र दीर्घीकरण के लिए प्रोत्साहित करता है। यह पत्तियों तथा प्ररोह के ऊपरी भाग को पानी से ऊपर रखने में मदद करता है। इसके साथ ही एथीलिन मूल वृद्धि तथा मूल रोमों को प्रोत्साहित करती है; अत: पौधे को अधिक अवशोषण क्षेत्र प्रदान करने में मदद करती है।

एथीलिन अनानास को फूलने तथा फल समकालिकता में सहायता करता है। इसके साथ ही आम को पुष्पित होने में प्रेरित करता है। एथीलिन अनेकानेक कार्यिकी प्रक्रियाओं को नियमित करता है, अत: यह कृषि में सर्वाधिक इस्तेमाल होने वाली पी जी आर है। सर्वाधिक व्यापक तौर पर इस्तेमाल होने वाला यौगिक एथिफॉन है। एथिफॉन जलीय घोल में आसानी से अवशोषित तथा पौधे के अंतर्गत संचारित होता है तथा धीरे-धीरे एथीलिन मुक्त करता है। एथिफॉन टमाटर एवं सेव के फलों के पकाने की गति को बढ़ाता है तथा फूलों एवं फलों में विलगन को तीव्रता प्रदान करता है (कपास, चेरी तथा अखरोट में विरलन)। यह खीरों में मादा पुष्पों का बढ़ाता है जिससे फसल की पैदावार में वृद्धि होती है।

13.4.3.5 एबसिसिक एसिड

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि एबसिसिक एसिड (ABA); की खोज विलगन एवं प्रसुप्ति को नियामित करने में उसकी भूमिका के लिए हुई थी। लेकिन अन्य दूसरे पी जी आर की भांति यह भी पादप वृद्धि एवं परिवर्धन में व्यापक दायरे में प्रभाव डालता है। यह एक सामान्य पादप वृद्धि तथा पादप उपापचय के निरोधक का काम करता है। ए बी ए बीज के अंकुरण का निरोध करता है। यह बाह्यत्वचीय पट्टिकाओं में रंध्रों के बंद होने को प्रोत्साहित करता है तथा पौधों को विभिन्न प्रकार के तनावों को सहने हेतु क्षमता प्रदान करता है। इसी कारण इसे तनाव हार्मोन भी कहा जाता है। ए बी ए बीज के विकास, परिपक्वता, प्रसुप्ति आदि में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। प्रसुप्ति को प्रेरित करने के द्वारा ए बी ए बीज को जल शुष्कन तथा वृद्धि के लिए अन्य प्रतिकूल परिस्थिति से बचाव देता है। बहुत सारी परिस्थतियों में, एबीए, जीएएस (GAs) के लिए एक विरोधक की भूमिका निभाता है।

हम संक्षेप में कह सकते हैं कि पादपों की वृद्धि, विभेदन तथा परिवर्धन के लिए एक या कई अन्य पी जी आर कुछ न कुछ भूमिका निभाते हैं। यह भूमिकाएं संपूरक की या फिर विरोधक की भी हो सकती है। ये भूमिकाएं वैयक्तिक (निजी) या योगवाही हो सकती हैं। इसी तरह पौधे के जीवन में कई घटनाएं होती हैं जहाँ एक से ज्यादा पीजीआर मिलकर घटनाओं को प्रभावित करती हैं, उदाहरण के तौर पर बीज या कली का प्रसुप्तीकरण, विलगन, जरावस्था, शिखर प्रभुत्व आदि।

पीजीआर की भूमिका एक तरह के आंतरिक नियंत्रण में है। याद करें, जीनोमिक नियंत्रण एवं बाह्य कारक के साथ ये पौधे की वृद्धि एवं परिवर्धन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। बहुत सारे बाह्य कारक जैसे कि तापक्रम एवं प्रकाश पौधे की वृद्धि एवं परिवर्धन को पीजीआर के माध्यम से नियंत्रण करते हैं। ऐसी कुछ घटनाओं का उदाहरण हैं: वसंतीकरण पुष्पन, प्रसुप्तीकरण, बीज अंकुरण, पौधों में गति आदि।

हम लोग संक्षेप में प्रकाश और ताप (दोनों बाह्य कारक है) के पुष्पन आरंभ करने की भूमिका को पढ़ेंगे।

सारांश

किसी भी जीवित प्राणी के लिए वृद्धि एक अत्यंत उत्कृष्ट घटना है। यह एक अनपलट, बढ़तयुक्त तथा मापदंड में प्रकट होने वाली है जैसे कि आकार, क्षेत्रफल, लंबाई, ऊंचाई, आयतन, कोशिका संख्या आदि। इसमें बढ़ा हुआ जीव द्रव्य पदार्थ शामिल है। पौधों में विभज्योतक/मेरिस्टेम वृद्धि की जगहें होती हैं। मूलशिखाग्र विभज्योतक तथा प्ररोह शिखाग्र विभज्योतक के साथ-साथ कई बार, अंतरवाहिका विभज्योतक पौधे के अक्ष की दीर्घगामी वृद्धि में भागीदारी करते हैं। उच्च पेड़ों में वृद्धि अनियत होती है। मूल शिखाग्र एवं प्ररोह शिखाग्र में कोशिका विभाजन का अनुपालन करते हुए वृद्धि अंकगणितीय या ज्यामितीय हो सकती

है। कोशिका/ऊतक/अंग जीवों में वृद्धि दर सामान्यतः पूरे जीवन काल में उच्च दर पर नहीं टिकी रहती है। वृद्धि को तीन प्रमुख चरणों, लैग, लॉग तथा जरावस्था में बाँटा जा सकता है। जब कोशिका अपनी विभाजन क्षमता खो देती है तो यह विभेदन की ओर बढ़ जाती है। विभेदन संरचनाएं प्रदान करता है जो उत्पाद की क्रियात्मकता के साथ जुड़ी होती है। कोशिकाओं, ऊतकों तथा संबंधी अंगों के लिए विभेदन के लिए सामान्य नियम एक समान होते हैं। एक विभेदित कोशिका फिर विभेदित हो सकती है या फिर पुनःविभेदित हो सकती है। पादपों में विभेदन चूँकि खुला होता है, अतः परिवर्धन लचीला हो सकता है। दूसरे शब्दों में है परिवर्धन वृद्धि एवं विभेदन का योग है।

पादप वृद्धि एवं परिवर्धन बाह्य एवं आंतरिक दोनों कारकों द्वारा नियंत्रित होते हैं। अंतरकोशीय आंतरिक कारक रासायनिक तत्व होते हैं जिन्हें पादप वृद्धि नियामक (पीजीआर) कहा जाता है। पौधों में पीजीआर के विभिन्न समूह होते हैं, जो मुख्यतः पाँच समूह के नाम से जाने जाते हैं: आक्सिन, जिब्बेरेलिंस, साइटोकिनिंस, एबसीसिक एसिड तथा एथीलिन। ये पीजीआर पौधे के विभिन्न हिस्सों में उत्पादित किए जाते हैं। ये विभिन्न विभेदन एवं परिवर्धन की घटनाओं को नियंत्रित करते हैं। कोई भी पीजीआर पादपों के कार्यिकी पर प्रभाव डाल सकता है। ठीक इसी प्रकार से ये प्रभाव विविध प्रकार की पीजीआर से प्रकट होते हैं। ये पीजीआर सहक्रियाशील योगवाही अथवा प्रतिरोधात्मक के रूप में कार्य कर सकते हैं। इसके साथ पादप वृद्धि एवं परिवर्धन प्रकाश, तापक्रम, ऑक्सीजन स्तर, गुरुत्व तथा अन्य ऐसे ही बाहरी घटकों द्वारा भी प्रभावित होते हैं।

अभ्यास

1. वृद्धि, विभेदन, परिवर्धन, निर्विभेदन, पुनर्विभेदन, सीमित वृद्धि, मेरिस्टेम तथा वृद्धि दर की परिभाषा दें।
2. पुष्पित पौधों के जीवन में किसी एक प्राचालिक (Parameter) से वृद्धि को वर्णित नहीं किया जा सकता है, क्यों?
3. संक्षिप्त वर्णित करें–
   (अ) अंकगणितीय वृद्धि
   (ब) ज्यामितीय वृद्धि
   (स) सिग्माइड वृद्धि वक्र
   (द) संपूर्ण एवं सापेक्ष वृद्धि दर
4. प्राकृतिक पादप वृद्धि नियामकों के पाँच मुख्य समूहों के बारे में लिखें। इनके आविष्कार, कार्यिकी प्रभाव तथा कृषि/बागवानी में इनका प्रयोग के बारे में लिखें।
5. एबसिसिक एसिड को तनाव हार्मोन कहते हैं, क्यों?
6. उच्च पादपों में वृद्धि एवं विभेदन खुला होता है, टिप्पणी करें?
7. अगर आपको ऐसा करने को कहा जाए तो एक पादप वृद्धि नियामक का नाम दें–
   (क) किसी टहनी में जड़ पैदा करने हेतु
   (ख) फल को जल्दी पकाने हेतु
   (ग) पत्तियों की जरावस्था को रोकने हेतु
   (घ) कक्षस्थ कलिकाओं में वृद्धि कराने हेतु

© NCERT not to be republished

(च) एक रोजेट पौधे में 'वोल्ट' हेतु
(छ) पत्तियों के रंध्र को तुरंत बंद करने हेतु

8. क्या हो सकता है, अगर:
(क) जी ए$_3$ (GA_3) को धान के नवोद्भिदों पर दिया जाए
(ख) विभाजित कोशिका विभेदन करना बंद कर दें
(ग) एक सड़ा फल कच्चे फलों के साथ मिला दिया जाए।
(घ) अगर आप संवर्धन माध्यम में साइटोकीनिंस डालना भूल जाएं।

© NCERT not to be republished

इकाई पाँच

मानव शरीर विज्ञान

अध्याय 14
श्वसन और गैसों का विनिमय

अध्याय 15
शरीर द्रव्य तथा परिसंचरण

अध्याय 16
उत्सर्जी उत्पाद एवं उनका निष्कासन

अध्याय 17
गमन एवं संचलन

अध्याय 18
तंत्रकीय नियंत्रण एवं समन्वय

अध्याय 19
रासायनिक समन्वय तथा एकीकरण

न्युनीकरणकर्ता जीवन के स्वरूपों के अध्ययन का उपागम करते हैं, परिणामस्वरूप भौतिक-रसायन संकल्पना एवं तकनीकी के उपयोग में वृद्धि होती है। ऐसे अध्ययनों में बहुतायत से या तो जीवद्-ऊतक मॉडल का उपयोग करते हैं या फिर सीधे-सीधे कोशिकामुक्त प्रणाली का उपयोग करते हैं। एक ज्ञान की अभिवृद्धि के परिणामस्वरूप आण्विक जीव विज्ञान का जन्म हुआ। आज जैव-रसायनशास्त्र एवं जैव-भौतिकी के साथ आण्विक शरीर विज्ञान लगभग पर्यायवाची बन चुका है। हालांकि, अब तीव्र वृद्धि के साथ यह महसूस किया जा रहा है कि न तो शुद्ध रूप से जैविक उपागम और न ही शुद्ध रूप से न्यूनीकरण आण्विक उपागम जैव वैज्ञानिक प्रक्रम या जीवित प्रत्याभासों के सत्य को उद्घाटित कर पाएगा। वर्गिकी जीव विज्ञान हमें यह विश्वास दिलाता है कि सभी जैविक प्रत्याभास अध्ययन के अंतर्गत सभी कारकों की परस्पर क्रिया के कारण निर्गत विशिष्टाएं या गुणधर्म है। अणुओं का नियामक नेटवर्क, सुप्रा आण्विक जनसंख्या एवं समुदाय हर एक निर्गत गुणधर्म को पैदा करते हैं। इस खंड के अंतर्गत आने वाले अध्यायों में प्रमुख मानव शरीर वैज्ञानिक प्रक्रमों, जैसे गैसों का विनिमय, रक्त परिसंचरण, गमन एवं संचलन के बारे में कोशिकीय एवं आण्विक भाषा में वर्णन किया गया है। अंतिम दो अध्यायों के अंतर्गत जैविक समन्वय के बिंदुओं पर चर्चा की गई है।

© NCERT not to be republished

अलफोन्सो कोर्टी
(1822 – 1888)

इटैलियन शरीर क्रिया वैज्ञानिक अलफोन्सो कोर्टी का जन्म 1822 में हुआ था। कोर्टी ने अपना वैज्ञानिक जीवन सरीसृपों के हृद-वाहिका तंत्र के अध्ययन से प्रारंभ किया था। बाद में उन्होंने अपना ध्यान स्तनधारियों के श्वसन-तंत्र की ओर केंद्रित किया था। सन् 1951 में आपने एक लेख प्रकाशित किया, जिसमें आपने कर्णावर्त (कॉक्लिया) की आधारस्थ झिल्ली पर स्थित संरचना में समाहित रोम कोशिकाओं की व्याख्या की थी जोकि ध्वनि कंपनों को तंत्रकीय आवेगों में परिवर्तित कर देती हैं। जिन्हें कोर्टी का अंग कहा गया। आपका देहांत वर्ष 1888 में हो गया।

not to be republished

अध्याय 14

श्वसन और गैसों का विनिमय

14.1 श्वसन के अंग

14.2 श्वसन की क्रियाविधि

14.3 गैसों का विनिमय

14.4 गैसों का अभिगमन

14.5 श्वसन का नियंत्रण

14.6 श्वसन संबंधी विकार

जैसाकि आप पहले पढ़ चुके हैं, सजीव पोषक तत्वों जैसे- ग्लूकोज को तोड़ने के लिए ऑक्सीजन (O_2) का परोक्ष रूप से उपयोग करते हैं, जिससे विभिन्न क्रियाओं को संपादित करने के लिए आवश्यक ऊर्जा प्राप्त होती है उपरोक्त अपचयी क्रियायों में कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) भी मुक्त होती है जो हानिकारक है। इसलिए यह आवश्यक है कि कोशिकाओं को लगातार O_2 उपलब्ध कराई जाए और CO_2 को बाहर मुक्त किया जाए। वायुमंडलीय O_2 और कोशिकाओं में उत्पन्न CO_2 के आदान-प्रदान (विनिमय)की इस प्रक्रिया को **श्वासन** (Breathing) समान्यतया **श्वसन** (Respiration) कहते हैं। अपने हाथों को अपने सीने पर रखिए, आप सीने को ऊपर नीचे होते हुए अनुभव कर सकते हैं। आप जानते हैं कि यह श्वसन के कारण है। हम श्वास कैसे लेते हैं? इस अध्याय के निम्नलिखित खंडों में श्वसन अंगों और श्वसन की क्रियाविधि का वर्णन किया गया है।

14.1 श्वसन के अंग

प्राणियों के विभिन्न वर्गों के बीच श्वसन की क्रियाविधि उनके निवास और संगठन के अनुसार बदलती है। निम्न अकशेरुकी जैसे स्पंज, सीलंटेरेटा चपटेकृमि आदि O_2 और CO_2 का आदान-प्रदान अपने सारे शरीर की सतह से सरल विसरण द्वारा करते हैं। केंचुए अपनी आर्द्र क्यूटिकल को श्वसन के लिए उपयोग करते हैं। कीटों के शरीर में नलिकाओं का एक जाल (श्वसन नलिकाएं) होता है; जिनसे वातावरण की वायु का उनके शरीर

में विभिन्न स्थान पर पहुँचती है; ताकि कोशिकाएं सीधे गैसों का आदान-प्रदान कर सकें। जलीय आर्थोपोडा तथा मौलस्का में श्वसन विशेष संवहनीय संरचना **क्लोम** (गिल) द्वारा होता है, जबकि स्थलचर प्राणियों में श्वसन विशेष संवहनीय थैली फुप्फुस/**फेफड़े** द्वारा होता है। कशेरुकों में मछलियाँ क्लोम (गिल) द्वारा श्वसन करती हैं जबकि एम्फबिया (उभयचर), सरीसृप,पक्षी और स्तनधारी फेफड़ों द्वारा श्वसन करते हैं। उभयचर जैसे मेंढक अपनी आर्द्र त्वचा (नम त्वचा) द्वारा भी श्वसन कर सकते हैं। स्तनधारियों में एक पूर्ण विकसित श्वसन प्रणाली होती है।

14.1.1 मानव श्वसन तंत्र

हमारे एक जोड़ी बाह्य नासाद्वार होते हैं, जो होठों के ऊपर बाहर की तरफ खुलते हैं। ये नासा मार्ग द्वारा नासा कक्ष तक पहुँचते हैं। नासा कक्ष **ग्रसनी** में खुलते हैं। ग्रसनी आहार और वायु दोनों के लिए उभयनिष्ठ मार्ग है। ग्रसनी कंठ द्वारा **श्वासनली** में खुलती है। कंठ एक उपास्थिमय पेटिका है जो ध्वनि उत्पादन में सहायता करती है इसीलिए इसे **ध्वनि पेटिका** भी कहा जाता है। भोजन निगलते समय घाँटी एक पतली लोचदार उपास्थिल पल्ले/फ्लैप **कंठच्छद**(epiglottis) से ढक जाती है, जिससे आहार ग्रसनी से कंठ में प्रवेश न कर सके। श्वासनली एक सीधी नलिका है जो वक्ष गुहा के मध्य तक 5वीं वक्षीय कशेरुकी तक जाकर दाईं और बाईं दो प्राथमिक **श्वसनियों** में विभाजित हो जाती है। प्रत्येक श्वसनी कई बार विभाजित होते हुए द्वितीयक एवं तृतीयक स्तर की श्वसनी, श्वसनिका और बहुत पतली अंतस्थ श्वसनिकाओं में समाप्त होती हैं। श्वासनली, प्राथमिक, द्वितीयक एवं तृतीयक श्वसनी तथा प्रारंभिक श्वसनिकाएं अपूर्ण उपास्थिल वलयों से आलंबित होती हैं। प्रत्येक अंतस्थ श्वसनिका बहुत सारी पतली अनियमित भित्ति युक्त वाहिकायित थैली जैसी संरचना कूपिकाओं में खुलती है, जिसे **वायु कूपिका** कहते हैं। श्वसनी, श्वसनिकाओं और कूपिकाओं का शाखित जाल फेफड़ों (lungs) की रचना करते हैं (चित्र 14.1)। हमारे दो फेफड़े हैं जो एक द्विस्तरीय फुप्फुसावरण (pleura) से ढके रहते हैं और जिनके बीच फुफ्फुसावरणी द्रव भरा होता है। यह फेफड़े की सतह पर घर्षण कम करता है। बाहरी फुप्फुसावरणी झिल्ली वक्षीय पर्त के निकट संपर्क में रहती है; जबकि आंतरिक फुप्फुसावरणी झिल्ली फेफड़े की सतह के संपर्क में होती है।

बाह्य नासारंध्र से अंतस्थ श्वसनिकाओं तक का भाग चालन भाग; जबकि कूपिकाएं एवं उनकी नलिकाएं श्वसन तंत्र का श्वसन या विनिमय भाग गठित करती हैं। चालन भाग वायुमंडलीय वायु को कूपिकाओं तक संचारित करता है, इसे बाहरी कणों से मुक्त करता है, आर्द्र करता है तथा वायु को शरीर के तापक्रम तक लाता है। विनिमय भाग (आदान-प्रदान इकाई) रक्त एवं वायुमंडलीय वायु के बीच O_2 और CO_2 का वास्तविक विसरण स्थल है।

फेफड़े वक्ष-गुहा में स्थित होते हैं जो शारीरतः एक वायुरोधी कक्ष है। वक्ष-गुहा कक्ष पृष्ठ भाग में कशेरुक दंड, अधर भाग में उरोस्थि, पार्श्व में पसलियों और नीचे से गुंबदाकर डायाफ्राम (diaphragm) द्वारा बनता है। वक्ष में फेफड़ों की शारीरिक व्यवस्था ऐसी होती है कि वक्ष गुहा के आयतन में कोई भी परिवर्तन फेफड़े (फुप्फुसी) की गुहा में प्रतिबिंबित हो जाएगा। श्वसन के लिए ऐसी व्यवस्था आवश्यक है।

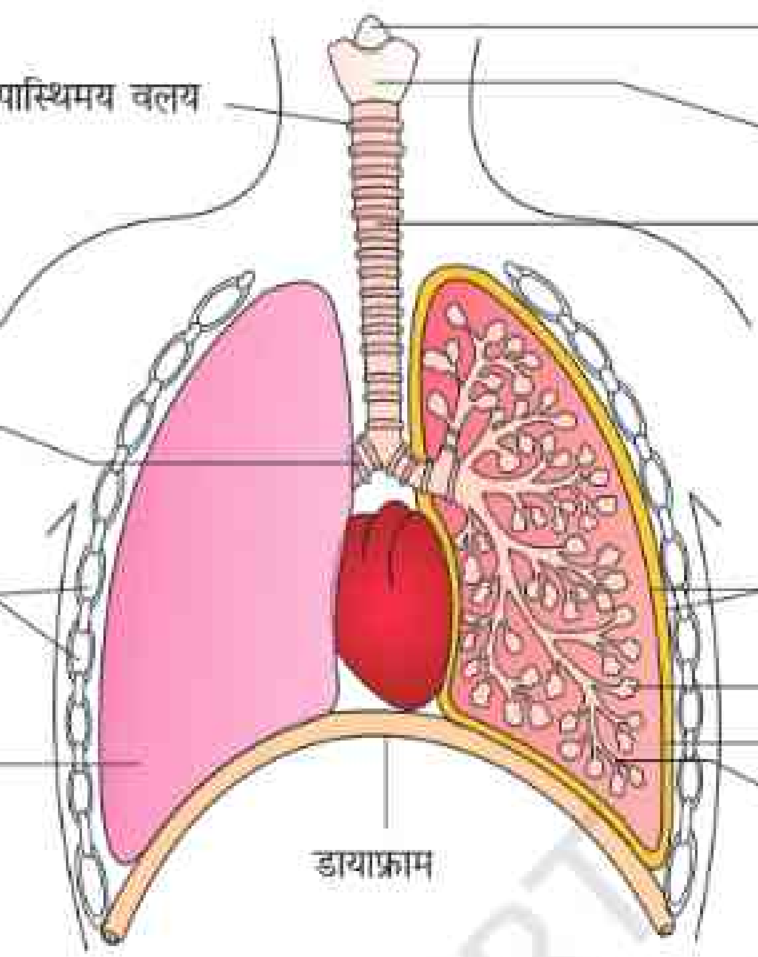

चित्र 14.1 मानव श्वसन तंत्र का आरेखीय दृश्य (साथ ही बाएं फेफड़े का अनुप्रस्थ काट दिखाया गया है)

© NCERT not to be republished

श्वसन में निम्नलिखित चरण सम्मिलित हैं:

(i) श्वसन या फुप्फुसी संवातन जिससे वायुमंडलीय वायु अंदर खींची जाती है और CO_2 से भरपूर कूपिका की वायु को बाहर मुक्त किया जाता है।

(ii) कूपिका झिल्ली के आर-पार गैसों (O_2 और CO_2) का विसरण।

(iii) रुधिर द्वारा गैसों का परिवहन (अभिगमन)

(iv) रुधिर और ऊतकों के बीच O_2 और CO_2 का विसरण।

(v) अपचयी क्रियायों के लिए कोशिकाओं द्वारा O_2 का उपयोग और उसके फलस्वरूप CO_2 का उत्पन्न होना (कोशिकीय श्वसन,जैसे कि अध्याय 12-श्वसन में बताया गया है)।

14.2 श्वासन की क्रियाविधि

श्वासन में दो चरण सम्मिलित हैं: **अंतः श्वसन** जिसके दौरान वायुमंडलीय वायु को अंदर खीचा जाता है और **निःश्वसन** जिसके द्वारा फुफ्फुसी वायु को बाहर मुक्त किया जाता है। वायु को फेफड़ों के अंदर ले जाने के लिए फेफड़ों एवं वायुमंडल के बीच दाब प्रवणता निर्मित की जाती है।

अंतःश्वसन तभी हो सकता है जब वायुमंडलीय दाब से फेफड़ों की वायु का दाब (आंतर फुप्फुसी दाब) कम हो अर्थात् फेफड़ों का दाब वायुमंडलीय दाब के सापेक्ष कम होता है। इस तरह निःश्वसन तब होता है, जब आंतर फुप्फुसी दाब वायुमंडलीय दाब से

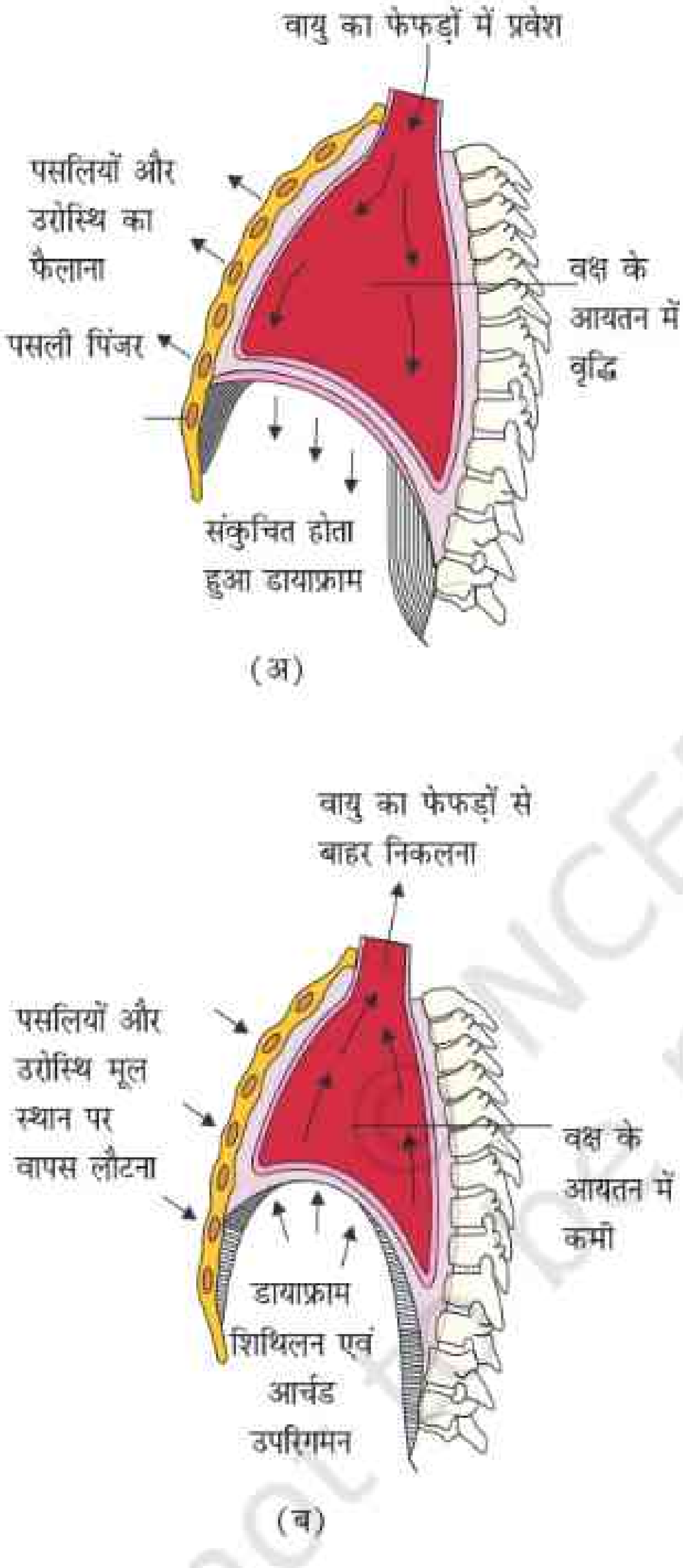

चित्र 14.2 (अ) अंत: श्वसन (ब) नि:श्वसन दर्शाते हुए श्वसन की क्रियाविधि

अधिक होता है। डायाफ्राम और एक विशिष्ट पेशी समूह (पसलियों के बीच स्थित बाह्य एवं अंत: अंतरापर्शुक /इंटरकोस्टल) इस तरह की प्रवणताएं उत्पन्न करते हैं । अंत:श्वसन डायाफ्राम के संकुचन से प्रारंभ होता है जो अग्र पश्च अक्ष (antero posterior axis) में वक्ष गुहा का आयतन बढ़ा देता है। बाह्य अंतरापर्शुक पेशियों का संकुचन पसलियों और उरोस्थि को ऊपर उठा देता है, जिससे पृष्ठधार अक्ष (dorso ventral axis) में वक्ष-गुहा कक्ष का आयतन बढ़ जाता है। वक्ष गुहा के आयतन में किसी प्रकार से भी हुई वृद्धि के कारण फुप्फुस के आयतन में भी समान वृद्धि होती है। यह समान तरह की वृद्धि फुप्फुसी दाब को वायुमंडलीय दाब से कम कर देती है, जिससे बाहर की वायु बलपूर्वक फेफड़ों के अंदर आ जाती है अर्थात् अंत:श्वसन की क्रिया होती है (चित्र-14.2अ)। डायाफ्राम और अंतरापर्शुक पेशियों का शिथिलन (relaxation) डायाफ्रम और उरोस्थि को उनके सामान्य स्थान पर वापस कर देता है और वृक्षीय आयतन को घटाता है जिससे फुप्फुसी आयतन भी घट जाता है। इसके परिणामस्वरूप अंतर फुप्फुसी दाब वायुमंडलीय दाब से थोड़ा अधिक हो जाता है, जिससे फेफड़ों की हवा बाहर निकल जाती है अर्थात् नि:श्वसन हो जाता है (चित्र 14.2 ब)। हम अपनी अतिरिक्त उदरीय पेशियों की सहायता से अंत:श्वसन और नि:श्वसन की क्षमता को बढ़ा सकते हैं। औसतन एक स्वस्थ मनुष्य प्रति मिनट 12-16 बार श्वसन करता है। श्वसन गतिविधि यों में सम्मिलित वायु के आयतन का आकलन स्पाइरोमीटर की सहायता से किया जा सकता है जो फुप्फुसी कार्यकलापों का नैदानिक मूल्यांकन करने में सहायक होता है।

14.2.1 श्वसन संबंधी आयतन और क्षमताएं

ज्वारीय आयतन (Tidal Volume/ TV): सामान्य श्वसन क्रिया के समय प्रति श्वास अंत: श्वासित या नि:श्वासित वायु का आयतन यह लगभग 500 मिली. होता है अर्थात् स्वस्थ मनुष्य लगभग 6000 से 8000 मिली. वायु प्रति मिनट की दर से अंत: श्वासित/नि:श्वासित कर सकता है।

अंतःश्वसन सुरक्षित आयतन (Inspiratory Reserve Volume IRV): वायु आयतन की वह अतिरिक्त मात्रा जो एक व्यक्ति बलपूर्वक अंतः श्वासित कर सकता है। यह औसतन 2500 मिली. से 3000 मिली. होता है।

निःश्वसन सुरक्षित आयतन (Expiratory reserve volume, ERV): वायु आयतन की वह अतिरिक्त मात्रा जो एक व्यक्ति बलपूर्वक निःश्वासित कर सकता है। औसतन यह 1000 मिली. से 1100 मिली. होती है।

अवशिष्ट आयतन (Residual Volume RV): वायु का वह आयतन जो बलपूर्वक निःश्वसन के बाद भी फेफड़ों में शेष रह जाता है। इसका औसत 1100 मिली. से 1200 मिली. होता है।

ऊपर वर्णित कुछ श्वसन संबंधी आयतनों को जोड़कर फुप्फुसी क्षमताएं (फुप्फुसी धारिताएं) निकाली जा सकती हैं जिनका नैदानिक उद्देश्यों में उपयोग किया जा सकता है।

अंतःश्वसन क्षमता (Inspiratory Capacity, IC): सामान्य निःश्वसन उपरांत वायु की कुल मात्रा (आयतन)जो एक व्यक्ति अंतःश्वासित कर सकता है। इसमें ज्वारीय आयतन तथा अंतःश्वसन सुरक्षित आयतन सम्मिलित है (TV+IRV)।

निःश्वसन क्षमता (Expiratory Capacity, EC): सामान्य अंतःश्वसन उपरांत वायु की कुल मात्रा (आयतन) जिसे एक व्यक्ति निःश्वासित कर सकता है। इसमें ज्वारीय आयतन और निःश्वसन सुरक्षित आयतन सम्मिलित होते हैं (TV+ERV)।

क्रियाशील अवशिष्ट क्षमता (Functional Residual Capacity, FRC): सामान्य निःश्वसन उपरांत वायु की वह मात्रा (आयतन)जो फेफड़ों में शेष रह जाती है। इसमें निःश्वसन सुरक्षित आयतन और अवशिष्ट आयतन सम्मिलित होते हैं (ERV+RV)।

जैव क्षमता (Vital Capacity, VC): बलपूर्वक निःश्वसन के बाद वायु की वह अधिकतम मात्रा (आयतन)जो एक व्यक्ति अंतःश्वासित कर सकता है। इसमें ERV, TV और IRV सम्मिलित है अथवा वायु की वह अधिकतम मात्रा जो एक व्यक्ति बलपूर्वक अंतःश्वसन के बाद निःश्वासित कर सकता है।

फेफड़ों की कुल क्षमता (Total Lung Capacity, TLC): बलपूर्वक निःश्वसन के पश्चात फेफड़ों में समायोजित (उपस्थित) वायु की कुल मात्रा । इसमें RV,ERV,TV और IRV सम्मिलित है। यानि जैव क्षमता + अवशिष्ट क्षमता (VC+RV)।

14.3 गैसों का विनिमय

कुपिकाएं गैसों के विनिमय के लिए प्राथमिक स्थल होती हैं। गैसों का विनिमय रक्त और ऊतकों के बीच भी होता है। इन स्थलों पर O_2 और CO_2 का विनिमय दाब अथवा सांद्रता प्रवणता के आधार पर सरल विसरण द्वारा होता है। गैसों की घुलनशीलता के साथ-साथ विसरण में सम्मिलित झिल्लियों की मोटाई भी विसरण की दर को प्रभावित करने वाले कुछ महत्वपूर्ण घटक हैं।

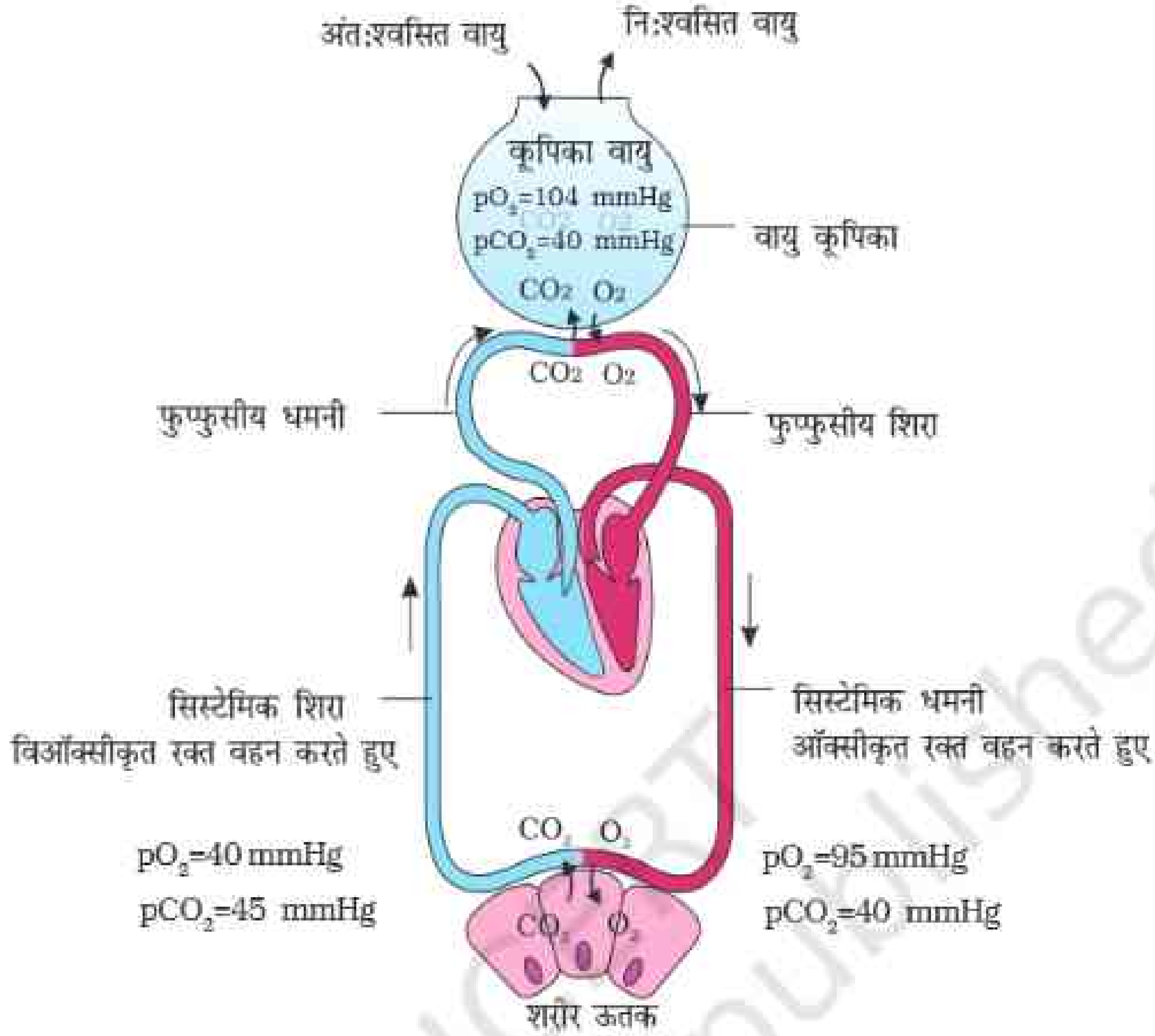

चित्र 14.3 वायु कूपिका एवं शरीर ऊतकों के बीच गैसों का विनिमय और ऑक्सीजन तथा कार्बन -डाइऑक्साइड का रक्त के साथ वहन का आरेखीय चित्र

गैसों के मिश्रण में किसी विशेष गैस की दाब में भागीदारी को आँशिक दाब कहते हैं और उसे ऑक्सीजन तथा कार्बनडाइऑक्साइड के लिए क्रमश: pO_2 तथा pCO_2 द्वारा दर्शाते हैं। वायुमंडलीय वायु और दोनों विसरण स्थलों में इन दो गैसों के आंशिक दाब तालिका 14.1 और चित्र 14.3 में दर्शाए गए है। सारणी में दिए गए आँकड़ें स्पष्ट रूप से कूपिकाओं से रक्त और रक्त से ऊतकों में ऑक्सीजन के लिए सांद्रता प्रवणता का संकेत देते हैं। इसी प्रकार CO_2 के लिए विपरीत दिशा में प्रवणता दर्शाई गई है, अर्थात् ऊतकों से रक्त और रक्त से कूपिकाओं की तरफ। चूँकि CO_2की घुनलशीलता O_2 की

तालिका 14.1 वातावरण की तुलना में विसरण में सम्मिलित विभिन्न भागों पर ऑक्सीजन एवं कार्बनडाइऑक्साइड का आंशिक दबाव (mm Hg में)

श्वसन	वातावरणीय वायु	वायु कूपिका	अनॉक्सीकृत रक्त	ऑक्सीकृत रक्त	ऊतक
O_2	159	104	40	95	40
CO_2	0.3	40	45	40	45

घुलनशीलता से 20-25 गुना अधिक होती है, अंत:विसरण झिल्लिका में से प्रति इकाई आंशिक दाब के अंतर की विसरित होने वाली CO_2 मात्रा O_2 की तुलना में बहुत अधिक होती है। विसरण झिल्लिका मुख्य रूप से तीन स्तरों की बनी होती है, (चित्र 14.4), यथा कूपिका की पतली शल्की उपकला (शल्की एपिथिलियम), कूपिकाओं की कोशिकाओं की अंत:कला और उनके बीच स्थित आधारी तत्व जो कि पतली आधारीय झिल्लिका की बनी होती है तथा सहायक शल्की उपकला, आधारीय झिल्लिका और रक्त कोशिकाओं की अंत:कला की एकल परत द्वारा घिरी रहती है। फिर भी, इनकी कुल मोटाई एक मिलीमीटर से बहुत कम होती है। इसलिए हमारे शरीर में सभी कारक O_2 के कूपिकाओं से ऊतकों और CO_2 के ऊतकों से कूपिकाओं में विसरण के लिए अनुकूल होते हैं।

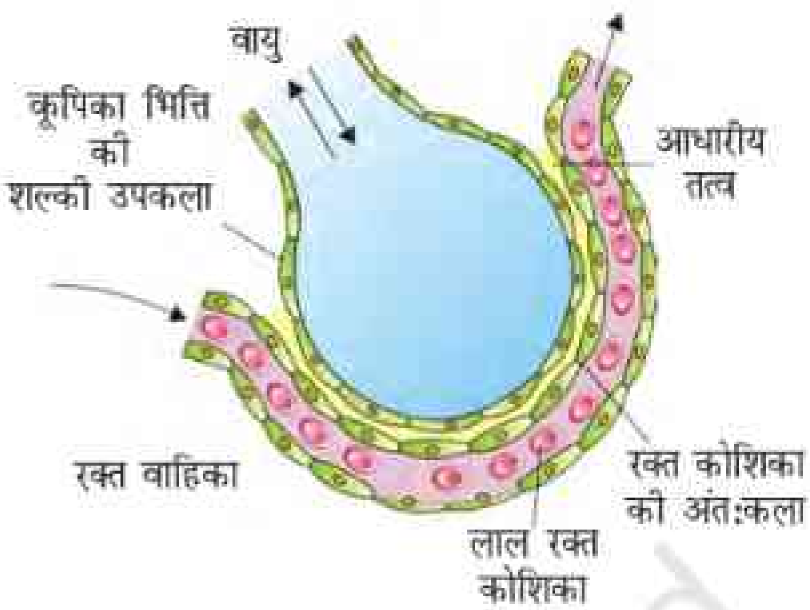

चित्र 14.4 एक फुप्फुसीय वाहिका की एक वायुकूपिका का अनुप्रस्थ काट

14.4 गैसों का परिवहन (Transport of Gases)

O_2 और CO_2 के परिवहन का माध्यम रक्त होता है। लगभग 97 प्रतिशत O_2 का परिवहन रक्त में लाल रक्त कणिकाओं द्वारा होता है। शेष 3 प्रतिशत O_2 का प्लाजमा द्वारा घुल्य अवस्था में होता हैं। लगभग 20-25 प्रतिशत CO_2 का परिवहन लाल रक्त कणिकाओं द्वारा है, जबकि 70 प्रतिशत का बाईकार्बोनेट के रूप में अभिगमित होती है। लगभग 7 प्रतिशत CO_2 प्लाजमा द्वारा घुल्य अवस्था होता हैं।

14.4.1 ऑक्सीजन का परिवहन (Transport of Oxygen)

हीमोग्लोबिन लाल रक्त कणिकाओं में स्थित एक लाल रंग का लौहयुक्त वर्णक है। हीमोग्लोबिन के साथ उत्क्रमणीय (Rerersible) ढंग से बंधकर ऑक्सीजन **ऑक्सी-हीमोग्लोबिन** का गठन कर सकता है। प्रत्येक हीमोग्लोबिन अणु अधिकतम चार O_2 अणुओं के वहन कर सकते हैं। हीमोग्लोबिन के साथ ऑक्सीजन का बंधना प्राथमिक तौर पर O_2 के आंशिक दाब से संबंधित है। CO_2 का आंशिक दाब हाइड्रोजन आयन सांद्रता और तापक्रम कुछ अन्य कारक हैं जो इस बंधन को बाधित कर सकते हैं। हीमोग्लोबिन की ऑक्सीजन से प्रतिशत संतृप्ति को pO_2 के सापेक्ष आलेखित करने पर सिग्माभ वक्र (Sigmoid Curve) प्राप्त होता है। इस वक्र को वियोजन वक्र (Dissociation Curve) कहते हैं जो हीमोग्लोबिन से O_2 बंधन को प्रभावित करने वाले pCO_2, H^+ आयन सांद्रता, आदि घटकों के अध्ययन में अत्यधिक सहायक होता है (चित्र 14.5)। कूपिकाओं में जहाँ उच्च pO_2, निम्न pCO_2, कम H^+ सांद्रता और

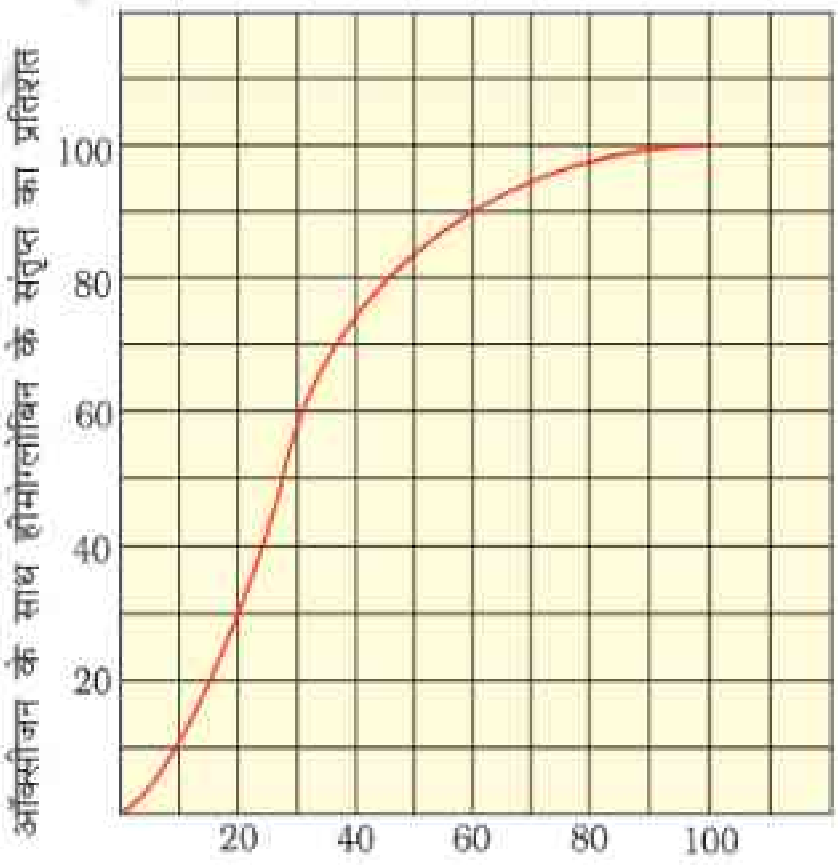

चित्र 14.5 ऑक्सीजन वियोजन वक्र

निम्न तापक्रम होता है, वहाँ ऑक्सीहीमोग्लोबिन बनाने के लिए ये सभी घटक अनुकूल साबित होते हैं जबकि ऊतकों में निम्न pO_2, उच्च pCO_2, उच्च H^+ सांद्रता और उच्च तापक्रम की स्थितियाँ ऑक्सीहीमोग्लोबिन से ऑक्सीजन के वियोजन के लिए अनुकूल होती हैं। इससे स्पष्ट है कि O_2 हीमोग्लोबिन से फेफड़ों की सतह पर बँधता है और ऊतकों में वियोजित हो जाती है। प्रत्येक 100 मिली. ऑक्सीजनित रक्त सामान्य शरीर क्रियात्मक स्थितियों में ऊतकों को लगभग 5 मिली. O_2 प्रदान करता है।

14.4.2 कार्बनडाइऑक्साइड का परिवहन

कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) हीमोग्लोबिन द्वारा **कार्बामीनो-हीमोग्लोबिन** (लगभग 20-25 प्रतिशत) के रूप में वहन की जाती है। यह बंधनीयता (बंधन) CO_2 के आंशिक दाब से संबंधित होती है। pO_2 इस बंधन को प्रभावित करने वाला एक मुख्य कारक है ऊतकों में उच्च pCO_2 और निम्न pO_2 की अवस्था होने से हीमोग्लोबिन से CO_2 का बंधन होता है; जबकि कूपिका में, जहाँ pCO_2 निम्न और pO_2 उच्च होता है, कार्बामीनो-हीमोग्लोबिन से CO_2 का वियोजन होने लगता है अर्थात् ऊतकों में हीमोग्लोबिन से बंधित CO_2 कूपिका में मुक्त हो जाती है। एंजाइम कार्बोनिक एन्हाइड्रेज की सांद्रता लाल रक्त कणिकाओं में उच्च और प्लाज्मा में अल्प होती है। इस एंजाइम से निम्नलिखित प्रतिक्रिया दोनों दिशाओं में सुगम होती है।

$$CO_2 + H_2O \underset{}{\overset{\text{कार्बोनिक एंहाइड्रेज}}{\rightleftharpoons}} H_2CO_3 \underset{}{\overset{\text{कार्बोनिक एंहाइड्रेज}}{\rightleftharpoons}} HCO_3^- + H^+$$

ऊतकों में अपचय के कारण pCO_2 अधिक होने से CO_2 रक्त (RBCsऔर प्लाज्मा) में विसरित होती है और HCO_3^- और H^+ बनाती है। कूपिका में pCO_2 कम होने से प्रतिक्रिया की दिशा विपरीत हो जाती है जिससे CO_2 और H_2O बनते हैं। इस तरह बाईकार्बोनेट के रूप में ऊतक स्तर पर ग्रहित (Trapped) और कूपिका तक परिवहित कार्बनडाइऑक्साइड बाहर की तरफ पुन: CO_2 के रूप में मुक्त हो जाती है (चित्र 17.4)। प्रति 100 मिलीलीटर विऑक्सीजनित रक्त द्वारा कूपिका में लगभग CO_2 की 4 मिली. मात्रा मुक्त होती है।

14.5 श्वसन का नियमन (Regulation of Respiration)

मानव में अपने शरीर के ऊतकों की माँग के अनुरूप श्वसन की लय को संतुलित और स्थिर बनाए रखने की एक महत्वपूर्ण क्षमता है। यह नियमन तंत्रिका तंत्र द्वारा संपन्न होता है। मस्तिष्क के मेड्यूला क्षेत्र में एक विशिष्ट श्वसन लयकेंद्र विद्यमान होता है, जो मुख्य रूप से श्वसन के नियमन के लिए उत्तरदायी होता है। मस्तिष्क के पोंस क्षेत्र में एक अन्य केंद्र स्थित होता है जिसे **श्वासप्रभावी** (श्वास अनुचन) (Pneumotaxic) केंद्र कहते हैं जो श्वसन लयकेंद्र के कार्यों को संयत (सुधार) कर सकता है। इस केंद्र के तंत्रिका संकेत अंत:श्वसन की अवधि को कम कर सकते हैं और इस प्रकार श्वसन दर (Respiratory rate) को परिवर्तित कर सकते हैं। लयकेंद्र के पास एक रसोसंवेदी (Chemosensitive) केंद्र लयकेंद्र के लिए अति संवेदी होता है, जो CO_2 और

हाइड्रोजन आयनों के लिए अति संवेदी होता है। इन पदार्थों की वृद्धि से यह केंद्र सक्रिय होकर श्वसन प्रक्रिया में आवश्यक समायोजन करता है, जिससे ये पदार्थ निष्कासित किए जा सकें। महाधमनी चाप (Aortic arch) और ग्रीवा धमनी (Carotid artery) से जुड़ी संवेदी संरचनाएं भी CO_2 और H^+ सांद्रता के परिवर्तन को पहचान सकते हैं तथा उपचारात्मक कार्यवाही हेतु लयकेंद्र को आवश्यक संकेत दे सकते हैं। श्वसन लय के नियमन में ऑक्सीजन की भूमिका बहुत ही महत्वहीन है।

14.6 श्वसन के विकार (Respiratory disorders)

दमा (Asthma) में श्वसनी और श्वसनिकाओं की शोथ के कारण श्वासन के समय घरघरहाट होती है तथा श्वास लेने में कठिनाई होती है।

श्वसनी शोथ (Bronchitis) : यह श्वसनी की शोथ है जिसके विशेष लक्षण श्वसनी में सूजन तथा जलन होना है जिससे लगातार खाँसी होती है।

वातस्फीति या एम्फाइसिमा(Emphysema) : एक चिरकालिक रोग है जिसमें कूपिका भित्ति क्षतिग्रस्त हो जाती है जिससे गैस विनिमय सतह घट जाती है। धूम्रपान इसके मुख्य कारकों में एक है।

व्यावसायिक श्वसन रोग (Occupational Respiratory Disease) : कुछ उद्योगों में विशेषकर जहाँ पत्थर की घिसाई - पिसाई या तोड़ने का कार्य होता है, वहाँ इतने धूल कण निकलते हैं कि शरीर की सुरक्षा प्रणाली उन्हें पूरी तरह निष्प्रभावी नहीं कर पाती। दीर्घकालीन प्रभावन शोथ उत्पन्न कर सकता है जिनसे रेशामयता (रेशीय ऊतकों की प्रचुरता) होती है, जिसके फलस्वरूप फेफड़ों को गंभीर नुकसान हो सकता है। इन उद्योगों के श्रमिकों को मुखावरण का प्रयोग करना चाहिए।

सारांश

कोशिकाएं अपापचयी क्रियाओं के लिए ऑक्सीजन का उपयोग करती हैं तथा ऊर्जा के साथ कार्बनडाइऑक्साइड जैसे हानिकारक पदार्थ भी उत्पन्न करती हैं। प्राणियों में कोशिकाओं तक ऑक्सीजन एवं वहाँ से कार्बनडाइऑक्साइड को भी बाहर करने के लिए कई तरह की क्रियाविधि विकसित हैं और जिनमें हमारे पास इस क्रिया के लिए एक पूर्ण विकसित श्वसन तंत्र है जिसके अंतर्गत दो फेफड़े और इनसे जुड़े वायु मार्ग है।

श्वसन का पहला चरण श्वासन है जिसमें वायुमंडलीय वायु कूपिकाओं में ली जाती है (अंत:श्वसन)और कूपिकाओं से वायु को बाहर निकाला जाता है (नि:श्वसन)। ऑक्सीजनित रहित रक्त और कूपिका के बीच O_2 और CO_2 का विनिमय, इन गैसों का रक्त द्वारा पूरे शरीर में परिवहन ऑक्सीजन युक्त रक्त और ऊतकों के बीच O_2 और CO_2 का विनिमय और कोशिकाओं द्वारा ऑक्सीजन का उपयोग (कोशिकीय श्वसन) अन्य सम्मिलित चरण हैं। अंत:श्वसन और नि:श्वसन के लिए वायुमंडल और कूपिका के बीच विशिष्ट अंतरापर्शुक पेशियों, (इंटरकोस्टल) और डायाफ्राम की सहायता से दाब प्रवणता पैदा की जाती है। इन क्रियाओं में सम्मिलित वायु के विभिन्न आयतन को स्पाइरोमीटर की सहायता से मापा जा सकता है जिनका चिकित्सीय व नैदानिक महत्व है। कूपिका एवं ऊतकों में CO_2 और O_2 का विनिमय विसरण द्वारा होता है। विसरण दर O_2 (pO_2) और CO_2 (pCO_2) के आंशिक दाब प्रवणता उनकी घुलनशीलता और विसरण सतह की मोटाई पर निर्भर है। ये कारक हमारे शरीर में कूपिका से ऑक्सीजन का विऑक्सीजनित रक्त में तथा रक्त से ऊतकों में विसरण सुगम बनाते हैं। ये कारक CO_2 के अर्थात् ऊतकों से कूपिका में विसरण के लिए भी अनुकूल होते हैं।

ऑक्सीजन का मुख्य रूप से ऑक्सीहीमोग्लोबिन के रूप में परिवहन होता है कूपिका में जहाँ pO_2 अधिक रहता है। ऑक्सीजन हीमोग्लोबिन से युग्मित हो जाती है तथा ऊतकों में जहाँ pO_2 कम, pO_2 एवं H^+ की सांद्रता अधिक होती है सरलता से वियोजित हो जाती है। लगभग 70 प्रतिशत कार्बनडाइऑक्साइड का परिवहन कार्बोनिक एनहाइड्रेज एंजाइम की सहायता से बाइकार्बोनेट (HCO_3) के रूप में होता है। 20-25 प्रतिशत कार्बनडाइऑक्साइड हीमोग्लोबिन द्वारा कार्बामीनो हीमोग्लोबिन के रूप में वहन की जाती है। ऊतकों में जहाँ pCO_2 उच्च और pO_2 निम्न होता है, वहाँ यह रक्त से युग्मित होता है; जबकि कूपिका में जहाँ pCO_2 निम्न और pO_2 उच्च रहता है यह रक्त से निष्कासित हो जाती है।

श्वसन लय मस्तिष्क के मेड्यूला क्षेत्र स्थित श्वसन केंद्र द्वारा बनाए रखी जाती है। मस्तिष्क के पोंस क्षेत्र स्थित श्वास अनुचन श्वास प्रभावों (न्यूमोटैक्सिक) केंद्र तथा एक रसो संवेदी क्षेत्र श्वसन क्रियाविधि को परिवर्तित कर सकते हैं।

अभ्यास

1. जैव क्षमता की परिभाषा दें और इसका महत्व बताएं?
2. सामान्य निःश्वसन के उपरांत फेफड़ों में शेष वायु के आयतन को बताएं।
3. गैसों का विसरण केवल कूपकीय क्षेत्र में होता है, श्वसन तंत्र के किसी अन्य भाग में नहीं। क्यों?
4. CO_2 के परिवहन (ट्रांसपोर्ट) की मुख्य क्रियाविधि क्या है; व्याख्या करें?
5. कूपिका वायु की तुलना में वायुमंडलीय वायु में pO_2 तथा pCO_2 कितनी होगी, मिलान करें?
   (i) pO_2 न्यून, pCO_2 उच्च (ii) pO_2 उच्च, pCO_2 न्यून
   (iii) pO_2 उच्च, pCO_2 उच्च (iv) pO_2 न्यून, pCO_2 न्यून
6. सामान्य स्थिति में अंतःश्वसन प्रक्रिया की व्याख्या करें?
7. श्वसन का नियमन कैसे होता है?
8. pCO_2 का ऑक्सीजन के परिवहन में क्या प्रभाव है?
9. पहाड़ पर चढ़ने वाले व्यक्ति की श्वसन प्रक्रिया में क्या प्रभाव पड़ता है?
10. कीटों में श्वसन क्रियाविधि कैसी होती है?
11. ऑक्सीजन वियोजन वक्र की परिभाषा दें, क्या आप इसकी सिग्माभ आकृति का कोई कारण बता सकते हैं?
12. क्या आप ने अवकॉसीयता (हाइपोक्सिया) (न्यून ऑक्सीजन) के बारे में सुना है? इस संबंध में जानकारी प्राप्त करने की कोशिश करें व साथियों के बीच चर्चा करें।
13. निम्न के बीच अंतर करें:
    (क) I R V (आई आर वी) ERV (इ आर वी)
    (ख) अंतः श्वसन क्षमता (IC) और निःश्वसन क्षमता
    (ग) जैव क्षमता तथा फेफड़ों की कुल धारिता
14. ज्वारीय आयतन क्या है? एक स्वस्थ मनुष्य के लिए एक घंटे के ज्वारीय आयतन (लगभग मात्रा) को आंकलित करें?

अध्याय 15

शरीर द्रव तथा परिसंचरण

15.1 रुधिर

15.2 लसीका (ऊतक द्रव्य)

15.3 परिसंचरण पथ

15.4 द्विपरिसंचरण

15.5 हृद क्रिया का नियंत्रण

15.6 परिसंचरण से संबंधित रोग

अब तक आप यह सीख चुके हैं कि जीवित कोशिकाओं को ऑक्सीजन पोषण अन्य आवश्यक पदार्थ उपलब्ध होने चाहिए। ऊतकों के सुचारु कार्य हेतु अपशिष्ट या हानिकारक पदार्थ जैसे कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) का लगातार निष्कासन आवश्यक है। अत: इन पदार्थों के कोशिकाओं तक से चलन हेतु एक प्रभावी क्रियाविधि का होना आवश्यक था। विभिन्न प्राणियों में इस हेतु अभिगमन के विभिन्न तरीके विकसित हुए हैं। सरल प्राणी जैसे स्पंज व सिलेंट्रेट बाहर से अपने शरीर में पानी का संचरण शारीरिक गुहाओं में करते हैं, जिससे कोशिकाओं के द्वारा इन पदार्थों का आदान-प्रदान सरलता से हो सके। जटिल प्राणी इन पदार्थों के परिवहन के लिए विशेष तरल का उपयोग करते हैं। मनुष्य सहित उच्च प्राणियों में **रक्त** इस उद्देश्य में काम आने वाला सर्वाधिक सामान्य तरल है। एक अन्य शरीर द्रव **लसीका** भी कुछ विशिष्ट तत्वों के परिवहन में सहायता करता है। इस अध्याय में आप रुधिर एवं लसीका (ऊतक द्रव्य) के संघटन एवं गुणों के बारे में पढ़ेंगे। इसमें रुधिर के परिसंचरण को भी समझाया गया है।

15.1 रुधिर

रक्त एक विशेष प्रकार का ऊतक है, जिसमें द्रव्य आधात्री (मैट्रिक्स) प्लाज्मा (प्लैज्मा) तथा अन्य संगठित संरचनाएं पाई जाती हैं।

15.1.1 प्लाज्मा (प्लैज्मा)

प्रद्रव्य एक हल्के पीले रंग का गाढ़ा तरल पदार्थ है, जो रक्त के आयतन लगभग 55 प्रतिशत होता है। प्रद्रव्य में 90-92 प्रतिशत जल तथा 6-8 प्रतिशत प्रोटीन पदार्थ होते हैं। फाइब्रिनोजन, ग्लोबुलिन तथा एल्बूमिन प्लाज्मा में उपस्थित मुख्य प्रोटीन हैं। फाइब्रिनोजेन की आवश्यकता रक्त थक्का बनाने या स्कंदन में होती है। ग्लोबुलिन का उपयोग शरीर

© NCERT not to be republished

के प्रतिरक्षा तंत्र तथा एल्बूमिन का उपयोग परासरणी संतुलन के लिए होता है। प्लाज्मा में अनेक खनिज आयन जैसे Na^{+}, Ca^{++}, Mg^{++}, HCO_3, Cl^{-} इत्यादि भी पाए जाते हैं। शरीर में संक्रमण की अवस्था में होने के कारण ग्लूकोज, अमीनो अम्ल तथा लिपिड भी प्लाज्मा में पाए जाते हैं। रुधिर का थक्का बनाने अथवा स्कंदन के अनेक कारक प्रद्रव्य के साथ निष्क्रिय दशा में रहते हैं। बिना थक्का /स्कंदन कारकों के प्लाज्मा को सीरम कहते हैं।

15.1.2 संगठित पदार्थ

लाल रुधिर कणिका (इरिथ्रोसाइट),श्वेताणु (ल्युकोसाइट) तथा पट्टिकाणु (प्लेटलेट्स) को संयुक्त रूप से संगठित पदार्थ कहते हैं (चित्र 15.1) और ये रक्त के लगभग 45 प्रतिशत भाग बनाते हैं।

इरिथ्रोसाइट (रक्ताणु) या लाल रुधिर कणिकाएं अन्य सभी कोशिकाओं से संख्या में अधिक होती है। एक स्वस्थ मनुष्य में ये कणिकाएं लगभग 50 से 50 लाख प्रतिघन मिमी. रक्त (5 से 5.5 मिलियन प्रतिघन मिमी.) होती हैं। वयस्क अवस्था में लाल रुधिर कणिकाएं लाल अस्थि मज्जा में बनती हैं। अधिकतर स्तनधारियों की लाल रुधिर कणिकाओं में केंद्रक नहीं मिलते हैं तथा इनकी आकृति उभयावतल (बाईकोनकेव) होती है। इनका लाल रंग एक लौहयुक्त जटिल प्रोटीन हीमोग्लोबिन की उपस्थिति के कारण है। एक स्वस्थ मनुष्य में प्रति 100 मिली. रक्त में लगभग 12 से 16 ग्राम हीमोग्लोबिन पाया जाता है। इन पदार्थों की श्वसन गैसों के परिवहन में महत्वपूर्ण भूमिका है। लाल रक्त कणिकाओं की औसत आयु 120 दिन होती है। तत्पश्चात इनका विनाश प्लीहा (लाल रक्त कणिकाओं की कब्रिस्तान) में होता है।

ल्युकोसाइट को हीमोग्लोबिन के अभाव के कारण तथा रंगहीन होने से **श्वेत रुधिर कणिकाएं** भी कहते हैं। इसमें केंद्रक पाए जाते हैं तथा इनकी संख्या लाल रक्त कणिकाओं की अपेक्षा कम, औसतन 6000-8000 प्रति घन मिमी. रक्त होती है। सामान्यत: ये कम समय तक जीवित रहती हैं। इनको दो मुख्य श्रेणियों में बाँटा गया है-कणिकाणु (ग्रेन्यूलोसाइट) तथा अकण कोशिका (एग्रेन्यूलोसाइट)। न्यूट्रोफिल, इओसिनोफिल व बेसोफिल कणिकाणुओं के प्रकार हैं, जबकि लिंफोसाइट तथा मोनोसाइट अकणकोशिका के प्रकार हैं। श्वेत रुधिर कोशिकाओं में न्यूट्रोफिल संख्या में सबसे अधिक (लगभग 60-65 प्रतिशत) तथा बेसोफिल संख्या में सबसे कम (लगभग 0.5-1 प्रतिशत) होते हैं।

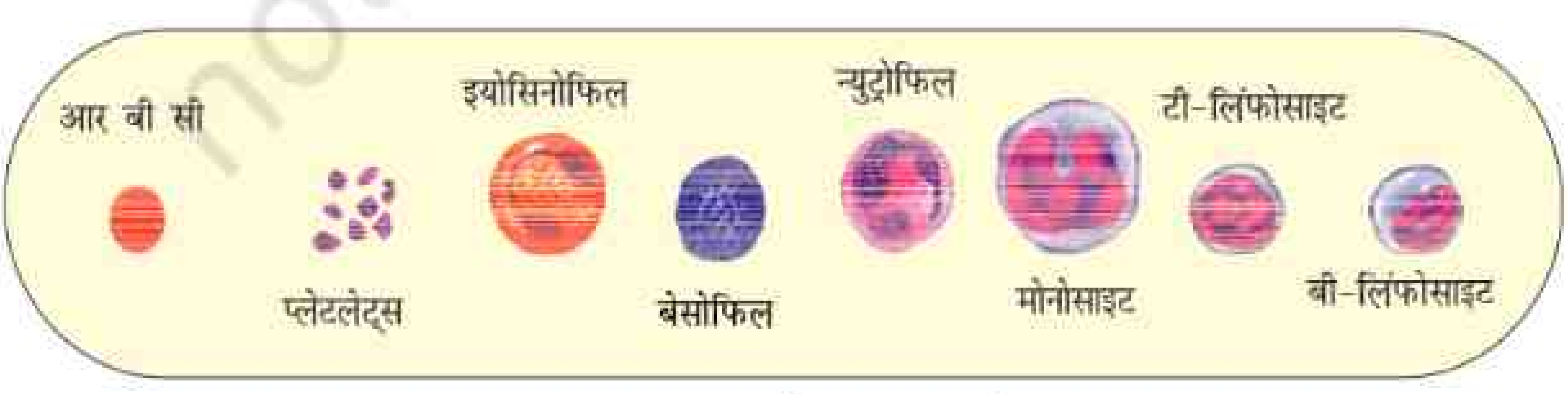

चित्र 15.1 रक्त में संगठित पदार्थ

न्यूट्रोफिल तथा मोनोसाइट (6–8 प्रतिशत) भक्षण कोशिका होती है जो अंदर प्रवेश करने वाले बाह्य जीवों को समाप्त करती है। बेसोफिल, हिस्टामिन, सिरोटोनिन, हिपैरिन आदि का स्राव करती है तथा शोथकारी क्रियाओं में सम्मिलित होती है। इओसिनोफिल (2–3 प्रतिशत) संक्रमण से बचाव करती है तथा एलर्जी प्रतिक्रिया में सम्मिलित रहती है। लिंफोसाइट (20–25 प्रतिशत) मुख्यत: दो प्रकार की हैं – बी तथा टी। बी और टी दोनों प्रकार की लिंफोसाइट शरीर की प्रतिरक्षा के लिए उत्तरदायी हैं।

पट्टिकाणु (प्लेटलेट्स) को **थ्रोम्बोसाइट** भी कहते हैं, ये मैगाकेरियो साइट (अस्थि मज्जा की विशेष कोशिका) के टुकड़ों में विखंडन से बनती हैं। रक्त में इनकी संख्या 1.5 से 3.5 लाख प्रति घन मिमी. होती हैं। प्लेटलेट्स कई प्रकार के पदार्थ स्रवित करती हैं जिनमें अधिकांश रुधिर का थक्का जमाने (स्कंदन) में सहायक हैं। प्लेटलेट्स की संख्या में कमी के कारण स्कंदन (जमाव) में विकृति हो जाती है तथा शरीर से अधिक रक्त स्राव हो जाता है।

15.1.3 रक्त समूह (ब्लड ग्रुप)

जैसा कि आप जानते हैं कि मनुष्य का रक्त एक जैसा दिखते हुए भी कुछ अर्थों में भिन्न होता है। रक्त का कई तरीके से समूहीकरण किया गया है। इनमें से दो मुख्य समूह ABO तथा Rh का उपयोग पूरे विश्व में होता है।

15.1.3.1 ABO समूह

ABO समूह मुख्यत: लाल रुधिर कणिकाओं की सतह पर दो प्रतिजन/एंटीजन की उपस्थिति या अनुपस्थित पर निर्भर होता है। ये ऐंटीजन A और B हैं जो प्रतिरक्षा अनुक्रिया को प्रेरित करते हैं। इसी प्रकार विभिन्न व्यक्तियों में दो प्रकार के प्राकृतिक प्रतिरक्षी/एंटीबोडी (शरीर प्रतिरोधी) मिलते हैं। प्रतिरक्षी वे प्रोटीन पदार्थ हैं जो प्रतिजन के विरुद्ध पैदा होते हैं। चार रक्त समूहों, **A, B, AB, और O** में प्रतिजन तथा प्रतिरक्षी की स्थिति को देखते हैं, जिसको तालिका 15.1 में दर्शाया गया है।

तालिका 15.1 रक्त समूह तथा रक्तदाता सुयोग्यता

रक्त समूह	लाल रुधिर कणिकाओं पर प्रतिजन	प्लाज्मा में प्रतिरक्षी (एंटिबोडीज)	रक्तदाता समूह
A	A	एंटी B	A, O
B	B	एंटी A	B, O
AB	AB	अनुपस्थित	AB, A, B,O
O	अनुपस्थित	एंटी A,B	O

दाता एवं ग्राही/आदाता के रक्त समूहों का रक्त चढाने से पहले सावधानीपूर्वक मिलान कर लेना चाहिए जिससे रक्त स्कंदन एवं RBC के नष्ट होने जैसी गंभीर परेशानियां न हों। दाता संयोज्यता (डोनर कंपेटिबिलिटी) तालिका 15.1 में दर्शायी गई है।

उपरोक्त तालिका से यह स्पष्ट है कि रक्त समूह O एक सर्वदाता है जो सभी समूहों को रक्त प्रदान कर सकता है। रक्त समूह AB सर्व आदाता (ग्राही) है जो सभी प्रकार के रक्त समूहों से रक्त ले सकता है।

15.1.3.2 Rh समूह

एक अन्य प्रतिजन/एंटीजन Rh है जो लगभग 80 प्रतिशत मनुष्यों में पाया जाता है तथा यह Rh एंटीजेन रीसेस बंदर में पाए जाने वाले एंटीजेन के समान है। ऐसे व्यक्ति को जिसमें Rh एंटीजेन होता है, को **Rh सहित** (Rh+ve) और जिसमें यह नहीं होता उसे **Rh हीन** (Rh-ve) कहते हैं। यदि **Rh रहित** (Rh-ve) के व्यक्ति के रक्त को आर एच सहित (Rh+ve) पॉजिटिव के साथ मिलाया जाता है तो व्यक्ति मे Rh प्रतिजन Rh-ve के विरूद्ध विशेष प्रतिरक्षी बन जाती हैं, अत: रक्त आदान-प्रदान के पहले Rh समूह को मिलना भी आवश्यक है। एक विशेष प्रकार की Rh अयोग्यता को एक गर्भवती (Rh-ve) माता एवं उसके गर्भ में पल रहे भ्रूण के Rh+ve के बीच पाई जाती है। अपरा द्वारा पृथक रहने के कारण भ्रूण का Rh एंटीजेन सगर्भता में माता के Rh-ve को प्रभावित नहीं कर पाता, लेकिन फिर भी पहले प्रसव के समय माता के Rh-ve रक्त से शिशु के Rh+ve रक्त के संपर्क में आने की संभावना रहती है। ऐसी दशा में माता के रक्त में Rh प्रतिरक्षी बनना प्रारंभ हो जाता है। ये प्रतिरोध में एंटीबोडीज बनाना शुरू कर देती है। यदि परवर्ती गर्भावस्था होती है तो रक्त से (Rh-ve) भ्रूण के रक्त (Rh+ve) में Rh प्रतिरक्षी का रिसाव हो सकता है और इससे भ्रूण की लाल रुधिर कणिकाएं नष्ट हो सकती हैं। यह भ्रूण के लिए जानलेवा हो सकती हैं या उसे रक्ताल्पता (खून की कमी) और पीलिया हो सकता है। ऐसी दशा को *इरिथ्रोब्लास्टोसिस फिटैलिस* (गर्भ रक्ताणु कोरकता) कहते हैं। इस स्थिति से बचने के लिए माता को प्रसव के तुरंत बाद Rh प्रतिरक्षी का उपयोग करना चाहिए।

15.1.4 रक्त-स्कंदन (रक्त का जमाव)

किसी चोट या घात की प्रतिक्रिया स्वरूप रक्त स्कंदन होता है। यह क्रिया शरीर से बाहर अत्यधिक रक्त को बहने से रोकती है। *क्या आप जानते हैं ऐसा क्यों होता है?* आपने किसी चोट घात या घाव पर कुछ समय बाद गहरे लाल व भूरे रंग का झाग सा अवश्य देखा होगा। यह रक्त का स्कंदन या थक्का है, जो मुख्यत: फाइब्रिन धागे के जाल से बनता है। इस जाल में मरे तथा क्षतिग्रस्त संगठित पदार्थ भी उलझे हुए होते हैं। फाइब्रिन रक्त प्लैज्मा में उपस्थित एंजाइम थ्रोम्बिन की सहायता से फाइब्रिनोजन से बनती है। थ्रोम्बिन की रचना प्लाज्मा में उपस्थित निष्क्रिय प्रोथोबिंन से होती है। इसके लिए थ्रोंबोकाइनेज एंजाइम समूह की आवश्यकता होती है। यह एंजाइम समूह रक्त प्लैज्मा में उपस्थित अनेक निष्क्रिय कारकों की सहायता से एक के बाद एक अनेक एंजाइमी प्रतिक्रिया की शृंखला (सोपानी प्रक्रम) से बनता है। एक चोट या घात रक्त में उपस्थित प्लेटलेट्स को विशेष कारकों को मुक्त करने के लिए प्रेरित करती है जिनसे स्कंदन की प्रक्रिया शुरू होती है। क्षतिग्रस्त ऊतकों द्वारा भी चोट की जगह पर कुछ कारक मुक्त होते हैं जो स्कंदन को प्रारंभ कर सकते हैं। इस प्रतिक्रिया में कैल्सियम आयन की भूमिका बहुत महत्वपूर्ण होती है।

15.2 लसीका (ऊतक द्रव)

रक्त जब ऊतक की कोशिकाओं से होकर गुजरता है तब बड़े प्रोटीन अणु एवं संगठित पदार्थों को छोड़कर रक्त से जल एवं जल में घुलनशील पदार्थ कोशिकाओं से बाहर निकल जाते हैं। इस तरल को अंतराली द्रव या ऊतक द्रव कहते हैं। इसमें प्लैज्मा के समान ही खनिज लवण पाए जाते हैं। रक्त तथा कोशिकाओं के बीच पोषक पदार्थ एवं गैसों का आदान प्रदान इसी द्रव से होता है। वाहिकाओं का विस्तृत जाल जो लसीका तंत्र (लिंफैटिक सिस्टम) कहलाता है इस द्रव को एकत्र कर बड़ी शिराओं में वापस छोड़ता है। लसीका तंत्र में उपस्थित यह द्रव/तरल को लसीका कहते हैं।

लसीका एक रंगहीन द्रव है जिसमें विशिष्ट लिंफोसाइट मिलते हैं। लिंफोसाइट शरीर की प्रतिरक्षा अनुक्रिया के लिए उत्तरदायी है। लसीका पोषक पदार्थ, हार्मोन आदि के संवाहन के लिए महत्वपूर्ण होते हैं। आंत्र अकुंर में उपस्थित लैक्टियल वसा को लसीका द्वारा अवशोषित करते हैं।

15.3 परिसंचरण पथ

परिसंचरण दो तरह का होता है, जो खुला एवं बंद होता है। **खुला परिसंचरण तंत्र** आर्थोपोडा (संधिपाद) तथा मोलस्का में पाया जाता है। जिसमें हृदय द्वारा रक्त को रक्त वाहिकाओं में पंप किया जाता है, जो कि रक्त स्थान (कोटरों) में खुलता है। एक कोटर वस्तुत: देहगुहा होती है। ऐनेलिडा तथा कशेरुकी में **बंद प्रकार का परिसंचरण** तंत्र पाया जाता है, जिसमें हृदय से रक्त का प्रवाह एक दूसरे से जुड़ी रक्त वाहिनियों के जाल में होता है। इस तरह का रक्त परिसंचरण पथ ज्यादा लाभदायक होता है क्योंकि इसमें रक्त प्रवाह आसानी से नियमित किया जाता है।

सभी कशेरुकी में कक्षों से बना हुआ पेशी हृदय होता है। मछलियों में दो कक्षीय हृदय होता है, जिसमें एक अलिंद तथा एक निलय होता है। उभयचरों तथा सरीसृपों रेप्टाइल का (मगरमच्छ को छोड़कर) हृदय तीन कक्षों से बना होता है, जिसमें दो अलिंद तथा एक निलय होता है। जबकि मगरमच्छ, पक्षियों तथा स्तनधारियों में हृदय चार कक्षों का बना होता है जिसमें दो अलिंद तथा दो निलय होते हैं। मछलियों में हृदय विऑक्सीजनित रुधिर बाहर को पंप करता है जो क्लोम द्वारा ऑक्सीजनित होकर शरीर के विभिन्न भागों में पहुँचाया जाता है तथा वहाँ से विऑक्सीजनित रक्त हृदय में वापस आता है। इस क्रिया को एकलपरिसंचरण कहते हैं। उभयचरों व सरीसृपों में बांया अलिंद क्लोम / फेफड़ों / त्वचा से ऑक्सीजन युक्त रक्त प्राप्त करता है तथा दाहिना आलिंद शरीर के दूसरे भागों से विऑक्सीजनित रुधिर प्राप्त करता है, लेकिन वे रक्त को निलय में मिश्रित कर बाहर की ओर पंप करते हैं। इस क्रिया को अपूर्ण दोहरा परिसंचरण कहते हैं। पक्षियों एवं स्तनधारियों में ऑक्सीजनित विऑक्सीजनित रक्त क्रमश: बाएं व दाएं आलिंदों में आता है, जहाँ से वह उसी क्रम से बाएं दाएं एवं बाएं निलयों में जाता है। निलय बिना रक्त को मिलाए इन्हें पंप करता है अर्थात् दो तरह के परिसंचरण पथ इन प्राणियों में मिलते हैं। अत: इन प्राणियों में दोहरा परिसंचरण पाया जाता है। अब हम मानव के परिसंचरण तंत्र का अध्ययन करते हैं।

15.3.1 मानव परिसंचरण तंत्र

मानव परिसंचरण तंत्र जिसे रक्तवाहिनी तंत्र भी कहते हैं जिसमें कक्षों से बना पेशी हृदय, शाखित बंद रक्त वाहिनियों का एक जाल, रक्त एवं तरल समाहित होता हैं। (रक्त इनमें बहने वाला एक तरल है जिसके बारे में आप विस्तृत रूप से इस अध्याय के पूर्ववर्ती पृष्ठों में पढ़ चुके हैं)।

हृदय- की उत्पत्ति मध्यजन स्तर (मीसोडर्म) से होती है तथा यह दोनों फेफड़ों के मध्य, वक्ष गुहा में स्थित रहता है यह थोडा सा बाईं तरफ झुका रहता है। यह बंद मुट्ठी के आकार का होता है। यह एक दोहरी भित्ति के झिल्लीमय थैली, हृदयावरणी द्वारा सुरक्षित होता है जिसमें हृदयावरणी द्रव पाया जाता है। हमारे हृदय में चार कक्ष होते हैं जिसमें दो कक्ष अपेक्षाकृत छोटे तथा ऊपर को पाए जाते हैं जिन्हें **अलिंद** (आर्ट्रिया) कहते हैं तथा दो कक्ष अपेक्षाकृत बड़े होते हैं जिन्हें **निलय (वेंट्रिकल)** कहते हैं। एक पतली पेशीय भित्ति जिसे **अंतर अलिंदी (पट)** कहते हैं, दाएं एवं बाएं आलिंद को अलग करती है जबकि एक मोटी भित्ति, जिसे **अंतर निलयी (पट)** कहते हैं, जो बाएं एवं दाएं निलय को अलग करती है (चित्र 15.2)। अपनी-अपनी ओर के आलिंद एवं निलय एक मोटे रेशीय ऊतक जिसे अलिंद निलय पट द्वारा पृथक रहते हैं। हालांकि; इन पटों में एक-एक छिद्र होता है, जो एक ओर के दोनों कक्षों को जोड़ता है। दाहिने आलिंद और दाहिने निलय के (रंध्र) पर तीन पेशी पल्लों या वलनों से (फ्लैप्स या कप्स) से युक्त एक वाल्व पाया जाता है। इसे ट्राइकसपिड (त्रिवलनी) कपाट या वाल्व कहते हैं। बाएं अलिंद तथा बाएं निलय के रंध्र (निकास) पर एक

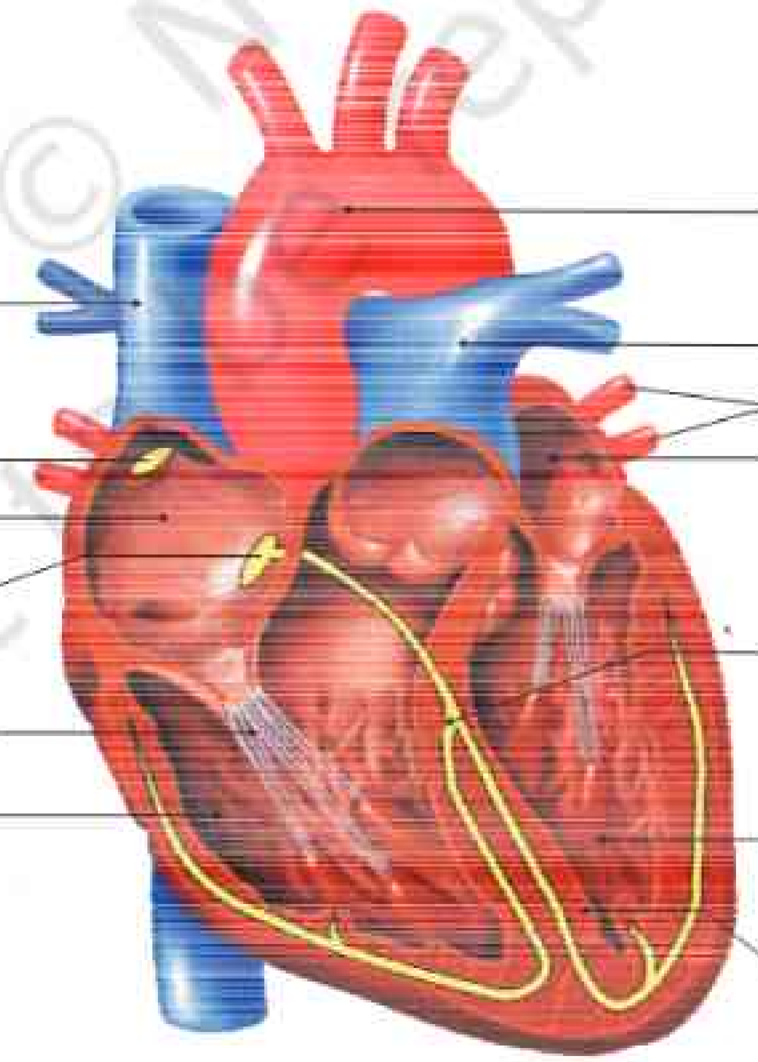

चित्र 15.2 एक मानव हृदय का काट

द्विवलनी कपाट / मिट्रल कपाट पाया जाता है। दाएं तथा बाएं निलयों से निकलने वाली क्रमश: फुप्फुसीय धमनी तथा महाधमनी का निकास द्वार अर्धचंद्र कपाटिकर (सेमील्युनर वाल्व) से युक्त रहता है। हृदय के कपाट रुधिर को एक दिशा में ही जाने देते हैं अर्थात् अलिंद से निलय और निलय से फुप्फुस धमनी या महाधमनी। कपाट वापसी या उल्टे प्रवाह को रोकते हैं।

यह हृद पेशीयों से बना है। निलयों की भित्ति अलिंदों की भित्ति से बहुत मोटी होती है। एक विशेष प्रकार की हृद पेशीन्यास, जिसे **नोडल ऊतक** कहते हैं, भी हृदय में पाया जाता है (चित्र 15.2)। इस ऊतक का एक धब्बा दाहिने अलिंद के दाहिने ऊपरी कोने पर स्थित रहता है, जिसे **शिराअलिंदपर्व** (साइनों-आट्रियल नॉड SAN) कहते हैं। इस ऊतक का दूसरा पिण्ड दाहिने अलिंद में नीचे के कोने पर अलिंद निलयी पट के पास में स्थित होता है जिसे **अलिंद निलय पर्व** (आट्रियो-वेंटीकुलर नॉड/ AVN) कहते हैं। नोडल (ग्रंथिल) रेशों का एक बंडल, जिसे अलिंद निलय बंडल (AV बंडल) भी कहते हैं। अंतर निलय पट के ऊपरी भाग में अलिंद निलय पर्व से प्रारंभ होता है तथा शीघ्र ही दो दाईं एवं बाईं शाखाओं में विभाजित होकर अंतर निलय पट के साथ पश्च भाग में बढ़ता है। इन शाखाओं से संक्षिप्त रेशे निकलते हैं जो पूरे निलयी पेशीविन्यास में दोनों तरफ फैले रहते हैं, जिसे पुरकिंजे तंतु कहते हैं। नोडल ऊतक बिना किसी बाह्य प्रेरणा के क्रियाविभव पैदा करने में सक्षम होते हैं। इसे स्वउत्तेजनशील (आटोएक्साइटेबल) कहते हैं। हालांकि; एक मिनट में उत्पन्न हुए क्रियाविभव की संख्या नोडल तंत्र के विभिन्न भागों में घट-बढ़ सकती है।

शिराअलिंदपर्व (गांठ) सबसे अधिक क्रियाविभव पैदा कर सकती है। यह एक मिनट में 70-75 क्रियाविभव पैदा करती है तथा हृदय का लयात्मक संकुचन (रिदमिक कांट्रेक्शन) को प्रारंभ करता है तथा बनाए रखता है। इसलिए इसे **गतिप्रेरक** (पेश मेकर) कहते हैं। इससे हमारी सामान्य हृदय स्पंदन दर 70-75 प्रति मिनट होती है। (औसतन 72 स्पंदन प्रति मिनट)।

15.3.2 हृद चक्र

हृदय काम कैसे करता है? आओ हम जानें। प्रारंभ में माना कि हृदय के चारों कक्ष शिथिल अवस्था में हैं अर्थात् हृदय अनुशिथिलन अवस्था में है। इस समय त्रिवलन या द्विवलन कपाट खुले रहते हैं, जिससे रक्त फुप्फुस शिरा तथा महाशिरा से क्रमश: बाएं तथा दाएं अलिंद से होता हुआ बाएं तथा दाएं निलय में पहुँचता है। अर्ध चंद्रकपाटिका इस अवस्था में बंद रहती है। अब शिराअलिंदपर्व (SAN) क्रियाविभव पैदा करता है, जो दोनों अलिंदों को प्रेरित कर अलिंद प्रकुंचन (atrial systole) पैदा करती है। इस क्रिया से रक्त का प्रवाह निलय में लगभग 30 प्रतिशत बढ़ जाता है। निलय में क्रियाविभव का संचालन अलिंद निलय (पर्व) तथा अलिंद निलय बंडल द्वारा होता है जहाँ से हिज के बंडल इसे निलयी पेशीन्यास (ventricular musculatire) तक पहुँचाता है। इसके कारण निलयी पेशियों में संकुचन होता है अर्थात् निलय प्रकुंचन इस समय अलिंद विश्राम अवस्था में जाते हैं। इसे अलिंद को अनुशिथिलन कहते हैं जो अलिंद प्रकुंचन के साथ-साथ होता है। निलयी प्रकुंचन, निलयी दाब बढ़ जाता है, जिससे त्रिवलनी व

द्विवलनी कपाट बंद हो जाते हैं, अतः रक्त विपरीत दिशा अर्थात् अलिंद में नहीं आता है। जैसे ही निलयी दबाव बढ़ता है अर्ध चंद्रकपाटिकाएं जो फुप्फुसीय धमनी (दाईं ओर) तथा महाधमनी (बाईं ओर) पर स्थित होते हैं, खुलने के लिए मजबूर हो जाते हैं जिसके रक्त इन धमनियों से होता हुआ परिसंचरण मार्ग में चला जाता है। निलय अब शिथिल हो जाते हैं तथा इसे निलयी अनुशिथिलन कहते हैं। इस तरह निलय का दाब कम हो जाता है जिससे अर्धचंद्रकपाटिका बंद हो जाती है, जिससे रक्त का विपरीत प्रवाह निलय में नहीं होता। निलयी दाब और कम होता है, अतः अलिंद में रक्त का दाब अधिक होने के कारण त्रिवलनी कपाट तथा द्विवलनी कपाट खुल जाते हैं। इस तरह शिराओं से आए हुए रक्त का प्रवाह अलिंद से पुनः निलय में शुरू हो जाता है। निलय तथा अलिंद एक बार पुनः (जैसा कि ऊपर लिखा गया है), शिथिलावस्था में चले जाते हैं। शिराआलिंदपर्व (कोटरालिंद गांठ) पुनः क्रियाविभव पैदा करती है तथा उपरोक्त वर्णित से सारी क्रिया को दोहराती है जिससे यह प्रक्रिया लगातार चलती रहती है।

एक हृदय स्पंदन के आरंभ से दूसरे स्पंदन के आरंभ (एक संपूर्ण हृदय स्पंदन) होने के बीच के घटनाक्रम को हृद चक्र (cardiac cycle) कहते हैं तथा इस क्रिया में दोनों अलिंदों तथा दोनों निलयों का प्रकुंचन एवं अनुशिथिलन सम्मिलित होता है। जैसा कि ऊपर वर्णन किया जा चुका है कि हृदय स्पंदन एक मिनट में 72 बार होता है अर्थात् एक मिनट में कई बार हृद चक्र होता है। इससे एक चक्र का समय 0.8 सेकेंड निकाला जा सकता है। प्रत्येक हृद चक्र में निलय 70 मिली. रक्त पंप करता है, जिसे प्रवाह आयतन कहते हैं। प्रवाह आयतन को हृदय दर से गुणा करने पर हृद निकास कहलाता है, इसलिए हृद निकास प्रत्येक निलय द्वारा रक्त की मात्रा को प्रति मिनट बाहर निकालने की क्षमता है, जो एक स्वस्थ मात्रा में औसतन 5 हजार मिली. या 5 लीटर होती है। हम प्रवाह आयतन तथा हृदय दर को बदलने की क्षमता रखते हैं इससे हृदनिकास भी बदलता है। उदाहरण के तौर पर खिलाड़ी/धावकों का हृद निकास सामान्य मनुष्य से अधिक होता है।

हृद चक्र के दौरान दो महत्वपूर्ण ध्वनियाँ स्टेथेस्कोप द्वारा सुनी जा सकती है। प्रथम ध्वनि (लब) त्रिवलनी तथा द्विवलनी कपाट के बंद होने से संबंधित है, जबकि दूसरी ध्वनि (डब) अर्ध चंद्रकपाट के बंद होने से संबंधित है। इन दोनों ध्वनियों का चिकित्सीय निदान में बहुत महत्व है।

15.3.3 विद्युत हृद लेख (इलेक्ट्रोकार्डियोग्राम)

आप शायद अस्पताल के टेलीविजन के दृश्य से चिरपरिचित होंगे। जब कोई बीमार व्यक्ति हृदयाघात के कारण निगरानी मशीन (मोनीटरिंग मशीन) पर रखा जाता है तब आप पीप.. पीप... पीप और पीपीपी की आवाज सुन सकते हैं। इस तरह की मशीन (इलैक्ट्रोकार्डियोग्राफ) का उपयोग विद्युत हृद लेख (इलेक्ट्रोकार्डियोग्राम) (ईसीजी) प्राप्त करने के लिए किया जाता है (चित्र 15.3)। ईसीजी हृदय के हृदयी चक्र की विद्युत क्रियाकलापों का आरेखीय प्रस्तुतीकरण है। बीमार व्यक्ति के मानक ईसीजी

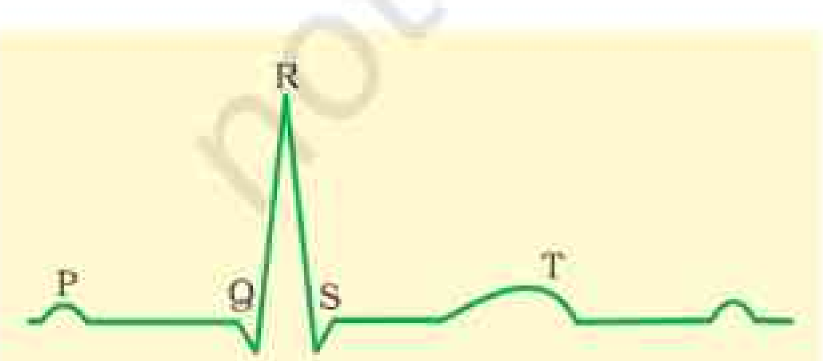

चित्र 15.3 मानव ईसीजी का रेखांकित चित्रण

से प्राप्त करने के लिए मशीन से रोगी को तीन विद्युत लीड से (दोनों कलाईयाँ तथा बाईं ओर की एड़ी) जोड़कर लगातार निगरानी करके प्राप्त कर सकते हैं।

हृदय क्रियाओं के विस्तृत मूल्यांकन के लिए कई तारों (लीड्स) को सीने से जोड़ा जाता है। यहाँ हम केवल मानक ईसीजी के बारे में बताएंगे।

ईसीजी के प्रत्येक चर्मोत्कर्ष को P (पी) से T (टी) तक दर्शाया जाता है, जो हृदय की विशेष विद्युत क्रियाओं के प्रदर्शित करता है। पी तरंग को **आलिंद के उद्दीपन/विध्रुवण** के रूप में प्रस्तुत किया जाता है, जिससे दोनों अलिंदों का संकुचन होता है। QRS (क्यूआरएस) **सम्मिश्र निलय के अध्रुवण** को प्रस्तुत करता है जो निलय के संकुचन को शुरू करता है। संकुचन क्यू तरंग के तुरंत बाद शुरू होता है। जो प्रकुंचन (सिस्टोल) की शुरुआत का द्योतक है। 'टी' तरंग निलय का उत्तेजना से सामान्य अवस्था में वापिस आने की स्थिति को प्रदर्शित करता है। टी तरंग का अंत **प्रकुंचन** अवस्था की समाप्ति का द्योतक है।

स्पष्टतया, एक निश्चित समय में QRS सम्मिश्र की संख्या गिनने पर एक मनुष्य के हृदय स्पंदन दर भी निकाली जा सकती है। यद्यपि तरह-तरह के व्यक्तियों की ईसीजी संरचना एवं आकृति सामान्य होती है। इस आकृति में कोई परिवर्तन किसी संभावित असामान्यता अथवा बीमारी को इंगित करती हैं। अतः यह इसकी चिकित्सीय महत्ता बहुत ज्यादा है।

15.4 द्विसंचरण (डबल सरकुलेशन)

रक्त अनिवार्य रूप से एक निर्धारित मार्ग से रक्तवाहिनियों - धमनी एवं शिराओं में बहता है। मूल रूप से प्रत्येक धमनी और शिरा में तीन परतें होती हैं - अंदर की परत शल्की अंतराच्छादित ऊतक - **अंतःस्तर कंचुक**, चिकनी पेशियों एवं लचीले रेशे से युक्त **मध्य कंचुक** एवं कोलेजन रेशे से युक्त रेशेदार संयोजी ऊतक - **बाह्य कंचुक**। शिराओं में मध्य कंचुक अपेक्षाकृत पतला होता है (चित्र 15.4)।

जैसा कि पहले बताया जा चुका है कि दाहिने निलय द्वारा पंप किया गया रक्त फुप्फुसीय धमनियों में जाता है जबकि बाएं निलय से रक्त महाधमनी में जाता है। ऑक्सीजन रहित रक्त, फेफड़ों में ऑक्सीजन युक्त होकर फुप्फुस शिराओं से होता हुआ बाएं अलिंद में आता है। यह संचरण पथ फुप्फुस संचरण कहलाता है। ऑक्सीजनित रक्त महाधमनी से होता हुआ धमनी, धमनिकाओं तथा केशिकाओं (केपिलरीज) से होता हुआ ऊतकों तक जाता है। और वहाँ से ऑक्सीजन रहित होकर शिरा, शिराओं तथा महाशिरा से होता हुआ दाहिने अलिंद में आता है। यह एक क्रमबद्ध परिसंचरण है। यह क्रमबद्ध परिसंचरण पोषक पदार्थ, ऑक्सीजन तथा अन्य जरूरी पदार्थों को ऊतकों तक पहुँचाता है तथा वहाँ से कार्बनडाइऑक्साइड (CO_2) तथा अन्य हानिकारक पदार्थों को बाहर निकालने के लिए ऊतकों से दूर ले जाता है। एक अनूठी संवहनी संबद्धता आहार नाल तथा यकृत के बीच उपस्थित होती है जिसे **यकृत निवाहिका परिसंचरण तंत्र (हिपेटिकपोर्टल सिस्टम)** कहते हैं। यकृत निवाहिका शिरा रक्त को इसके पहले कि वह क्रमबद्ध परिसंचरण में आंत्र से यकृत तक पहुँचाती है। हमारे शरीर में एक विशेष हृद परिसंचरण तंत्र (कोरोनरी सिस्टम) पाया जाता है, जो रक्त सिर्फ को हृद पेशी न्यास तक ले जाता है तथा वापस लाता है।

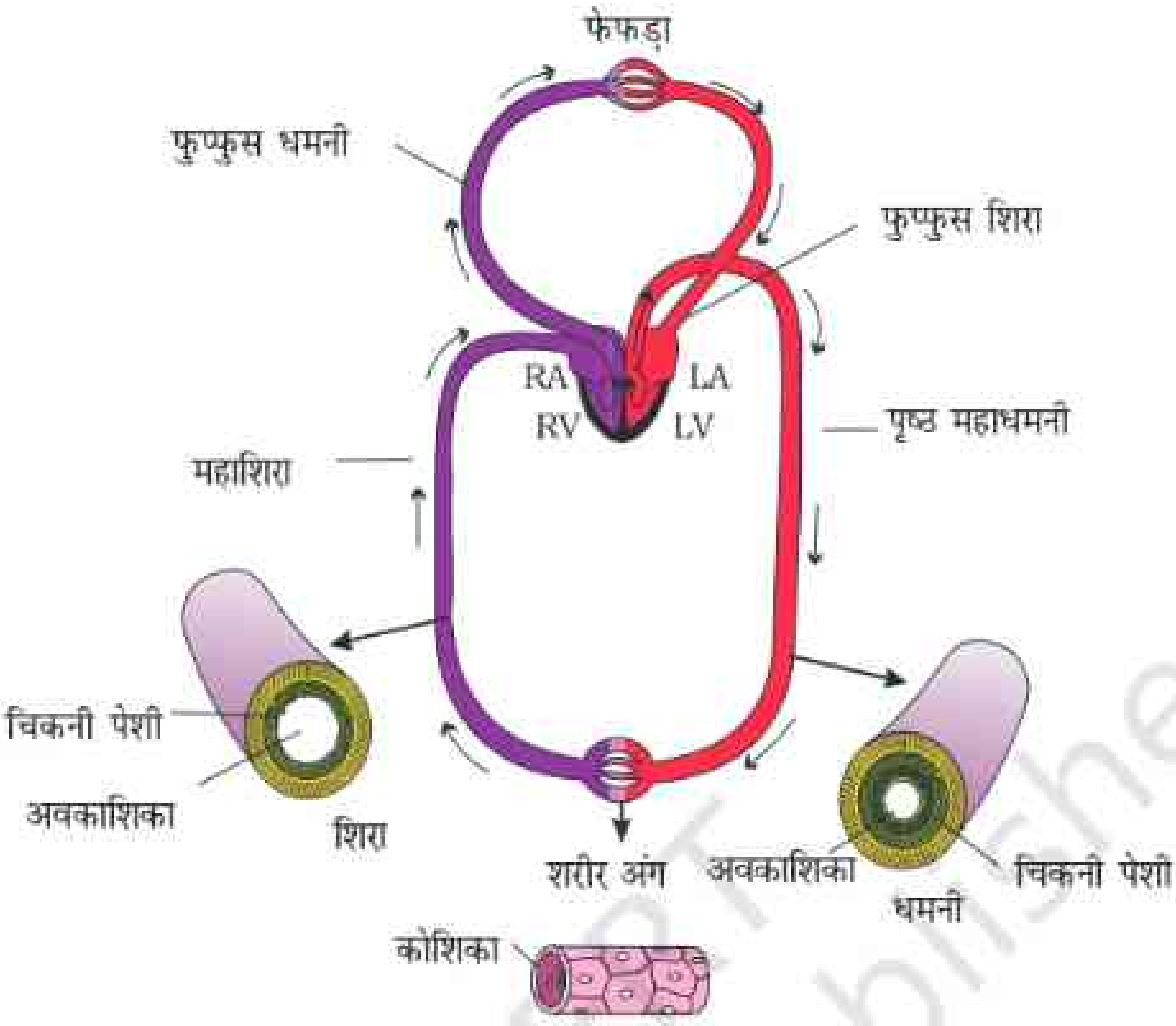

चित्र 15.4 मानव रक्त परिसंचरण का आरेखीय चित्र

15.5 हृद क्रिया का नियमन

हृदय की सामान्य क्रियाओं का नियमन अंतरिम होता है अर्थात् विशेष पेशी ऊतक (नोडल ऊतक) द्वारा स्व नियमित होते हैं, इसलिए हृदय को पेशीजनक (मायोजनिक) कहते हैं। मेड्यूला ओबलांगाटा के विशेष तंत्रिका केंद्र स्वायत्त तंत्रिका के द्वारा हृदय की क्रियाओं को संयमित कर सकता है। अनुकंपीय तंत्रिकाओं से प्राप्त तंत्रीय संकेत हृदय स्पंदन को बढ़ा देते हैं व निलयी संकुचन को सुदृढ़ बनाते हैं, अत: हृद निकास बढ़ जाता है। दूसरी तरफ परानुकंपी तंत्रिकय संकेत (जो स्वचालित तंत्रिका केंद्र का हिस्सा है) हृदय स्पंदन एवं क्रियाविभव की संवहन गति कम करते हैं। अत: यह हृद निकास को कम करते हैं। अधिवृक्क अंतस्था (एडीनल मेड्यूला) का हार्मोन भी हृद निकास को बढ़ा सकता है।

15.6 परिसंचरण की विकृतियाँ

उच्च रक्त दाब (अति तनाव) : अति तनाव रक्त दाब की वह अवस्था है, जिसमें रक्त चाप सामान्य (120/80) से अधिक होता है। इस मापदंड में 120 मिमी. एच जी (मिलीमीटर में मर्करी दबाव) को प्रकुंचन या पंपिंग दाब और 80 मिमी. एच जी को अनुशिथिलन या विराम काल (सहज) **रक्त दाब** कहते हैं। यदि किसी का रक्त दाब बार-बार मापने पर भी व्यक्ति 140/90 या इससे अधिक होता है तो वह अति तनाव प्रदर्शित करता है। उच्च रक्त चाप हृदय की बीमारियों को जन्म देता है तथा अन्य महत्वपूर्ण अंगों जैसे मस्तिष्क तथा वृक्क जैसे अंगों को प्रभावित करता है।

हृद धमनी रोग (CAD) **:** हृद धमनी बीमारी या रोग को प्रायः एथिरोकाठिंय (एथिरोस सक्लेरोसिस) के रूप में संदर्भित किया जाता है, जिसमें हृदय पेशी को रक्त की आपूर्ति करने वाली वाहिनियाँ प्रभावित होती हैं। यह बीमारी धमनियों के अंदर कैल्सियम, वसा तथा अन्य रेशीय ऊतकों के जमा होने से होता है, जिससे धमनी की अवकाशिका संकरी हो जाती है।

हृदशूल (एंजाइना) : इसको **एंजाइना पेक्टोरिस (हृदशूल पेक्टोरिस)** भी कहते हैं। हृद पेशी में जब पर्याप्त ऑक्सीजन नहीं पहुँचती है तब सीने में दर्द (वक्ष पीड़ा) होता है जो एंजाइना (हृदशूल) की पहचान है। हृदशूल स्त्री या पुरुष दोनों में किसी भी उम्र में हो सकता है, लेकिन मध्यावस्था तथा वृद्धावस्था में यह सामान्यतः होता है। यह अवस्था रक्त बहाव के प्रभावित होने से होती है।

हृदपात (हार्ट फेल्योर) : हृदपात वह अवस्था है जिसमें हृदय शरीर के विभिन्न भागों को आवश्यकतानुसार पर्याप्त आपूर्ति नहीं कर पाता है। इसको कभी-कभी **संकुलित हृदपात** भी कहते हैं, क्योंकि फुप्फुस का संकुलन हो जाना भी उस बीमारी का प्रमुख लक्षण है। हृदपात ठीक हृदघात की भाँति नहीं होता (जहाँ हृदघात में हृदय की धड़कन बंद हो जाती है जबकि, हृदपात में हृदयपेशी को रक्त आपूर्ति अचानक अपर्याप्त हो जाने से यकायक क्षति पहुँचती है।

सारांश

कशेरुकी रक्त (द्रव संयोजी ऊतक) को पूरे शरीर में संचारित करते हैं जिसके द्वारा आवश्यक पदार्थ कोशिकाओं तक पहुँचाते हैं तथा वहाँ से अवशिष्टों को शरीर से बाहर निकालते हैं। दूसरा द्रव, जिसे लसीका ऊतक द्रव कहते हैं, भी कुछ पदार्थों को अभिगमित करता है।

रक्त, द्रव आधात्री (मैट्रिक्स) प्लैज्मा (प्लाज्मा) तथा संगठित पदार्थों से बना होता है। लाल रुधिर कणिकाएं (RBcs/इरिथ्रोसाइट), श्वेत रुधिर कणिकाएं (ल्यूकोसाइट) और प्लेट्लेट्स (थ्रोम्बोसाइट), संगठित पदार्थों का हिस्सा है। मानव का रक्त चार समूहों A, B, AB, O में वर्गीकृत किया गया है। इस वर्गीकरण का आधार लाल रुधिर कणिकाओं की सतह पर दो एंटीजेन A अथवा B का उपस्थित अथवा अनुपस्थित होना है। दूसरा वर्गीकरण लाल रुधिर कणिकाओं की सतह पर Rh घटक की उपस्थिति अथवा अनुपस्थिति पर किया गया है। ऊतक की कोशिकाओं के मध्य एक द्रव पाया जाता है जिसे **ऊतक द्रव** कहते हैं। इस द्रव को लसीका भी कहते हैं जो रक्त के समान होता है, परंतु इसमें प्रोटीन कम होती है तथा संगठित पदार्थ नहीं होते हैं।

सभी कशेरुकियों तथा कुछ अकशेरुकियों में बंद परिसंचरण तंत्र होता है। हमारे परिसंचरण तंत्र के अंतर्गत पेशीय पंपिंग अवयव, हृदय, वाहिकाओं का जाल तंत्र तथा द्रव, रक्त आदि सम्मिलित होते हैं। हृदय में दो आलिंद) तथा दो निलय होते हैं। हृद पेशीन्यास स्व-उत्तेजनीय होता है। शिराआलिंद पर्व (कोटरालिंद गाँठ SAN अधिकतम संख्या में प्रति मिनट (70/75 मिनट) क्रियविभव को उत्पन्न करती है और इस कारण यह हृदय की गतिविधियों की गति निर्धारित करती है। इसलिए इसे **पेश मेकर (गति प्रेरक)** कहते हैं। आलिंद द्वारा पैदा किया विभव और इसके बाद निलयों की आकुंचन (प्रकुंचन) का अनुकरण अनुशिथिलन द्वारा होता है। यह प्रकुंचन रक्त के अलिंद से निलयों की ओर बहाव के लिए दबाव डालता है और वहाँ से फुप्फुसीय धमनी और महाधमनी तक ले जाता है। हृदय की इस क्रमिक घटना को एक चक्र के रूप में बार-बार दोहराया जाता है जिसे **हृद चक्र** कहते हैं। एक स्वस्थ व्यक्ति प्रति मिनट ऐसे 72 चक्रों को प्रदर्शित करता है। एक हृद चक्र के दौरान प्रत्येक निलय द्वारा लगभग 70 मिली रक्त हर बार पंप किया जाता है। इसे **स्ट्रोक या विस्पंदन आयतन** कहते हैं। हृदय के निलय द्वारा प्रति मिनट पंप किए गए रक्त आयतन को **हृद निकास** कहते हैं और यह स्ट्रोक आयतन तथा स्पंदन दर के गुणक बराबर होता है। यह प्रवाह आयतन प्रति मिनट हृदय दर

(लगभग 5 लीटर) के बराबर होता है। हृदय में विद्युत क्रिया का आलेख इलैक्ट्रोकार्डियोग्राफ (विद्युत हृद आलेख मशीन) के द्वारा किया जा सकता है तथा विद्युत हृद आलेख को ECG कहते हैं, जिसका चिकित्सीय महत्व है।

हम पूर्ण दोहरा संचरण रखते हैं अर्थात् दो परिसंचरण पथ मुख्यत: फुप्फुसीय तथा दैहिक होते हैं। फुप्फुसीय परिसंचरण में ऑक्सीजनरहित रक्त को दाहिने निलय से फेफड़ों में पहुँचाया जाता है, जहाँ पर यह रक्त ऑक्सीजनित होता है तथा, फुप्फुसीय शिरा द्वारा बांए अलिंद में पहुँचता है। दैहिक परिसंचरण में बाएं निलय से ऑक्सीजन युक्त रक्त को महाधमनी द्वारा शरीर के ऊतकों तक पहुँचाया जाता है तथा वहाँ से ऑक्सीजन रहित रक्त को ऊतकों से शिराओं के द्वारा दाहिने अलिंद में वापस पहुँचाया जाता है। यद्यपि हृदय स्व उत्तेज्य होता है, लेकिन इसकी क्रियाशीलता को तंत्रिकीय तथा होर्मोन की क्रियाओं से नियमित किया जा सकता है।

अभ्यास

1. रक्त के संगठित पदार्थों के अवयवों का वर्णन करें तथा प्रत्येक अवयव के एक प्रमुख कार्य के बारे में लिखें।
2. प्लाज्मा (प्लैज्मा) प्रोटीन का क्या महत्व है?
3. स्तंभ I का स्तंभ II से मिलान करें

स्तंभ I	स्तंभ II
(i) इयोसिनोफिल्स	(क) रक्त जमाव (स्कंदन)
(ii) लाल रुधिर कणिकाएं	(ख) सर्व आदाता
(iii) AB रक्त समूह	(ग) संक्रमण प्रतिरोधन
(iv) पट्टिकाणु प्लेटलेट्स	(घ) हृदय सकुंचन
(v) प्रकुंचन (सिस्टोल)	(च) गैस परिवहन (अभिगमन)

4. रक्त को एक संयोजी ऊतक क्यों मानते हैं?
5. लसीका एवं रुधिर में अंतर बताएं?
6. दोहरे परिसंचरण से क्या तात्पर्य है? इसकी क्या महत्ता है?
7. भेद स्पष्ट करें-
   (क) रक्त एवं लसीका
   (ख) खुला व बंद परिसंचरण तंत्र
   (ग) प्रकुंचन तथा अनुशिथिलन
   (घ) P तरंग तथा T तरंग
8. कशेरुकी के हृदयों में विकासीय परिवर्तनों का वर्णन करें?
9. हम अपने हृदय को पेशीजनक (मायोजेनिक) क्यों कहते हैं?
10. शिरा अलिंद पर्व (कोटरालिंद गाँठ SAN) को हृदय का गति प्रेरक (पेशमेकर) क्यों कहा जाता है?
11. अलिंद निलय गाँठ (AVN) तथा आलिंद निलय बंडल (AVB) का हृदय के कार्य में क्या महत्व है।
12. हृद चक्र तथा हृदनिकास को पारिभाषित करें?
13. हृदय ध्वनियों की व्याख्या करें।
14. एक मानक ईसीजी को दर्शाएं तथा उसके विभिन्न खंडों का वर्णन करें।

© NCERT not to be republished

अध्याय 16

उत्सर्जी उत्पाद एवं उनका निष्कासन

16.1 मानव उत्सर्जन तंत्र

16.2 मूत्र निर्माण

16.3 वृक्क नलिका के विभिन्न भागों के कार्य

16.4 निस्यंद का सांद्रण करने की क्रियाविधि

16.5 वृक्क क्रियाओं का नियमन

16.6 मूत्रण

16.7 उत्सर्जन में अन्य अंगों की भूमिका

16.8 वृक्क-विकृतियाँ

प्राणी उपापचयी अथवा अत्यधिक अंतःग्रहण जैसी क्रियाओं द्वारा अमोनिया, यूरिया, यूरिक अम्ल, कार्बनडाइऑक्साइड, जल और अन्य आयन जैसे सोडियम, पोटैसियम, क्लोरीन, फॉस्फेट, सल्फेट आदि का संचय करते हैं। प्राणियों द्वारा इन पदार्थों का पूर्णतया या आंशिक रूप से निष्कासन आवश्यक है। इस अध्याय में आप इन पदार्थों, साथ ही विशेष रूप से साधारण नाइट्रोजनी अपशिष्टों के निष्कासन का अध्ययन करेंगे।

प्राणियों द्वारा उत्सर्जित होने वाले नाइट्रोजनी अपशिष्टों में मुख्य रूप से अमोनिया, यूरिया और यूरिक हैं। इनमें अमोनिया सर्वाधिक आविष (टॉक्सिक) है और इसके निष्कासन के लिए अत्यधिक जल की आवश्यकता होती है। यूरिक अम्ल कम आविष है और जल की कम मात्रा के साथ निष्कासित किया जा सकता है।

अमोनिया के उत्सर्जन की प्रक्रिया को *अमोनियोत्सर्ग* प्रक्रिया कहते हैं। अनेक अस्थिल मछलियाँ, उभयचर और जलीय कीट अमोनिया उत्सर्जी प्रकृति के हैं। अमोनिया सरलता से घुलनशील है, इसलिए आसानी से अमोनियम आयनों के रूप में शरीर की सतह या मछलियों के क्लोम (गिल) की सतह से विसरण द्वारा उत्सर्जित हो जाते हैं। इस उत्सर्जन में वृक्क की कोई अहम भूमिका नहीं होती है। इन प्राणियों को **अमोनियाउत्सर्जी** (अमोनोटैलिक) कहते हैं।

स्थलीय आवास में अनुकूलन हेतु, जल की हानि से बचने के लिए प्राणी कम आविष नाइट्रोजनी अपशिष्टों जैसे यूरिया और यूरिक अम्ल का उत्सर्जन करते हैं। स्तनधारी, कई स्थली उभयचर और समुद्री मछलियाँ मुख्यत: यूरिया का उत्सर्जन करते हैं और **यूरियाउत्सर्जी** (यूरियोटेलिक) कहलाते हैं। इन प्राणियों में उपापचयी क्रियाओं द्वारा निर्मित अमोनिया को यकृत द्वारा यूरिया में परिवर्तित कर रक्त में मुक्त कर दिया जाता है, जिसे वृक्कों द्वारा निस्यंदन के पश्चात उत्सर्जित कर दिया जाता है। कुछ प्राणियों

© NCERT not to be republished

के वृक्कों की आधात्री (मैट्रिक्स) में अपेक्षित परासरणता को बनाए रखने के लिए यूरिया की कुछ मात्रा रह जाती है।

सरीसृपों, पक्षियों, स्थलीय घोंघों तथा कीटों में नाइट्रोजनी अपशिष्ट यूरिक अम्ल का उत्सर्जन, जल की कम मात्रा के साथ गोलिकाओं या पेस्ट के रूप में होता है और ये **यूरिकअम्लउत्सर्जी** (यूरिकोटेलिक) कहलाते हैं। प्राणी जगत में कई प्रकार के उत्सर्जी अंग पाए जाते हैं। अधिकांश अकशेरुकियों में यह संरचना सरल नलिकाकार रूप में होती है, जबकि कशेरुकियों में जटिल नलिकाकार अंग होते हैं, जिन्हें वृक्क कहते हैं। इन संरचनाओं के प्रमुख रूप नीचे दिए गए हैं-

आदिवृक्कक (प्रोटोनेफ्रिडिआ) या ज्वाला कोशिकाएं, प्लेटिहेल्मिंथ (चपटे कृमि जैसे *प्लैनेरिया*), रॉटीफर कुछ एनेलिड, सिफेलोकॉर्डेट (*एम्फीऑक्सस*) आदि में उत्सर्जी संरचना के रूप में पाए जाते हैं। आदिवृक्कक प्राथमिक रूप से आयनों व द्रव के आयतन-नियमन जैसे परासरणनियमन से संबंधित हैं।

केंचुए व अन्य एनेलिड में नलिकाकार उत्सर्जी अंग वृक्कक पाए जाते हैं। वृक्कक नाइट्रोजनी अपशिष्टों को उत्सर्जित करने तथा द्रव और आयनों का संतुलन बनाए रखने में सहायता करते हैं।

तिलचट्टों (कॉकरोच) सहित अधिकांश कीटों में उत्सर्जी अंग के रूप में मैलपीगी नलिकाएं पाई जाती हैं। मैलपीगी नलिकाएं नाइट्रोजनी अपशिष्टों के उत्सर्जन और परासरणनियमन में मदद करती हैं।

झींगा (प्रॉन) जैसे क्रस्टेशियाई प्राणियों में शृंगिक ग्रंथियाँ (एंटिनलग्लांड) या हरित ग्रंथियाँ उत्सर्जन का कार्य करती हैं।

16.1 मानव उत्सर्जन तंत्र

मनुष्यों में उत्सर्जी तंत्र एक जोड़ी वृक्क, एक जोड़ी मूत्र नलिका, एक मूत्राशय और एक मूत्र मार्ग का बना होता है (चित्र 16.1)। वृक्क सेम के बीज की आकृति के गहरे भूरे लाल रंग के होते हैं तथा ये अंतिम वक्षीय और तीसरी कटि कशेरुका के समीप उदर गुहा में आंतरिक पृष्ठ सतह पर स्थित होते हैं। वयस्क मनुष्य के प्रत्येक वृक्क की लम्बाई 10-12 सेमी., चौड़ाई 5-7 सेमी., मोटाई 2-3 सेमी. तथा भार लगभग 120-170 ग्राम होता है। वृक्क के केंद्रीय भाग की भीतरी अवतल (कॉन्केव) सतह के मध्य में एक खांच होती है, जिसे हाइलम कहते हैं। इसे होकर मूत्र-नलिका, रक्त वाहिनियाँ और तंत्रिकाएं प्रवेश करती हैं। हाइलम के भीतरी ओर कीप के आकार का रचना होती है जिसे वृक्कीय श्रोणि (पेल्विस) कहते हैं तथा इससे निकलने वाले प्रक्षेपों (प्रोजेक्शन) को चषक (कैलिक्स) कहते हैं।

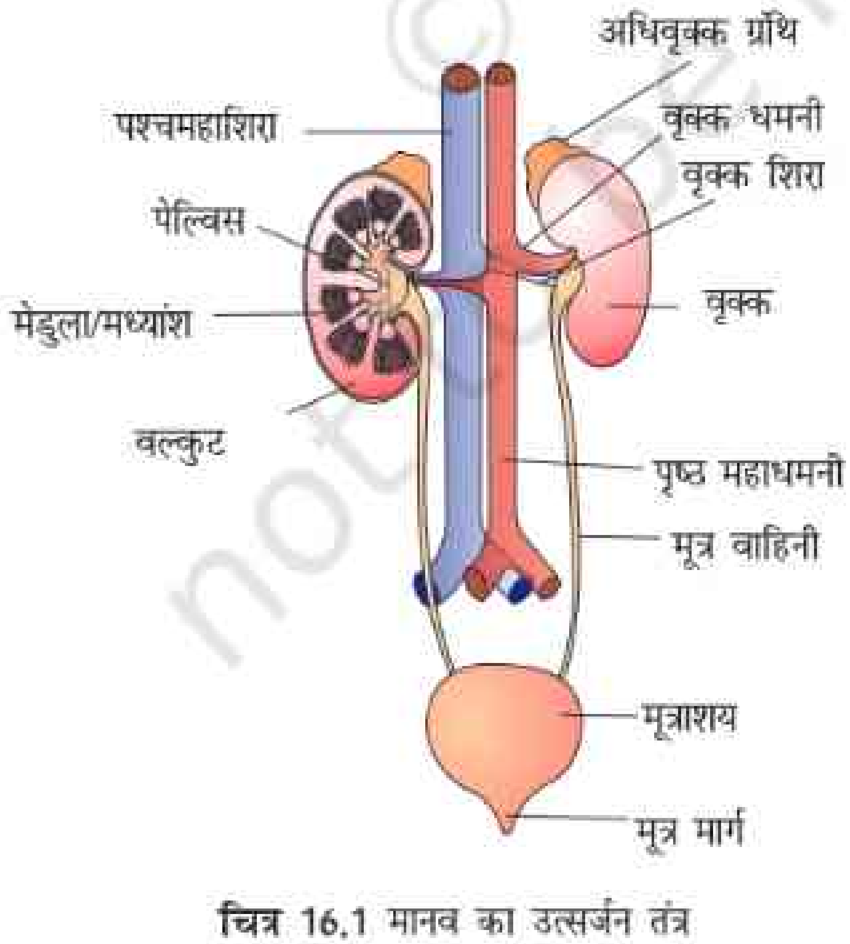

चित्र 16.1 मानव का उत्सर्जन तंत्र

© NCERT not to be republished

वृक्क की बाहरी सतह पर दृढ़ संपुट होता है। वृक्क में दो भाग होते हैं - बाहरी *वल्कुट* (कॉर्टेक्स) और *भीतरी मध्यांश* (मेडुला)। मध्यांश कुछ शंक्वाकार पिरामिड (मध्यांश पिरामिड)में बँटा होता है जो कि चषकों में फैले रहते हैं। वल्कुट मध्यांश पिरामिड (पिंडों) के बीच फैलकर वृक्क स्तंभ बनाते हैं, जिन्हें **बरतीनी-स्तंभ** (Columns of Bertini) कहते हैं (चित्र 16.2)।

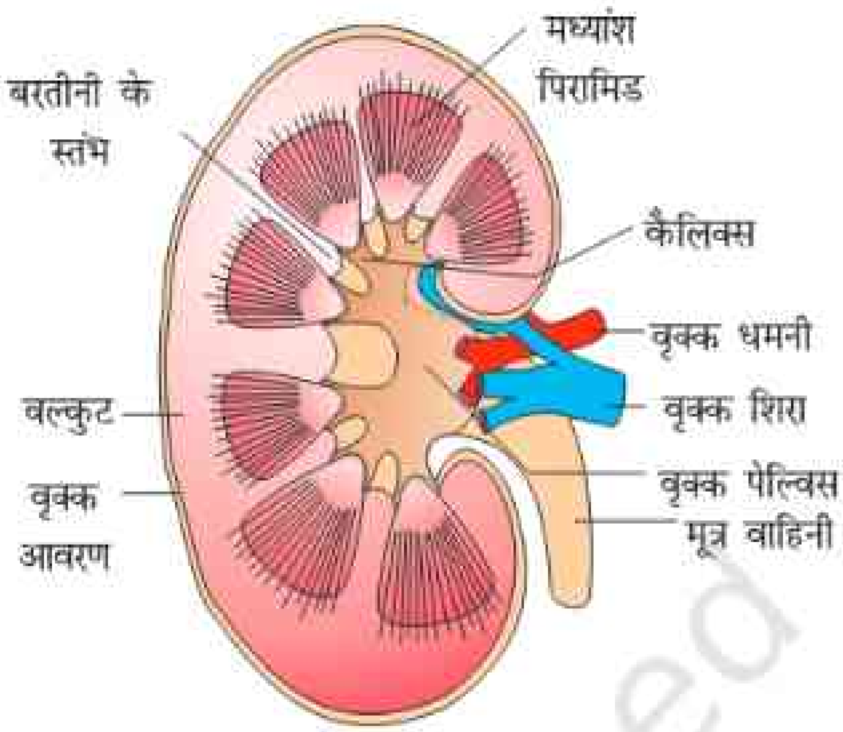

चित्र 16.2 वृक्क का भाग

प्रत्येक वृक्क में लगभग 10 लाख जटिल नलिकाकार संरचना **वृक्काणु (नेफ्रोन)** पाई जाती हैं जो क्रियात्मक इकाइयाँ हैं (चित्र 16.3)। प्रत्येक वृक्काणु के दो भाग होते हैं। जिन्हें गुच्छ (ग्लोमेरूलस) और वृक्क नलिका कहते हैं। गुच्छा वृक्कीय धमनी की शाखा अभिवाही धमनिकाओं (afferent arteriole) से बनी केशिकाओं (कैपिलरी) का एक गुच्छ है। ग्लोमेरूलस से रक्त अपवाही धमनिका (efferent arteriole) द्वारा ले जाया जाता है।

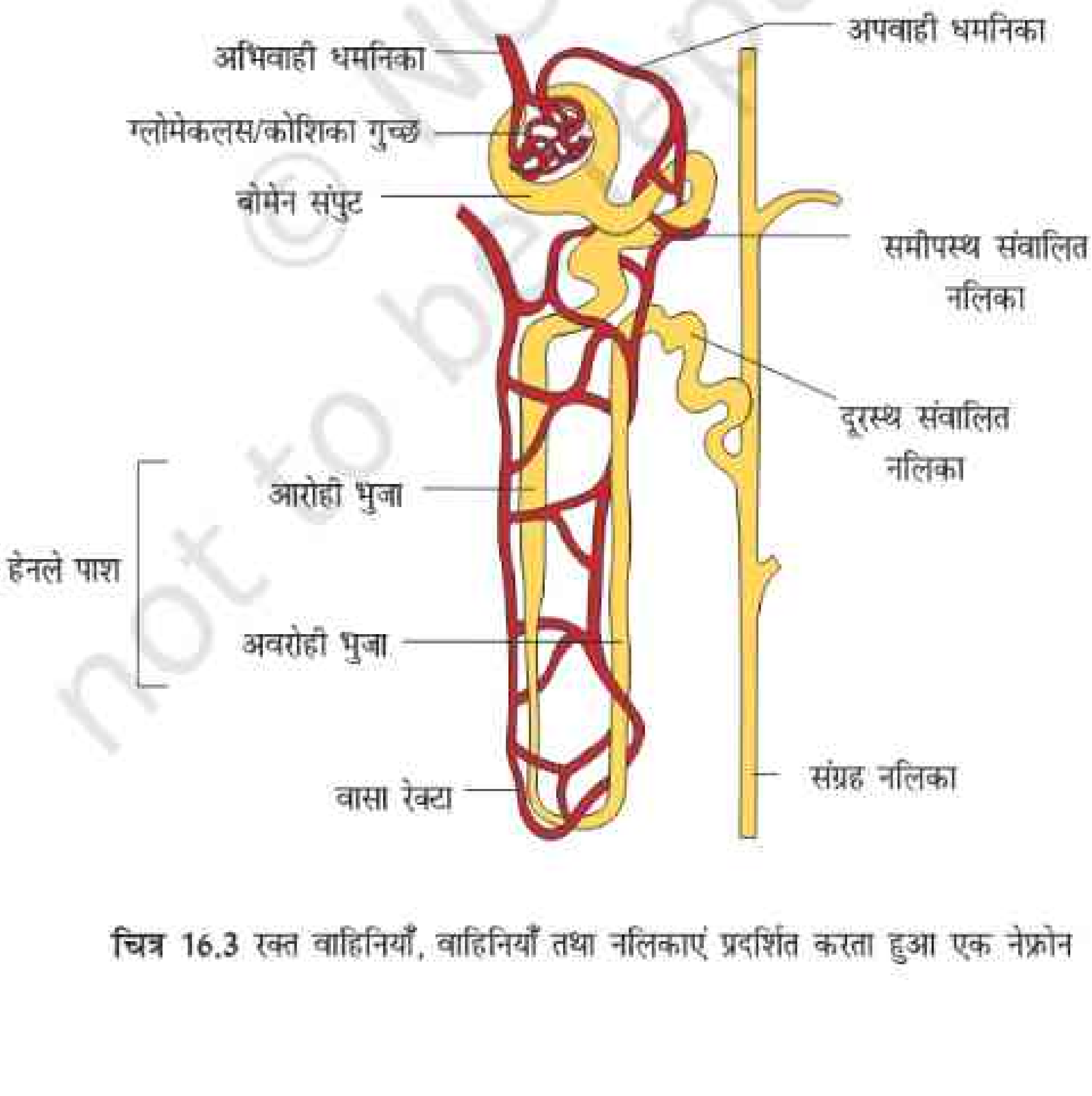

चित्र 16.3 रक्त वाहिनियाँ, वाहिनियाँ तथा नलिकाएं प्रदर्शित करता हुआ एक नेफ्रोन

© NCERT not to be republished

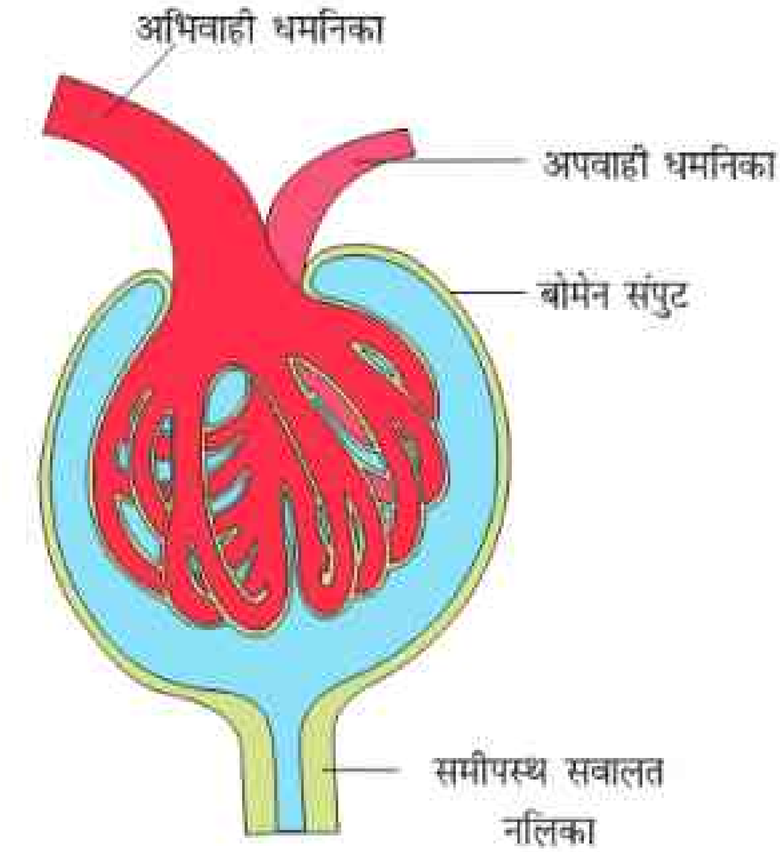

चित्र 16.4 बोमेन सम्पुट/मैलपीगी काय/वृक्क कार्पसल

वृक्क नलिका दोहरी झिल्ली युक्त प्यालेनुमा बोमेन संपुट से प्रारंभ होती है, जिसके भीतर गुच्छ होता है। गुच्छ और बोमेन संपुट मिलकर *मेल्पीगीकाय* अथवा *वृक्क कणिका (कार्पसल)* बनाते हैं (चित्र 16.4)। **बोमेन संपुट** से एक अति कुंडलित **समीपस्थ संवलित नलिका** (पीसीटी) प्रारंभ होती है, इसके बाद वृक्काणु में हेयर पिन के आकार का **हेनले-लूप** (Henle's loop) पाया जाता है, जिसमें आरोही व अवरोही भुजा होती है। आरोही भुजा से एक ओर अति कुंडलित नलिका, **दूरस्थ संवलित नलिका** (डीसीटी) प्रारंभ होती है।

अनेक वृक्काणुओं की दूरस्थ संवलित नलिकाएं एक सीधी संग्रह नलिका में खुलती हैं। अनेक संग्रह नलिकाएं मिलकर चषकों के बीच स्थित मध्यांश पिरामिड से गुजरती हुई वृक्कीय श्रोणि में खुलती हैं।

वृक्काणु की वृक्क कणिका, समीपस्थ संवलित नलिका, दूरस्थ संवलित नलिका आदि वृक्क के वल्कुट भाग में, जबकि हेनले-लूप मध्यांश में, स्थित होते हैं।

अधिकांश वृक्काणु के हेनले-लूप बहुत छोटे होते हैं और मध्यांश में बहुत कम धँसे रहते हैं ऐसे वृक्काणुओं को वल्कुटीय वृक्कक कहते हैं। कुछ वृक्काणुओं के हेनले-लूप बहुत लंबे होते हैं तथा मध्यांश में काफी गहराई तक धंसे रहते हैं। इन्हें *सान्निध्य मध्यांश वृक्काणु* (जक्सटा मेडुलरी नेफ्रोन) कहते हैं (चित्र 16.5)।

गुच्छ से निकलने वाली अपवाही धमनिका, वृक्कीय नलिका के चारों ओर सूक्ष्म केशिकाओं का जाल बनाती हैं, जिसे परिनालिका केशिका जाल कहते हैं। इस जाल से निकलने वाली एक एक सूक्ष्म वाहिका हेनले-लूप के समानांतार चलते हुए **'यू'** ('U') आकार की संरचना *वासा रेक्टा* बनाती है। वल्कुटीय वृक्काणु में वासा रेक्टा या तो अनुपस्थित या अत्यधिक ह्रासित होती है।

16.2 मूत्र निर्माण

मूत्र निर्माण में 3 मुख्य प्रक्रियाएं सम्मिलित हैं – गुच्छीय निस्यंदन, पुनःअवशोषण, स्रवण जो वृक्काणु के विभिन्न भागों में होता है।

मूत्र निर्माण के प्रथम चरण में केशिकागुच्छ द्वारा रक्त का निस्यंदन होता है जिसे **गुच्छ या गुच्छीय निस्यंदन** कहते हैं। वृक्कों द्वारा प्रति मिनट औसतन 1100-1200 मिली. रक्त का निस्यंदन किया जाता है जो कि हृदय द्वारा एक मिनट में निकाले गए रक्त के 1/5 वें भाग के बराबर होता है। गुच्छ की केशिकाओं का रक्त-दाब रुधिर का 3 परतों में से निस्यंदन करता है। ये तीन परते हैं गुच्छ की रक्त केशिका की आंतरिक उपकला, बोमेन संपुट की उपकला तथा इन दोनों पर्तों के बीच पाई जाने वाली आधार झिल्ली। बोमेन संपुट की उपकला कोशिकाएं *पदाणु (पोडोसाइट्स)* कहलाती हैं, जो विशेष प्रकार

से विन्यसित होती हैं, जिससे कुछ छोटे-छोटे अवकाश बीच में रह जाते हैं। इन्हें निस्यंदन खांच या खांच छिद्र (स्लिटपोर) कहते हैं। इन झिल्लियों से रुधिर इतनी अच्छी तरह छनता है कि जिससे रुधिर के प्लाज्मा की प्रोटीन को छोड़कर प्लाज्मा का शेषभाग छन कर संपुट की गुहा में इकट्ठा हो जाता है। इसलिए इसे **परा-निस्यंदन** (अल्ट्रा फिल्ट्रेशन) कहते हैं। वृक्कों द्वारा प्रति मिनट निस्यंदित की गई मात्रा **गुच्छीय निस्यंदन दर** (GFR) कहलाती है। एक स्वस्थ व्यक्ति में यह दर 125 मिली. प्रति मिनट अर्थात् 180 लीटर प्रति दिन है।

गुच्छ निस्यंदन की दर के नियमन के लिए वृक्कों द्वारा क्रिया विधि अपनाई जाती है। गुच्छीय आसन्न उपकरण द्वारा एक अति सूक्ष्म क्रियाविधि संपन्न की जाती है। यह विशेष संवेदी उपकरण अभिवाही तथा अपवाही धमनिकाओं के संपर्क स्थल पर दूरस्थ संवलित नलिका की केशिकाओं के रूपांतरण से बनता है। गुच्छ निस्यंदन दर में गिरावट इन आसन गुच्छ केशिकाओं को रेनिन के स्रवण के सक्रिय करती है जो वृक्कीय रुधिर का प्रवाह बढ़ाकर गुच्छ निस्यंदन दर को पुन: सामान्य कर देती है।

प्रतिदिन बनने वाले निस्यंद के आयतन (180 लीटर प्रति दिन) की उत्सर्जित मूत्र (1.5 लीटर) से तुलना की जाए तो यह समझा जा सकता है कि 99 प्रतिशत निस्यंद को वृक्क नलिकाओं द्वारा पुन: अवशोषित किया जाता है जिसे **पुन:अवशोषण** कहते हैं। यह कार्य वृक्क नलिका की उपकला कोशिकाएं अलग-अलग खंडों में सक्रिय अथवा निष्क्रिय क्रियाविधि द्वारा करती हैं। उदाहरणार्थ निस्यंद पदार्थ जैसे ग्लूकोज, एमीनो अम्ल, Na^+ इत्यादि सक्रिय रूप से परिवहन से पुनरावशोषित कर लिए जाते हैं; जबकि नाइट्रोजनी निष्क्रिय रूप से अवशोषित होते हैं। वृक्काणु के प्रारंभिक भाग में जल का पुनरावशोषण निष्क्रिय क्रिया द्वारा होता है (चित्र 16.5)। मूत्र निर्माण के दौरान नलिकाकार कोशिकाएं निस्यंद में H^+, K^+ और अमोनिया जैसे पदार्थों को स्रवित करती हैं। नलिकाकार स्रवण भी मूत्र निर्माण का एक मुख्य चरण है; क्योंकि यह शारीरिक तरल आयनी व अम्ल-क्षार संतुलन को बनाए रखता है।

16.3 वृक्क नलिका के विभिन्न भागों के कार्य

समीपस्थ संवलित नलिका : यह नलिका सरल घनाकार ब्रुश बार्डर उपकला से बनी होती है जो पुनरावशोषण के लिए सतह क्षेत्र को बढ़ाती है। लगभग सभी आवश्यक पोषक तत्व, 70-80 प्रतिशत वैद्युत-अपघट्य और जल का पुन: अवशोषण इसी भाग द्वारा होता है। समीपस्थ संवलित नलिका शारीरिक तरलों के पीएच तथा आयनी संतुलन को इससे बनाए रखने के लिए H^+ और अमोनिया आयनों का निस्यंद में स्रवण और HCO_3^- का पुनरावशोषण करती हैं।

हेनले-लूप : आरोही भुजा में न्यूनतम पुनरावशोषण होता है। यह भाग मध्यांश में उच्च अंतराकाशी तरल की परासणता के नियमन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। हेनले-लूप की अवरोही भुजा जल के लिए अपारगम्य होती है, परंतु वैद्युत अपघट्य के लिए सक्रियता से या धीरे-धीरे पारगम्य होती है। यह नीचे की ओर जाते हुए निस्यंद को सांद्र करती है। आरोही भुजा जल के लिए अपारगम्य होती है; लेकिन वैद्युत अपघट्य का अवशोषण सक्रिय या निष्क्रिय रूप से करती है। जैसे-जैसे सांद्र निस्यंद ऊपर की ओर जाता है, वैसे-वैसे वैद्युत अपघट्य के मध्यांश तरल में जाने से निस्यंद तनु (dilute) होता जाता है।

© NCERT not to be republished

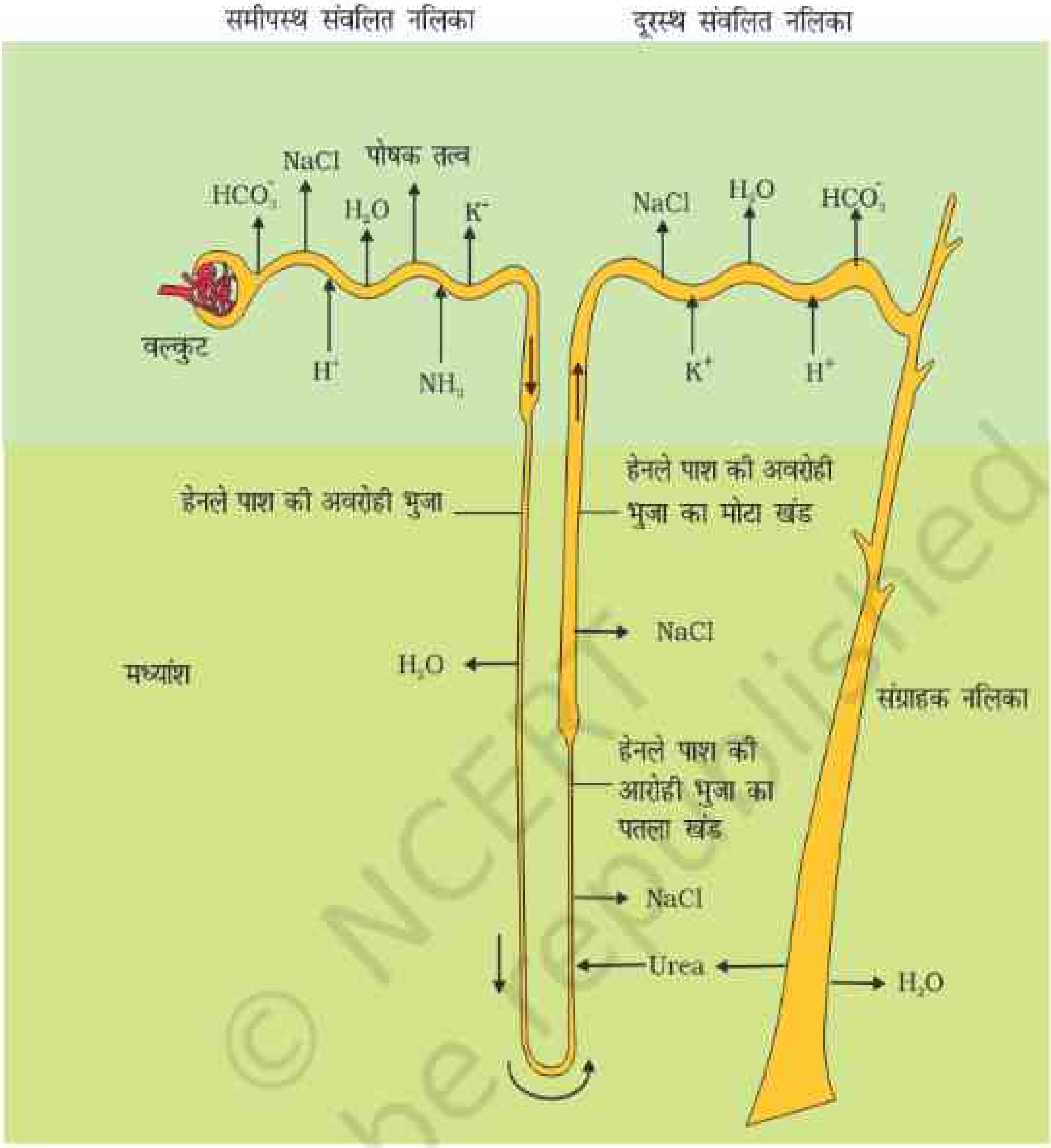

चित्र 16.5 नेफ्रोन के विभिन्न भागों द्वारा प्रमुख पदार्थों का पुनरावशोषण एवं स्रवण (गमन की दिशा को प्रदर्शित करता है)

दूरस्थ संवलित नलिका (DCT) : विशिष्ट परिस्थितियों में Na^+ और जल का कुछ पुनरावशोषण इस भाग में होता है। दूरस्थ संवलित नलिका रक्त में सोडियम-पोटैसियम का संतुलन तथा pH बनाए रखने के लिए बाइकार्बोनेटस का पुनरावशोषण एवं H^+, K^+ और अमोनिया का चयनात्मक स्रवण करती है।

संग्रह नलिका : यह लंबी नलिका वृक्क के वल्कुट से मध्यांश के आंतरिक भाग तक फैली रहती है। मूत्र को आवश्यकतानुसार सांद्र करने के लिए जल का बड़ा हिस्सा इस भाग में अवशोषित किया जाता है। यह भाग मध्यांश की अंतरकाशी की परासरणता को बनाए रखने के लिए यूरिया के कुछ भाग को वृक्क मध्यांश तक ले जाता है। यह pH के नियमन तथा H^+ और K^+ आयनों के चयनात्मक स्रवण द्वारा रक्त में आयनों का संतुलन बनाए रखने में भी भूमिका निभाता है (चित्र 16.5)।

© NCERT not to be republished

16.4 निस्यंद (छनित) को सांद्रण करने की क्रियाविधि

स्तनधारी सांद्रित मूत्र का उत्पादन करते हैं। इस कार्य में हेनले-लूप और वासा रेक्टा महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। हेनले-लूप की दोनों भुजाओं में निस्यंद का विपरीत दिशाओं में प्रवाह होता है, जिससे प्रतिधारा उत्पन्न होती है। वासा रेक्टा की दोनों भुजाओं में रक्त का बहाव भी प्रतिधारा प्रतिरूप (पैटर्न) में होता है। हेनले-लूप व वासा रेक्टा के बीच की नजदीकी तथा उनमें प्रतिधारा मध्यांशी अंतराकाश (मेडुलरी इंटरटिशियम) के परासरण दाब को विशेष प्रकार से नियमित करती है। परासरण दाब मध्यांश के बाहरी भाग से भीतरी भाग की ओर लगातार बढ़ता जाता है, जैसे कि वल्कुट की ओर 300 mOsm/लीटर से आंतरिक मध्यांश में लगभग 1200 mOsm / लीटर। यह प्रवणता सोडियम क्लोराइड तथा यूरिया के कारण बनती है। NaCl का परिवहन हेनले-लूप की

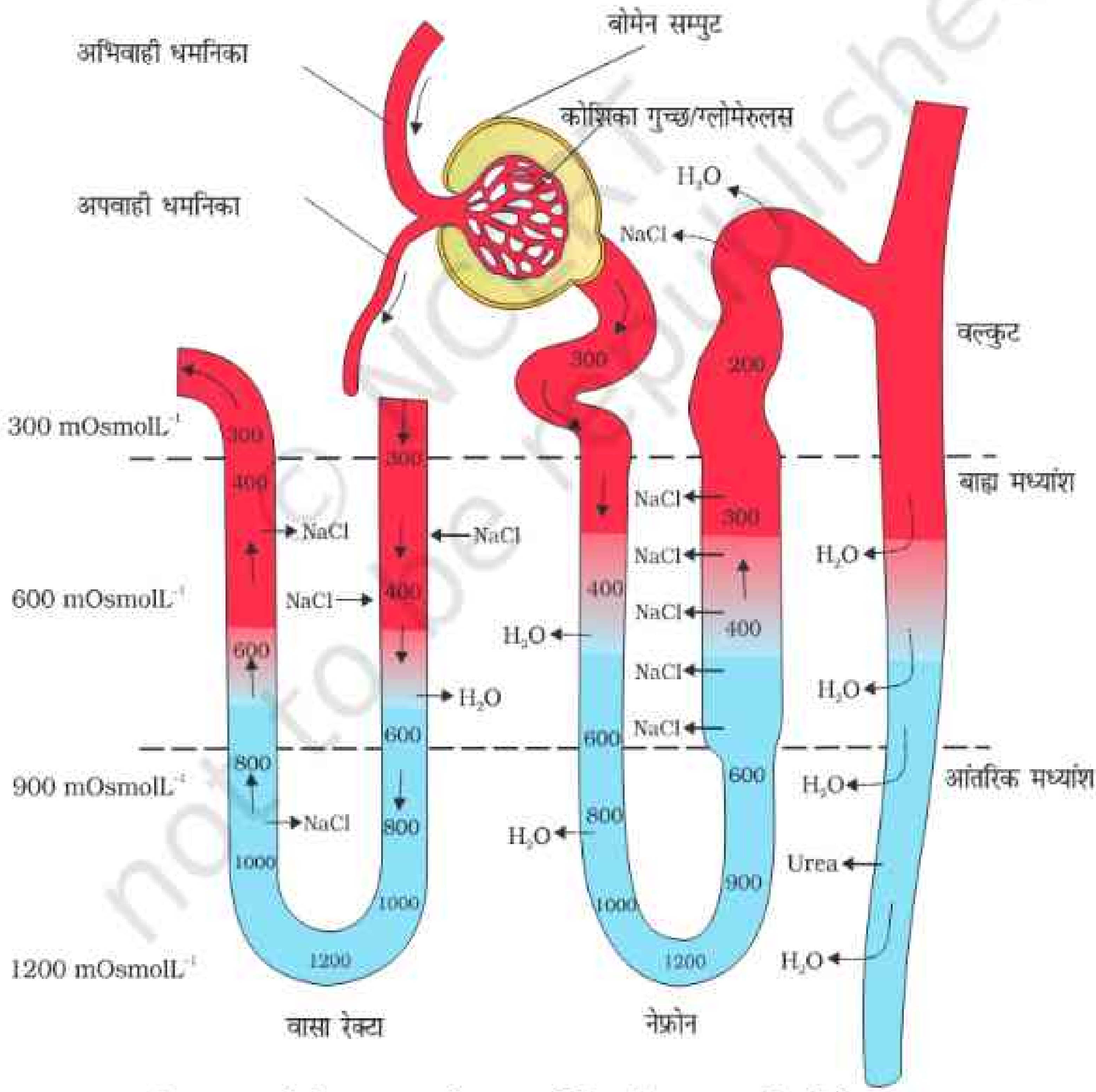

चित्र 16.6 नेफ्रोन तथा वासा रेक्टा द्वारा निर्मित प्रतिधारा प्रवाह क्रियाविधि

© NCERT not to be republished

आरोही भुजा द्वारा होता है। जिसे हेनले-लूप की अवरोही भुजा के साथ विनमित किया है। सोडियम क्लोराइड, अंतराकाश को वासा रेक्टा की आरोही भुजा द्वारा लौटा दिया जाता है। इसी प्रकार यूरिया की कुछ मात्रा हेनले-लूप के पतले आरोही भाग में विसरण द्वारा प्रविष्ट होती है जो संग्रह नलिका द्वारा अंतराकाशी को पुन: लौटा दी जाती है। ऊपर वर्णित पदार्थों का परिवहन, हेनले-लूप तथा वासा रेक्टा की विशेष व्यवस्था द्वारा सुगम बनाया जाता है जिसे **प्रतिधारा क्रियाविधि** कहते हैं। यह क्रियाविधि मध्यांश के अंतराकाशी की प्रवणता को बनाए रखती है। इस प्रकार की अंतराकाशीय प्रवणता संग्रह नलिका द्वारा जल के सहज अवशोषण में योगदान करती है और निस्यंद का सांद्रण करती है (चित्र 16.6)। हमारे वृक्क प्रारंभिक निस्यंद की अपेक्षा लगभग चार गुना अधिक सांद्र मूत्र उत्सर्जित करते हैं। यह निश्चित ही जल के ह्रास को रोकने की मुख्य क्रियाविधि है।

16.5 वृक्क क्रियाओं का नियमन

वृक्कों की क्रियाविधि का नियंत्रण और नियमन हाइपोथैलेमस के हार्मोन की पुनर्भरण क्रियाविधि, (सान्निध्य गुच्छ उपकरण), (जेजीए) और कुछ सीमा तक हृदय द्वारा होता है।

शरीर में उपस्थित परासरण ग्राहियाँ रक्त आयतन/शरीर तरल आयतन और आयनी सांद्रण में बदलाव द्वारा सक्रिय होती हैं। शरीर से मूत्र द्वारा जल का अत्यधिक ह्रास (मूत्रलता/डाइयूरेसिस) इन ग्राहियों को सक्रिय करता है, जिससे हाइपोथैलेमस प्रतिमूत्रल हार्मोन (एंटीडाइयूरेटि हार्मोन) (एडीएच) और न्यूरोहाइपोफाइसिस को वैसोप्रेसिन के स्राव हेतु प्रेरित करता है। एडीएच नलिका के अंतिम भाग में जल के पुनरावशोषण को सुगम बनाता है और मूत्रलता को रोकता है। शरीर तरल के आयतन में वृद्धि परासण ग्रहियों को निष्क्रिय कर देती है और पुनर्भरण को पूरा करने के लिए एडीएच के स्रवण का निरोध करती है। एडीएच वृक्क के कार्यों को रक्त वाहिनियों पर सकुचनी प्रभावों द्वारा भी प्रभावित करता है। इससे रक्त दाब बढ़ जाता है। रक्तदाब बढ़ जाने से गुच्छ प्रवाह बढ़ जाता है और इससे जीएफआर बढ़ जाता है।

जेजीए की जटिल नियमनकारी भूमिका है। गुच्छीय रक्त प्रवाह/गुच्छीय रक्त दाब/जीएफआर में गिरावट से जेजी कोशिकाएं सक्रिय होकर **रेनिन** को मुक्त करती है। रेनिन रक्त में उपस्थित ऐंजिओटेंसिनोजन को एंजियोटेंसिन-I और बाद में एंजियोटेंसिन-द्वितीय में बदल देती है। एंजियोटेंसिन द्वितीय एक प्रभावकारी वाहिका संकीर्णक (वेसोकेंसट्रिक्टर) है जो गुच्छीय रुधिर दाब तथा जीएफआर को बढ़ा देता है। एंजोयोटेंसिन द्वितीय अधिवृक्क वल्कुट को एल्डोस्टीरोन हार्मोन स्रवण के लिए प्रेरित करता है। एल्डोस्टीरोन के कारण नलिका के दूरस्थ भाग में Na^+ तथा जल का पुनरावशोषण होता है। इससे भी रक्त दाब तथा जीएफआर में वृद्दि होती है। यह जटिल क्रियाविधि **रेनिन एंजियोटेंसिन** क्रियाविधि कहलाती है।

हृदय के अलिंदों में अधिक रुधिर के बहाव से **अलिंदीय नेट्रियेरेटिक कारक** (एएनएफ) स्रवित होता है। एएनएफ से वाहिकाविस्फारण (रक्त वाहिकाओं का विस्फारण)

not to be republished © NCERT

होता है जिससे रक्त दाब कम हो जाता है। इस प्रकार से एएनएफ क्रियाविधि रेनिन-एंजियोटेंसिन क्रियाविधि पर नियंत्रक का काम करता है।

16.6 मूत्रण

वृक्क द्वारा निर्मित मूत्र अंत में मूत्राशय में जाता है और केंद्रीय तंत्रिका तंत्र द्वारा ऐच्छिक संकेत दिए जाने तक संग्रहित रहता है। मूत्राशय में मूत्र भर जाने पर उसके फैलने के फलस्वरूप यह संकेत उत्पन्न होता है। मूत्राशय भित्ति से इन आवेगों को केंद्रीय तंत्रिका तंत्र में भेजा जाता है। केंद्रीय तंत्रिका तंत्र से मूत्राशय की चिकनी पेशियों के संकुचन तथा मूत्राशयी-अवरोधिनी के शिथिलन हेतु एक प्रेरक संदेश जाता है, जिससे मूत्र का उत्सर्जन होता है। मूत्र उत्सर्जन की क्रिया मूत्रण कहलाती है और इसे संपन्न करने वाली तंत्रिका क्रियाविधि मूत्रण-प्रतिवर्त कहलाती है।

एक वयस्क मनुष्य प्रतिदिन औसतन 1-1.5 लीटर मूत्र उत्सर्जित करता है। मूत्र एक विशेष गंध युक्त जलीव तरल है, जो रंग में हल्का पीला तथा थोड़ा अम्लीय (pH-6) होता है (pH-6)। औसतन प्रतिदिन 25-30 ग्राम यूरिया का उत्सर्जन होता है। विभिन्न अवस्थाएं मूत्र की विशेषताओं को प्रभावित करती हैं। मूत्र का विश्लेषण वृक्कों के कई उपापचयी विकारों और उनके ठीक से कार्य न करने को कुसंक्रिया जैसे रोग निदान में मदद करता है। उदाहरण के लिए मूत्र में ग्लूकोस की उपस्थिति (ग्लाइकोसूरिया) तथा कीटोन काय की उपस्थिति (कीटोनयूरिया) मधुमेह (डाइबिटीज मेलीटस) के लक्षण है।

16.7 उत्सर्जन में अन्य अंगों की भूमिका

वृक्कों के अलावा फुप्फुस यकृत और त्वचा भी उत्सर्जी अपशिष्टों को बाहर निकालने में मदद करते हैं।

हमारे फेफड़े प्रतिदिन भारी मात्रा में CO_2 (लगभग 200ml/मिनट) और जल की पर्याप्त मात्रा का निष्कासन करते हैं। हमारे शरीर की सबसे बड़ी ग्रंथि यकृत 'पित्त' का स्राव करती है जिसमें बिलिरूबिन, बिलीविरडिन, कॉलेस्ट्रॉल, निम्नीकृत स्टीरॉयड हार्मोन, विटामिन तथा औषध आदि होते हैं। इन अधिकांश पदार्थों को अंततः मल के साथ बाहर निकाल दिया जाता है।

त्वचा में उपस्थित स्वेद ग्रंथियाँ तथा तैल-ग्रंथियाँ भी स्राव द्वारा कुछ पदार्थों का निष्कासन करती हैं। स्वेद ग्रंथि द्वारा निकलने वाला पसीना एक जलीय द्रव है, जिसमें नमक, कुछ मात्रा में यूरिया, लैक्टिक अम्ल इत्यादि होते हैं। हालांकि पसीने का मुख्य कार्य वाष्पीकरण द्वारा शरीर सतह को ठंडा रखना है; लेकिन यह ऊपर बताए गए कुछ पदार्थों के उत्सर्जन में भी सहायता करता है।
तैल-ग्रंथियाँ सीबम द्वारा कुछ स्टेरोल, हाइड्रोकार्बन एवं मोम जैसे पदार्थों का निष्कासन करती हैं। ये स्राव त्वचा को सुरक्षात्मक तैलीय कवच प्रदान करते हैं। क्या आप जानते हैं कि कुछ नाइट्रोजनी अपशिष्टों का निष्कासन लार द्वारा भी होता है?

© NCERT not to be republished

16.8 वृक्क-विकृतियाँ

वृक्कों की कुसंक्रिया के फलस्वरूप रक्त में यूरिया एकत्रित हो जाता है। जिसे **यूरिमिया** कहते हैं जो कि अत्यंत हानिकारक है। यह वृक्क-पात के लिए मुख्यरूप से उत्तरदायी है। इसके मरीजों में यूरिया का निष्कासन हीमोडायलिसिस (**रक्त अपोहन**) द्वारा होता है, रक्त अपोहन (हीमोडायलिसिस) के प्रक्रम में रोगी की धमनी से रक्त निकालकर उसमें हिपेरिन जैसा कोई थक्का रोधी मिलाकर अपोहनकारी इकाई में भेजा जाता है। जिसे कृत्रिम वृक्क कहते हैं। इस इकाई में कुंडलित सेलोफेन नली होती है और यह ऐस द्रव से घिरी रहती है, जिसका संगठन नाइट्रोजनी अपशिष्टों को छोड़कर प्लाज्मा के समान होता है। छिद्रयुक्त सेलोफेन झिल्ली से अपोहनी द्रव में अणुओं का आवागमन सांद्र प्रवणता के अनुसार होता है। अपोहनी द्रव में नाइट्रोजनी अपशिष्ट अनुपस्थित होते हैं, अतः ये पदार्थ बाहर की ओर गमन करते हैं और रक्त को शुद्ध करते हैं। शुद्ध रक्त में हीपेरिन विरोधी डालकर, उसे रोगी की शिराओं द्वारा पुनः शरीर में भेज दिया जाता है। यह विधि संसार में यूरेमिक व्याधि से हजारों पीड़ितों के लिए एक वरदान है।

वृक्क की क्रियाहीनता को दूर करने का अंतिम उपाय वृक्क प्रत्यारोपण है। प्रत्यारोपण में मुख्यतया निकट संबंधी दाता के क्रियाशील वृक्क का उपयोग किया जाता है, जिससे प्राप्तकर्ता का प्रतिरक्षा तंत्र उसे अस्वीकार नहीं करे। आधुनिक क्लीनिकल विधियाँ इस प्रकार की जटिल तकनीक सफलता की दर को बढ़ाती है।

रीनल केलकलाई: वृक्क में बनी पथरी या अघुलनशील क्रिस्टलित लवण के पिंड (जैसे ऑक्सलेट आदि)।

ग्लोमेलोनेफ्राइटिस (गुच्छ शोथ): वृक्क के गुच्छ-शोथ की प्रदाहकता।

सारांश

शरीर में विभिन्न क्रियाओं द्वारा कई नाइट्रोजनी पदार्थ, आयन, CO_2 जल आदि इकट्ठे हो जाते हैं, जिसमें से अधिकांश शरीर को समस्थापन में रखने के लिए विभिन्न विधियों द्वारा निष्कासित किए जाते हैं।

भिन्न-भिन्न प्राणियों में नाइट्रोजनी अपशिष्टों की प्रकृति, उनका निर्माण और उत्सर्जन विभिन्न प्रकार से होता है जो मुख्यत जल की उपलब्धता पर निर्भर करता है। उत्सर्जित किए जाने वाले मुख्य नाइट्रोजनी अपशिष्ट - अमोनिया, यूरिया, यूरिक अम्ल हैं।

आदिवृक्कको (प्रोटोनेफ्रीडिया), वृक्कक, मैलपीगी नलिकाएं, हरित ग्रंथियाँ और वृक्क प्राणियों के मुख्य उत्सर्जी अंग हैं। ये न केवल नाइट्रोजनी अपशिष्टों को शरीर से बाहर निकालते हैं; बल्कि शरीर द्रवों में आयनी और अम्ल क्षार संतुलन भी बनाए रखते हैं।

मानव के उत्सर्जी तंत्र में एक जोड़ी वृक्क, एक जोड़ी मूत्रवाहिनी, एक मूत्राशय और मूत्र मार्ग सम्मिलित हैं। प्रत्येक वृक्क में एक मिलियन नलिकाकार संरचनाएं वृक्काणु होते हैं। वृक्काणु वृक्क की क्रियात्मक इकाई है और उसके दो भाग होते हैं - गुच्छ और वृक्क नलिका। गुच्छ अभिवाही धमनिकायों से बना केशिकाओं का गुच्छ है जो कि वृक्क धमनी को सूक्ष्म शाखाएं होती है। वृक्क नलिका का प्रारंभ दोहरी भित्ति युक्त बोमन संपुट से होता है जो आगे समीपस्थ संवलित नलिका (पीसीटी) हेनले-लूप और दूरस्थ संचलित (डीसीटी)

नलिका में विभेदित होती है। कई वृक्काणु की दूरस्थ संवलित नलिकाएं एकत्रित होकर संग्रह नलिका बनाती हैं जो अंत में मध्यांश पिरामिड में से होकर वृक्कीय श्रोणि में खुलती हैं। बोमन-संपुट एवं गुच्छ मिलकर मेलपीगी काय या वृक्क कणिका (कापर्सल) बनाते हैं।

मूत्र निर्माण में 3 मुख्य प्रक्रियाएं होती है – निस्यंदन, पुनरावशोषण और स्रवण।

निस्यंदन, गुच्छ द्वारा केशिकाओं के रक्त दाब का उपयोग कर संपादित की जाने वाली अचयनात्मक प्रक्रिया है। गुच्छ द्वारा बोमेन-संपुट में प्रति मिनट 125 मिली. निस्यंद बनाने के लिए प्रति मिनट 1200 मिली. रक्त का निस्यंदन होता है (जीएफआर)। वृक्काणु के विशेष भाग जेजीए की जीएफआर के नियमन में महत्वपूर्ण भूमिका है। निस्यंद के 99 प्रतिशत भाग का वृक्काणु के विभिन्न भागों द्वारा पुनरावशोषण किया जाता है। समीपस्थ संवलित नलिका पीसीटी पुनरावशोषण और चयनात्मक स्रवण का मुख्य स्थान है। वृक्क मध्यांश अंतराकाशी में हेनले-लूप परासरण प्रवणता (300 mOsm/L से 1200 mOsm/लीटर) को नियमित करने में सहायता करता है। दूरस्थ संवलित नलिका (डीसीटी) और संग्रह नलिका जल और विद्युत अपघट्यों का पुनरावशोषण करती हैं, जो परासरण नियमन में सहायक है। शरीर-तरल के आयनी साम्य और उसके pH को बनाए रखने के लिए नलिकाओं द्वारा H^+, K^+ और NH_3 निस्यंद स्रवित होते हैं। अमोनिया का नलिकाओं द्वारा स्राव भी होता है।

प्रतिधारा क्रियाविधि हेनले-लूप की दो भुजाओं और वासा-रेक्टा के बीच कार्य करती है। निस्यंद जैसे-जैसे अवरोही भुजा में नीचे उतरता है, वैसे-वैसे सांद्र होता जाता है, लेकिन आरोही भुजा में यह पुनः तनु हो जाता है। इस व्यवस्था के द्वारा वैद्युत अपघट्य और कुछ यूरिया, अंतराकाशी स्थल में बचे रह जाते हैं। डी.सी.टी. और संग्रह नलिका निस्यंद को 4 गुना अधिक सांद्र कर देते हैं - अर्थात् 300 mOsm/लीटर से 1200 mOsm/लीटर तक यह जल संरक्षण की उत्तम क्रियाविधि है। मूत्राशय में मूत्र का संग्रह केंद्रीय तंत्रिका तंत्र द्वारा ऐच्छिक संकेत प्राप्त होने तक किया जाता है। संकेत प्राप्त होने पर मूत्र मार्ग द्वारा इसका निष्कासन मूत्रण कहलाता है। त्वचा, फेफड़े और यकृत भी उत्सर्जन में सहयोग करते हैं।

अभ्यास

1. गुच्छीय निस्यंद दर (GFR) को परिभाषित कीजिए।
2. गुच्छीय निस्यंद दर (GFR) की स्वनियमन क्रियाविधि को समझाइए।
3. निम्नलिखित कथनों को सही अथवा गलत में इंगित कीजिए।
   (अ) मूत्रण प्रतिवर्ती क्रिया द्वारा होता है।
   (ब) एडीएच मूत्र को अल्पपरासरणी बनाते हुए जल के निष्कासन में सहायक होता है।
   (स) बोमेन-संपुट में रक्तप्लाज्मा से प्रोटीन रहित तरल निस्यंदित होता है।
   (द) हेनले-लूप मूत्र के सांद्रण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।
   (य) समीपस्थ संवलित नलिका (PCT) में ग्लूकोस सक्रिय रूप से पुनः अवशोषित होता है।
4. प्रतिधारा क्रियाविधि का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
5. उत्सर्जन में यकृत, फुप्फुस तथा त्वचा का महत्व बताइए।
6. मूत्रण की व्याख्या कीजिए।

7. स्तंभ I के बिंदुओं का खंड स्तंभ II से मिलान करें।

स्तंभ I	स्तंभ II
(i) अमोनियोत्सर्जन	(अ) पक्षी
(ii) बोमेन-संपुट	(ब) जल का पुन: अवशोषण
(iii) मूत्रण	(स) अस्थिल मछलियाँ
(iv) यूरिकाअम्ल उत्सर्जन	(द) मूत्राशय
(v) एडीएच	(य) वृक्क नलिका

8. परासरण नियमन का अर्थ बताइए।

9. स्थलीय प्राणी सामान्यतया यूरिया उत्सर्जी या यूरिक अम्ल उत्सर्जी होते हैं तथा अमोनिया उत्सर्जी नहीं होते हैं, क्यों?

10. वृक्क के कार्य में जक्सटागुच्छउपकरण (JGA) का क्या महत्व है?

11. नाम का उल्लेख कीजिए:
   (अ) एक कशेरुकी जिसमें ज्वाला कोशिकाओं द्वारा उत्सर्जन होता है।
   (ब) मनुष्य के वृक्क के वल्कुट के भाग जो मध्यांश के पिरामिड के बीच धँसे रहते हैं।
   (स) हेनले-लूप के समानांतर उपस्थित केशिका का लूप।

12. रिक्त स्थानों की पूर्ति करें :-
   (अ) हेनले-लूप की आरोही भुजा जल के लिए _____ जबकि अवरोही भुजा इसके लिए _____ है।
   (ब) वृक्क नलिका के दूरस्थ भाग द्वारा जल का पुनरावशोषण _______ हार्मोन द्वारा होता है।
   (स) अपोहन द्रव में _______ पदार्थ के अलावा रक्त प्लाज्मा के अन्य सभी पदार्थ उपस्थित होते हैं।
   (द) एक स्वस्थ व्यस्क मनुष्य द्वारा औसतन _______ ग्राम यूरिया का प्रतिदिन उत्सर्जन होता है।

© NCERT not to be republished

अध्याय 17

गमन एवं संचलन

17.1 गति के प्रकार
17.2 पेशी
17.3 कंकाल तंत्र
17.4 संधियाँ या जोड़
17.5 पेशीय और कंकाल तंत्र के विकार

संचलन जीवों की एक महत्वपूर्ण विशेषता है। जंतुओं एवं पादपों में अनेकों तरह के संचलन होते हैं। अमीबा सदृश एक कोशिक जीव में जीवद्रव्य का प्रवाही संचलन इसका एक साधारण रूप है। कई जीव पक्ष्माभ, कशाभ और स्पर्शक द्वारा संचलन दर्शाते हैं। मनुष्य अपने पाद, जबड़े, पलक, जिह्वा आदि को गतिशील कर सकता है। कुछ संचलनों में स्थान या अवस्थिति परिवर्तन होता है। ऐसे ऐच्छिक संचलनों को **गमन** कहते हैं। टहलना, दौड़ना, चढ़ना, उड़ना, तैरना आदि सभी गमन या संचलन के ही कुछ रूप हैं। चलन संरचनाओं का अन्य प्रकार की गति में संलग्न संरचनाओं से भिन्न होना आवश्यक नहीं है। उदाहरण के लिए, *पैरामिशियम* में पक्ष्माभ भोजन की कोशिका-ग्रसनी में प्रवाह और चलन दोनों कार्य होते हैं। *हाइड्रा* अपने स्पर्शक शिकार पकड़ने और चलन दोनों के लिए प्रयोग कर सकता है। हम अपने पाद शरीर की मुद्रा बदलने के लिए प्रयोग में लाते हैं और चलन के लिए भी। उपर्युक्त प्रेक्षणों से संकेत मिलता है कि गति और चलन का पृथक् रूप से अध्ययन नहीं किया जा सकता है। दोनों के संबंध को इस उक्ति में समाहित किया जा सकता है कि सभी चलन गति होते हैं; लेकिन सभी गति चलन नहीं हैं। जंतुओं के चलन के तरीके परिस्थिति की माँग और आवास के अनुरूप बदलते हैं। फिर भी चलन की क्रिया प्रायः भोजन, आश्रय, साथी, अनुकूल प्रजनन स्थल, अनुकूल प्राकृतिक स्थिति की तलाश या शत्रुओं/भक्षियों से पलायन के लिए की जाती है।

17.1 गति के प्रकार

मानव शरीर की कोशिकाएं मुख्यतः तीन प्रकार की गति दर्शाती हैं, यथा-अमीबीय, पक्ष्माभी और पेशीय। आपने अध्याय 8 में पढ़ा है कि पक्ष्माभ एवं कशामिका कोशिका झिल्ली की अपवृद्धि है। **कशामिका गति** शुक्राणुओं को तैरने में सहायता करती है, स्पंज के नाल तंत्र में जल संचारण को बनाए रखती है तथा यूग्लीना जैसे प्रोटोजोआ में चलन का कार्य करती है।

Reprint 2025-26

हमारे शरीर में कुछ विशिष्ट कोशिकाएं, जैसे – महाभक्षकाणु (macrophages) और श्वेताणु (leucocytes) रुधिर में अमीबीय गति प्रदर्शित करती हैं। यह क्रिया जीवद्रव्य की प्रवाही गति द्वारा कूकूट पाद बनाकर की जाती है (अमीबा सदृश)। कोशिका कंकाल तंत्र जैसे – सूक्ष्मतंतु भी अमीबीय गति में सहयोगी होते हैं।

हमारे अधिकांश नलिकाकार अंगों में, जो पक्ष्माभ उपभित्ति से आस्तारित होते हैं, पक्ष्माभ गति होती है। श्वास नली में पक्ष्माभों की समन्वित गति से वायुमंडलीय वायु के साथ प्रवेश करने वाले धूल कणों एवं बाह्य पदार्थों को हटाने में मदद मिलती है। मादा प्रजनन मार्ग में डिंब का परिवहन पक्ष्माभ गति की सहायता से ही होता है।

हमारे पादों, जबड़ों, जिह्वा, आदि की गति के लिए पेशीय गति आवश्यक है। पेशियों के संकुचन के गुण का प्रभावी उपयोग मनुष्य और अधिकांश बहुकोशिकीय जीवों के चलन और अन्य प्रकार की गतियों में होता है। चलन के लिए पेशीय, कंकाल और तंत्रिका तंत्र की पूर्ण समन्वित क्रिया की आवश्यकता होती है। इस अध्याय में आप पेशियों के प्रकार, उनकी संरचना, उनके संकुचन की क्रियाविधि और कंकाल तंत्र के महत्वपूर्ण पहलू के बारे में जानेंगे।

17.2 पेशी

पेशी एक विशेष प्रकार का ऊतक है जिसकी उत्पत्ति अध्यजनस्तर से होती है। एक वयस्क मनुष्य के शरीर के भार का 40-50 प्रतिशत हिस्सा पेशियों का होता है। इनके कई विशेष गुण होते हैं, जैसे- उत्तेजनशीलता, संकुचनशीलता, प्रसार्य एंव प्रत्यास्थता। पेशियों को भिन्न-भिन्न आधारों पर वर्गीकृत किया गया है, जैसे-स्थापन, रंग-रूप और उनकी क्रिया की नियमन पद्धति। स्थापन के आधार पर, तीन प्रकार की पेशियाँ पाई जाती हैं – (i) कंकाल (ii) अंतरंग और (iii) हृद।

कंकाल पेशियाँ शारीरिक कंकाल अवयवों के निकट संपर्क में होती हैं। सूक्ष्मदर्शी द्वारा देखने पर इनमें धारियाँ दिखती हैं, अतः इन्हें रेखित पेशी कहते हैं। चूँकि इनकी क्रियाओं का तंत्रिका तंत्र द्वारा ऐच्छिक नियंत्रण होता है, अतः इन्हें **ऐच्छिक पेशी** भी कहते हैं। ये मुख्य रूप से चलन क्रिया और शारीरिक मुद्रा बदलने में सहायक होती हैं।

अंतरंग पेशियाँ शरीर के खोखले अंतरंग अगों; जैसे- आहार नाल, जनन मार्ग आदि की भीतरी भित्ति में स्थित होती हैं। ये अरेखित और चिकनी दिखती हैं। अतः इन्हें **चिकनी पेशियाँ (अरेखित पेशी)** कहते हैं। इनकी क्रिया तंत्रिका तंत्र के ऐच्छिक नियंत्रण में नहीं होती, इसलिए ये अनैच्छिक पेशियाँ कही जाती हैं। ये पाचन मार्ग द्वारा भोजन और जनन मार्ग द्वारा युग्मक (gamete) के अभिगमन (परिवहन) में सहायता करती हैं।

जैसा कि नाम से विदित है, **हृद पेशियाँ** हृदय की पेशियाँ हैं। कई हृद पेशी कोशिकाएं हृद पेशी के गठन के लिए शाश्वत रचना में एकत्रित होती हैं। रंग रूप के आधार पर, हृद पेशियाँ रेखित होती हैं। ये अनैच्छिक स्वभाव की होती हैं; क्योंकि तंत्रिका तंत्र इनकी क्रियाओं को सीधे नियंत्रित नहीं करता।

कंकाल पेशी की संरचना और संकुचन क्रियाविधि को समझने के लिए हम इसका विस्तार से परीक्षण करेंगे। हमारे शरीर में, प्रत्येक संगठित कंकाल पेशी कई **पेशी बंडलों**

या **पूलिकाओं** (fascicles) की बनी होती है, जो संयुक्त रूप से कोलैजनी संयोजी ऊतक स्तर से घिरे रहती हैं जिसे **संपट्ट** (fascia) कहते हैं। प्रत्येक पेशी बंडल में कई पेशी रेशे होते हैं (चित्र 17.1)। प्रत्येक पेशी रेशा प्लाज्मा झिल्ली से आस्तारित होता है

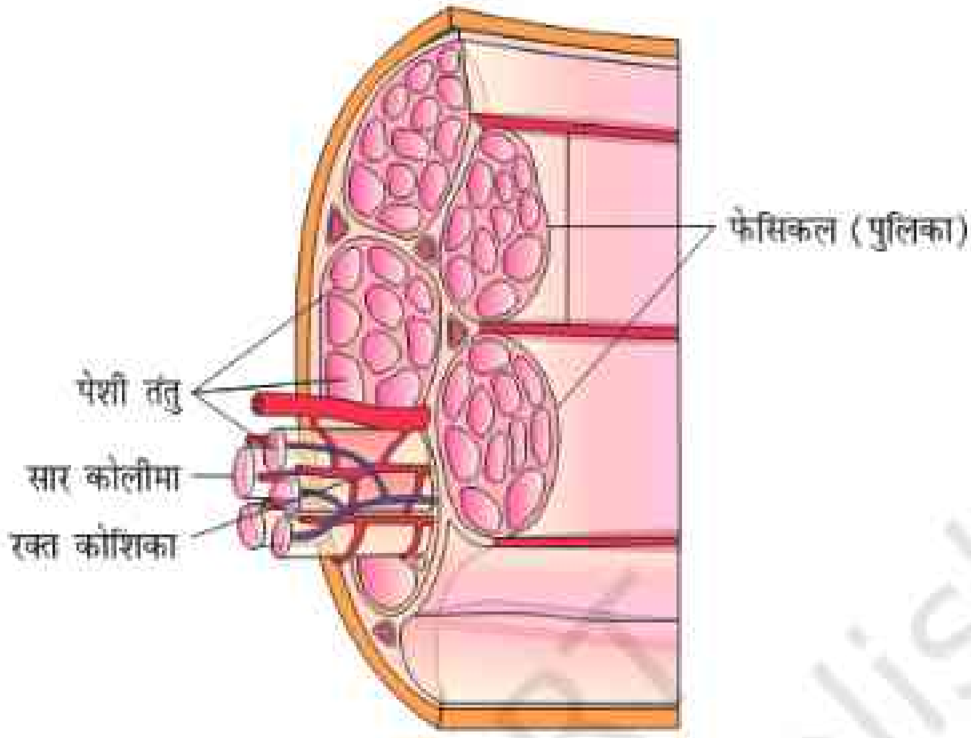

चित्र 17.1 पेशी समूह तथा पेशी तंतु को दर्शाते हुए पेशी का अनुप्रस्थ काट

जिसे सार्कोलेमा कहते हैं। पेशी रेशा एक संकोशिका है क्योंकि पेशीद्रव्य (sarcoplasm) में कई केंद्रक होते हैं। अंतःद्रव्य जालिका अर्थात् पेशी रेशों के पेशीद्रव्य जालिका (सारकोप्लाज्मिक रेटीक्यूलम) कैल्सियम आयनों का भंडार गृह है; पेशी रेशा की एक विशेषता पेशीद्रव्य में समांतर रूप से व्यस्थित अनेक तंतुओं की उपस्थिति है जिसे पेशीतंतु (मायोफिलामेंट) **पेशीतंतुक** (मायोफाईब्रिल) कहते हैं। प्रत्येक पेशी तंतुक में क्रमवार गहरे एवं हल्के पट्ट (बैंड) होते हैं। पेशी रेशक के विस्तृत अध्ययन ने यह स्थापित कर दिया है कि इनका रेखित रूप दो प्रमुख प्रोटीन – **एक्टिन** और **मायोसिन** के विशेष प्रकार के वितरण के कारण होता है। हल्के बैंडों में एक्टिन होता है जिसे I – बैंड या समदैशिक बैंड कहते हैं जबकि गहरे बैंडों को 'A' बैंड या विषम दैशिक बैंड कहते हैं जिसमें मायोसिन होता है। दोनों प्रोटीन छड़नुमा संरचनाओं में परस्पर समानांतर पेशी रेशक के अनुदैर्ध्य अक्ष के भी समानांतर व्यवस्थित होते हैं एक्टिन तंतु मायोसिन तंतुओं की तुलना में पतले होते हैं, अतः इन्हें क्रमशः पतले एवं मोटे तंतु कहते हैं। प्रत्येक I-बैंड के मध्य में इसे द्विविभाजित करने वाली एक प्रत्यास्थ रेखा होती है, जिसे 'Z'-रेखा कहते हैं। पतले तंतु 'Z'-रेखा से दृढ़ता से जुड़े होते हैं। 'A' बैंड के मोटे तंतु, 'A' बैंड के मध्य में एक पतली रेशेदार झिल्ली, जिसे 'M'-रेखा कहते हैं, द्वारा जुड़े होते हैं। **पेशी रेशों** की पूरी लंबाई में 'A' और 'I' बैंड एकांतर क्रम में व्यवस्थित होते हैं। दो अनुक्रमित 'Z'-रेखाओं के बीच स्थित पेशी रेशक का भाग एक संकुचन कार्य इकाई बनाता है जिसे सार्कोमियर कहते हैं (चित्र 17.2)। विश्राम की अवस्था में, पतले तंतुओं के सिरे दोनों ओर के मोटे तंतुओं के बीच के भाग को छोड़कर स्वतंत्र सिरों पर अतिच्छादित होते हैं।

(पतले तंतुओं के सिरे मोटे तंतुओं के सिरों के बीच में पाए जाते हैं) मोटे तंतुओं का केंद्रीय भाग जो पतले तंतुओं से अतिच्छादित नहीं होता, 'H'-क्षेत्र कहलाता है।

17.2.1 संकुचनशील प्रोटीन की संरचना

प्रत्येक एक्टिन (पतले) तंतु एक दूसरे से सर्पिल रूप में कुंडलित दो 'F' (तंतुमय) एक्टिनों का बना होता है। प्रत्येक 'F' एक्टिन 'G' (गोलाकार) एक्टिन इकाइयों का बहुलक है। एक दूसरे प्रोटीन, ट्रोपोमायोसिन के दो तंतु 'F' एक्टिन के निकट पूरी लंबाई में जाते हैं। एक जटिल ट्रोपोनिन प्रोटीन अणु ट्रोपोमायोसिन पर नियत अंतरालों पर पाई जाती है। विश्राम की अवस्था में ट्रोपोनिन की एक उप-इकाई एक्टिन तंतुओं के मायोसिन के बंध बनाने वाले सक्रिय स्थानों को ढक कर रखती है (चित्र 17.3 अ)।

प्रत्येक मायोसिन (मोटे) तंतु भी एक बहुलक प्रोटीन है। कई एकलकी प्रोटीन जिसे मेरोमायोसिन कहते हैं (चित्र 17.3 ब) एक मोटा तंतु बनाती हैं। प्रत्येक मेरोमायोसिन के दो महत्वपूर्ण भाग होते हैं- एक छोटी भुजा सहित गोलाकार सिर तथा एक पूँछ। सिर को

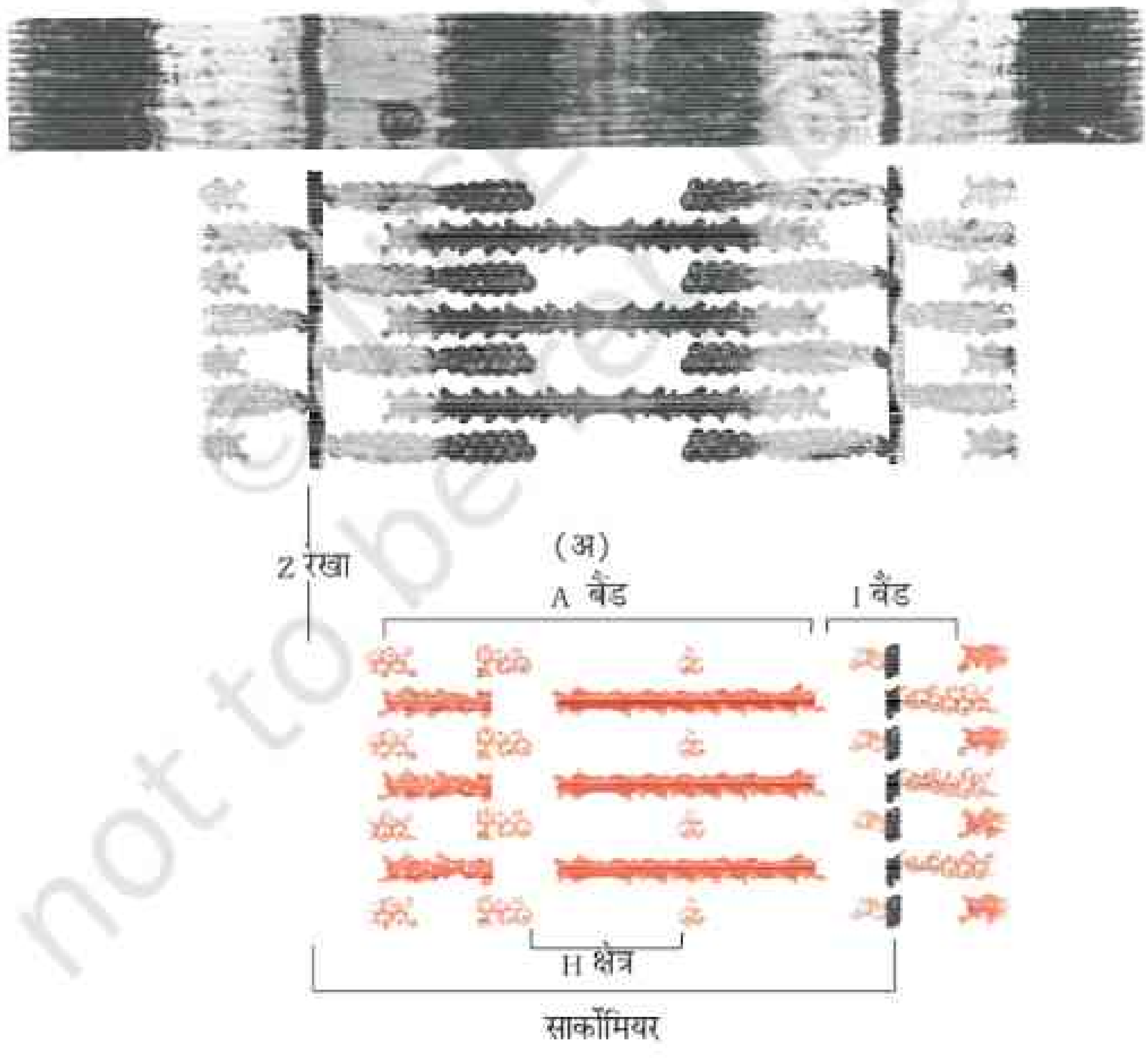

चित्र 17.2 (अ) सार्कोमियर को दर्शाते हुए एक पेशी तंतु की संरचना (ब) एक सार्कोमियर का आरेख

© NCERT not to be republished

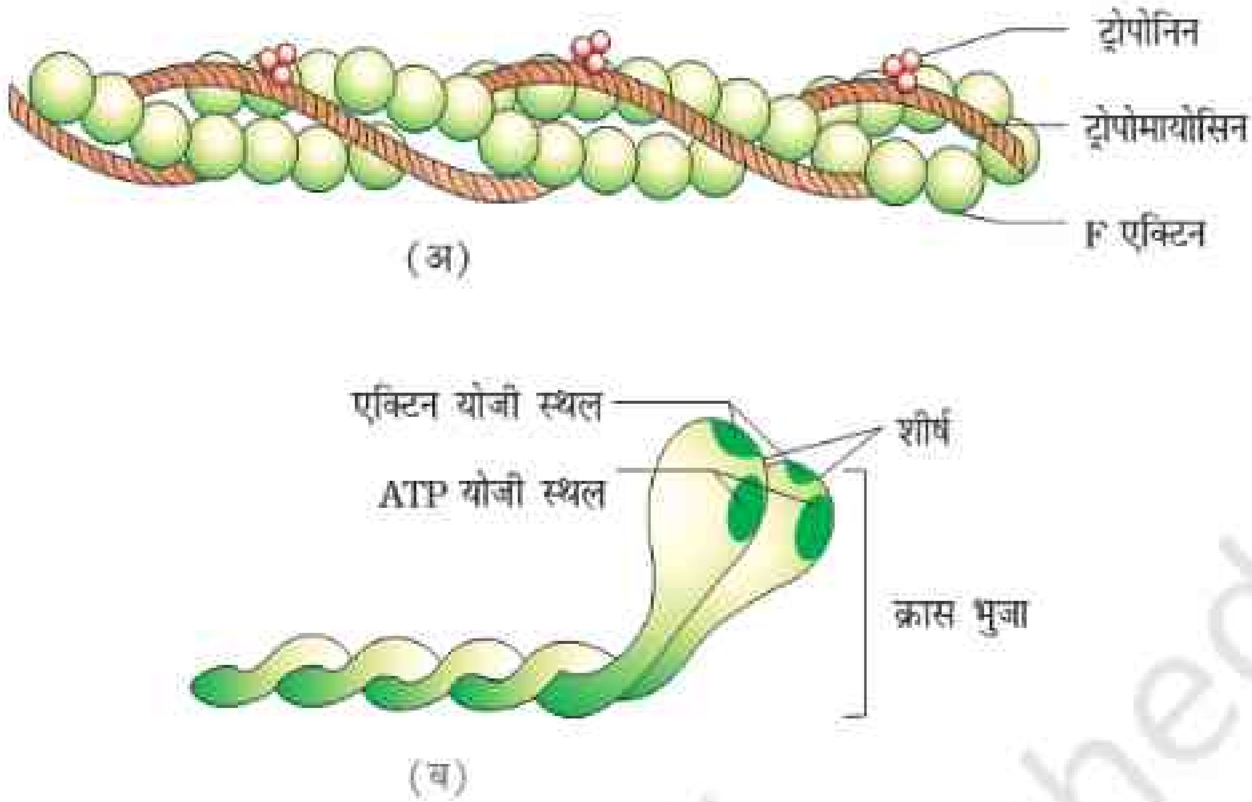

चित्र 17.3 (अ) एक एक्टिन (पतला) तंतु (ब) एकल मायोसिन (मिरोमायोसिन)

भारी मेरोमायोसिन (HMM) और पूँछ को हल्का मेरोमायोसिन (LMM) कहते हैं। मेरोमायोसिन अवयव अर्थात् सिर एवं छोटी भुजा पर नियत दूरी तथा आपस में एक नियत दूरी नियत कोण पर A तंतु पर बाहर की तरफ उभरे होते हैं। जिसे क्रास भुजा (कॉस-आर्म) कहते हैं। गोलाकार सिर एक सक्रिय एटिपीऐज एंजाइम है जिसमें एटीपी के बंधन स्थान तथा एक्टिन के लिए सक्रिय स्थान होते हैं।

17.2.2 पेशी संकुचन की क्रियाविधि

पेशी संकुचन की क्रियाविधि को सर्पीतंतु सिद्धांत द्वारा अच्छी तरह समझाया जा सकता है जिसके अनुसार पेशीय रेशों का संकुचन पतले तंतुओं के मोटे तंतुओं के ऊपर सरकने से होता है।

केंद्रीय तंत्रिका तंत्र की प्रेरक तंत्रिका द्वारा एक संकेत प्रेषण से पेशी संकुचन का आरंभ होता है। एक प्रेरक न्यूरोन तथा इससे पेशीय रेशे एक प्रेरक इकाई का गठन करते हैं। प्रेरक तंत्रिएक और पेशीय रेशा के सार्कोलेमा की संधि को तंत्रिका-पेशीय संगम या प्रेरक अंत्य पट्टिका कहते हैं। इस संगम पर एक तंत्रिक संकेत पहुँचने से एक तंत्रिका संचारी (एसिटिल कोलिन) मुक्त होता है जो सार्कोलेमा में एक क्रिया विभव (action potential) उत्पन्न करता है। यह समस्त पेशीय रेशे पर फैल जाता है जिससे सार्कोप्लाज्म में कैल्सियम आयन मुक्त होते हैं। कैल्सियम आयन स्तर में वृद्धि से एक्टिन तंतु पर ट्रोपोनिन की उप इकाई से कैल्सियम बंध बनाकर एक्टिन के ढके हुए सक्रिय स्थानों को खोल देता है। ATP के जल अपघटन से प्राप्त ऊर्जा का उपयोग कर मायोसिन शीर्ष एक्टिन के खुले सक्रिय स्थानों से क्रास सेतु बनाने के लिए बँध जाते हैं (चित्र 17.4)। इस बंध से जुड़े हुए एक्टिन तंतुओं 'A' बैंड के केंद्र की तरफ खिंचते हैं इन एक्टिनों से जुड़ी हुई 'A' रेखा भी अंदर की तरफ खिंच जाती है जिससे सार्कोमियर

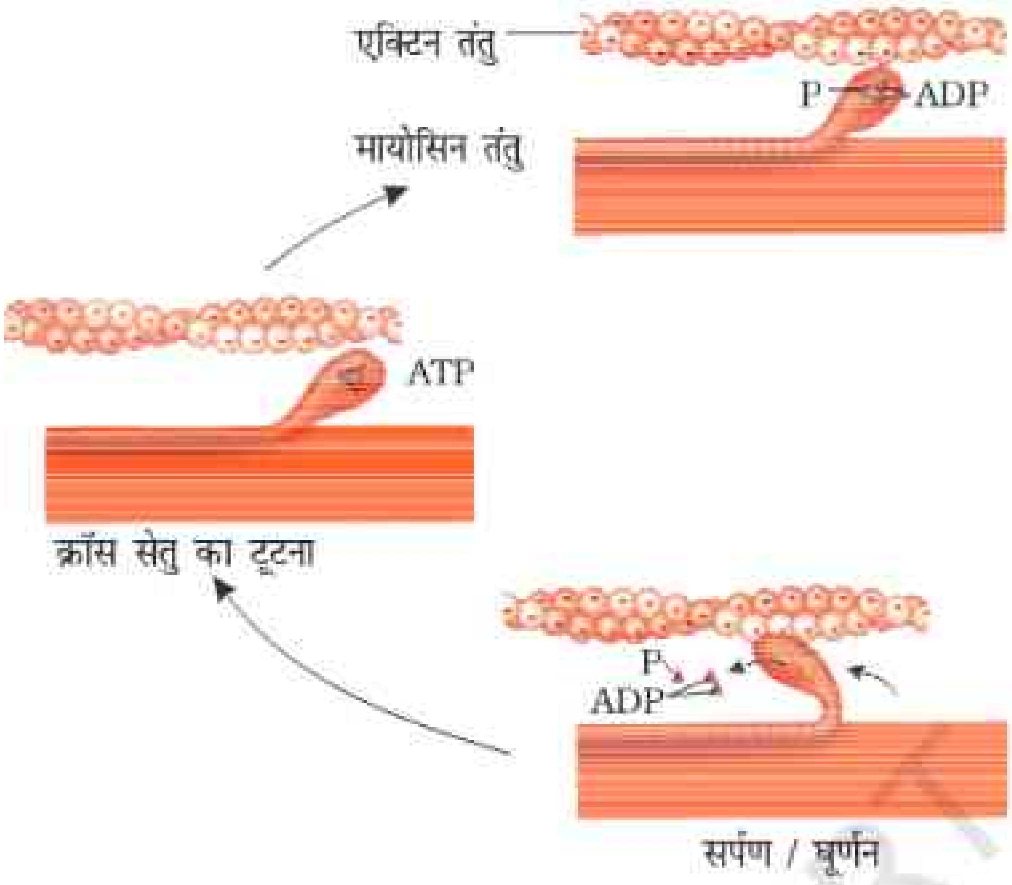

चित्र 17.4 क्रॉस सेतु के बनने की अवस्थाएं/शीर्ष का घूर्णन तथा क्रॉस सेतु का टूटना

छोटा हो जाता है अर्थात् संकुचित हो जाता है। ऊपर के चरणों से स्पष्ट है कि पेशी के छोटा होते समय अर्थात् संकुचन के समय 'I'-बैंडों की लंबाई कम हो जाती है जबकि 'A'-बैंडों की लंबाई ज्यों कि त्यों रहती है (चित्र 17.5)। ADP और P_2 मुक्ताकर, मायोसिन विश्राम अवस्था में वापस चला जाता है। एक नए ATP के बंधने से क्रास-सेतु टूटते हैं (चित्र 17.4)। मायोसिन शीर्ष ATP को अपघटित कर पेशी के ओर संकुचन के लिए क्रिया दोहराते हैं किंतु तंत्रिका संवेगी के समाप्त हो जाने पर सार्कोप्लाज्मिक रेटीक्यूलम द्वारा Ca^{++} के अवशोषण से एक्टिन स्थल पुनः ढक जाते हैं। इसके फलस्वरूप 'Z'-रेखाएं अपने मूल स्थान पर वापस हो जाती हैं; अर्थात् शिथिलन हो जाता है। विभिन्न पेशियों में रेशों की प्रतिक्रिया अवधि में अंतर हो सकता है। पेशियों के बार-बार उत्तेजित होने पर उनमें ग्लाइकोजन के अवायवी विखंडन से लैक्टिक अम्ल का जमाव होने लगता है जिससे थकान (श्रांति) होती है। पेशी में ऑक्सीजन भंडारित करने वाला लाल रंग का एक मायोग्लोबिन होता है। कुछ पेशियों में मायोग्लोबिन की मात्रा ज्यादा होती है जिससे वे लाल रंग के दिखते हैं। ऐसी पेशियों को लाल पेशियाँ कहते हैं। ऐसी पेशियों में माइट्रोकोंड्रिया अधिक होती हैं जो ATP के निर्माण हेतु उनमें भंडारित ऑक्सीजन की बड़ी मात्रा का उपयोग कर सकती हैं। इसलिए, इन पेशियों को वायुजीवी पेशियाँ भी कह सकते हैं। दूसरी तरफ, कुछ पेशियों में मायोग्लोबिन की बहुत कम मात्रा पाई जाती है जिससे वे हल्के रंग की अथवा श्वेत प्रतीत होती हैं। ये श्वेत पेशियाँ हैं। इनमें माइटोकोंड्रिया तो अल्पसंख्यक होती है, लेकिन पेशीद्रव्य जालिका अत्यधिक मात्रा में होती हैं। ये अवायवीय विधि द्वारा ऊर्जा प्राप्त करती हैं।

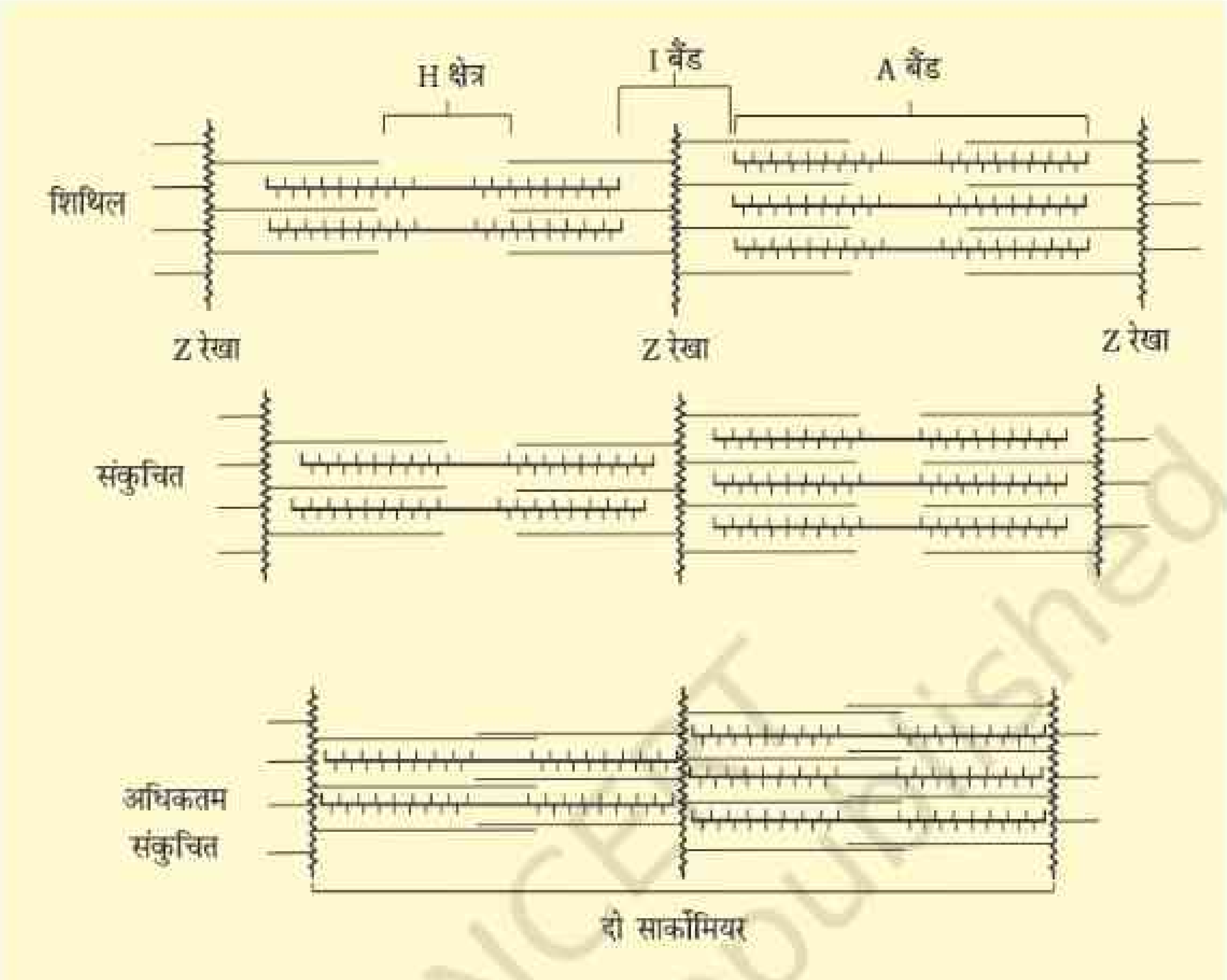

चित्र 17.5 पेशी संकुचन का सर्पी तंतु सिद्धांत (पतले तंतु की गति एवं I बैंड तथा H क्षेत्र की तुलनात्मक आकार)

17.3 कंकाल तंत्र

कंकाल तंत्र में अस्थियों का एक ढांचा और उपास्थियां होती हैं। शरीर की गति में इस तंत्र की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। कल्पना कीजिए; जब बिना जबड़ों के भोजन चर्वण करना पड़े और बिना पाद अस्थियों के टहलना हो। अस्थि एवं उपास्थि विशेष प्रकार के संयोजी ऊतक हैं। मैट्रिक्स में लवणों की उपस्थिति से अस्थियाँ कठोर होती हैं जबकि कोंड्रोइटिन (chondroitin) लवण उपास्थियों के मैट्रिक्स को आनन्य (pliable) बनाते हैं। मनुष्य में, यह तंत्र 206 अस्थियों और कुछ उपास्थियों का बना होता है। इसे दो मुख्य समूहों में बाँटा गया है- अक्षीय कंकाल एवं उपांगीय कंकाल।

अक्षीय कंकाल में 80 अस्थियाँ होती हैं जो शरीर की मुख्य अक्ष पर वितरित होती हैं। करोटि, मेरुदंड, उरोस्थि (स्टर्नम) और पसलियाँ अक्षीय कंकाल का गठन करती हैं। **करोटि** (चित्र 17.6) अस्थियों के दो समुच्चय- कपालीय (cranial) और आननी (facial) से बना है जिनका योग 22 है। कपालीय अस्थियों की संख्या 8 होती है। ये मस्तिष्क के लिए कठोर रक्षक बाह्य आवरण- कपाल को बनाती हैं। आननी भाग में 14 कंकाली अवयव (skeletal elements) होते हैं जो करोटि के सामने का भाग बनाते हैं।

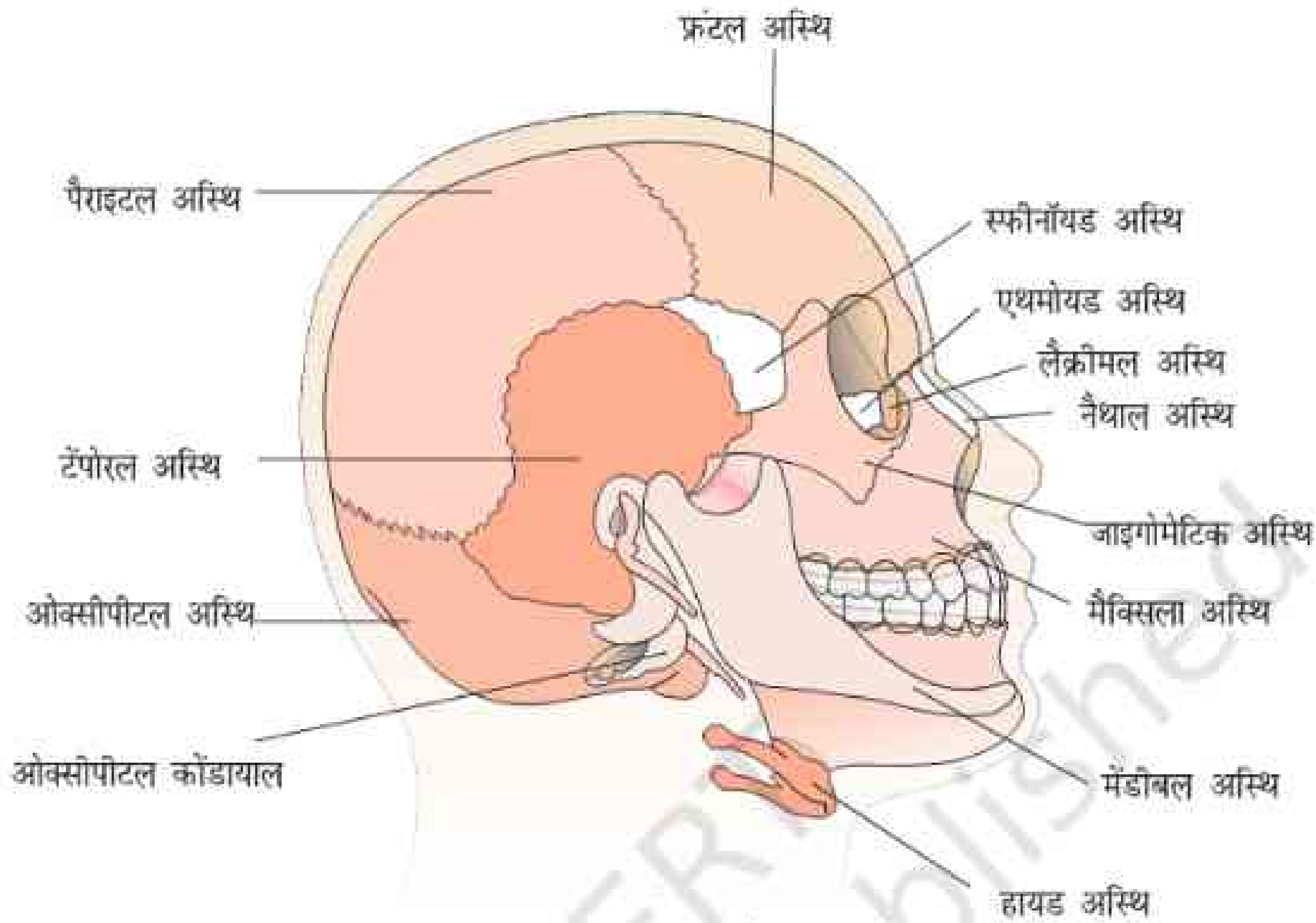

चित्र 17.6 मनुष्य की करोटि का आरेख

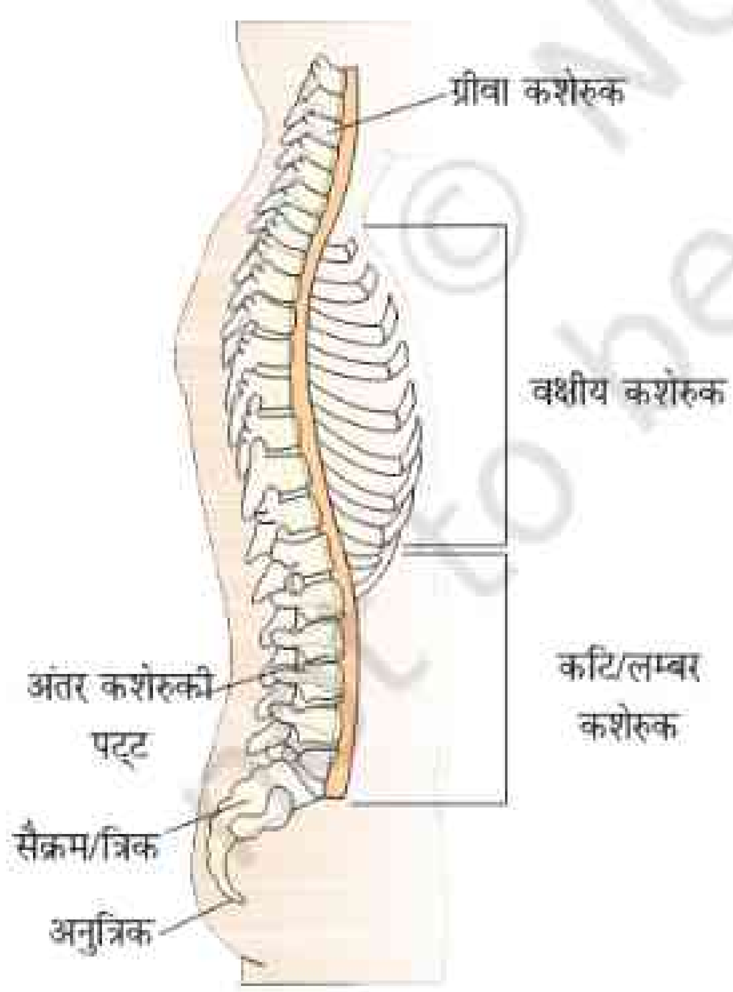

चित्र 17.7 मेरुदंड (दायाँ पार्श्व दृश्य)

एक U – आकार की एकल अस्थि हाइऑइड (hyoid) मुख गुहा के नीचे स्थित होती है, यह भी कपाल में ही सन्निहित है। प्रत्येक मध्यकर्ण में तीन छोटी अस्थियाँ होती हैं-मैलियस, इनकस एवं स्टेपीज। इन्हें सामूहिक रूप से **कर्ण अस्थिकाएं** कहते हैं। कपाल भाग कशेरुक दंड के अग्र भाग के साथ दो अनुकपाल अस्थिकंदों (occipital condyles) की सहायता से संधियोजन करता है (द्विकंदीय करोटिया डाइकोंडाइलिक स्कल)।

हमारा **कशेरुक दंड** (चित्र 17.7) क्रम में व्यस्थित पृष्ठ भाग में स्थित 26 इकाइयों का बना है जिन्हें कशेरुक कहते हैं। यह कपाल के आधार से निकलता और धड़ भाग का मुख्य ढांचा तैयार करता है। प्रत्येक कशेरुक के बीच का भाग खोखला (तंत्रकीय नाल) होता है जिससे होकर मेरुरज्जु (spinal cord) गुजरती है। प्रथम कशेरुक एटलस है और यह अनुकपाल अस्थिकंदों के साथ संधियोजन करता है। कशेरुक दंड, कपाल की ओर से प्रारंभ करने पर, ग्रीवा (7), वक्षीय (12), कटि (5), त्रिक सेक्रमी (1-संयोजित) और अनुत्रिक (1-संयोजित) कशेरुकों में विभेदित होता है। ग्रीवा कशेरुकों की संख्या मनुष्य सहित लगभग सभी स्तनधारियों में

7 (सात) होती है। कशेरुक दंड मेरुरज्जु (spinal cord) की रक्षा करता है, सिर का आधार बनाते हैं और पसलियों तथा पीठ की पेशियों के संधि स्थल का निर्माण करते हैं। **उरोस्थि** (sternum) वक्ष की मध्य अधर रेखा पर स्थित एक चपटी अस्थि है।

पसलियों (Ribs) की 12 जोड़ियाँ होती हैं। प्रत्येक पसली एक पतली चपटी अस्थि है जो पृष्ठ भाग में कशेरुक दंड और अधर भाग में उरोस्थि के साथ जुड़ी होती हैं। इसके पृष्ठ सिरे पर दो संधियोजन सतहें होती हैं जिसके कारण इसे द्विशिरस्थ (bicephalic) भी कहते हैं। प्रथम सात जोड़ी पसलियों को वास्तविक पसलियाँ कहते हैं। पृष्ठ में ये वक्षीय कशेरुकों और अधरीय भाग में उरोस्थि से काचाभ उपास्थि (hyaline cartilage) की सहायता से जुड़ी होती हैं। 8वीं, 9वीं और 10वीं जोड़ी-पसलियाँ उरोस्थि के साथ सीधे संधियोजित नहीं होतीं, बल्कि काचाभ उपास्थि के सहयोग से सातवीं पसली से जुड़ती हैं। इन्हें वर्टिब्रोकांड्रल (कूट) पसलियाँ कहते हैं। पसलियों की अंतिम दो जोड़ियाँ (11वीं और 12वीं) अधर में जुड़ी हुई नहीं होतीं, इसलिए उन्हें प्लावी पसलियाँ (floating ribs) कहते हैं। वक्षीय कशेरुक, पसलियाँ और उरोस्थि मिलकर पसली पंजर (rib cage) की संरचना करते हैं (चित्र 17.8)।

पादों की अस्थियाँ अपनी मेखला के साथ **उपांगीय कंकाल** बनाती हैं। प्रत्येक **पाद** में 30 अस्थियाँ पाई जाती हैं अग्रपाद (भुजा) की अस्थियाँ हैं- ह्यूमेरस, रेडियस और अल्ना, कार्पल्स (कलाई की अस्थियाँ - संख्या में 8), मेटा कार्पल्स (हथेली की अस्थियाँ- संख्या में 5) और फैलेंजेज (अंगुलियों की अस्थियाँ -संख्या में 14) (चित्र 17.9)। फीमर (उरु अस्थि - सबसे लम्बी अस्थि), टिबिया और फिबुला, टार्सल (टखनों की अस्थियाँ - संख्या में 7), मेटाटार्सल (संख्या में 5) और अंगुलि अस्थियाँ फैलेंजेज (चित्र 17.10)। कप के आकार की एक अस्थि जिसे पटेल्ला (Patella) कहते हैं। घुटने को अधर की ओर से ढकती है (घुटना फलक)।

अंस और **श्रोणि मेखला** अस्थियाँ अक्षीय कंकाल तथा क्रमश: अग्र एवं पश्च पादों के बीच संधियोजन में सहायता करती हैं। प्रत्येक मेखला के दो अर्ध भाग होते हैं। अंस मेखला के प्रत्येक अर्ध भाग में एक क्लेविकल एवं एक स्कैपुला होती है (चित्र 17.9)। स्कैपुला वक्ष के पृष्ठ भाग

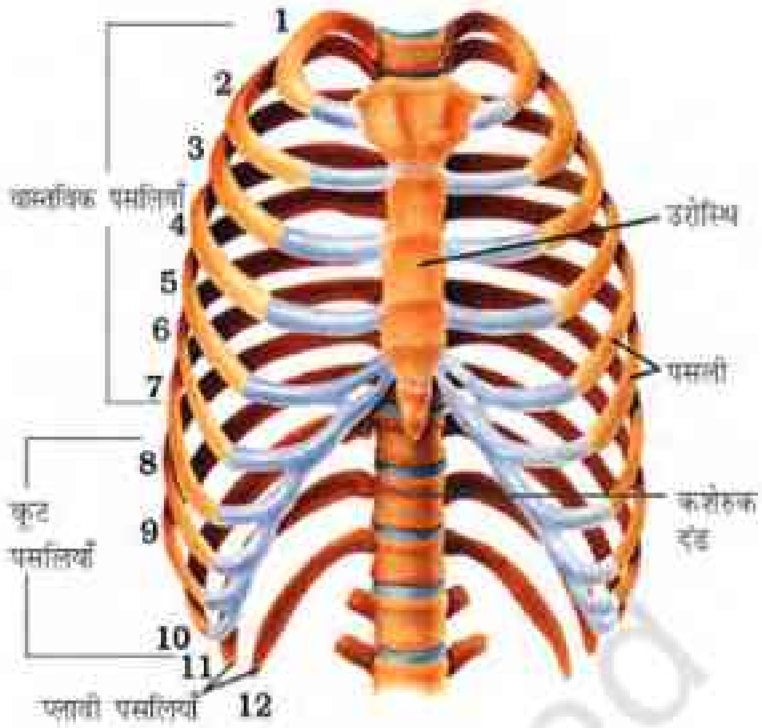

चित्र 17.8 पसलियाँ तथा पिंजर

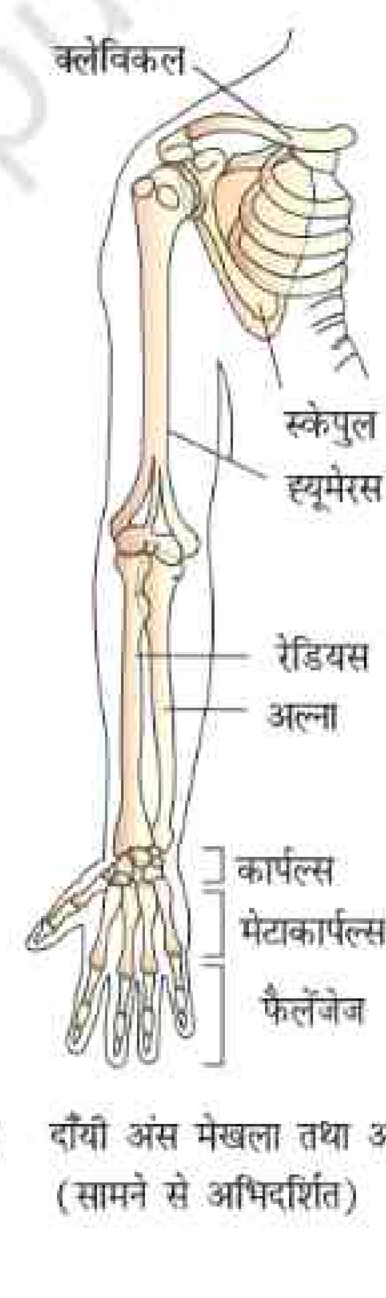

चित्र 17.9 दाँयी अंस मेखला तथा अग्रपाद अस्थियां (सामने से अभिदर्शित)

© NCERT not to be republished

चित्र 17.10 दाईं श्रोणि अस्थि एवं पश्च पाद अस्थियाँ (सामने से अभिदर्शित)

में दूसरे एवं सातवीं पसली के बीच स्थित एक बड़ी चपटी, त्रिभुजाकार अस्थि है। स्कैपुला के पश्च चपटे त्रिभुजाकार भाग में एक उभार (कंटक) एक विस्तृत चपटे प्रबंध के रूप में होता है जिसे **एक्रोमिन** कहते हैं। क्लैविकिल इसके साथ संधियोजन करती हैं। एक्रोमिन के नीचे एक अवनमन जिसे ग्लीनॉयड गुहा कहते हैं ह्यूमरस के शीर्ष के साथ कंधों की जोड़ बनाने के लिए संधियोजन करती है। प्रत्येक क्लैविकल एक लंबी पतली अस्थि है, जिसमें दो वक्र पाए जाते हैं। इस अस्थि को सामान्यत: जत्रुक (collar bone) कहते हैं।

श्रोणि मेखला (Pelvic girdle) में दो श्रोणि अस्थियाँ होती हैं (चित्र 17.10)। प्रत्येक श्रोणि अस्थि तीन अस्थियों के संलयन से बनी होती है- इलियम, इस्चियम और प्युबिस। इन अस्थियों के संयोजन स्थल पर एक गुहा एसिटैबुलम होती है जिससे उरु अस्थि संधियोजन करती है। अधर भाग में श्रोणि मेखला के दोनों भाग मिलकर प्युबिक संलयन (Pubic symphysis) बनाते हैं जिसमें रेशेदार उपास्थि होती है।

17.4 संधियाँ या जोड़

संधियाँ या जोड़ हर प्रकार की गति के लिए आवश्यक है जिनमें शरीर की अस्थियाँ सहयोगी होती हैं चलन गति भी इसका अपवाद नहीं है। जोड़ अस्थियों अथवा एक अस्थि एवं एक उपास्थि के बीच का संधिस्थल है। जोड़ों द्वारा गति के लिए पेशी जनित बल का उपयोग किया जाता है। यहाँ जोड़ आलंब (fulcrum) का कार्य करते हैं। इन जोड़ों पर गति विभिन्न कारकों पर निर्भरता के कारण बदलती हैं। जोड़ों को मुख्यत: तीन संरचनात्मक रूपों में वर्गीकृत किया गया है, जैसे- रेशीय, उपास्थियुक्त और साइनोवियल (स्राव)।

रेशीय जोड़ किसी प्रकार की गति नहीं होने देते। इस तरह के जोड़ द्वारा कपाल की चपटी अस्थियाँ, जो घने रेशीय संयोजी ऊतक की सहायता से सीवन (sutures) के रूप में कपाल बनाने के लिए संयोजित होती हैं।

उपास्थि युक्त जोड़ों में, अस्थियाँ आपस में उपास्थियों द्वारा जुड़ी होती हैं। कशेरुक दंड में दो निकटवर्ती कशेरुकों के बीच इसी प्रकार के जोड़ हैं जो सीमित गति होने देते हैं।

साइनोवियल जोड़ों की विशेषता दो अस्थियों की संधियोजन सतहों के बीच तरल से भी साईनोवियल गुहा की उपस्थिति है। इस तरह की व्यवस्था में पर्याप्त गति संभव है। ये जोड़ चलन सहित कई तरह की गति में सहायता करते हैं। कंदुक खल्लिका संधि (ह्यूमरस और अंस मेखला के बीच), कब्जा संधि (घुटना संधि), धुराग्र संधि (पाइवट

संधी - एटलस और अक्ष के बीच), विसर्पी संधि (ग्लाइडिंग संधि कार्पल्स के बीच) और सैडल जोड़ (अंगूठे के कार्पल और मेटा कार्पल के बीच) इनके कुछ उदाहरण हैं।

17.5 पेशीय और कंकाल तंत्र के विकार

माइस्थेनिया ग्रेविस (Myasthenia gravis): एक स्वप्रतिरक्षा विकार जो तंत्रिका- पेशी संधि को प्रभावित करता है। इससे कमजोरी और कंकाली पेशियों का पक्षघात होता है।

पेशीय दुष्पोषण (Muscular dystrophy): विकारों के कारण कंकाल पेशी का अनुक्रमित अपह्रासन।

अपतानिका : शरीर में कैल्सियम आयनों की कमी से पेशी में तीव्र ऐंठन।

संधि शोथ (Arthritis): जोड़ों की शोथ।

अस्थि सुषिरता (Osteoporosis) : यह उम्र संबंधित विकार है जिसमें अस्थि के पदार्थों में कमी से अस्थि भंग की प्रबल संभावना हैं। एस्ट्रोजन स्तर में कमी इसका सामान्य कारक है।

गाउट (Gout): जोड़ों में यूरिक अम्ल कणों के जमा होने के कारण जोड़ों की शोथ।

सारांश

गति सजीवों की एक आवश्यक विशेषता है। जीवद्रव्य की प्रवाही गति, पक्ष्माभी गति, पख, पादों, पंखों, आदि की गति प्राणियों द्वारा दर्शित गतियों के कुछ रूप हैं। ऐच्छिक गति जिनसे प्राणियों में स्थान परिवर्तित होता है, चलन कहलाती है। प्राणी प्राय: भोजन, आश्रय, साथी, प्रजनन स्थल, अनुकूल प्राकृतिक स्थिति की तलाश या अपनी रक्षा के लिए चलते हैं।

मनुष्य शरीर की कोशिकाएं अमीबोय, पक्ष्माभी और पेशीय गति दर्शाती हैं। चलन और अन्य प्रकार की गतियों के लिए समन्वित पेशीय क्रियायों की आवश्यकता होती है। हमारे शरीर में तीन प्रकार की पेशियाँ होती हैं। कंकाल पेशियाँ कंकाल अवयवों से जुड़ी होती हैं। वे रेखित एवं ऐच्छिक स्वभाव की होती हैं। अंतरंग अंगों की भीतरी भित्ति में स्थित अंतरंग पेशियाँ अरेखित एवं अनैच्छिक होती हैं। हृद पेशियाँ हृदय की पेशियाँ हैं। वे रेखित, शाखित और अनैच्छिक होती हैं। पेशियों में उत्तेजनशीलता, संकुचनशीलता, प्रसार्य और प्रत्यास्थता जैसे गुण होते हैं।

पेशीरेशा, पेशी की शारीरीय इकाई है। प्रत्येक पेशीरेशे में कई सामानांतर रूप से व्यवस्थित पेशीतंतुक (मायोफाईब्रिल) होते हैं। प्रत्येक पेशीतंतुक में कई क्रमवार व्यवस्थित क्रियात्मक इकाइयाँ, सार्कोमियर होते हैं। प्रत्येक सार्कोमियर के केंद्र में घने मायोसिन तंतुओं से बना A-बैंड, और Z-रेखा के दोनों तरफ पतले एक्टिन तंतुओं से बने दो अर्द्ध I-बैंड होते हैं। एक्टिन और मायोसिन संकुचनशील बहुलक प्रोटीन हैं। विश्राम की अवस्था में, एक्टिन तंतु पर मायोसिन के लिए सक्रिय स्थान ट्रोपोनिन (प्रोटीन) से ढके होते हैं। मायोसिन शीर्ष पर एटिपेज, एटीपी बंध स्थल और एक्टिन के लिए सक्रिय स्थान होते हैं। पेशीरेशे में प्रेरक तंत्रिका के संकेत से क्रिया विभव उत्पन्न होती है। इससे सार्कोप्लाजमिक जालिका कैल्सियम आयन (Ca^{++}) मुक्त करती है। कैल्सियम आयन एक्टिन को मायोसिन के शीर्ष से क्रॉस-सेतु निर्माण हेतु सक्रिय करते हैं। ये

क्रास-सेतु एक्टिन तंतुओं को खींचते हैं जिससे एक्टिन तंतु मायोसिन तंतुओं पर सरकने लगते हैं और संकुचन होता है। तत्पश्चात् कैल्सियम आयन सार्कोप्लाजमिक जालिका में वापस चले जाते हैं, जिससे एक्टिन निष्क्रिय हो जाते हैं। कॉस-सेतु टूट जाता है और पेशियाँ शिथिलित हो जाती हैं।

बार-बार उत्तेजित करने से पेशी में थकान (श्रांति) हो जाती है। लाल रंग के मायोग्लोबिन वर्णक की मात्रा की उपस्थिति के आधार पर पेशियाँ लाल और श्वेत पेशी रेशों में वर्गीकृत की गई हैं।

अस्थियाँ एवं उपास्थियाँ कंकाल तंत्र बनाते हैं। कंकाल तंत्र को अक्षीय और उपांगीय प्रकारों में विभाजित किया गया है। करोटि, कशेरुक दंड, पसलियाँ और उरोस्थि अक्षीय कंकाल बनाते हैं। पाद अस्थियाँ और मेखला उपांगीय कंकाल का गठन करते हैं। अस्थियों या अस्थि और उपास्थि के बीच तीन प्रकार के जोड़ (संधि) पाए जाते हैं– रेशीय, उपास्थियुक्त और साइनोवियल। साइनोवियल जोड़ों में पर्याप्त गति संभव है और इसलिए ये चलन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

अभ्यास

1. कंकाल पेशी के एक सार्कोमियर का चित्र बनाएं और विभिन्न भागों को चिह्नित करें।
2. पेशी संकुचन के सर्पी तंतु सिद्धांत को परिभाषित करें।
3. पेशी संकुचन के प्रमुख चरणों का वर्णन करें।
4. 'सही' या 'गलत' लिखें:
   (क) एक्टिन पतले तंतु में स्थित होता है।
   (ख) रेखित पेशीरेशे का H-क्षेत्र मोटे और पतले, दोनों तंतुओं को प्रदर्शित करता है।
   (ग) मानव कंकाल में 206 अस्थियाँ होती हैं।
   (घ) मनुष्य में 11 जोड़ी पसलियाँ होती हैं।
   (च) उरोस्थि शरीर के अधर भाग में स्थित होती है।
5. इनके बीच अंतर बताएं:
   (क) एक्टिन और मायोसिन
   (ख) लाल और श्वेत पेशियाँ
   (ग) अंस एवं श्रोणि मेखला
6. स्तंभ I का स्तंभ II से मिलान करें:

स्तंभ I	स्तंभ II
(i) चिकनी पेशी	(क) मायोग्लोबिन
(ii) ट्रोपोमायोसिन	(ख) पतले तंतु
(iii) लाल पेशी	(ग) सीवन (suture)
(iv) कपाल	(घ) अनैच्छिक

7. मानव शरीर की कोशिकाओं द्वारा प्रदर्शित विभिन्न गतियाँ कौन सी हैं?
8. आप किस प्रकार से एक कंकाल पेशी और हृद पेशी में विभेद करेंगे?

© NCERT not to be republished

9. निम्नलिखित जोड़ों के प्रकार बताएं:
   (क) एटलस/अक्ष (एक्सिस)
   (ख) अंगूठे के कार्पल/मेटाकार्पल
   (ग) फैलेंजेज की बीच
   (घ) फीमर/एसिटैबुलम
   (च) कपालीय अस्थियों के बीच
   (छ) श्रोणि मेखला की प्युबिक अस्थियों के बीच

10. रिक्त स्थानों में उचित शब्दों को भरें:
   (क) सभी स्तनधारियों में (कुछ को छोड़कर) ________ ग्रीवा कशेरुक होते हैं।
   (ख) प्रत्येक मानव पाद में फैलेंजेज की संख्या ________ है।
   (ग) मायोफाइब्रिल के पतले तंतुओं में 2 'F' एक्टिन और दो अन्य दूसरे प्रोटीन, जैसे ________ और ________ होते हैं।
   (घ) पेशी रेशा में कैल्सियम ________ में भंडारित रहता है।
   (च) ________ और ________ पसलियों की जोड़ियों को प्लानी पसलियाँ कहते हैं।
   (छ) मनुष्य का कपाल ________ अस्थियों से बना होता है।

© NCERT not to be republished

अध्याय 18

तंत्रिकीय नियंत्रण एवं समन्वय

18.1 तंत्रिकीय तंत्र

18.2 मानव का तंत्रिकीय तंत्र

18.3 तंत्रि कोशिका तंत्रिका तंत्र की संरचनात्मक एवं क्रियात्मक इकाई

18.4 केंद्रीय तंत्रिका तंत्र

जैसा कि तुम जानते हो मानव शरीर में बहुत से अंग एवं अंग तंत्र पाए जाते हैं जो कि स्वतंत्र रूप से कार्य करने में असमर्थ होते हैं। जैव स्थिरता (समअवस्था) बनने हेतु इन अंगों के कार्यों में समन्वय अत्यधिक आवश्यक है। समन्वयता एक ऐसी क्रियाविधि है, जिसके द्वारा दो या अधिक अंगों में क्रियाशीलता बढ़ती है व एक-दूसरे अंगों के कार्यों में मदद मिलती है। उदाहरणार्थ, जब हम शारीरिक व्यायाम करते हैं तो पेशियों के संचालन हेतु ऊर्जा की आवश्यकता भी बढ़ जाती है। ऑक्सीजन की आवश्यकता में भी वृद्धि हो जाती है। ऑक्सीजन की अधिक आपूर्ति के लिए श्वसन दर, हृदय स्पंदन, दर एवं वृक्क वाहिनियों में रक्त प्रवाह की दर बढ़ना स्वाभाविक हो जाता है। जब शारीरिक व्यायाम बंद कर देते हैं तो तंत्रिकीय क्रियाएं, फुप्फुस, हृदय रुधिर वाहिनियों, वृक्क व अन्य अंगों के कार्यों में समन्वय स्थापित हो जाता है। हमारे शरीर में तंत्रिका तंत्र एवं अंतःस्रावी तंत्र सम्मिलित रूप से अन्य अंगों की क्रियाओं में समन्वय करते हैं तथा उन्हें एकीकृत करते हैं, जिससे सभी क्रियाएं एक साथ संचालित होती रहती हैं।

तंत्रिकीय तंत्र ऐसे व्यवस्थित जाल तंत्र गठित करता है, जो त्वरित समन्वय हेतु बिंदु दर बिंदु जुड़ा रहता है। अंतःस्रावी तंत्र हार्मोन द्वारा रासायनिक समन्वय बनाता है। इस अध्याय में आप मनुष्य के तंत्रिकीय तंत्र एवं तंत्रिकीय समन्वय की क्रियाविधि जैसे तंत्रिकीय आवेग का संचरण तथा आवेगों का सिनेप्स से संचरण का अध्ययन करेंगे।

18.1 तंत्रिकीय तंत्र

सभी प्राणियों का तंत्रिका तंत्र अति विशिष्ट प्रकार की कोशिकाओं से बनता है, जिन्हें **तंत्रिकोशिका** कहते हैं। ये विभिन्न उद्दीपनों को पहचान कर ग्रहण करती हैं तथा इनका संचरण करती हैं।

© NCERT not to be republished

निम्न अकशेरुकी प्राणियों में तंत्रिकीय संगठन बहुत ही सरल प्रकार का होता है। उदाहरणार्थ *हाइड्रा* में यह तंत्रिकीय जाल के रूप में होता है। कीटों का तंत्रिका तंत्र अधिक व्यवस्थित होता है। यह मस्तिष्क अनेक गुच्छिकाओं एवं तंत्रिकीय ऊतकों का बना होता है। कशेरुकी प्राणियों में अधिक विकसित तंत्रिका तंत्र पाया जाता है।

18.2 मानव का तंत्रिकीय तंत्र

मानव का तंत्रिका तंत्र दो भागों में विभाजित होता है (क) **केंद्रीय तंत्रिका तंत्र** तथा (ख) **परिधीय तंत्रिका तंत्र**। केंद्रीय तंत्रिका तंत्र में **मस्तिष्क** तथा **मेरूरज्जु** सम्मिलित है, जहाँ सूचनाओं का संसाधन एवं नियंत्रण होता है। मस्तिष्क एवं परिधीय तंत्रिका तंत्र सभी तंत्रिकाओं से मिलकर बनता है, जो केंद्रीय तंत्रिका तंत्र (मस्तिष्क व मेरूरज्जू) से जुड़ी होती हैं। परिधीय तंत्रिका तंत्र में दो प्रकार की तंत्रिकाएं होती हैं (अ) **संवेदी या अभिवाही** एवं (ब) **चालक/प्रेरक या अपवाही**। संवेदी या अभिवाही तंत्रिकाएं उद्दीपनों को ऊतकों/अंगों से केंद्रीय तंत्रिका तंत्र तक तथा चालक/अभिवाही तंत्रिकाएं नियामक उद्दीपनों को केंद्रीय तंत्रिका तंत्र से संबंधित परिधीय ऊतक/अंगों तक पहुँचाती हैं।

परिधीय तंत्रिका तंत्र दो भागों में विभाजित होता है **कायिक तंत्रिका तंत्र** तथा **स्वायत्त तंत्रिका तंत्र**। कायिक तंत्रिका तंत्र उद्दीपनों को केंद्रीय तंत्रिका तंत्र से शरीर के अनैच्छिक अंगों व चिकनी पेशियों में पहुँचाता है। स्वायत्त तंत्रिका तंत्र पुनः दो भागों - (अ) **अनुकंपी तंत्रिका तंत्र** व (ब) **परानुकंपी तंत्रिका तंत्र** में वर्गीकृत किया गया है। **अंतरंग तंत्रिका तंत्र** परिधीय तंत्रिका तंत्र का एक भाग है। इसके अंतर्गत वे सभी तंत्रिकाएँ, तंत्रिका तंतु, गुच्छिकाएँ एवं जालिकाएँ सम्मिलित हैं जिनके द्वारा केंद्रीय तंत्रिका तंत्र से आवेग, अंतरंगों तक तथा अंतरंगों से केंद्रीय तंत्रिका तंत्र तक संचरित होते हैं।

18.3 तंत्रिकोशिका (न्यूरॉन) तंत्रिका तंत्र की संरचनात्मक एवं क्रियात्मक इकाई

न्यूरॉन एक सूक्ष्मदर्शीय संरचना है जो तीन भागों से मिलकर बनती है - **कोशिका काय**, **दुम्राक्ष्य** व **तंत्रिकाक्ष** (चित्र 18.1)। कोशिका काय में कोशिका द्रव्य व प्रारूपिक कोशिकांग व विशेष दानेदार अंगक **निसेल ग्रेन्यूल** पाए जाते हैं। छोटे तंतु जो कोशिका काय से प्रवर्धित होकर लगातार विभाजित होते हैं तथा जिनमें निसेल ग्रेन्यूल भी पाए जाते हैं, दुम्राक्ष्य कहलाते हैं। ये तंतु उद्दीपनों को कोशिका काय की ओर भेजते हैं। एक तंत्रिकोशिका में एक तंत्रिकाक्ष निकलता है। इसका दूरस्थ भाग शाखित व प्रत्येक शाखित भाग का अंतिम छोर लड़ीनुमा संरचना सिनेप्टिक नोब जिसमें **सिनेप्टी पुटिकाएं** होती हैं, इसमें रसायन **न्यूरोट्रांसमीटर्स** पाए जाते हैं। तंत्रिकाक्ष तंत्रिकीय आवेगों को कोशिका काय से दूर सिनेप्स पर अथवा तांत्रिकीयपेशी संधि पर पहुँचाते हैं। तंत्रिकाक्ष तथा दुम्राक्ष की संख्या के आधार पर न्यूरोंस को तीन समूहों में बाँटते हैं। जैसे **बहुध्रुवीय** (एक तंत्रिकाक्ष व दो या अधिक दुम्राक्ष्य युक्त

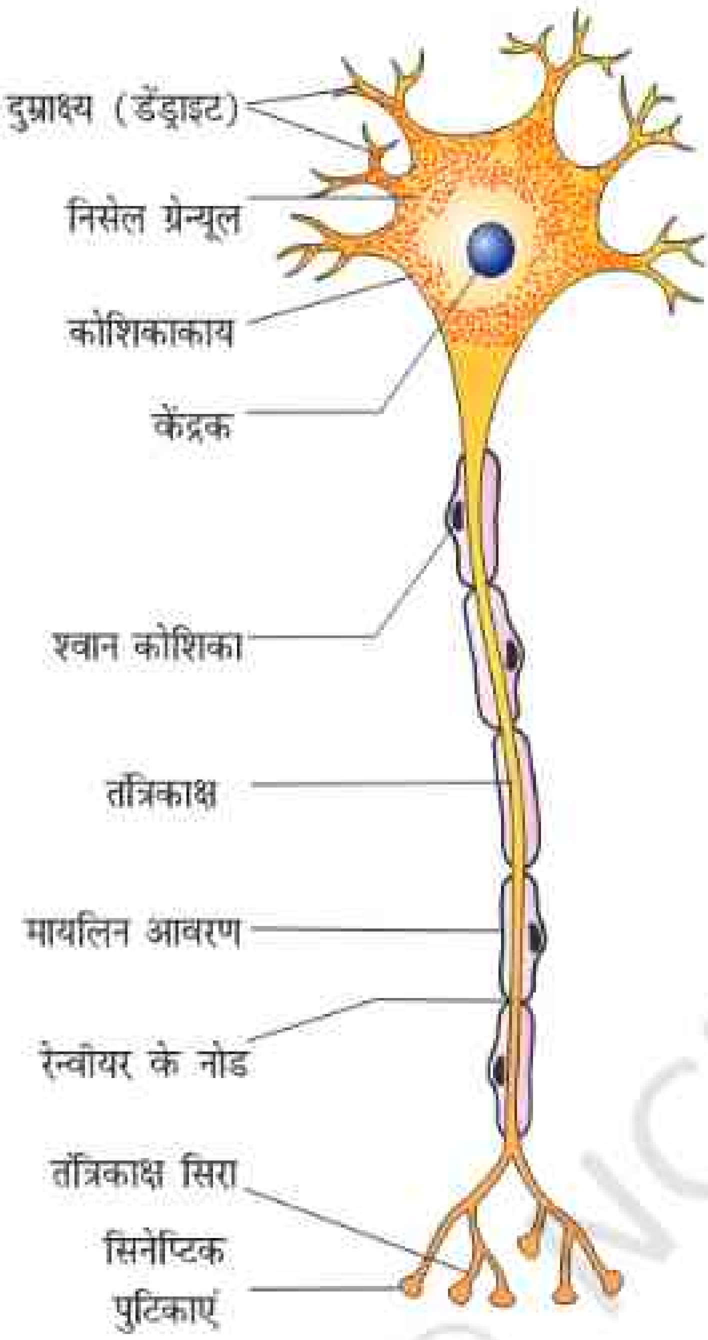

चित्र 18.1 तंत्रिकोशिका की संरचना

जो प्रमस्तिष्क वल्कुट में पाए जाते हैं।) तथा **द्विध्रुवीय** (एक तंत्रिकाक्ष एवं एक द्रुमाक्ष्य जो दृष्टि पटल में पाए जाते हैं।) तंत्रिकाक्ष दो प्रकार के होते हैं: **आच्छदी** व **आच्छदहीन**। आच्छदी तंत्रिका तंतु **श्वान कोशिका** से ढके रहते हैं, जो तंत्रिकाक्ष के चारो ओर माइलिन आवरण बनाती है। माइलिन आवरणों के बीच अंतराल पाए जाते हैं, जिन्हें **रेनवीयर के नोड** कहते हैं। आच्छदी तंत्रिका तंतु मेरू व कपाल तंत्रिकाओं में पाए जाते हैं। आच्छदहीन तंत्रिका तंतु भी श्वान कोशिका से घिरे रहते हैं; लेकिन वे ऐक्सोन के चारों ओर माइलीन आवरण नहीं बनाते हैं। सामान्यतया स्वायत्त तथा कायिक तंत्रिका तंत्र में मिलते हैं।

18.3.1 तंत्रिका आवेगों की उत्पत्ति व संचरण

तंत्रिकोशिकाएं (न्यूरोंस)उद्दीपनशील कोशिकाएं हैं; क्योंकि उनकी झिल्ली ध्रुवीय अवस्था में रहती है। *क्या आप जानते हैं, यह झिल्ली ध्रुवीय अवस्था में क्यों रहती है?* विभिन्न प्रकार के आयन पथ (चैनल) तंत्रिका झिल्ली पर पाए जाते हैं। ये आयन पथ विभिन्न आयनों के लिए चयनात्मक पारगम्य हैं। जब कोई न्यूरॉन आवेगों का संचरण नहीं करते हैं जैसे कि विराम अवस्था में तंत्रिकाक्ष झिल्ली सोडियम आयंस की तुलना में पोटैसियम आयंस तथा क्लोराइड आयंस के लिए अधिक पारगम्य होती है। इसी प्रकार से झिल्ली, तंत्रिकाक्ष द्रव्य में उपस्थित ऋण आवेषित प्रोटिकाल में भी अपारगम्य होती है। धीरे-धीरे तंत्रिकाक्ष के तंत्रिका द्रव्य में K^+ तथा ऋणात्मक आवेषित प्रोटीन की उच्च सांद्रता तथा Na^+ की निम्न सांद्रता होती है। इस भिन्नता के कारण सान्द्रता प्रवणता बनती है। झिल्ली पर पाई जाने वाली इस आयनिक प्रवणता को सोडियम पोटैसियम पंप द्वारा नियमित किया जाता है। इस पंप द्वारा प्रतिचक्र $3Na^+$ बाहर की ओर व $2K^+$ कोशिका में प्रवेश करते हैं। परिणामस्वरूप तंत्रिकाक्ष झिल्ली की बाहरी सतह धन आवेशित; जबकि आंतरिक सतह ऋण आवेशित हो जाती है; इसलिए यह ध्रुवित हो जाती है। विराम स्थिति में प्लाज्मा झिल्ली पर इस विभवांतर को **विरामकला विभव** कहते हैं।

आप यह जानने के लिए उत्सुक होंगे कि तंत्रिकाक्ष पर तंत्रिका आवेग की उत्पत्ति एवं उसका संचरण किस प्रकार होता है? जब किसी एक स्थान पर ध्रुवित झिल्ली पर आवेग होता है (चित्र 18.2 का उदाहरण) तब A स्थल की ओर स्थित झिल्ली Na^+ के लिए मुक्त पारगमी हो जाती है। जिसके फलस्वरूप Na^+ तीव्र गति से अंदर जाते हैं और एक सतह पर विपरीत ध्रुवता हो जाती है अर्थात् झिल्ली की बाहरी सतह ऋणात्मक आवेशित तथा आंतरिक सतह धनात्मक आवेशित हो जाती है। A स्थल पर झिल्ली की विपरीत ध्रुवता होने से विध्रुवीकरण हो जाता है। A झिल्ली की सतह पर विद्युत विभवांतर **क्रियात्मक विभव** कहलाता है, जिसे तथ्यात्मक रूप से **तंत्रिका आवेग** कहा जाता है।

© NCERT not to be republished

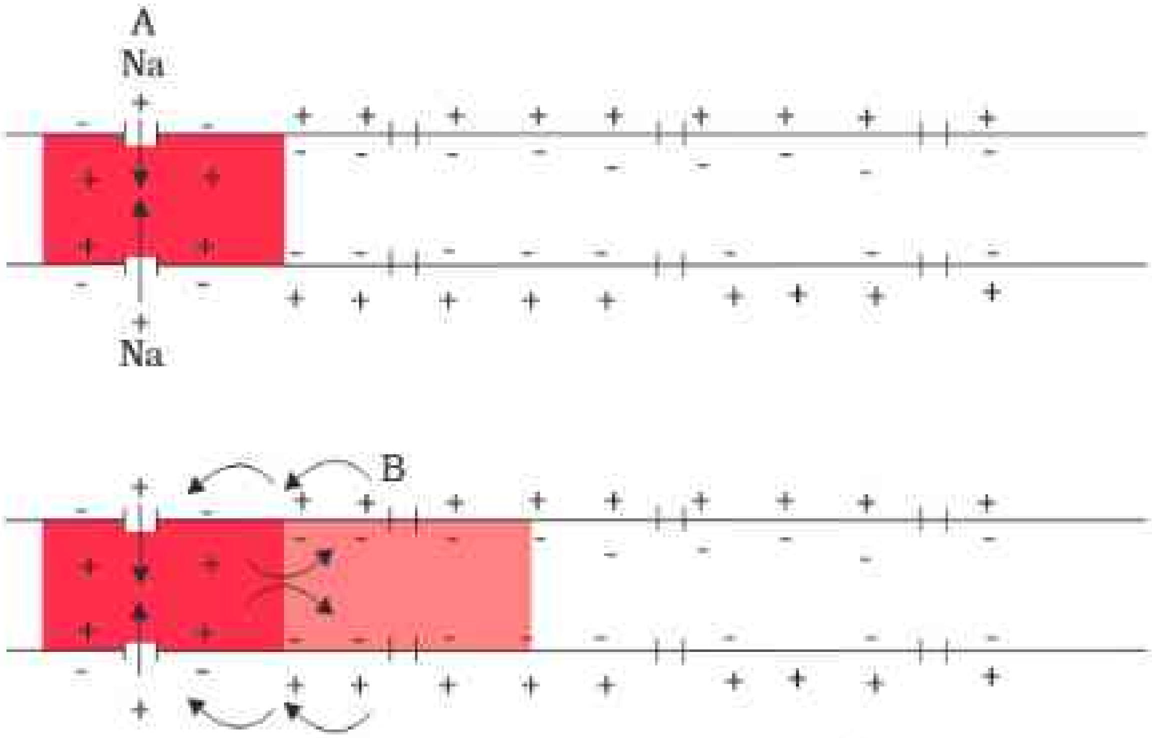

चित्र 18.2 एक तंत्रिकाक्ष में तंत्रिका आवेग का संचरण प्रदर्शित करते हुए आरेख

तंत्रिकाक्ष से कुछ आगे (जैसे स्थान B) झिल्ली की बाहरी सतह पर धनात्मक आवेश तथा आंतरिक सतह पर ऋणात्मक आवेश होता है। परिणामस्वरूप A स्थल से B स्थल की ओर झिल्ली की आंतरिक सतह पर **आवेग विभव** का संचरण होता है। अत: स्थान A पर **आवेग** क्रियात्मक विभव उत्पन्न होता है। तंत्रिकाक्ष की लंबाई के समांतर क्रम का पुनरावर्तन होता है और आवेग का संचरण होता है। उद्दीपन द्वारा प्रेरित Na^+ के लिए बढ़ी पारगम्यता क्षणिक होती है उसके तुरंत पश्चात K^+ की प्रति पारगम्यता बढ़ जाती है। कुछ ही क्षणों के भीतर K^+ झिल्ली के बाहरी ओर परासरित होता है और उद्दीपन के स्थान पर (विराम विभव का) पुन: संग्रह करता है तथा तंतु आगे के उद्दीपनों के लिए एक बार फिर उत्तरदायी हो जाते हैं।

18.3.2 आवेगों का संचरण

तंत्रिका आवेगों का एक न्यूरॉन से दूसरे न्यूरॉन तक संचरण सिनेप्सिस द्वारा होता है। एक **सिनेप्स** का निर्माण पूर्व सिनैप्टिक न्यूरॉन तथा पश्च सिनेप्टिन न्यूरॉन की झिल्ली द्वारा होता है, जो कि **सिनेप्टिक दरार** द्वारा विभक्त हो भी सकती है या नहीं भी। सिनेप्स दो प्रकार के होते हैं, विद्युत सिनेप्स एवं रासायनिक सिनेप्स। विद्युत सिनेप्सिस पर, पूर्व और पश्च सिनेप्टिक न्यूरॉन की झिल्लियाँ एक दूसरे के समीप होती है। एक न्यूरॉन से दूसरे न्यूरॉन तक विद्युत धारा का प्रवाह सिनेप्सिस से होता है। विद्युतीय सिनेप्सिस से आवेग का संचरण, एक तंत्रिकाक्ष से आवेग के संचरण के समान होता है। विद्युतीय-सिनेप्सिस से आवेग का संचरण, रासायनिक सिनेप्सिस से संचरण की तुलना में अधिक तीव्र होता है। हमारे तंत्र में विद्युतीय सिनेप्सिस बहुत कम होते हैं।

रासायनिक सिनेप्स पर, पूर्व एवं पश्च सिनेप्टिक न्यूरोंस की झिल्लियाँ द्रव से भरे अवकाश द्वारा पृथक होती है जिसे सिनेप्टिक दरार कहते हैं (चित्र 18.3)। *क्या आप*

जानते हैं किस प्रकार पूर्व सिनेप्टिक आवेग (सक्रिय विभव) का संचरण सिनेप्टिक दरार से पश्च सिनेप्टिक न्यूरॉन तक करते हैं? सिनेप्सिस द्वारा आवेगों के संचरण में न्यूरोट्रॉसमीटर (तंत्रिका संचारी) कहलाने वाले रसायन सम्मिलित होते हैं। तंत्रिकाक्ष के छोर पर स्थित (आश्रय पुटिकाऐं) तंत्रिका संचारी अणुओं से भरी होती हैं। जब तक आवेग तंत्रिकाक्ष के छोर तक पहुँचता है। यह सिनेप्टिक पुटिका की गति को झिल्ली की ओर उत्तेजित करता है, जहाँ वे प्लाज्मा झिल्ली के साथ जुड़कर तंत्रिका संचारी अणुओं को सिनेप्टिक दरार में मुक्त कर देते हैं। मुक्त किए गए तंत्रिका संचारी अणु पश्च सिनेप्टिक झिल्ली पर स्थित विशिष्ट **ग्राहियों** से जुड़ जाते हैं। इस जुड़ाव के फलस्वरूप आयन चैनल खुल जाते हैं और उसमें आयनों के आगमन से पश्च सिनेप्टिक झिल्ली पर नया विभव उत्पन्न हो जाता है। उत्पन्न हुआ नया विभव उत्तेजक या अवरोधक हो सकता है।

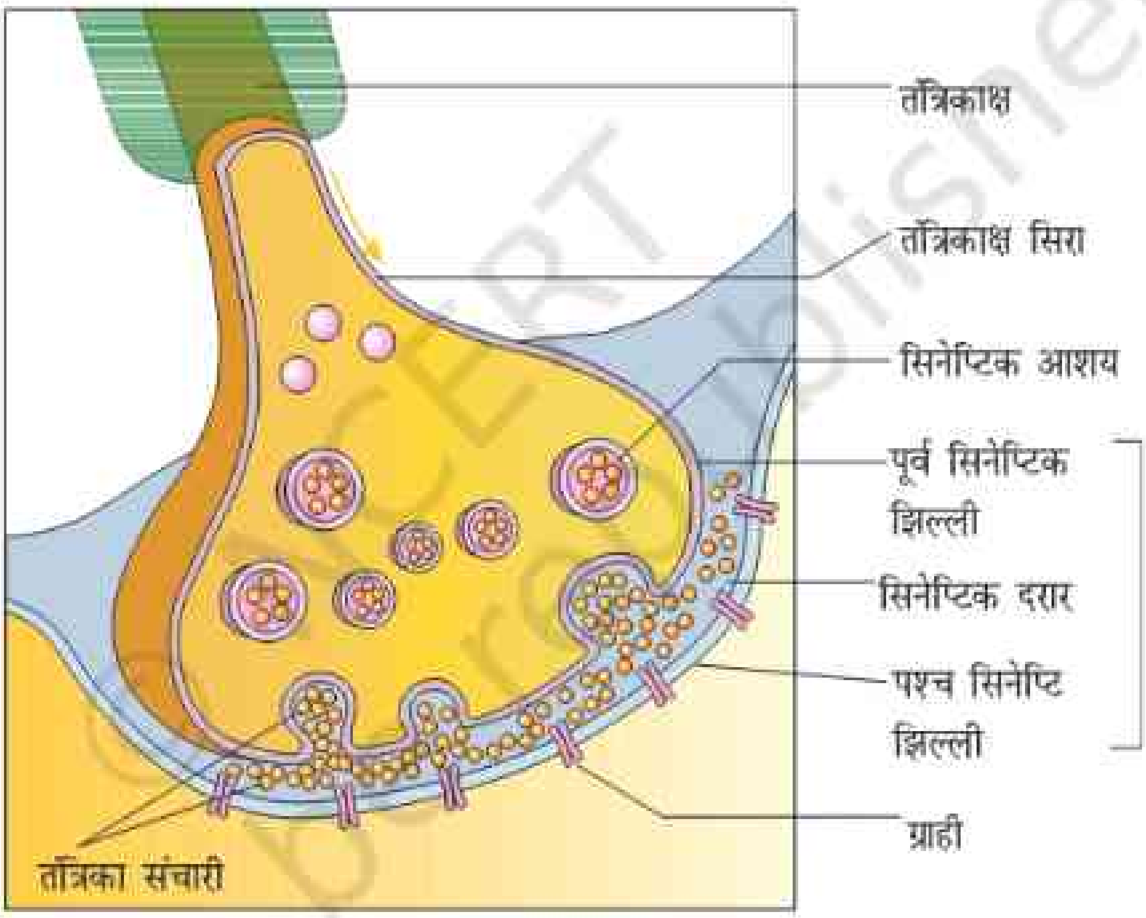

चित्र 18.3 तंत्रिकाक्ष सिरा एवं सिनेप्स को प्रदर्शित करते हुए

18.4 केंद्रीय तंत्रिका तंत्र - मानव मस्तिष्क

मस्तिष्क हमारे शरीर का केंद्रीय सूचना प्रसारण अंग है और यह 'आदेश व नियंत्रण तंत्र' की तरह कार्य करता है। यह ऐच्छिक गमन शरीर के संतुलन, प्रमुख अनेच्छिक अंगों के कार्य (जैसे फेफड़े, हृदय, वृक्क आदि), तापमान नियंत्रण, भूख एवं प्यास, परिवहन, लय, अनेकों अंत:स्रावी ग्रंथियों की क्रियाएं और मानव व्यवहार का नियंत्रण करता है। यह देखने, सुनने, बोलने की प्रक्रिया, याददाश्त, कुशाग्रता, भावनाओं और विचारों का भी स्थल है।

मानव मस्तिष्क खोपड़ी के द्वारा अच्छी तरह सुरक्षित रहता है। खोपड़ी के भीतर **कपालीय मेनिंजेज** से घिरा होता है, जिसकी बाहरी परत **ड्यूरा मैटर**, बहुत पतली मध्य परत **एरेक्नॉइड** और एक आंतरिक परत **पाया मैटर** (जो कि मस्तिष्क ऊतकों के संपर्क में होती है) कहलाती है। मस्तिष्क को 3 मुख्य भागों में विभक्त किया जा सकता है: (i) **अग्र मस्तिष्क**, (ii) **मध्य मस्तिष्क**, और (iii) **पश्च मस्तिष्क** (चित्र 18.4)।

18.4.1 अग्र मस्तिष्क

अग्र मस्तिष्क **सेरीब्रम, थेलेमस** और **हाइपोथेलेमस** का बना होता हैं सेरीब्रम (प्रमस्तिष्क) मानव मस्तिष्क का एक बड़ा भाग बनाता है। एक गहरी लंबवत विदर प्रमस्तिष्क को दो भागों, दाएं व बाएं **प्रमस्तिष्क गोलार्द्धों** में विभक्त करती है। ये गोलार्द्ध तंत्रिका तंतुओं की पट्टी **कार्पस कैलोसम** द्वारा जुड़े होते हैं (चित्र 18.4)।

प्रमस्तिष्क गोलार्द्ध को कोशिकाओं की एक परत आवरित करती है, जिसे प्रमस्तिष्क वल्कुट कहते हैं तथा यह निश्चित गर्तो में बदल जाती है। प्रमस्तिष्क वल्कुट को इसके धूसर रंग के कारण धूसर द्रव्य कहा जाता है। तंत्रिका कोशिका काय सांद्रित होकर इसे रंग प्रदान करती है। प्रमस्तिष्क वल्कुट में प्रेरक क्षेत्र, संवेदी भाग और बड़े भाग होते हैं, जो स्पष्टतया न तो प्रेरक क्षेत्र होते हैं न ही संवेदी। ये भाग **सहभागी क्षेत्र** कहलाते हैं तथा जटिल क्रियाओं जैसे अंतर संवेदी सहभागिता, स्मरण, संपर्क सूत्र आदि के लिए उत्तरदायी होते हैं। इस पथ के रेशे माइलिन आच्छद से आवरित रहते हैं जो कि प्रमस्तिष्क गोलार्द्ध का आंतरिक भाग बनाते हैं। ये इस परत को सफेद अपारदर्शी रूप प्रदान करते

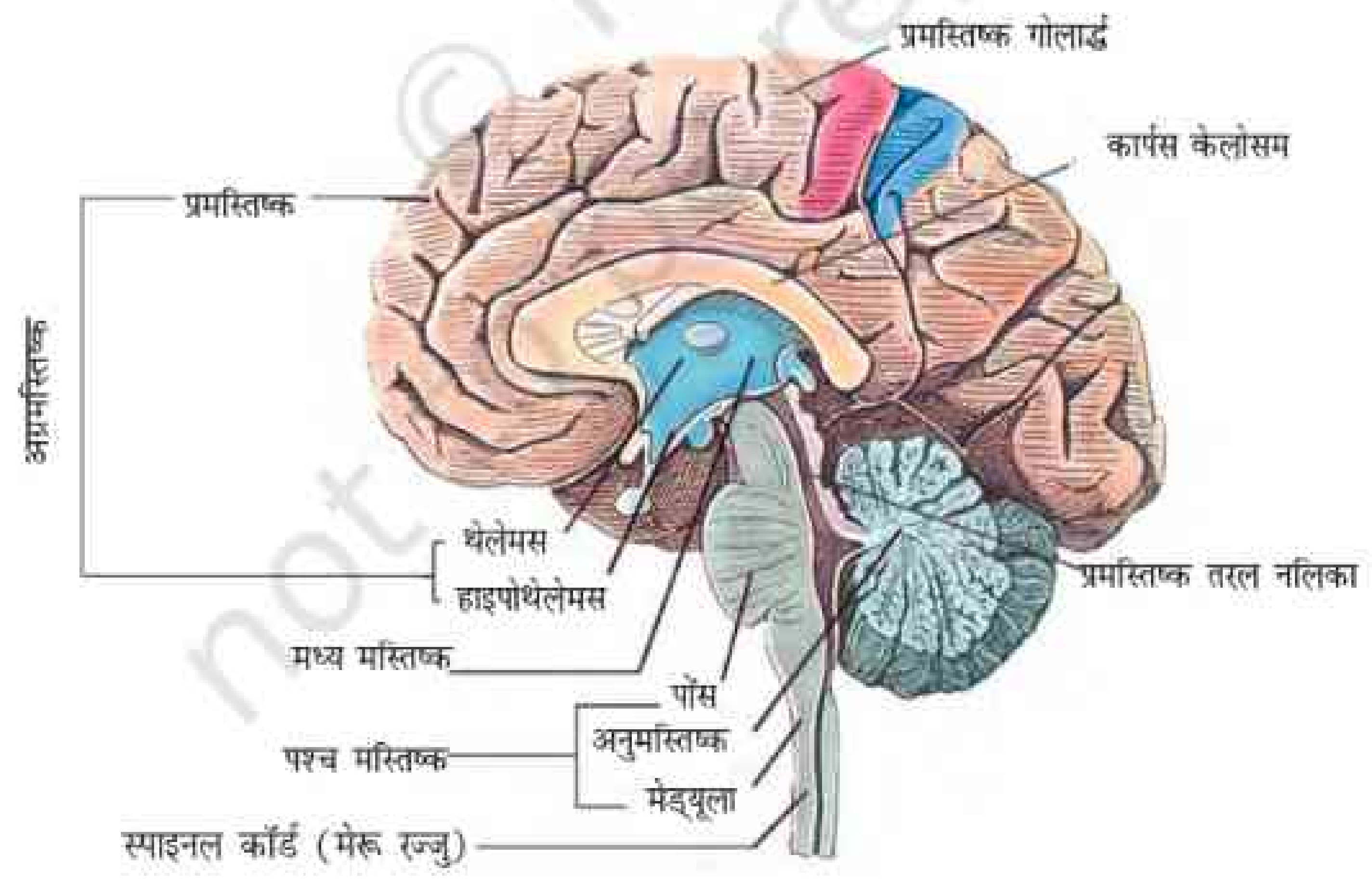

चित्र 18.4 मानव मस्तिष्क का सममितार्धी (सेजीटल) काट

हैं, जिसे श्वेत द्रव्य कहते हैं। प्रमस्तिष्क थेलेमस नामक संरचना के चारों ओर लिपटा होता है, जो कि संवेदी और प्रेरक संकेतों का मुख्य संपर्क स्थल है। थेलेमस के आधार पर स्थित मस्तिष्क का दूसरा मुख्य भाग **हाइपोथेलेमस** स्थित होता है। हाइपोथेलेमस में कई केंद्र होते हैं, जो शरीर के तापमान, खाने और पीने का नियंत्रण करते हैं। इसमें कई तंत्रिका स्रावी कोशिकाएं भी होती हैं जो हाइपोथेलेमिक हार्मोन का स्रवण करती हैं। प्रमस्तिष्क गोलार्द्ध का आंतरिक भाग और अंदरूनी अंगों जैसे एमिगडाला, हिप्पोकैंपस आदि का समूह मिलकर एक जटिल संरचना का निर्माण करता है, जिसे लिंबिकलोब या **लिबिंक तंत्र** कहते हैं। यह हाइपोथेलेमस के साथ मिलकर लैंगिक व्यवहार, मनोभावनाओं की अभिव्यक्ति (जैसे उत्तेजना, खुशी, गुस्सा और भय) आदि का नियंत्रण करता है।

18.4.2 मध्य मस्तिष्क

मध्य मस्तिष्क अग्र मस्तिष्क के थेलेमस/हाइपोथेलेमस तथा पश्च मस्तिष्क के पोंस के बीच स्थित होता है। एक नाल **प्रमस्तिष्क तरल नलिका** मध्य मस्तिष्क से गुजरती है। मध्य मस्तिष्क का ऊपरी भाग चार लोबनुमा उभारों का बना होता है जिन्हें **कॉर्पोरा क्वाड्रीजेमीन** कहते हैं।

18.4.3 पश्च मस्तिष्क

पश्च मस्तिष्क **पोंस**, **अनुमस्तिष्क** और **मध्यांश** (मेड्यूला ओबलोगेंटा) का बना होता है। पोंस रेशेनुमा पथ का बना होता है जो कि मस्तिष्क के विभिन्न भागों को आपस में जोड़ते हैं। अनुमस्तिष्क की सतह विलगित होती है जो न्यूरॉस को अतिरिक्त स्थान प्रदान करती है। मस्तिष्क का मध्यांश मेरूरज्जु से जुड़ा होता है। मध्यांश में श्वसन, हृदय परिसंचारी प्रतिवर्तन और पाचक रसों के स्राव के नियंत्रण केंद्र होते हैं।

मध्य मस्तिष्क, पोंस और मेडुला ओबलोगेटा मस्तिष्क स्तंभ के तीन प्रमुख क्षेत्र हैं। मस्तिष्क स्तंभ, मस्तिष्क और मेरू रज्जू के बीच संयोजन स्थापित करता है।

सारांश

तंत्रिका तंत्र समन्वयी तथा एकीकृत क्रियाओं के साथ ही अंगों की उपापचयी और समस्थैनिक क्रियाओं का नियंत्रण करता है। तंत्रिका तंत्र की क्रियात्मक इकाई न्यूरॉस, झिल्ली के दोनों ओर सांद्रता प्रवणता अंतराल के कारण उत्तेजक कोशिकाएं होती हैं। स्थिर तंत्रिकीय झिल्ली के दोनों ओर का विद्युत विभवांतर विरामकला विभव कहलाता है। तंत्रिकाक्ष झिल्ली पर विद्युत विभावांतर प्रेरित उद्दीपन द्वारा संचारित होता है। इसे सक्रिय विभव कहते हैं। तंत्रिकाक्ष झिल्ली की सतह पर आवेगों का संचरण विध्रुवीकरण और पुनर्ध्रुवीकरण के रूप में होता है। पूर्व सिनेप्टिक न्यूरॉन और पश्च सिनेप्टिक न्यूरॉन की झिल्लियाँ सिनेप्स का निर्माण करती है, जो कि सिनैप्टिक विदर द्वारा पृथक हो सकती है या नहीं होती है। सिनेप्स दो प्रकार के होते हैं – विद्युत सिनैप्स और रासायनिक सिनेप्स। रासायनिक सिनैप्स पर आवेगों के संचरण में भाग लेने वाले रसायन न्यूरोट्रांसमीटर कहलाते हैं।

मानव तंत्रिका तंत्र दो भागों का बना होता है -

(i) केंद्रीय तंत्रिका तंत्र और (ii) परीधीय तंत्रिका तंत्र। सी एन एस मस्तिष्क और मेरूरज्जु का बना होता है। मस्तिष्क को तीन मुख्य भागों में विभाजित किया जा सकता है। (i) अग्र मस्तिष्क (ii) मध्य मस्तिष्क (iii) पश्च मस्तिष्क। अग्र मस्तिष्क प्रमस्तिष्क, थेलेमस और हाइपोथेलेमस से बना होता है। प्रमस्तिष्क लंबवत् दो अर्धगोलार्धों में विभक्त होता है, जो कॉर्पस कैलोसम से जुड़े रहते हैं। अग्र मस्तिष्क का महत्वपूर्ण भाग हाइपोथेलेमस शरीर के तापक्रम, खाने और पीने आदि क्रियाओं का नियंत्रण करता है। प्रमस्तिष्क गोलार्द्धों का आंतरिक भाग और संगठित गहराई में स्थित संरचनाएं मिलकर एक जटिल संरचना बनाते हैं, जिसे लिम्बिक तंत्र कहते हैं और यह सूंघने, प्रतिवर्त्ती क्रियाओं, लैंगिक व्यवहार के नियंत्रण, मनोभावों की अभिव्यक्ति और अभिप्रेरण से संबंधित होता है। मध्य मस्तिष्क ग्राही व एकीकरण तथा एकीकृत दृष्टि तंतु तथा श्रवण अंतर क्रियाओं से संबंधित है।

पश्च मस्तिष्क पोंस, अनु मस्तिष्क और मेड्यूला का बना होता है। अनु मस्तिष्क कर्ण की अर्द्धचंद्राकार नलिकाओं तथा श्रवण तंत्र से प्राप्त होने वाली सूचनाओं को एकीकृत करता है। मध्यांश (मैड्यूला) में श्वसन, हृदय परिसंचयी, प्रतिवर्तित और जठर स्रावों के नियंत्रण केंद्र होते हैं। पोंस रेशेनुमा पथ का बना होता है, जो मस्तिष्क के विभिन्न भागों को आपस में जोड़ता है। परिधीय तंत्रिका तंत्र को प्राप्त उद्दीपनों के लिए अनैच्छिक प्रतिक्रियाओं को प्रतिवर्ती क्रियाएं कहा जाता है।

अभ्यास

1. निम्नलिखित संरचना का संक्षेप में वर्णन कीजिए-
   (अ) मस्तिष्क
2. निम्नलिखित की तुलना कीजिए-
   (अ) केंद्रीय तंत्रिका तंत्र और परिधीय तंत्रिका तंत्र
   (ब) स्थिर विभव और सक्रिय विभव
3. निम्नलिखित प्रक्रियाओं का वर्णन कीजिए-
   (अ) तंत्रिका तंतु की झिल्ली का ध्रुवीकरण
   (ब) तंत्रिका तंतु की झिल्ली का विध्रुवीकरण
   (स) रासायनिक सिनेप्स द्वारा तंत्रिका आवेगों का संवहन
4. निम्नलिखित का नामांकित चित्र बनाइए-
   (अ) न्यूरॉन (ब) मस्तिष्क
5. निम्नलिखित पर संक्षिप्त टिप्पणी लिखिए-
   (अ) तंत्रीय समन्वयन (ब) अग्र मस्तिष्क
   (स) मध्य मस्तिष्क (द) पश्च मस्तिष्क
6. निम्न पर संक्षिप्त टिप्पणी दीजिए-
   (अ) सिनेप्टिक संचरण की क्रियाविधि
7. (अ) सक्रिय विभव उत्पन्न करने में Na^+ की भूमिका का वर्णन कीजिए।
   (ब) सिनेप्स पर न्यूरोट्रांसमीटर मुक्त करने में Ca^{++} की भूमिका का वर्णन कीजिए।

© NCERT not to be republished

8. निम्न के बीच में अंतर बताइए-
   (अ) आच्छादित और अनाच्छादित तंत्रिकाक्ष
   (ब) दुम्राक्ष्य और तंत्रिकाक्ष
   (स) थेलेमस और हाइपोथेलेमस
   (द) प्रमस्तिष्क और अनुमस्तिष्क
9. (अ) मानव मस्तिष्क का सर्वाधिक विकसित भाग कौनसा है?
   (ब) केंद्रीय तंत्रिका तंत्र का कौनसा भाग मास्टर क्लॉक की तरह कार्य करता है?
10. निम्न में भेद स्पष्ट कीजिए-
   (अ) संवेदी तंत्रिका एवं प्रेरक तंत्रिका
   (ब) आच्छादित एवं अनाच्छादित तंत्रिका तंतु में आवेग संचरण
   (स) कपालीय तंत्रिकाएं एवं मेरू तंत्रिकाए

© NCERT not to be republished

11081CH22

अध्याय 19

रासायनिक समन्वय तथा एकीकरण

19.1 अंत:स्रावी ग्रंथियां और हार्मोन

19.2 मानव अंत:स्रावी तंत्र

19.3 हृदय, वृक्क और जठर आंत्रीय पथ के हार्मोन

19.4 हार्मोन क्रिया की क्रियाविधि

आप अध्ययन कर चुके हैं कि तंत्रिका तंत्र विभिन्न अंगों के बीच एक बिंदु दर बिंदु द्रुत समन्वय का कार्य करता है। तंत्रिकीय समन्वय काफी तेज लेकिन अल्प अवधि का होता है। तंत्रिका तंतुओं द्वारा शरीर की सभी कोशिकाओं का तंत्रिकायन नहीं होने के करण कोशिकीय क्रियाओं के लिए तथा निरंतर नियमन के लिए एक विशेष प्रकार के समन्वय की आवश्यकता होती है। यह कार्य हार्मोन द्वारा संपादित होता है। तंत्रिका तंत्र और अंत:स्रावी तंत्र मिलकर शरीर की शरीर क्रियात्मक कार्यों का समन्वय और नियंत्रण करते हैं।

19.1 अंत:स्रावी ग्रंथियां और हार्मोन

अंत:स्रावी ग्रंथियों में नलिकाएं नहीं होती हैं अत: वे नलिकाविहीन ग्रंथियां कहलाती हैं। इनके स्राव हार्मोन कहलाते हैं। हार्मोन की चिरसम्मत परिभाषा के अनुसार 'हार्मोन अंत:स्रावी ग्रंथियों द्वारा स्रवित रक्त में मुक्त किए जाने वाले रसायन हैं, जो दूरस्थ लक्ष्य अंग तक पहुँचाए जाते हैं।' परंतु इस परिभाषा को अब रूपांतरित किया गया है जिसके अनुसार 'हार्मोन सूक्ष्म मात्रा में उत्पन्न होने वाले अपोषक रसायन हैं जो अंतरकोशिकीय **संदेशवाहक** के रूप में कार्य करते हैं' इस नई परिभाषा के अंतर्गत सुनियोजित अंत:स्रावी ग्रंथियों से स्रावित हार्मोन के अतिरिक्त कई नये अणु भी सम्मिलित हो जाते हैं। अकशेरुकियों में कम हार्मोन के साथ एक सरल अंत:स्रावी तंत्र होता है जबकि कशेरूकियों में कई रसायन हार्मोन की तरह कार्य कर उनमें समन्वय स्थापित करते हैं। यहाँ मानव अंत:स्रावी तंत्र का वर्णन किया गया है।

© NCERT not to be republished

19.2 मानव अंतःस्रावी तंत्र

अंतःस्रावी ग्रंथियां और शरीर के विभिन्न भागों में स्थित हार्मोन स्रवित करने वाले ऊतक/कोशिकाएं मिलकर अंतःस्रावी तंत्र का निर्माण करते हैं। पीयूष ग्रंथि, पिनियल ग्रंथि, थाइरॉयड, एड्रीनल, अग्नाशय, पैराथायरॉइड, थाइमस और जनन ग्रंथियां (नर में वृषण और मादा में अंडाशय) हमारे शरीर के सुनियोजित अंतःस्रावी अंग हैं (चित्र 19.1)। इनके अतिरिक्त कुछ अन्य अंग जैसे कि जठर-आंत्रीय मार्ग, यकृत, वृक्क, हृदय आदि भी हार्मोन का उत्पादन करते हैं। मानव शरीर की सभी प्रमुख अंतःस्रावी ग्रंथियों तथा हाइपोथैलेमस की संरचना और उनके कार्य का संक्षिप्त विवरण अगले भाग में दिया गया है।

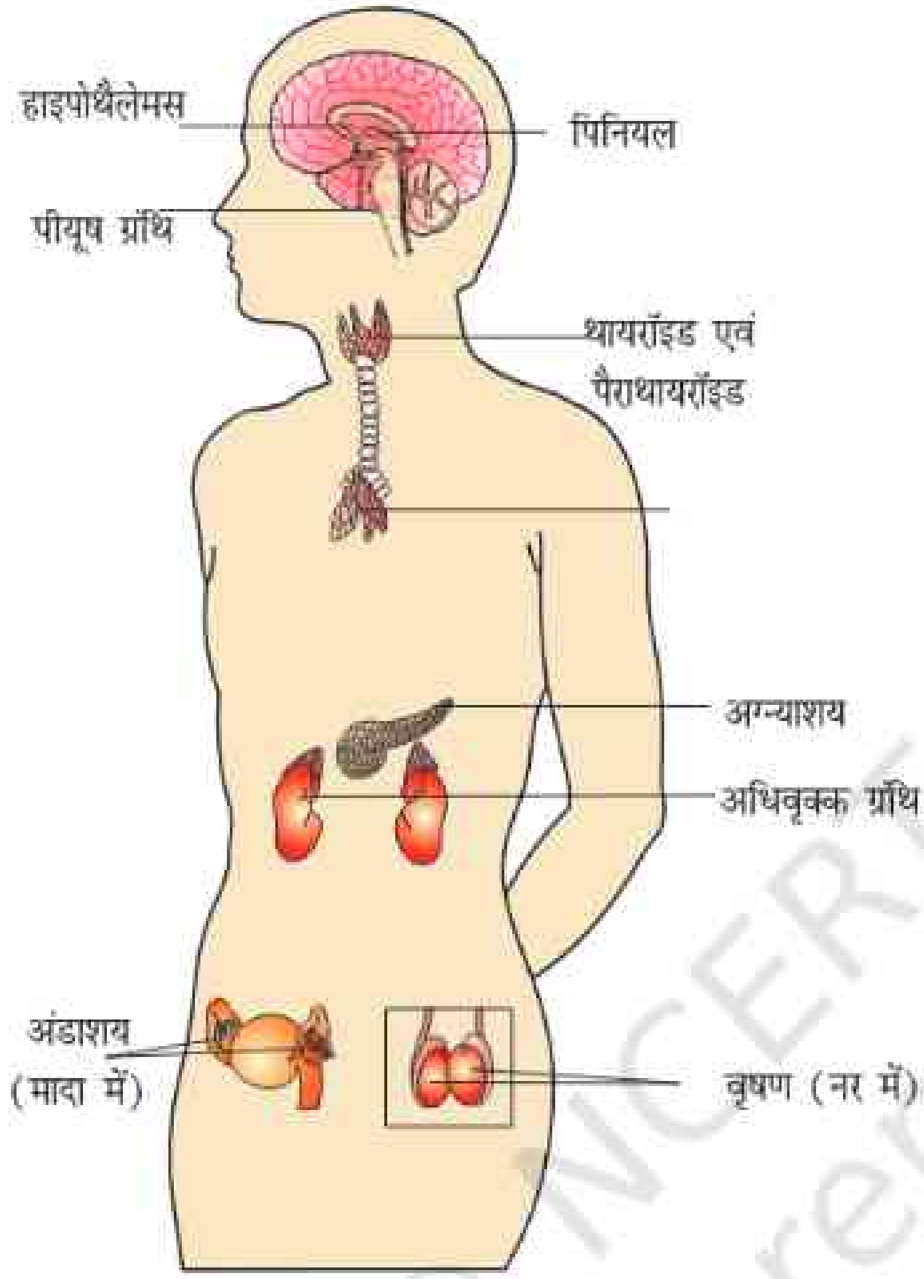

चित्र 19.1 अंतःस्रावी ग्रंथियों की स्थिति

19.2.1 हाइपोथैलेमस

जैसा कि आप जानते हैं कि हाइपोथैलेमस, डाइनसिफेलॉन (अग्रमस्तिष्क पश्च) का आधार भाग है और यह शरीर के विविध प्रकार के कार्यों का नियंत्रण करता है। इसमें हार्मोन का उत्पादन करने वाली कई तंत्रिकास्रावी कोशिकाएं होती हैं जिन्हें न्यूक्ली कहते हैं। ये हार्मोन पीयूष ग्रंथि से स्रवित होने वाले हार्मोन के संश्लेषण और स्राव का नियंत्रण करते हैं। हाइपोथैलेमस से स्रावित होने वाले हार्मोन दो प्रकार के होते हैं-

मोचक हार्मोन (जो पीयूष ग्रंथि से हार्मोन से स्राव को प्रेरित करते हैं) और निरोधी हार्मोन (जो पीयूष ग्रंथि से हार्मोन को रोकते हैं)। उदाहरणार्थः हाइपोथैलेमस से निकलने वाला गोनेडोट्रोफिन मुक्तकारी हार्मोन के स्राव पीयूष ग्रंथि में गोनेडोट्रोफिन हार्मोन के संश्लेषण एवं स्राव को प्रेरित करता है। वहीं दूसरी ओर हाइपोथैलेमस से ही स्रवित सोमेटोस्टेटिन हार्मोन, पीयूष ग्रंथि से वृद्धि हार्मोन के स्राव का रोधक है। ये हार्मोन हाइपोथैलेमस की तंत्रिकोशिकाओं से प्रारंभ होकर, तंत्रिकाक्ष होते हुए तंत्रिका सिरों पर मुक्त कर दिए जाते हैं। ये हार्मोन निवाहिका परिवहन-तंत्र द्वारा पीयूष ग्रंथि तक पहुंचते हैं और अग्र पीयूष ग्रंथि के कार्यों का नियमन करते हैं। पश्च पीयूष ग्रंथि का तंत्रिकीय नियमन सीधे हाइपोथैलेमस के अधीन होता है (चित्र 19.2)।

19.2.2 पीयूष ग्रंथि

पीयूष ग्रंथि एक सेला टर्सिका नामक अस्थिल गुहा में स्थित होती है और एक वृंत द्वारा हाइपोथैलेमस से जुड़ी होती है (चित्र 19.2)। आंतरिकी के अनुसार पीयूष ग्रंथि **एडिनोहाइपोफाइसिस** और **न्यूरोहाइपोफाइसिस** नामक दो भागों में विभाजित होती है। एडिनोहाइपोफाईसिस दो भागों का बना होता है – पार्स डिस्टेलिस और पार्स इंटरमीडिया। पार्स डिस्टेलिस को साधारणतया अग्र पीयूष ग्रंथि कहते हैं, जिससे **वृद्धि हार्मोन** या **सोमेटोट्रोपिन** (GH), **प्रोलैक्टिन** (PRL) या **मेमोट्रोपिन, थाइरॉइड प्रेरक हार्मोन** (TSH) **एड्रिनोकार्टिकोट्रॉफिक हार्मोन** (ACTH) या **कॉर्टिकोट्रोफिन, ल्यूटीनाइजिंग हार्मोन** (LH) और **पुटिका प्रेरक हार्मोन** का स्राव करता है। पार्स इंटरमीडिया एक मात्र हार्मोन **लेनोसाइट प्रेरक हार्मोन** (MSH) या मेलेनोट्रोफिन का स्राव करता है। यद्यपि मानव में पार्स इंटरमीडिया (मध्यपिंड) पार्स डिस्टेलिस (दूरस्थ पिंड) में लगभग जुड़ा होता है।

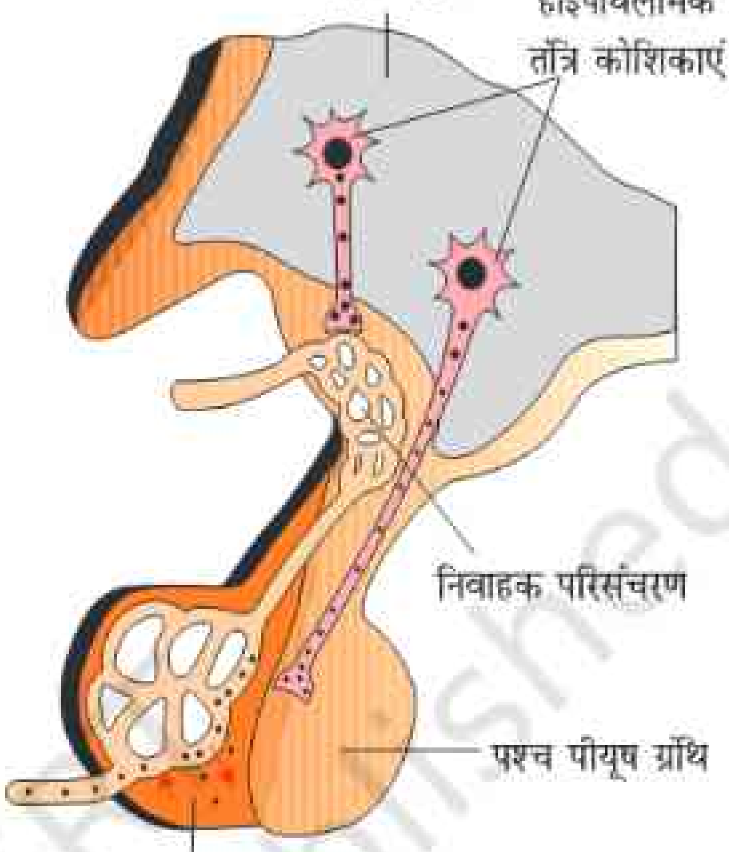

चित्र 19.2 पीयूष ग्रंथि तथा हाइपोथैलेमस के साथ इसके संबद्धता की आरेखीय प्रस्तुति

न्यूरोहाइपोफाइसिस (पार्स नर्वोसा) या पश्च पीयूष ग्रंथि, यह हाइपोथैलेमस द्वारा उत्पादित किए जाने वाले हार्मोन **ऑक्सीटॉसिन** और **वेसोप्रेसिन** का संग्रह और स्राव करती है। ये हार्मोन वास्तव में हाइपोथैलेमस द्वारा संश्लेषित होते हैं और तंत्रिकाक्ष होते हुए पश्च पीयूष ग्रंथि में पहुँचा दिए जाते हैं।

वृद्धिकारी हार्मोन (GH) के अति स्राव से शरीर की असामान्य वृद्धि होती है जिसे जाइगेंटिज्म (अतिकायकता) कहते हैं और इसके अल्प स्राव से वृद्धि अवरुद्ध हो जाती है जिसे पिट्यूटरी ड्वार्फिज्म (बौनापन या वामनता) कहते हैं। वयस्कों में विशेष रूप से मध्य आयुवर्ग के लोगों में वृद्धिकारी हार्मोन के अतिस्राव से अत्यधिक विकृति (विशेषत: चेहरे की) हो जाती है जिसे **अतिकायता** (एक्रोगिगेली) कहते हैं। इससे गंभीर जटिलताएँ उत्पन्न हो सकती हैं, तथा यदि नियंत्रित न किया गया तो समय से पूर्व मृत्यु भी हो सकती हैं। जीवन के प्रारंभिक काल में रोग की पहचान बहुत कठिन है तथा अधिकतर मामलों में अनेक वर्षों तक रोग का पता ही नहीं चलता है, जब तक कि बाह्य अभिलक्षण दिखाई नहीं देने लगते हैं। प्रोलैक्टिन हार्मोन स्तन ग्रंथियों की वृद्धि और उनमें दुग्ध निर्माण का नियंत्रण करता है। थाइरॉइड प्रेरक हार्मोन थाइरॉइड ग्रंथियों पर कार्य कर उनसे थाइरॉइड हार्मोन के संश्लेषण और स्राव को प्रेरित करता है। एड्रिनोकार्टिकोट्रॉफिक हार्मोन (ACTH) एड्रीनल वल्कुट पर कार्य करता है और इसे **ग्लूकोकॉर्टिकॉइड्स** नामक, स्टीरॉइड हार्मोन के संश्लेषण और स्रवण के लिए प्रेरित करता है। ल्यूटिनाइजिंग और

पुटिका प्रेरक हार्मोन जननांगों की क्रिया को प्रेरित करते हैं और लिंगी हार्मोन का उत्पादन करते हैं अतः **गोनेडोट्रोपिन** कहलाते हैं। नरों में ल्यूटिनाइजिंग हार्मोन, एंड्रोजेन नामक हार्मोन के संश्लेषण और स्राव के लिए प्रेरित करता है। इसी तरह नरों में पुटिका प्रेरक हार्मोन और **एंड्रोजेन** शुक्रजनन को नियंत्रित करता है। मादाओं में ल्यूटिनाइजिंग हार्मोन पूर्ण विकसित पुटिकाओं (ग्राफियन पुटिका) से अंडोत्सर्ग को प्रेरित करता है और ग्राफियन पुटिका के बचे भाग से कॉर्पस ल्यूटियम बनाता है। पुटिका प्रेरक हार्मोन, मादाओं में अंडाशयी पुटिकाओं की वृद्धि और परिवर्धन को प्रेरित करता है।

मेलानोसाइट प्रेरक हार्मोन, मेलानोसाइट्स (मेलानीन युक्त कोशिकाओं) पर क्रियाशील होता है तथा त्वचा की वर्णकता का नियमन करता है। ऑक्सीटॉसिन हमारे शरीर की चिकनी पेशियों पर कार्य करता है और उनके संकुचन को प्रेरित करता है। मादाओं में यह प्रसव के समय गर्भाशयी पेशियों के संकुचन और दुग्ध ग्रंथियों से दूध के स्राव को प्रेरित करता है। वेसोप्रेसिन मुख्यतः वृक्क की दूरस्थ संवलित नलिका से जल एवं आयनों के पुनरावशोषण को प्रेरित करता है, जिससे मूत्र के साथ जल का ह्रास (डाइयूरेसिस) कम हो। अतः इसे प्रतिमूत्रल हार्मोन या **एंटी-डाइयूरेटिक हार्मोन** (ADH) भी कहते हैं। ए.डी.एच. के संश्लेषण अथवा स्रावण को प्रभावित करने वाली विकृति के परिणामस्वरूप वृक्क की जल संरक्षण की क्षमता में ह्रास होता है। फलतः जल का ह्रास एवं निर्जलीकरण हो जाता है। इस अवस्थिति को **उदकमेह** (डायबिटीज इन्सीपिडस) कहते हैं।

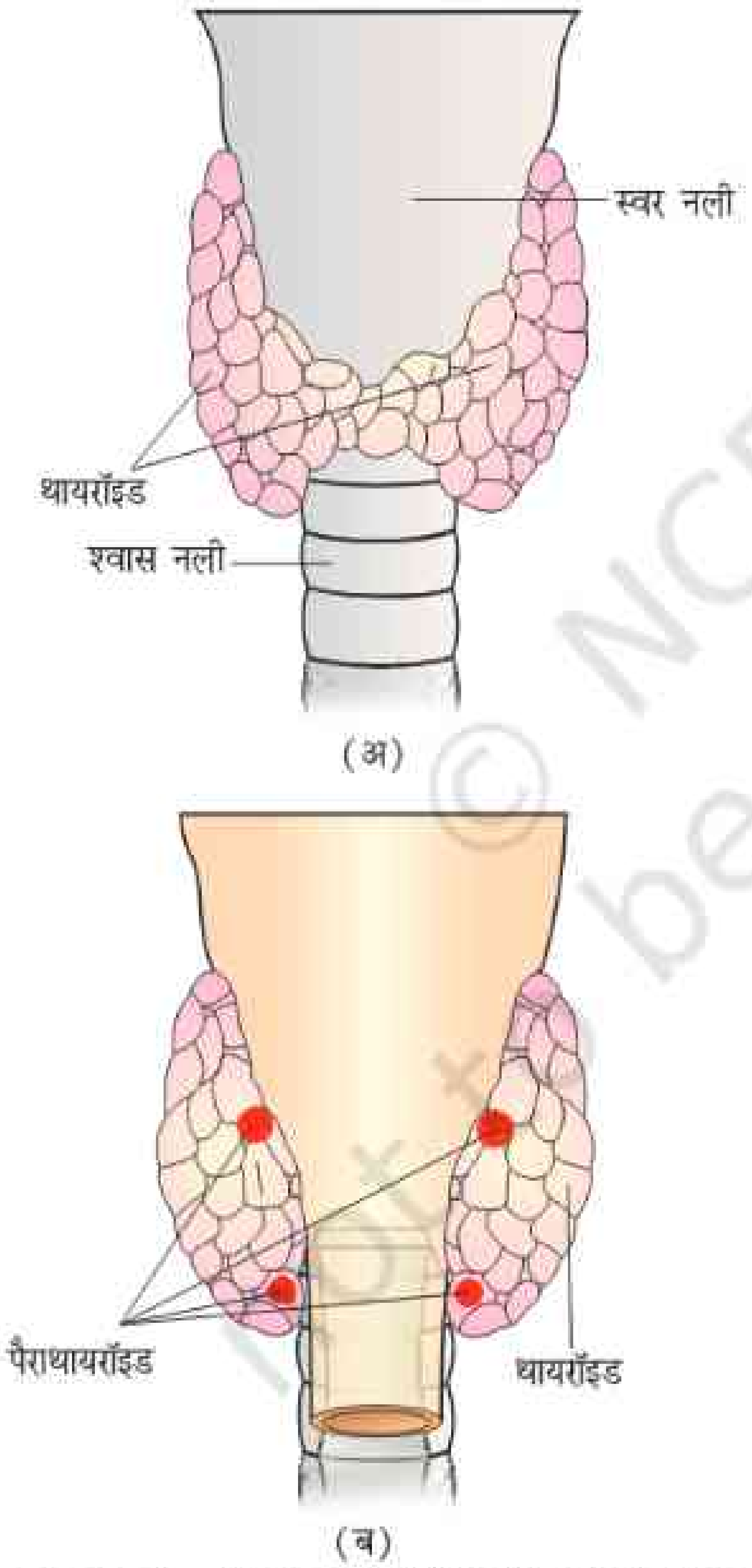

चित्र 19.3 थायरॉइड की स्थिति की आरेखी प्रस्तुति (अ) पृष्ठ दृश्य (ब) अधर दृश्य

19.2.3 पिनियल ग्रंथि

पिनियल ग्रंथि अग्र मस्तिष्क के पृष्ठीय (ऊपरी) भाग में स्थित होती है। पिनियल ग्रंथि **मेलेटोनिन** हार्मोन स्रावित करती है। मेलेटोनिन हमारे शरीर की दैनिक लय (24 घंटे) के नियमन का एक महत्वपूर्ण कार्य करता है। उदाहरण के लिए यह सोने-जागने के चक्र एवं शरीर के तापक्रम को नियंत्रित करता है। इन सबके अतिरिक्त मेलेटोनिन उपापचय, वर्णकता, मासिक (आर्तव) चक्र प्रतिरक्षा क्षमता को भी प्रभावित करता है।

19.2.4 थाइरॉइड ग्रंथि

थाइरॉइड ग्रंथि श्वास नली के दोनों ओर स्थित दो पालियों से बनी होती है (चित्र 19.3)। दोनों पालियाँ संयोजी

ऊतक के पतली पल्लीनुमा इस्थमस से जुड़ी होती हैं। प्रत्येक थाइरॉइड **ग्रंथि पुटकों** और **भरण ऊतकों** की बनी होती हैं। प्रत्येक थाइरॉइड पुटक एक गुहा को घेरे पुटक कोशिकाओं से निर्मित होता है। ये पुटक कोशिकाएं दो हार्मोन, **टेट्राआयडोथाइरोनीनस** (T_4) अथवा **थायरोक्सीन** तथा **ट्राईआइडोथायरोनीन** (T_3) का संश्लेषण करती हैं। थाइरॉइड हार्मोन के सामान्य दर से संश्लेषण के लिए आयोडीन आवश्यक है। हमारे भोजन में आयोडीन की कमी से **अवथाइरॉइडता** एवं थाइरॉइड ग्रंथि की वृद्धि हो जाती है, जिसे साधारणतया **गलगंड** कहते हैं। गर्भावस्था के समय अवथाइरॉइडता के कारण गर्भ में विकसित हो रहे बालक की वृद्धि विकृत हो जाती है। इससे बच्चे की अवरोधित वृद्धि (क्रिटेनिज्म) या वामनता तथा मंदबुद्धि, त्वचा असामान्यता, मूक बधिरता आदि हो जाती हैं। वयस्क स्त्रियों में अवथाइराइडता मासिक चक्र को अनियमित कर देता है। थाइरॉइड ग्रंथि के कैंसर अथवा इसमें गाँठों की वृद्धि से थाइरॉइड हारर्मोन के संश्लेषण की दर असामान्य रूप से अधिक हो जाती है। इस स्थिति को **थाइरॉइड अतिक्रियता** कहते हैं, जो शरीर की कार्यिकी पर प्रतिकूल प्रभाव डालती है।

थाइरॉइड हार्मोन आधारीय उपापचयी दर के नियमन में मुख्य भूमिका निभाते हैं। ये हार्मोन लाल रक्त कणिकाओं के निर्माण की प्रक्रिया में भी सहायता करते हैं। थाइरॉइड हार्मोन कार्बोहाइड्रेट्, प्रोटीन और वसा के उपापचय (संश्लेषण और विखंडन) को भी नियंत्रित करते हैं। जल और विद्युत उपघट्यों का नियमन भी थाइरॉइड हार्मोन प्रभावित करते हैं। थाइरॉइड ग्रंथि से एक प्रोटीन हार्मोन, थाइरोकैल्सिटोनिन (TCT) का भी स्राव होता है जो रक्त में कैल्सियम स्तर को नियंत्रण करता है। **नेत्रोत्सेधी गलगण्ड (एक्सऑप्थैलमिक ग्वायटर)** थाइरॉइड अतिक्रियता का एक रूप है। थाइरॉइड ग्रंथि में वृद्धि, नेत्र गोलकों का बाहर की ओर उभर आना, आधारी उपापचय दर में वृद्धि एवं भार में ह्रास इसके अभिलक्षण हैं। इसे **ग्रेवस् रोग** भी कहते हैं।

19.2.5 पैराथाइरॉइड ग्रंथि

मानव में चार पैराथाइरॉइड ग्रंथियाँ, थाइरॉइड ग्रंथि की पश्च सतह पर स्थित होती है। थाइरॉइड ग्रंथि की दो पालियों पर प्रत्येक में एक जोड़ी पैराथाइरॉइड ग्रंथियाँ पाई जाती हैं (चित्र 19.3ब), जो **पैराथाइरॉइड हार्मोन** (PTH) नामक एक पेप्टाइड हार्मोन का स्राव करती हैं। पीटीएच का स्राव रक्त के साथ परिसंचारित कैल्सियम आयन के द्वारा नियमित होता है।

पैराथाइरॉइड हार्मोन रक्त में Ca^{2+} के स्तर को बढ़ाता है। पी टी एच अस्थियों पर कार्य कर अस्थि अवशोषण (विघटन/विखनिजन) प्रक्रम में सहायता करता है। पी टी एच वृक्क नलिकाओं से Ca^{2+} के पुनरावशोषण तथा पचित भोजन से Ca^{2+} के अवशोषण को भी प्रेरित करता है। अतः यह स्पष्ट है कि पी टी एच एक अतिकैल्सियम रक्तता हार्मोन (hypercalemic hormone) है, क्योंकि यह रक्त में Ca^{2+} स्तर को बढ़ाता है। यह थाइरोकैल्सिटोनिन के साथ मिलकर, यह शरीर में Ca^{2+} स्तर को बढ़ाता है। टी सी टी के

साथ मिलकर, यह शरीर में Ca^{2+} का संतुलन बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

19.2.6 थाइमस ग्रंथि

थाइमस ग्रंथि महाधमनी के उदर पक्ष पर उरोस्थि के पीछे फेफड़ों के बीच स्थित एक पालीयुक्त संरचना है। थाइमस ग्रंथि प्रतिरक्षा तंत्र के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। यह ग्रंथि **थाइमोसिन** नामक पेप्टाइड हार्मोन का स्राव करती है। थाइमोसिन टी-लिंफोसाइट्स के विभेदीकरण में मुख्य भूमिका निभाते हैं जो **कोशिका माध्य प्रतिरक्षा** के लिए महत्वपूर्ण है। इसके अतिरिक्त **थाइमोसिन तरल प्रतिरक्षा** (humoral immunity) के लिए प्रतिजैविक के उत्पादन को भी प्रेरित करते हैं। बढ़ती उम्र के साथ थाइमस का अपघटन होने लगता है, फलस्वरूप थाइमोसिन का उत्पादन घट जाता है। इसी के परिणामस्वरूप वृद्धों में प्रतिरक्षा प्रतिक्रिया कमजोर पड़ जाती है।

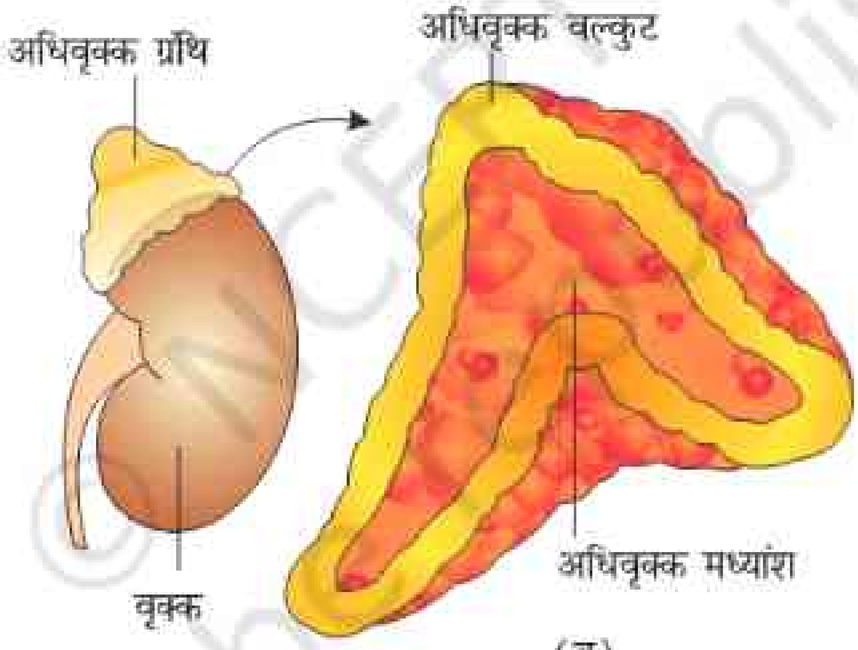

चित्र 19.4 (अ) वृक्क एवं अधिवृक्क ग्रंथि (ब) अधिवृक्क ग्रंथि के दो भागों का अनुप्रस्थकाट प्रदर्शन

19.2.7 अधिवृक्क ग्रंथि

हमारे शरीर में प्रत्येक वृक्क के अग्र भाग में एक स्थित एक जोड़ी अधिवृक्क ग्रंथियां होती हैं, (चित्र 19.4 अ)। ग्रंथियां दो प्रकार के ऊतकों से निर्मित होती हैं। ग्रंथि के बीच में स्थित ऊतक **अधिवृक्क मध्यांश** और बाहरी ओर स्थित ऊतक **अधिवृक्क वल्कुट** कहलाता है (चित्र 19.4 ब)।

अधिवृक्क मध्यांश दो प्रकार के हार्मोन का स्राव करता है जिन्हें एड्रिनलीन या एपिनेफ्रीन और **नॉरएंड्रिनलीन** या **नारएपिनेफ्रीन** कहते हैं। इन्हें सम्मिलित रूप में

कैटेकॉलमीनस कहते हैं। एड्रिनलीन और नॉरएड्रिनलीन किसी भी प्रकार के दबाव या आपातकालीन स्थिति में अधिकता में तेजी से स्रावित होते हैं, इसी कारण ये **आपातकालीन हार्मोन** या **युद्ध हार्मोन** या **फ्लाइट हार्मोन** कहलाते हैं। ये हार्मोन सक्रियता (तेजी), आँखों की पुतलियों के फैलाव, रोंगटे खड़े होना, पसीना आदि को बढ़ाते हैं। दोनों हार्मोन हृदय की धड़कन, हृदय संकुचन की क्षमता और श्वसन दर को बढ़ाते हैं। कैटेकोलएमीन, ग्लाइकोजन के विखंडन को भी प्रेरित करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप रक्त में ग्लूकोज का स्तर बढ़ जाता है। साथ ही ये लिपिड और प्रोटीन के विखंडन को भी प्रेरित करते हैं।

अधिवृक्क वल्कुट को तीन परतों में विभाजित किया जा सकता है- **जोना रेटिक्यूलेरिस** (आंतरिक परत), **जोना फेसिक्यूलेटा** (मध्य परत) और **जोना ग्लोमेरूलोसा** (बाहरी परत)। अधिवृक्क वल्कुट कई हार्मोन का स्राव करता है- जिन्हें सम्मिलित रूप से **कोर्टिकोस्टीरॉइड हार्मोन** या **कोर्टिकॉइड** कहते हैं, जो कॉर्टिकोस्टीरॉइड कार्बोहाइड्रेट के उपापचय में संलग्न होते हैं **ग्लूकोकार्टिकॉइड** कहलाते हैं। हमारे शरीर में, कॉर्टिसॉल मुख्य ग्लूकोकॉर्टिकॉइड है। जल और विद्युत अपघट्यों का संतुलन करने वाले कॉर्टिकॉस्टीराइड, मिनरलोकॉर्टिकॉइड्स कहलाते हैं। हमारे शरीर में एल्डोस्टीरॉन मुख्य मिनरलोकॉर्टिकाइड है।

ग्लूकोकॉर्टिकोइड ग्लाइकोजन संश्लेषण, ग्लूकोनियोजिनेसिस, वसा अपघटन और प्रोटीन अपघटन को प्रेरित करते हैं तथा एमीनो अम्लों के कोशिकीय ग्रहण और उपयोग को अवरोधित करते हैं। कॉर्टिसॉल, हृदय संवहनी तंत्र के रखरखाव तथा वृक्क की क्रियाओं में भी संलग्न होता है। ग्लूकोकॉर्टिकोइड एवं विशेष रूप से कॉर्टिसाल प्रतिशोथ प्रतिक्रियाओं को प्रेरित करता है तथा प्रतिरक्षा तंत्र की प्रतिक्रिया को अवरोधित करता है। कॉर्टिसाल लाल रुधिर कणिकाओं के उत्पादन को प्रेरित करता है। एल्डोस्टीरॉन मुख्यत: वृक्क नलिकाओं पर कार्य करता है और Na^+ एवं जल के पुनरावशोषण तथा K^+ व फॉस्फेट आयन के उत्सर्जन को प्रेरित करता है। इस प्रकार एल्डोस्टीरॉन, वैद्युत अपघट्यों, शरीर द्रव के आयतन, परासरणी दाब और रक्त दाब को बनाए रखने में सहायक होता है। एड्रीनल वल्कुट द्वारा कुछ मात्रा में एंड्रोजेनिक स्टीराइड का भी स्राव होता है जो यौवनारंभ के समय अक्षीय रोम, जघन रोम, तथा मुख (आनन) रोम की वृद्धि में भूमिका अदा करते हैं। **एड्रिनल वल्कुट** द्वारा हार्मोन के अल्प स्रावण के कारण कार्बोहाइड्रेट उपापचय पर विपरीत प्रभाव पड़ता है जिसके कारण अत्यंत दुर्बलता एवं थकावट का अनुभव होता है तथा **एडीसन** रोग हो जाता है।

19.2.8 अग्नाशय

अग्नाशय एक संयुक्त ग्रंथि है जो अंत:स्रावी और बहि:स्रावी दोनों के रूप में कार्य करती है (चित्र 19.1)। अंत:स्रावी अग्नाशय 'लैंगरहैंस द्वीपों' से निर्मित होता है। साधारण मनुष्य के अग्नाशय में लगभग 10 से 20 लाख लैंगरहैंस द्वीप होते हैं जो अग्नाशयी ऊतकों का 1 से 2 प्रतिशत होता है। प्रत्येक लैंगरहैंस द्वीप में मुख्य रूप से दो प्रकार की कोशिकाएं

होती हैं जिन्हें α और β **कोशिकाएं** कहते हैं। **α कोशिकाएं** का **ग्लूकगॉन** तथा β **कोशिकाएं इंसुलिन** हार्मोन का स्राव करती हैं।

ग्लूकागॉन एक पेप्टाइड हार्मोन है जो सामान्य रक्त शर्करा स्तर के नियमन में मुख्य भूमिका निभाता है। ग्लूकागॉन मुख्य रूप से यकृत कोशिकाओं पर कार्य कर ग्लाइकोजेन अपघटन को प्रेरित करता है जिसके फलस्वरूप रक्त शर्करा का स्तर बढ़ जाता है। इसके अतिरिक्त पेट ग्लूकोनियोजिनेसिस की प्रक्रिया को भी प्रेरित करता है जिससे कि **हाइपरग्लाइसिमिया (अति ग्लूकोज रक्तता)** होती है। ग्लूकागॉन कोशिकीय शर्करा के अभिग्रहण और उपयोग को कम करता है। अत: ग्लूकोगॉन **हाइपरग्लाइसिमिक हार्मोन** है। इंसुलिन भी एक प्रोटीन हार्मोन है जो ग्लूकोज समस्थापन के नियमन में मुख्य भूमिका निभाता है। इंसुलिन मुख्यत: हिपेटोसाइट और एडीपोसाइट पर कार्य करता है और कोशिकीय ग्लूकोज अभिग्रहण और उपयोग को बढ़ाता है। इसके फलस्वरूप ग्लूकोज तीव्रता से रक्त हिपेटोसाइट और एडीपोसाइट में जाता है और तथा रक्त शर्करा का स्तर कम **(हाइपोग्लासीमिया)** हो जाता है। इंसुलिन लक्ष्य कोशिकाओं में ग्लूकोज से **ग्लाइकोजेन** बनने की प्रक्रिया को भी प्रेरित करता है। रक्त में ग्लूकोज समस्थापन का नियमन सम्मिलित रूप से दो हार्मोन इंसुलिन और ग्लूकागॉन द्वारा होता है।

लंबी अवधि तक हाइपरग्लाइसीमिया (अति ग्लूकोज रक्तता) होने पर **डायबिटीज मेलीटस** (मधुमेह) बीमारी हो जाती है जो मूत्र के साथ शर्करा का ह्रास और हानिकारक पदार्थों जैसे कीटोन बॉडीज के निर्माण से जुड़ी है। मधुमेह के मरीजों का इंसुलिन द्वारा सफलतापूर्वक उपचार किया जा सकता है।

19.2.9 वृषण

नर में उदर गुहा (पेडू) के बाहर वृषण कोष में एक जोड़ी वृषण स्थित होता हैं (चित्र 19.1)। वृषण प्राथमिक लैंगिक अंग के साथ ही अंत:स्रावी ग्रंथि के रूप में भी कार्य करता है। **वृषण शुक्रजनक नलिका** और **भरण या अंतराली ऊतक** का बना होता है। **लेइडिग कोशिकाएं** या **अंतराली कोशिकाएं** अंतरनलिकीय स्थानों में उपस्थित होती हैं और **एंड्रोजेन** या नर हार्मोन तथा **टेस्टोस्टेरॉन** प्रमुख हार्मोन का स्राव करती हैं।

एंड्रोजेन नर के सहायक जनन अंगों जैसे कि एपीडिडाईमस, शुक्रवाहिका, सेमिनल वेसीकल, प्रोस्टेट ग्रंथि, यूरिथ्रा आदि के परिवर्धन, परिपक्वन और क्रियाओं का नियमन करते हैं। ये हार्मोन पेशीय वृद्धि, मुख और अक्षीय रोम की वृद्धि, क्रोधात्मकता, निम्न स्वरमान या आवाज इत्यादि को उत्तेजित करते हैं। एंड्रोजेन शुक्राणु निर्माण की प्रक्रिया में प्रेरक भूमिका निभाते हैं। एंड्रोजेन केंद्रीय तंत्रिका तंत्र पर कार्य कर नर लैंगिक व्यवहार (लिबिडो) को प्रभावित करता है। ये हार्मोन प्रोटीन और कार्बोहाइड्रेट उपापचय पर उपाचयी प्रभाव डालते हैं।

19.2.10 अंडाशय

मादाओं के उदर में अंडाशय का एक युग्म (जोड़ा) होता है (चित्र 19.1)। अंडाशय एक प्राथमिक मादा लैंगिक अंग है जो प्रत्येक मासिक चक्र में एक अंडे को उत्पादित करते

हैं। इसके अतिरिक्त अंडाशय दो प्रकार के स्टीरॉइड हार्मोन समूहों का भी उत्पादन करते हैं, जिन्हें **एस्ट्रोजेन** और **प्रोजेस्टेरॉन** कहते हैं। अंडाशय अंडपुटक और भरण ऊतक का बना होता है। एस्ट्रोजेन का संश्लेषण एवं स्राव प्रमुख रूप से परिवर्धित हो रहे अंडाशयी पुटकों द्वारा होता है। अंडोत्सर्ग के पश्चात विखंडित पुटिका, **कॉर्पसल्यूटियम** में बदल जाता है जो कि मुख्यतया प्रोजेस्टेरॉन हार्मोन का स्राव करता है।

एस्ट्रोजेन स्त्रियों में द्वितीयक लैंगिक अंगों की वृद्धि तथा क्रियाओं का प्रेरण, अंडाशयी पुटिकाओं का परिवर्धन, द्वितीयक लैंगिक लक्षणों का प्रकटन (जैसे उच्च आवाज की स्वरमान) स्तन ग्रंथियों का परिवर्धन इत्यादि अनेक क्रियाएं करते हैं। एस्ट्रोजेन स्त्रियों के लैंगिक व्यवहार का नियामक भी है।

प्रोजेस्टेरॉन प्रसवता में सहायक होते हैं। प्रोजेस्टेरॉन दुग्ध ग्रंथियों पर भी कार्य कर के दुग्ध संग्रह कूपिकाओं के निर्माण और दुग्ध के स्राव में सहायता करते हैं।

19.3 हृदय, वृक्क और जठर आंत्रीय पथ के हार्मोन

अब तक आप अंत:स्रावी ग्रंथियों और उनके हार्मोन के बारे में समझ चुके होंगे। यद्यपि पहले इंगित किया जा चुका है कि हार्मोन का स्राव कुछ अन्य अंगों द्वारा भी होता है जो अंत:स्रावी ग्रंथियां नहीं हैं। उदाहरण के लिए हृदय की अलिंद भित्ति द्वारा एक पेप्टाईड हार्मोन का स्राव होता है, जिसे **एट्रियल नेट्रियुरेटिक कारक** (एएनएफ) कहते हैं। यह रक्त दाब को कम करता है। जब रक्त दाब बढ़ जाता है, तो एएनएफ के स्राव और इसकी क्रिया के फलस्वरूप रक्त वाहिकाएं विस्फारित हो जाती हैं तथा रक्त दाब कम हो जाता है।

वृक्क की जक्स्टाग्लोमेरूलर कोशिकाएं, **इरिथ्रोपोईटिन** नामक हार्मोन का उत्पादन करती हैं जो रक्ताणु उत्पत्ति (आरबीसी के निर्माण) को प्रेरित करता है। जठर आंत्रीय पथ के विभिन्न भागों में उपस्थित अंत:स्रावी कोशिकाएं चार मुख्य पेप्टाइड हार्मोन का स्राव करती हैं; **गैस्ट्रिन, सेक्रेटिन, कोलिसिस्टोकाइनिन** - और **जठर अवरोधी पेप्टाइड** (जी आई पी)। गैस्ट्रिन, जठर ग्रंथियों पर कार्य कर हाइड्रोक्लोरिक अम्ल और पेप्सिनोजेन के स्राव को प्रेरित करता है। सेक्रेटिन बहि:स्रावी अग्नाशय पर कार्य करता है और जल तथा बाइकार्बोनेट आयनों के स्राव को प्रेरित करता है। कोलिसिस्टोकाइनिन अग्नाशय और पित्ताशय दोनों पर कार्य कर क्रमश: अग्नाशयी एंजाइम और पित्त रस के स्राव को प्रेरित करता है। जी आई पी जठर स्राव और उसकी गतिशीलता को अवरुद्ध करता है। अनेक अन्य ऊतक, जो अंत:स्रावी नहीं है, कई हार्मोन का स्राव करते हैं जिन्हें **वृद्धिकारक** कहते हैं। ये वृद्धिकारक, ऊतकों की सामान्य वृद्धि और उनकी मरम्मत और पुनर्जनन के लिए आवश्यक हैं।

19.4 हार्मोन क्रिया की क्रियाविधि

हार्मोन लक्ष्य ऊतकों पर उपस्थित **हार्मोनग्राही** विशिष्ट प्रोटीन से जुड़कर अपना प्रभाव डालते हैं। लक्ष्य कोशिका झिल्लियों पर उपस्थित हार्मोनग्राही, झिल्ली योजित ग्राही, और

कोशिका के अंदर उपस्थित ग्राही अंतरा कोशिकीयग्राही कहलाते हैं, जिसमें से अधिकांश केंद्रकीय ग्राही (केंद्रक में उपस्थित) होते है.

हार्मोन, ग्राहियों के साथ जुड़कर **हार्मोनग्राही सम्मिश्र** का निर्माण करते हैं (चित्र 19.5 अ,ब)। प्रत्येक ग्राही सिर्फ एक हार्मोन के लिए विशिष्ट होता है, अत: ग्राही विशिष्ट होते हैं। हार्मोनग्राही सम्मिश्र के बनने से लक्ष्य ऊतक में कुछ जैव रासायनिक परिवर्तन होते हैं। अत: लक्ष्य ऊतक में उपापचय एवं कार्यिकी का नियमन हार्मोन द्वारा होता है। रासायनिक प्रकृति के आधार पर हार्मोन को समूहों में विभाजित किया जा सकता है:

(ट) **पेप्टाइड, पॉलीपेप्टाइड, प्रोटीन** हार्मोन (जैसे इंसुलिन, ग्लूकागॉन, पीयूष ग्रंथि हार्मोन, हाइपोथैलेमिक हार्मोन इत्यादि)

(ब) **स्टीरॉइड** (उदाहरण के लिए कोर्टीसोल, टेस्टोस्टेरोन, एस्ट्राडायोल और प्रोजेस्टरॉन)

(स) **आयोडोथाइरोनिन** (थायराइड हार्मोन)

(द) **अमीनो अम्लों के व्युत्पन्न** (उदाहरण के लिए एपीनेफ्रीन)।

जो हार्मोन झिल्ली योजित ग्राहियों से क्रिया करते हैं वे साधारणतया लक्ष्य कोशिकाओं में प्रवेश नहीं कर पाते हैं, लेकिन द्वितीयक संदेशवाहकों का उत्पादन कर (जैसे कि चक्रीय ए एम पी, आई पी$_3$, Ca^{2+} आदि) अंतत: कोशिकीय उपापचय का नियमन करते हैं (चित्र 19.5 अ)। अंतरकोशिकीय ग्राहियों से क्रिया करने वाले हार्मोन (जैसे स्टीरॉइड

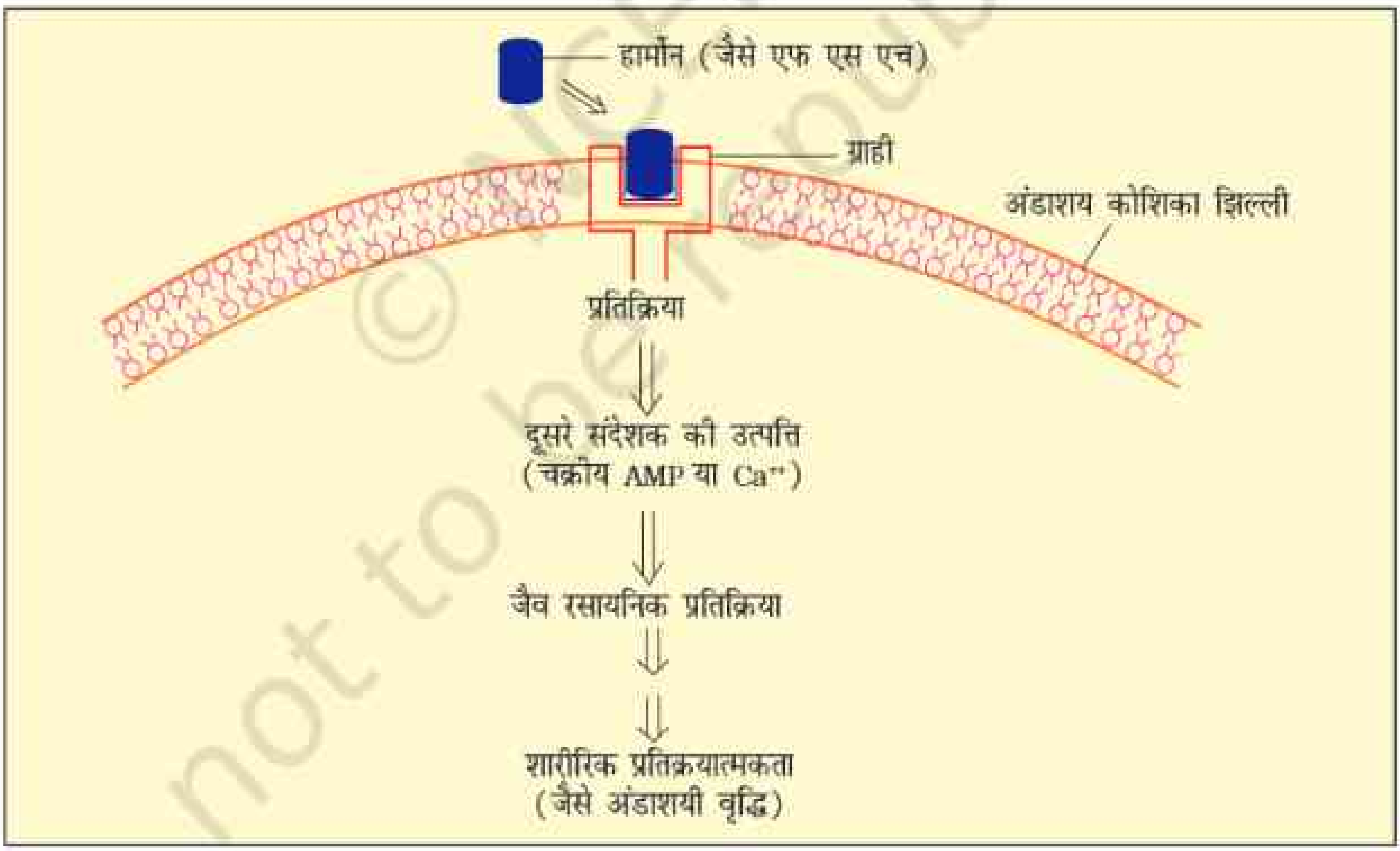

चित्र 19.5 (अ) प्रोटीन हार्मोन

हार्मोन, आयोडोथाइरोनिन आदि) हार्मोनग्राही सम्मिश्र एवं जीनोम के पारस्परिक क्रिया से जीन की अभिव्यक्ति अथवा गुणसूत्र क्रिया का नियमन करते हैं। संयुक्त जैव-रासायनिक क्रियाएं शरीर की कार्यिकी तथा वृद्धि को प्रभावित करती हैं (चित्र 19.5 ब)।

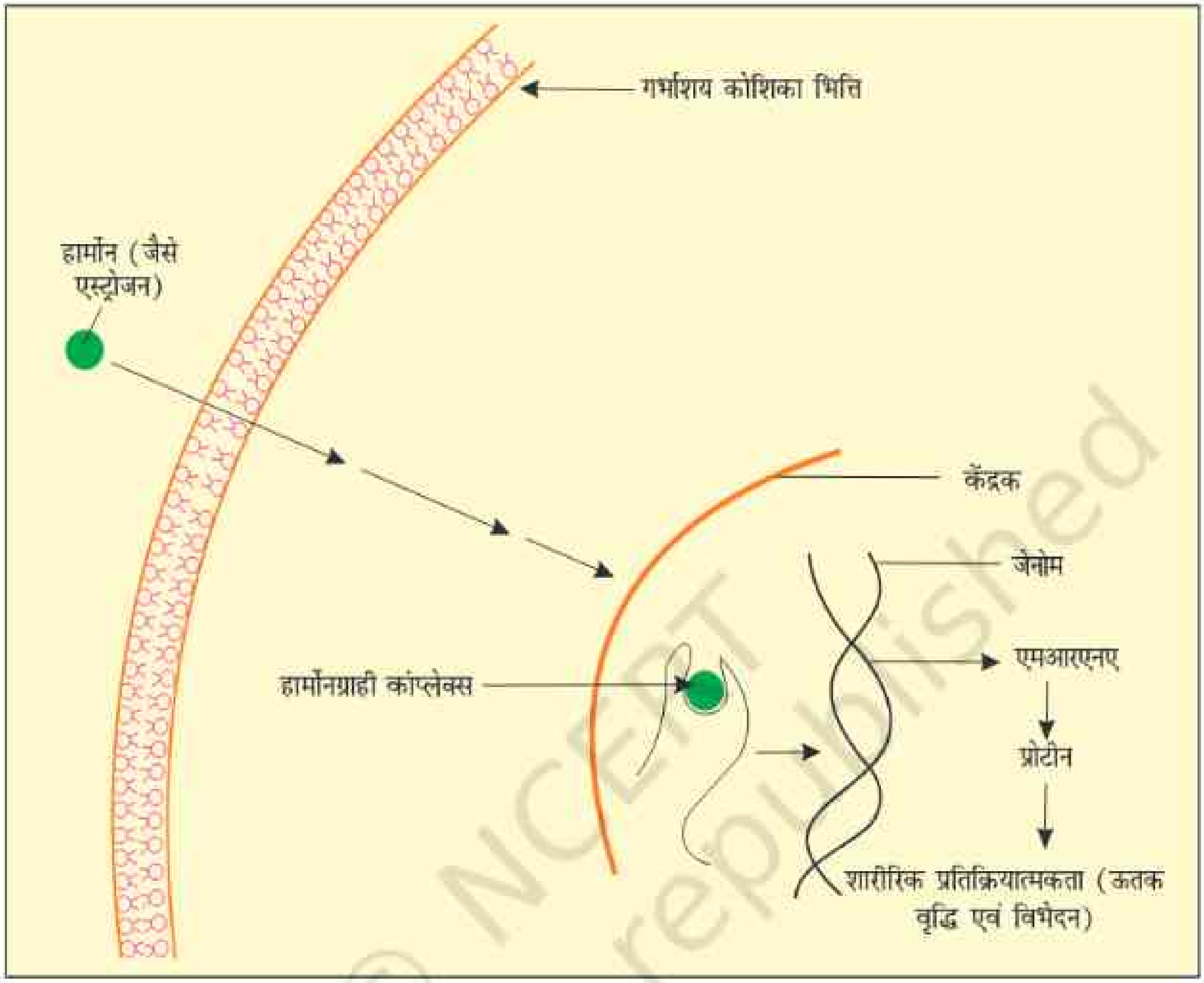

चित्र 19.5 (ब) स्टेरॉयड हार्मोन – हार्मोन क्रियात्मकता की प्रक्रिया की आरेखीय प्रस्तुति

सारांश

कुछ विशेष प्रकार के रसायन हार्मोन की तरह कार्य कर मानव शरीर में रासायनिक समन्वय, एकीकरण और नियमन प्रदान करते हैं। ये हार्मोन कुछ विशेष कोशिकाओं अंतःस्रावी ग्रंथियों तथा हमारे अंगों की वृद्धि उपापचय एवं विकास को नियमित करते हैं।

अंतःस्रावी तंत्र का निर्माण हाइपोथैलेमस, पीयूष, पीनियल, थायरॉइड, अधिवृक्क, अग्नाशय, पैराथायरॉइड, थाइमस और जनन (वृषण एवं अंडाशय) द्वारा होता है। इनके साथ ही कुछ अन्य अंग जैसे जठर आंत्रीय पथ, वृक्क हाइपोथैलेमस, हृदय आदि भी हार्मोन का उत्पादन करते हैं। हाइपोथैलेमस द्वारा 7 मुक्तकारी हार्मोन और 3 निरोधी हार्मोन का उत्पादन होता है जो पीयूष ग्रंथि पर कार्य कर उससे उत्सर्जित होने वाले हार्मोन के संश्लेषण और स्रवण का नियंत्रण करते हैं। पीयूष ग्रंथि तीन मुख्य भागों में विभक्त होती है- पार्स डिस्टेलिस, पार्स इंटरमीडिया, पार्स नर्वोसा। पार्स डिस्टेलिस द्वारा 6 ट्रॉफिक हार्मोन का स्रवण होता है। पार्स इंटरमीडिया केवल एक हार्मोन का स्राव करता है, जबकि पार्स नर्वोसा दो हार्मोन का स्राव करता है। पीयूष ग्रंथि से स्रवित हार्मोन कायिक ऊतकों की वृद्धि, परिवर्धन एवं परिधीय अंतःस्रावी ग्रंथियों की क्रियाओं का नियंत्रण करते हैं। पिनियल

ग्रंथि मेलाटोनिन का स्राव करती है जो कि हमारे शरीर की 24 घंटे की लय को नियंत्रित करता है, (जैसे कि सोने व जागने की लय, शरीर का तापक्रम आदि)। थाइरॉइड ग्रंथि से स्रवित होने वाले हार्मोन थाइरॉक्सीन आधारीय उपापचयी दर, केंद्रीय तंत्रिका तंत्र के परिवर्धन और परिपक्वन, रक्ताणु उत्पत्ति कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा के उपापचय, मासिक चक्र आदि का नियंत्रण करता है।

अन्य थायरॉइड हार्मोन थाइरोकैल्स्टिोनिन हमारे रक्त में कैल्सियम की मात्रा को कम करके उसका नियंत्रण करता है। पैराथायरॉइड ग्रंथियों द्वारा स्रवित पैराथायरॉइड हार्मोन (PTH) Ca^{2+} के स्तर को बढ़ाकर, Ca^{2+} के समस्थापन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। थाईमस ग्रंथियों द्वारा स्रावित थाइमोसिन हार्मोन टी–लिम्फोसाइट्स के विभेदीकरण में मुख्य भूमिका निभाता है, जो कोशिका केंद्रित असंक्राम्यता (प्रतिरक्षा) प्रदान करते हैं। साथ ही थाइमोसिन एंटीबॉडी का उत्पादन भी बढ़ाते हैं जो शरीर को तरल असंक्राम्यता (प्रतिरक्षा) प्रदान करते हैं। अधिवृक्क ग्रंथि मध्य में उपस्थित अधिवृक्क मध्यांश और बाहरी अधिवृक्क वल्कुट की बनी होती है। अधिवृक्क मध्यांश एपीनेफ्रीन और नॉरएपीनेफ्रीन हार्मोन का स्राव करता है।

ये हार्मोन सतर्कता, पुतलियों का फैलना, रोंगटे खड़े करना, पसीना आना, हृदय की धड़कन, हृदय संकुचन की क्षमता, श्वसन की दर, ग्लाइकोजेन अपघटन , वसा अपघटन को बढ़ाते हैं। अधिवृक्क वल्कुट ग्लूकोकॉर्टिकाइड्स (कॉर्टिसॉन) और मिनरेलोकॉर्टिकाइड्स (एल्डोस्टीरॉन) का स्राव करता है। ग्लूकोकॉर्टिकॉइड्स ग्लाईकोजन संश्लेषण, ग्लूकोनियोजिनेसिस, वसा अपघटन, प्रोटीन अपघटन, रक्ताणु उत्पत्ति, रक्त दाब और ग्लोमेरूलर निस्पंदन को बढ़ाते हैं तथा प्रतिरोधक क्षमता को दबा कर शोथ प्रतिक्रियाओं को रोकता है। खनिज कोर्टिकॉइडस शरीर में जल एवं वैद्युत अपघट्यों का नियमन करते हैं। अंत:स्रावी अग्नाशय ग्लूकागॉन एवं इंसुलिन हार्मोन का स्राव करता है। ग्लूकागॉन कोशिका में ग्लाइकीजेनोलिसिस तथा ग्लूकोनियोजेनेसिस को प्रेरित करता है, जिससे रक्त में ग्लूकोज की मात्रा बढ़ जाती है। इसे हाइपरग्लासीमिया (अति ग्लूकोज रक्तता) कहते हैं। इंसुलिन शर्करा के अभिग्रहण और उपयोग को प्रेरित करती है और ग्लाइकोजिनेसिस के फलस्वरूप हाइपोग्लासिमिया हो जाता है। इंसुलिन की कमी से डायबिटीज मेलीटस (मधुमेह) नामक रोग हो जाता है।

वृषण एंड्रोजन हार्मोन का स्राव करता है जो नर के आवश्यक लैंगिक अंगों के परिवर्धन, परिपक्वन और क्रियाओं को, द्वितीयक लैंगिक लक्षणों का प्रकट होना, शुक्राणु जनन, नर लैंगिक व्यवहार, उपचयी पथक्रम और रक्ताणु उत्पत्ति को प्रेरित करता है। अंडाशय द्वारा एस्ट्रोजेन और प्रोजेस्टेरॉन का स्राव होता है। एस्ट्रोजेन स्त्रियों में आवश्यक लैंगिक अंगों की वृद्धि व परिवर्धन और द्वितीयक लैंगिक लक्षणों के प्रकट होने को प्रेरित करता है। प्रोजेस्टेरॉन गर्भावस्था की देखभाल के साथ ही दुग्ध ग्रंथियों के परिवर्धन और दुग्धस्राव को बढ़ाता है। हृदय की अलिंद भित्ति एट्रियल नेट्रियूरेटिक कारक का उत्पादन करता है, जो रक्त दाब कम करता है। वृक्क में एरीथ्रोपोइटिन का उत्पादन होता है जो रक्ताणु उत्पत्ति को प्रेरित करता है। जठर आंत्रीय पथ के द्वारा गैस्ट्रिन सेक्रेटिन, कोलीसिस्टोकाइनिन -पैंक्रियोजाइमिन और जठर अवरोधी पेप्टाइड का स्राव होता है। ये हार्मोन पाचक रसों के स्राव और पाचन में सहायता करते हैं।

अभ्यास

1. निम्नलिखित की परिभाषा लिखिए:
   (अ) बहि:स्रावी ग्रंथियाँ
   (ब) अंत: स्रावी ग्रंथियाँ
   (स) हार्मोन

2. हमारे शरीर में पाई जाने वाली अंत:स्रावी ग्रंथियों की स्थिति चित्र बनाकर प्रदर्शित कीजिए।

3. निम्न द्वारा स्रवित हार्मोन का नाम लिखिए-

(अ) हाइपोथैलेमस (ब) पीयूष ग्रंथि (स) थायरॉइड
(द) पैराथायरॉइड (य) अधिवृक्क ग्रंथि (र) अग्नाशय
(ल) वृषण (व) अंडाशय (श) थायमस
(स) एट्रियम (ष) वृक्क (ह) जठर-आंत्रीय पथ

4. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए-

हार्मोन	लक्ष्य ग्रंथि
(अ) हाइपोथेलैमिक हार्मोन	____________
(ब) थायरोट्रॉफिन (टीएसएच)	____________
(स) कॉर्टिकोट्रॉफिन (एसीटीएच)	____________
(द) गोनेडोट्रोपिन (एलएच, एफएसएच)	____________
(य) मेलानोट्रॉफिन (एमएसएच)	____________

5. निम्नलिखित हार्मोन के कार्यों के बारे में टिप्पणी लिखिए-

(अ) पैराथायरॉइड हार्मोन (पीटीएच) (ब) थायरॉइड हार्मोन
(स) थाइमोसिन (द) एंड्रोजेन
(य) एस्ट्रोजेन (र) इंसुलिन एवं ग्लूकागॉन

6. निम्न के उदाहरण दीजिए-

(अ) हाइपर ग्लाइसीमिक हार्मोन एवं हाइपोग्लासीमिक हार्मोन
(ब) हाइपर कैलसीमिक हार्मोन
(स) गोनेडोट्रॉफिक हार्मोन
(द) प्रोजेस्टेशनल हार्मोन
(य) रक्तदाब निम्नकारी हार्मोन
(र) एंड्रोजेन एवं एस्ट्रोजेन

7. निम्न लिखित विकार किस हार्मोन की कमी के कारण होते हैं-

(अ) डायबिटीज (ब) गॉइटर (स) क्रेटीनिज्म

8. एफ एस एच की कार्यविधि का संक्षेप में वर्णन कीजिए।

9. निम्न लिखित के जोड़े बनाइए-

स्तंभ I	स्तंभ II
(i) टी$_4$	(अ) हाइपोथैलेमस
(ii) पीटीएच	(ब) थायरॉइड
(iii) गोनेडोट्रॉफिक रिलीजंग हार्मोन	(स) पीयूष ग्रंथि
(iv) ल्यूटिनाइजिंग हार्मोन	(द) पैराथायरॉइड

© NCERT not to be republished

टिप्पणी

© NCERT
not to be republished